प्रकाशक :

अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ

जोधपुर

शाखा कार्यालय

नेहरू गेट बाहर, ब्यावर (राजस्थान)

©: (01462) 251216, 257699, 250328

विपाक सूत्र

(शुद्ध मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन सहित)

आवरण सौजन्य

विद्या बाल मंडली सोसायटी, मेरठ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ साहित्य रत्न माला का ११४ वाँ रत्न

विपाक सूत्र

(शुद्ध मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन सहित)

सम्पादक

नेमीचन्द बांठिया

पारसमल चण्डालिया

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-३०५९०१

☎ : (०१४६२) २५१२१६, २५७६९९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य सहायक

उदारमना श्रीमान् सेठ जशवंतलाल भाई शाह, बम्बई

प्राप्ति स्थान

१. श्री अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, सिटी पुलिस, **जोधपुर** ☎ 2626145
२. शाखा-अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, नेहरू गेट बाहर, **ब्यावर** ☎ 251216
३. महाराष्ट्र शाखा-माणके कंपाउंड, दूसरी मंजिल आंबेड़कर पुतले के बाजू में, **मनमाड़**
४. श्री जशवन्तभाई शाह एदुन बिल्डिंग पहली धोबी तलावलेन पो० बॉ० नं० 2217, **बम्बई-2**
५. श्रीमान् हस्तीमल जी किशनलालजी जैन प्रीतम हाऊ० कॉ० सोसा० ब्लॉक नं० १० स्टेट बैंक के सामने, **मालेगांव (नासिक)** ☎ 252097
६. श्री एच. आर. डोशी जी-३९ बस्ती नारनौल अजमेरी गेट, **दिल्ली-६** ☎ 23233521
७. श्री अशोकजी एस. छाजेड़, १२१ महावीर क्लॉथ मार्केट, **अहमदाबाद** ☎ 5461234
८. श्री सुधर्म सेवा समिति भगवान् महावीर मार्ग, **बुलढाणा**
९. श्री श्रुतज्ञान स्वाध्याय समिति सांगानेरी गेट, **भीलवाड़ा** ☎ 236108
१०. श्री सुधर्म जैन आराधना भवन २४ ग्रीन पार्क कॉलोनी साउथ तुकोगंज, **इन्दौर**
११. श्री विद्या प्रकाशन मन्दिर, ट्रांसपोर्ट नगर, **मेरठ** (उ. प्र.)
१२. श्री अमरचन्दजी छाजेड़, १०३ वाल टेक्स रोड़, **चैन्नई** ☎ 25357775
१३. श्री संतोषकुमार बोथरा वर्द्धमान स्वर्ण अलंकार ३९४, शांपिग सेन्टर, **कोटा** ☎ 2360950

मूल्य : ३०-००

तृतीय आवृत्ति
१०००

वीर संवत् २५३३
विक्रम संवत् २०६४
मई २००७

मुद्रक - स्वास्तिक प्रिन्टर्स प्रेम भवन हाथी भाटा, अजमेर ☎ 2423295

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

जैन शास्त्रों का विषय निरूपण सर्वांग पूर्ण होने का कारण है इसके मूल उपदेष्टा सर्वज्ञ सर्वदर्शी तीर्थंकर भगवन्त हैं, जो घाती कर्मों का क्षय होने पर यानी पूर्णता प्राप्त होने पर ही उपदेश फरमाते हैं। जैन दर्शन में जड़-चेतन, आत्मा-परमात्मा, सुख-दुःख, संसार-मोक्ष, आस्रव-संवर कर्मबन्ध-कर्मक्षय इत्यादि विषयों का जितना सूक्ष्म गंभीर और सुस्पष्ट चिंतन विवेचन (मीमांसा) है उसका अंशमात्र भी अन्य दर्शनों में नहीं मिलता है। इसका कारण तीर्थंकर प्रभु की वीतरागता, सर्वज्ञता है। जैन दर्शन के आगम भूले-भटके भव्यजनों के मार्गदर्शक बोर्ड के तुल्य हैं, जो उन्हें उन्मार्ग से हटाकर सन्मार्ग की ओर अग्रसर कराने वाले हैं।

अर्वाचीन वर्गीकरण के अनुसार वर्तमान में उपलब्ध बत्तीस आगम चार भागों में विभक्त है- (१) ग्यारह अंग सूत्र (२) बारह उपांग सूत्र (३) चार मूल सूत्र (४) चार छेद सूत्र और बत्तीसवां आवश्यक सूत्र। इनमें प्रस्तुत विपाक सूत्र ग्यारहवां अंग सूत्र है। कर्म सिद्धान्त जैन-दर्शन का प्रमुख सिद्धान्त है। जैन दर्शन भगवान् को कर्त्ता नहीं मानता, स्वयं व्यक्ति को ही कर्त्ता भोक्ता मानता है। इस सिद्धान्त का प्रस्तुत आगम में कथानकों के माध्यम से प्रतिपादन किया गया है ताकि सामान्य से सामान्य बुद्धिजीवी भी सरलता से इस विषय को समझ सके।

नंदी सूत्र में बिपाक सूत्र के परिचय के बारे में निम्न पाठ है -

प्रश्न - विपाक श्रुत किसे कहते हैं?

उत्तर - विपाक का अर्थ है - शुभ-अशुभ कर्मों की स्थिति पकने पर उनका उदय में आया हुआ परिणाम (फल)। जिस श्रुत में ऐसा परिणाम बताया हो, उसे 'विपाकश्रुत' कहते हैं।

विपाकश्रुत में सुकृत और दुष्कृत कर्मों के फलस्वरूप होने वाला परिणाम कहा जाता है। इसमें दस दुःख विपाक हैं और दस सुखविपाक हैं।

से किं तं दुहविवागा? दुहविवागेसु णं दुहविवागाणं णगराइं, उज्जाणाइं, वणसंडाइं, चेइयाइं, समोसरणाइं, रायाणो, अम्मापियरो, धम्मायरिया, धम्मकहाओ, इहलोइयपरलोइया इड्ढिविसेसा णिरयगमणाइं संसारभवपवंचा, दुहपरंपराओ, दुकुलपच्चायाइओ, दुल्लहबोहियत्तं आघविज्जइ। से त्तं दुहविवागा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न - वह दुःख विपाक क्या है?

उत्तर - दुःख विपाक में हिंसादि दुष्कृत कर्मों के फलस्वरूप दुःख परिणाम पाने वाले दस जीवों के-(शेष पूर्व सूत्रानुसार) नरकगमन=पहली से सातवीं तक में जो जहाँ जन्मा, संसार भव प्रपंच=एकेन्द्रिय के असंख्य, विकलेन्द्रिय के संख्य तथा पंचेन्द्रिय के जो अनेक जन्म किये, करेंगे वे, दुःख परंपरा= एक के बाद एक नरक, तिर्यंच, निगोदादि के जो दुःख अनुभव करेंगे वह, दुःकुल में प्रत्याजाति=हलके आचार-विचार प्रतिष्ठा वाले कुल में जन्म, दुर्लभ बोधित्व=धर्म की शीघ्र अप्राप्ति।

से किं तं सुहविवागा? सुहविवागेसु णं सुहविवागाणं णगराइं, उज्जाणाइं, वणसंडाइं चेइयाइं, समोसरणाइं, रायाणो, अम्मापियरो, धम्मायरिया, धम्मकहाओ, इहलोइयपरलोइया इड्ढिविसेसा, भोगपरिच्चाया, पव्वज्जाओ, परियागा, सुयपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, संलेहणाओ, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, देवलोगगमणाइं, सुहपरंपराओ, सुकुल-पच्चायाईओ, पुणबोहिलाभा, अंतकिरियाओ, आघविज्जंति।

प्रश्न - वह सुख विपाक क्या है?

उत्तर - सुख विपाक में धर्मदान आदि सुकृत कर्मों के फलस्वरूप सुखद परिणाम पाने वाले दस जीवों के-(पूर्व सूत्रानुसार) सुखपरंपरा=पहले देवलोक इत्यादि एक के बाद एक उत्तरोत्तर वर्धमान सुख की परम्परा।

समवायांग सूत्र में विपाक का परिचय देते हुए लिखा है **"विवागसुए णं सुकड-दुक्कडाण-कमाणं फल विवागा आघविज्जंति"** अर्थात् - विपाक सूत्र सुकृत और दुष्कृत कर्मों के फल-विपाक को बताने वाला आगम है। उसमें सुखविपाक और दुःख विपाक ये दो विभाग हैं।

स्थानांग सूत्र में विपाक सूत्र का नाम **"कम्मविवागदसाणं"** "कर्म विपाकदशा" दिया है। इसी प्रकार अन्य आचार्यों ने पुण्य पाप रूप कर्म फल को विपाक एवं उसका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपादन करने वाले इस सूत्र को विपाक श्रुत कहा है। इस प्रकार सभी के विचारों का सिंहावलोकन करने पर एक ही बात सम्पुष्ट होती है कि जीव के शुभाशुभ कर्म परिणाम को विपाक कहा है और इस सूत्र में चूंकि इसका प्रतिपादन हुआ है। इसलिए इसका नाम विपाक सूत्र रखा गया है।

स्थानांग सूत्र के दसवें स्थान पर विपाक सूत्र के जो दस अध्ययनों के नाम आये हैं, उनमें दूसरे श्रुतस्कन्ध के अध्ययनों के नाम नहीं है। नंदी सूत्र और समवायांग सूत्र में तो दोनों श्रुत स्कन्धों के अध्ययनों के नाम दिये ही नहीं गए है, मात्र परिचय ही दिया है। स्थानांग सूत्र में विपाक प्रथम श्रुतस्कन्ध के नाम इस प्रकार हैं -

१. मृगापुत्र २. गोत्रांस ३. अण्ड ४. शटक ५. ब्राह्मण ६. नंदीषेण ७. शौरिक ८. उदुम्बर ९. सहस्रोद्दाह आभरक १०. कुमार लिच्छई।

जबकि उपलब्ध विपाक में प्रथम श्रुतस्कन्ध के नाम इस प्रकार हैं -

१. मृगापुत्र २. उज्झितक ३. अभग्नसेन ४. शटक ५. वृहस्पतिदत्त ८. नंदीवर्द्धन ७. उम्बरदत्ता ८. शौरिकदत्त ९. देवदत्ता १०. अंजू।

स्थानांग सूत्र में आये हुए एवं वर्तमान विपाक सूत्र में जो नाम उपलब्ध हैं उनमें कुछ अन्तर है। इसका कारण है कि विपाक सूत्र में कई अध्ययनों के नाम व्यक्ति परक हैं तो कई नाम वस्तु परक यानी घटना परक, जबकि स्थानांग में जो नाम आये हैं वे केवल व्यक्तिपरक हैं। दो अध्ययनों में क्रम भेद भी है। स्थानांग में जो आठवां अध्ययन है वह विपाक में सातवां अध्ययन है और स्थानांग का सातवां अध्ययन है वह विपाक का आठवां अध्ययन है। इस प्रकार अध्ययनों के नामों में भिन्नता होने पर भी विषय सामग्री दोनों की समान है।

संसारी जीव जो विविध प्रकार के कर्मों का बन्ध करते हैं उन्हें विपाक की दृष्टि से दो भागों में विभक्त किया गया है। शुभ और अशुभ, पुण्य और पाप। इन दो भेदों में सभी कर्म बंध का समावेश हो जाता है। इन शुभाशुभ कर्मों के कारण ही जीव संसार में परिभ्रमण करता है। आचारांग सूत्र अ० ३ उ० १ में एक छोटा सा सूत्र आया है **'कम्मुणा उवाही जायइ'** अर्थात् कर्मों से ही जन्म, मरण, वृद्धत्व, शारीरिक दुःख, मानसिक दुःख, संयोग, वियोग,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवभ्रमण आदि सभी उपाधियाँ पैदा होती हैं। कर्मों का संयोग (बन्ध) यानी संसार एवं कर्मों का वियोग अर्थात् मोक्ष।

प्रश्न होता है कर्मों का संयोग जीव के साथ कब से है? वैसे तो आठों ही कर्मों का संसारी जीव के साथ सम्बन्ध अनादि से है। पूर्व काल में ऐसा कोई समय नहीं रहा कि जिस समय किसी एक जीव के आठों कर्मों में से एक भी कर्म की सत्ता न रही हो। किन्तु किसी अपेक्षा से कर्मों की सादि भी है, क्योंकि किसी विवक्षित समय का बंध हुआ कर्म अपनी स्थिति पूर्ण होने पर अपना फल (विपाक) देकर आत्म प्रदेशों से अलग हो जाते हैं, पर नये कर्मों का बंध चालू रहने के कारण कर्मों का प्रवाह चालू रहता है। इस प्रकार कर्मों के बंध और निर्जरा का क्रम जीव के साथ अनादि काल से चालू है, कर्मों का बंध तब ही शनैः-शनैः रूकता है जब जीव आत्म-विकास की ओर अग्रसर होता है, गुणस्थानों का उत्तरोत्तर आरोहण करता है।

कभी यह भी प्रश्न उत्पन्न होता है कि आत्मा तो अरूपी है जबकि कर्म रूपी है, फिर रूपी अरूपी आत्मा पर कैसे चिपक जाते हैं? जैनागम एकान्त अरूपी तो मुक्त आत्माओं को मानता है, संसारी जीवों को कथंचित् रूपी मानता है। इसीलिए ठाणं सूत्र में आत्मा के लिए "**सरुवि चेव अरुवि चेव**" शब्दों का प्रयोग हुआ है। जहाँ सशरीरता है वहा सरूपता है। शरीर से कर्मों का और कर्मों से शरीर के बन्ध की परम्परा अनादि से चली आ रही है।

आठ कर्मों में आयुष्य कर्म एक ऐसा कर्म है जो आत्मा और शरीर को परस्पर जकड़ रखता है। यद्यपि आयुष्य कर्म न सुख देता है और न ही दुःख, किन्तु सुख दुःख वेदने के लिए जीव को शरीर में ठहराए रखना उसका काम है। पहले की बंधी हुई आयुष्य के क्षीण होने से पूर्व ही अगले भव की आयु बांध लेता है। जंजीर (श्रृंखलाबन्ध) की तरह जीव एक शरीर को त्याग कर नवीन शरीर को धारण करता रहता है। आयुष्य कर्म का मूल मोहनीय कर्म है। अर्थात् आयुष्य कर्म मोहनीय कर्म के निमित्त से बंधता, आयुष्य बंध के साथ जितने कर्मों का बन्ध होता है वह बन्ध प्रायः निकाचित बंध होता है। अतएव कर्म बन्ध जीव कथंचित् सरूपी है। एकान्त अरूपी नहीं। जो एकान्त अरूपी है, अमूर्त है, वह कदापि पौद्गलिक वस्तु के बंधन में नहीं पड़ सकता है। वे तो सिद्ध ही हैं। जो सशरीर है वे सब बद्ध है। इस प्रकार आत्मा और कर्म का सम्बन्ध मूर्त का मूर्त के साथ होने वाला सम्बन्ध हैं। जिस प्रकार मूर्त मादक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पदार्थों का असर अमूर्त ज्ञानादि पर होता है, वैसे ही विकारी (संसारी) अमूर्त आत्मा पर मूर्त कर्म पुद्गलों का प्रभाव होता है। प्रज्ञापना सूत्र के २३ वें पद में बतलाया गया है कि अकर्म के कर्म का बंधन नहीं होता। जो जीव पहले से ही कर्मों से बन्धा है वही जीव नये कर्मों को बांधता है।

जीव के साथ कर्मों का सम्बन्ध अनादि से है। किन्तु कर्म किन कारणों से बंधते हैं? इसके लिए प्रज्ञापना सूत्र के तेवीसवें पद में बतलाया गया है कि ज्ञानावरणीय कर्म के तीव्र उदय से दर्शनावरणीय कर्म का तीव्र उदय होता है। दर्शनावरणीय कर्म के तीव्र उदय से दर्शनमोह का उदय होता है। दर्शनमोह के तीव्र उदय से मिथ्यात्व का उदय होता है और मिथ्यात्व के उदय से जीव आठ प्रकार के कर्मों को बांधता है।

स्थानांग एक समवायांग सूत्र में कर्म बंध के पांच कारण बतलाए हैं - १. मिथ्यात्व २. अविरति ३. प्रमाद ४. कषाय और ५. योग। मूल में कर्म बंध के दो ही कारण हैं कषाय और योग। इन दो में भी मुख्यता कषाय की है। क्योंकि कर्म बंध के जो भेद हैं-प्रकृति, स्थिति अनुभाग और प्रदेश। इसमें प्रकृति और प्रदेश बंध योग के निमित्त से होता है एवं स्थिति और अनुभाग (रस) का बंध कषाय के निमित्त से होता है। कषाय के अभाव में साम्परायिक कर्म का बन्ध नहीं होता। दसवें गुणस्थान तक कषाय और योग दोनों रहते हैं। अतः वहाँ तक साम्परायिक बंध होता है। जिसके कारण कर्मों की स्थिति और रस दोनों बंध विशेष होता है। इसके बाद तो मात्र योग रहता है जिसके निमित्त से गमनागमन आदि क्रियाओं से बंध होता है, वह ईर्यापथिक बंध कहलाता है। इसकी स्थिति उत्तराध्ययन एवं प्रज्ञापना सूत्र में मात्र दो समय की बतलाई है।

जो कर्म आत्मा के बंध चुके हैं उनका यथासमय बाद उदय में आना होता ही है। वह उदय दो प्रकार का होता है एक प्रदेशोदय और दूसरा विपाकोदय। प्रदेशोदय तो समस्त संसारी जीवों के प्रतिक्षण आठों कर्मों का चालू ही रहता है। ऐसा कोई संसारी जीव नहीं जिसके प्रदेशोदय चालू न हो। प्रदेशोदय से जीव को सुख-दुःख की अनुभूति नहीं होती है। जैसे गगन मण्डल में सूक्ष्म रजःकरण एवं जलकण फैले रहते हैं, हम पर उनका आघात भी होता है, लेकिन हमें उनका कोई अनुभव नहीं होता। विपाकोदय से ही सुख-दुःख की अनुभूति होती है। विपाक सूत्र का मूल विषय ही विपाकोदय से है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विपाकोदय भी दो प्रकार से होता है। एक तो बिना किसी पुरुषार्थ के स्वभाविक रूप से स्थिति पूर्ण होने पर कर्मों का उदय में आने पर वेदा जाना। दूसरा पुरुषार्थ विशेष से उदीरणा पूर्वक उदय में लाकर वेदा जाना। जैसे कितने ही फल टहनी पर ही स्वाभाविक पक कर टूटते हैं, तो कितने ही फलों को प्रयत्न करके पराल आदि में रख कर पकाये जाते हैं। दोनों ही फल पकते हैं किन्तु दोनों के पकने की प्रक्रिया पृथक्-पृथक् है। जो सहज रूप से पकता है उसके पकने का समय लम्बा होता है और जो प्रयत्न से पकाया जाता है उसके पकने का समय कम होता है। कर्मों का परिपाक भी ठीक इसी प्रकार होता है। निश्चित काल मर्यादा के बाद जो कर्म स्वाभाविक परिपाक होता है वह उदय कहलाता है और जो निश्चित काल मर्यादा से पूर्व तप-संयम शुभ योगादि द्वारा कर्म पुद्गलों को उदय में लाया जाता है, उसे उदीरणा कहा गया है।

हाँ, तो जीवों के शुभाशुभ कर्म बंध, उसके खुद के शुभाशुभ मन, वचन, काय की प्रवृत्ति से होता है। दशाश्रुतस्कन्ध में बतलाया गया है.-

सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवन्ति।

दुचिण्णा कम्मा दुचिण्णफला भवन्ति॥

अर्थात् - जीव जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल उसे प्राप्त होता है। शुभ कर्म का शुभ फल और अशुभ कर्म का अशुभ फल।

भगवती सूत्र शतक ७ उद्देशक १० में कालोदायी अनगार ने भगवान् से पाप और पुण्य कर्म और फल के बारे में पृच्छा की उसका भगवन्त ने इस प्रकार उत्तर फरमाया -

पाप और पुण्य कर्म और फल

तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ रायगिहाओ णयराओ, गुणसिलाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णामं णयरे गुणसिलए चेइए होत्था। तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ जाव समोसढे, परिसा जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पडिगया। तए णं से कालोदाई अणगारे अण्णया कयाइ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

प्रश्न - अत्थि णं भंते! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति?

उत्तर - हंता, अत्थि।

प्रश्न - कहं णं भंते! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति?

उत्तर - कालोदाई! से जहाणामए केइ पुरिसे मणुण्णं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं विससंमिस्सं भोयणं भुंजेज्जा, तस्स णं भोयणस्स आवाए भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे दुरूवत्ताए, दुगंधत्ताए जहा महासवए, जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ, एवामेव कालोदाई! जीवाणं पाणाइवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले, तस्स णं आवाए भद्दए भवइ, तओ पच्छा विपरिणममाणे विपरिणममाणे दुरूवत्ताए जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ, एवं खलु कालोदाई! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जति।

भावार्थ - किसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी राजगृह नगर के गुणशील उद्यान से निकल कर बाहर जनपद (देश) में विचरने लगे। उस काल उस समय में राजगृह नगर के बाहर गुणशील नामक चैत्य था। किसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पुनः वहाँ पधारे यावत् धर्मोपदेश सुनकर परिषद् लौट गई। कालोदायी अनगार किसी समय श्रमण भगवान् महावीर के पास आये और भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार पूछा -

प्रश्न - हे भगवन्! क्या जीवों को पाप फल-विपाक सहित पाप कर्म लगते हैं?

उत्तर - हाँ, कालोदायिन्! लगते हैं।

प्रश्न - हे भगवन्! पापफल-विपाक सहित पापकर्म कैसे होते हैं?

उत्तर - हे कालोदायिन्! जैसे कोई पुरुष, सुन्दर भाण्ड में पकाने से शुद्ध पका हुआ, अठारह प्रकार के दाल-शाकादि व्यंजनों से युक्त विष-मिश्रित भोजन करता है, तो वह भोजन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रारंभ में अच्छा लगता है, परन्तु उसके बाद उसका परिणाम खराब रूपपने, दुर्गन्धपने यावत् छठे शतक के महाश्रव नामक तीसरे उद्देशक में कहे अनुसार अशुभ होता है। इसी प्रकार हे कालोदायिन्! जीव के लिये प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह पाप-स्थान का सेवन तो अच्छा लगता है, किन्तु उनके द्वारा बंधे हुए पापकर्म जब उदय में आते हैं, तब उनका परिणाम अशुभ होता है। इसी प्रकार हे कालोदायिन्! जीवों के लिए अशुभ फल-विपाक सहित पाप कर्म होते हैं।

प्रश्न - अत्थि णं भंते! जीवाणं कल्लाणा कम्मा कल्लाण-फलविवागसंजुत्ता कज्जंति?

उत्तर - हंता, अत्थि।

प्रश्न - कहं णं भंते! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति?

उत्तर - कालोदाई! से जहाणामए केई पुरिसे मणुण्णं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं ओसहमिस्सं भोयणं भुंजेज्जा, तस्स णं भोयणस्स आवाए णो भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे सुरूवत्ताए, सुवण्णत्ताए, जाव सुहत्ताए, णो दुक्खत्ताए, भुज्जो भुज्जो परिणमइ, एवामेव कालोदाई! जीवाणं पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे, कोहविवेगे जाव मिच्छादंसण-सल्लविवेगे, तस्स णं आवाए णो भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे सुरुवत्ताए जाव णो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ, एवं खलु कालोदाई! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति।

भावार्थ - प्रश्न - हे भगवन्! क्या जीवों के कल्याण फल-विपाक सहित कल्याण (शुभ) कर्म होते हैं?

उत्तर - हाँ, कालोदायिन्! होते हैं।

प्रश्न - हे भगवन्! जीवों के कल्याण फल-विपाक सहित कल्याण कर्म कैसे होते हैं?

उत्तर - हे कालोदायिन्! जैसे कोई एक पुरुष भाण्ड में रांधने से शुद्ध पका हुआ और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अठारह प्रकार के दाल-शाकादि व्यंजनों से युक्त औषध मिश्रित भोजन करता है, तो वह भोजन प्रारंभ में अच्छा नहीं लगता, परन्तु उसके बाद जब उसका परिणमन होता है, तब वह सुरूपपने, सुवर्णपने यावत् सुखपने बारंबार परिणत होता है, वह दुःखपने परिणत नहीं होता। इसी प्रकार हे कालोदायिन्! जीवों के लिए प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोध विवेक (क्रोध का त्याग) यावत् मिथ्यादर्शनशल्य का त्याग, प्रारम्भ में कठिन लगता है, किन्तु उसका परिणाम सुखरूप यावत् नो दुःखरूप होता है। इसी प्रकार हे कालोदायिन्! जीवों के कल्याणफल-विपाक संयुक्त कल्याण कर्म होते हैं।

विवेचन - कालोदायी ने पाप पुण्य विषयक प्रश्न भगवान् से पूछे - भगवान् ने फरमाया कि जिस प्रकार सभी तरह से सुसंस्कृत विषमिश्रित भोजन खाते समय तो अच्छा लगता है, किन्तु जब उसका परिणमन होता है, तब उसका परिणाम बड़ा भयंकर होता है और यहाँ तक कि प्राणों से हाथ तक धोना पड़ता है। यही बात प्राणातिपातादि पापकर्मों के लिए है। पाप कर्म करते समय तो जीव को अच्छे लगते हैं, किन्तु भोगते समय महा दुःखदायी होते हैं।

जबकि औषधियुक्त भोजन करने में बड़ी कठिनाई होती है। उस समय उसका स्वाद अच्छा नहीं लगता, किन्तु उसका परिणमन बड़ा अच्छा, सुखकारी और हितकारी होता है। इसी प्रकार प्राणातिपातादि पापों से निवृत्ति बड़ी कठिन लगती है, किन्तु उनका परिणाम बड़ा हितकारी और सुखकारी होता है।

इस प्रकार जैन दर्शन का स्पष्ट मन्तव्य है कि जीव स्वयं जैसा कर्म करता है, वैसा ही उसे फल प्राप्त होता है, उत्तराध्ययन सूत्र के बीसवें अध्ययन में बतलाया है-

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ॥३७॥

अर्थात् - आत्मा ही सुखों और दुःखों का करने वाला है और विकर्त्ता सुख दुःखों को काटने वाला भी आत्मा ही है। सुप्रतिष्ठित श्रेष्ठ मार्ग में चलने वाला आत्मा मित्र है और दुःप्रतिष्ठित दुराचार में प्रवृत्ति करने वाला आत्मा अमित्र शत्रु है। तात्पर्य है कि यह आत्मा स्वयं ही सुख-दुःख का कर्त्ता और भोक्ता है, अन्य कोई नहीं है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

"कडाण कम्माण ण मोक्ख अत्थि" अर्थात् किये हुए कर्मों को भोगे बिना मोक्ष नहीं, इस आगम वाक्य के अनुसार जीव को अपने कृत कर्मों को सुख या दुःख के रूप में भोगना ही पड़ेगा। जिन जीवों ने अपने पूर्व भवों में अन्याय, अत्याचार, क्रूरता, निर्दयता, चौर्यवृत्ति, कामवासना आदि कारणों से अशुभ कर्मों का बंध किया, वे ही अशुभ कर्म उनके उदय में आने पर उन्हें घोर दुःख परितापना आदि का वर्तमान में अनुभव करा रहे हैं, जिनका विस्तार से वर्णन विपाक सूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध में दस जीवों के कथानक को देकर समझाया गया है। इसके विपरीत जिन दस जीवों ने पूर्वभव में सुपात्रदान, जीवों की दया, शुभ परिणिति आदि के द्वारा शुभ कर्मों का बंध किया उनमें से छह जीव तो उसी भव में मोक्ष पधार गये। शेष चार जीव नाना प्रकार से सुखों का अनुभव एवं सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना करते हुए सुखे-सुखे मोक्ष के अक्षय सुखों को प्राप्त करेंगे। इन दस जीवों वर्णन विपाक सूत्र के दूसरे श्रुतस्कन्ध में किया गया है।

संघ द्वारा पूर्व में मात्र सुखविपाक सूत्र का प्रकाशन हुआ, जो अति संक्षिप्त था। संघ की आगम प्रकाशन योजना के अर्न्तगत अब विपाक सूत्र के दोनों सूत्र स्कन्धों का मूल पाठ कठिन शब्दार्थ, भावार्थ, विवेचन युक्त यह प्रकाशन किया जा रहा है। इसके प्रकाशन में पण्डित रत्न श्री घेवरचन्दजी बांठिया "वीरपुत्र" द्वारा सुखविपाक सूत्र की अन्वयार्थ युक्त कापियां जो आपने गृहस्थ अवस्था में बीकानेर में रह कर तैयार की थी वे बड़ी सहायक रही, इसके अलावा पूज्य श्री आत्मारामजी म. सा. के द्वारा अनुवादित "विपाक सूत्र" एवं अन्य प्राचीन टीकाओं के आधार से इसका अनुवाद श्रीमान् पारसमलजी सा. चण्डालिया ने किया, जिसका बाद में मेरे द्वारा सूक्ष्मता से अवलोकन किया गया। इस प्रकार विपाक सूत्र का विवेचन युक्त संघ का यह प्रथम प्रकाशन है। इस प्रकाशन में यद्यपि मूल पाठ, विवेचन आदि में पूर्ण सतर्कता बरती गई है। फिर भी हमारी अल्पज्ञता के कारण गलती रहना स्वाभाविक है। अतएव विद्वद्वर्य समाज से निवेदन है कि उनके ध्यान में कोई त्रुटि दृष्टिगोचर हों तो हमें सूचित करने की महती कृपा करावें। ताकि अगली आवृत्ति में संशोधन किया जा सके। हम गलतियाँ बताने वाले महानुभाव के हृदय से आभारी रहेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संघ का आगम प्रकाशन का कार्य पूर्ण हो चुका है। इस आगम प्रकाशन के कार्य में **धर्म प्राण समाज रत्न तत्त्वज्ञ सुश्रावक श्री जशवंतलाल भाई शाह एवं श्राविका रत्न श्रीमती मंगला बहन शाह, बम्बई** की गहन रुचि है। आपकी भावना है कि संघ द्वारा जितने भी आगम प्रकाशित हुए हैं वे अर्द्ध मूल्य में ही बिक्री के लिए पाठकों को उपलब्ध हों। इसके लिए उन्होंने सम्पूर्ण आर्थिक सहयोग प्रदान करने की आज्ञा प्रदान की है। तदनुसार प्रस्तुत आगम पाठकों को उपलब्ध कराया जा रहा है, संघ एवं पाठक वर्ग आपके इस सहयोग के लिए आभारी हैं।

आदरणीय शाह साहब तत्त्वज्ञ एवं आगमों के अच्छे ज्ञाता हैं। आप का अधिकांश समय धर्म साधना आराधना में बीतता है। प्रसन्नता एवं गर्व तो इस बात का है कि आप स्वयं तो आगमों का पठन-पाठन करते ही हैं, पर आपके सम्पर्क में आने वाले चतुर्विध संघ के सदस्यों को भी आगम की वाचनादि देकर जिनशासन की खूब प्रभावना करते हैं। आज के इस हीयमान युग में आप जैसे तत्त्वज्ञ श्रावक रत्न का मिलना जिनशासन के लिए गौरव की बात है। आपकी धर्म सहायिका **श्रीमती मंगलाबहन शाह** एवं पुत्र रत्न **मयंकभाई शाह** एवं **श्रेयांसभाई शाह** भी आपके पद चिह्नों पर चलने वाले हैं। आप सभी को आगमों एवं थोकड़ों का गहन अभ्यास है। आपके धार्मिक जीवन को देख कर प्रमोद होता है। आप चिरायु हों एवं शासन की प्रभावना करते रहें। विपाक सूत्र की **प्रथम आवृत्ति** जुलाई २००३ में **डागा परिवार, जोधपुर** के आर्थिक सहयोग से एवं **द्वितीय आवृत्ति** अगस्त २००५ में **एक गुप्त साधर्मी बन्धु** के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित की गई। जो अल्प समय में ही अप्राप्य हो गई। अब इसकी तृतीय आवृत्ति का प्रकाशन **शाह परिवार, मुम्बई** की ओर से किया जा रहा है।

जैसा कि पाठक बन्धुओं को मालूम ही है कि वर्तमान में कागज एवं मुद्रण सामग्री के मूल्य में काफी वृद्धि हो चुकी है। फिर भी **श्रीमान् सेठ जशवंतलाल भाई शाह, मुम्बई** के आर्थिक सहयोग से इसका मूल्य मात्र **रु. ३०) तीस रुपया** ही रखा गया है जो कि वर्तमान् परिपेक्ष्य में ज्यादा नहीं है। पाठक बन्धु इस तृतीय आवृत्ति का अधिक से अधिक लाभ उठाएंगे।

इसी शुभ भावना के साथ!

ब्यावर (राज.)
दिनांक: ५-५-२००७

संघ सेवक
नेमीचन्द बांठिया
अ. भा. सु. जैन सं. र. संघ, **जोधपुर**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्वाध्याय

निम्नलिखित बत्तीस कारण टालकर स्वाध्याय करना चाहिये।

आकाश सम्बन्धी १० अस्वाध्याय	**काल मर्यादा**
१. बड़ा तारा टूटे तो-	एक प्रहर
२. दिशा-दाह *	जब तक रहे
३. अकाल में मेघ गर्जना हो तो-	दो प्रहर
४. अकाल में बिजली चमके तो-	एक प्रहर
५. बिजली कड़के तो-	आठ प्रहर
६. शुक्ल पक्ष की १, २, ३ की रात-	प्रहर रात्रि तक
७. आकाश में यक्ष का चिह्न हो-	जब तक दिखाई दे
८-९. काली और सफेद धूंअर-	जब तक रहे
१०. आकाश मंडल धूलि से आच्छादित हो-	जब तक रहे
औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय	
११-१३. हड्डी, रक्त और मांस,	ये तिर्यंच के ६० हाथ के भीतर हो। मनुष्य के हो, तो १०० हाथ के भीतर हो। मनुष्य की हड्डी यदि जली या धुली न हो, तो १२ वर्ष तक।
१४. अशुचि की दुर्गंध आवे या दिखाई दे-	तब तक
१५. श्मशान भूमि-	सौ हाथ से कम दूर हो, तो।

---

* आकाश में किसी दिशा में नगर जलने या अग्नि की लपटें उठने जैसा दिखाई दे और प्रकाश हो तथा नीचे अंधकार हो, वह दिशा-दाह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६. चन्द्र ग्रहण- खंड ग्रहण में ८ प्रहर, पूर्ण हो तो १२ प्रहर

(चन्द्र ग्रहण जिस रात्रि में लगा हो उस रात्रि के प्रारम्भ से ही अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

१७. सूर्य ग्रहण- खंड ग्रहण में १२ प्रहर, पूर्ण हो तो १६ प्रहर

(सूर्य ग्रहण जिस दिन में कभी भी लगे उस दिन के प्रारंभ से ही उसका अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

१८. राजा का अवसान होने पर, जब तक नया राजा घोषित न हो

१९. युद्ध स्थान के निकट जब तक युद्ध चले

२०. उपाश्रय में पंचेन्द्रिय का शव पड़ा हो, जब तक पड़ा रहे

(सीमा तिर्यंच पंचेन्द्रिय के लिए ६० हाथ, मनुष्य के लिए १०० हाथ। उपाश्रय बड़ा होने पर इतनी सीमा के बाद उपाश्रय में भी अस्वाध्याय नहीं होता। उपाश्रय की सीमा के बाहर हो तो यदि दुर्गन्ध न आवे या दिखाई न देवे तो अस्वाध्याय नहीं होता।)

२१-२४. आषाढ़, आश्विन,
कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा दिन रात

२५-२८. इन पूर्णिमाओं के बाद की प्रतिपदा- दिन रात

२९-३२. प्रातः, मध्याह्न, संध्या और अर्द्ध रात्रि-
इन चार सन्धिकालों में- १-१ मुहूर्त्त

उपरोक्त अस्वाध्याय को टालकर स्वाध्याय करना चाहिए। खुले मुंह नहीं बोलना तथा सामायिक, पौषध में दीपक के उजाले में नहीं वांचना चाहिए।

नोट - नक्षत्र २८ होते हैं उनमें से आर्द्रा नक्षत्र से स्वाति नक्षत्र तक नौ नक्षत्र वर्षा के गिने गये हैं। इनमें होने वाली मेघ की गर्जना और बिजली का चमकना स्वाभाविक है। अतः इसका अस्वाध्याय नहीं गिना गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रमणिका

विपाक सूत्र

दुःख विपाक नामक प्रथम श्रुतस्कन्ध

क्रं.	विषय	पृष्ठ
	मृगापुत्र नामक प्रथम अध्ययन	
१.	प्रस्तावना	१
२.	सुधर्मा स्वामी का पर्दापण	४
३.	जंबू स्वामी की पृच्छा और सुधर्मा स्वामी का उत्तर	७
४.	मृगापुत्र वर्णन	१०
५.	जन्धान्ध पुरुष का वर्णन	११
६.	जन्मान्ध पुरुष भगवान् की सेवा में	१२
७.	गौतम स्वामी की जिज्ञासा	१३
८.	गौतम स्वामी का प्रयोजन	१४
९.	मृगापुत्र को ही देखने की भावना	१५
१०.	मृगापुत्र के भोजन की तैयारी	१६
११.	माता द्वारा मृगापुत्र को दिखलाना	१७
१२.	गौतम स्वामी का चिंतन	१९
१३.	पूर्वभव पृच्छा	२०
१४.	ईकाई राष्ट्रकूट का परिचय	२१
१५.	ईकाई रोगग्रस्त	२४
१६.	राष्ट्रकूट की घोषणा	२६
१७.	रोगोपचार के प्रयास	२७
१८.	मृगादेवी की कुक्षि में	२९
१९.	गर्भ का असर	३०
२०.	गर्भ नाश का प्रयास	३१
२१.	मृगापुत्र की गर्भस्थ अवस्था	३२
२२.	मृगापुत्र के रूप में जन्म	३३
२३.	राजा की आज्ञा	३५
२४.	पुत्र का भूमिगृह में पालन	३५
२५.	आगामी भव की पृच्छा	३६
	उज्झितक नामक द्वितीय अध्ययन	
२६.	प्रस्तावना	४०
२७.	प्रभु का पदार्पण	४२
२८.	वध्य पुरुष का वर्णन	४३
२९.	पूर्व भव पृच्छा	४७
३०.	भगवान् का समाधान	४८
३१.	भीम नामक कूटग्राह	४९
३२.	उत्पला को दोहद	४९
३३.	उत्पला की चिंता	५१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
३४.	भीम का आश्वासन	५२
३५.	दोहद पूर्ति एवं पुत्र जन्म	५२
३६.	पुत्र 'गोत्रास' का नामकरण	५३
३७.	भीम कूटग्राह की मृत्यु	५४
३८.	गोत्रास की नरक में उत्पत्ति	५५
३९.	उज्झितक कुमार का जन्म	५६
४०.	उज्झितक कुमार का बाल्यकाल	५७
४१.	सुभद्रा को पति वियोग	५८
४२.	सुभद्रा की मृत्यु	६०
४३.	उज्झितक का व्यसनी बनना	६०
४४.	उज्झितक कुमार की चिंता	६१
४५.	उज्झितककुमार का आगामी भव वर्णन	६४

अभग्नसेन नामक तीसरा अध्ययन

क्रं.	विषय	पृष्ठ
४६.	प्रस्तावना	६८
४७.	विजयनामक चोर सेनापति का वर्णन	६८
४८.	चोर सेनापति के कुकृत्य	७०
४९.	गौतम स्वामी द्वारा करुणाजनक दृश्य देखना	७३
५०.	पूर्वभव पृच्छा	७६
५१.	भगवान् का समाधान	७७
५२.	निर्णय का हिंसक व्यापार	७८
५३.	निर्णय का नरक उपपात	७९
५४.	स्कन्दश्री को उत्पन्न दोहद	८०
५५.	स्कन्दश्री की चिंता	८१
५६.	दोहद पूर्ति	८३
५७.	अभग्नसेन का जन्म और लालन पालन	८४
५८.	अभग्नसेन चोर सेनापति बना	८५
५९.	अभग्नसेन के दुष्कृत्य	८७
६०.	राजा से निवेदन	८७
६१.	राजा का आदेश	८८
६२.	गुप्तचरों की सूचना	८९
६३.	अभग्नसेन की योजना	९०
६४.	राजा का प्रयास	९२
६५.	अभग्नसेन को बुलावा	९४
६६.	अभग्नसेन का सत्कार सम्मान	९५
६७.	अभग्नसेन बंदी बना	९७
६८.	आगामी भव	९८

शकट नामक चतुर्थ अध्ययन

क्रं.	विषय	पृष्ठ
६९.	प्रस्तावना	१०१
७०.	शकट-परिचय	१०२
७१.	गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान	१०३
७२.	पूर्वभव वर्णन	१०४
७३.	छण्णिक छागलिक के हिंसक कृत्य	१०४
७४.	छण्णिक का नरक उपपात	१०६
७५.	शकटकुमार की दुर्दशा	१०७
७६.	अपराध की सजा	१०९
७७.	आगामी भव-पृच्छा	११०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
	वृहस्पतिदत्त नाम पांचवां अध्ययन	
७८.	प्रस्तावना	११४
७९.	पूर्वभव पृच्छा	११५
८०.	महेश्वरदत्त द्वारा पापाचार	११६
८१.	भविष्य-पृच्छा	१२१
	नंदिवर्द्धन नामक छठा अध्ययन	
८२.	प्रस्तावना	१२३
८३.	गौतम स्वामी की जिज्ञासा	१२४
८४.	भगवान् का समाधान	१२६
८५.	दुर्योधन के उपकरण	१२७
८६.	नरक में उत्पत्ति	१३१
८७.	नंदिषेण के रूप में जन्म	१३३
८८.	नंदिषेण का षड्यंत्र	१३४
८९.	षड्यंत्र विफल और सजा	१३५
९०.	भविष्य-पृच्छा	१३६
	उम्बरदत्त नामक सातवां अध्ययन	
९१.	प्रस्तावना	१३८
९२.	दृश्य पुरुष की दयनीय दशा	१३९
९३.	पूर्वभव-पृच्छा	१४२
९४.	धन्वतरि वैद्य की हिंसक मनोवृत्ति	१४३
९५.	नरक में उपपात	१४६
९६.	गंगादत्ता की व्यथा	१४६
९७.	सागरदत्त का मनोरथ	१४९
९८.	गंगादत्ता की मनौती	१४९
९९.	गंगादत्ता का दोहद	१५१
१००.	दोहद पूर्ति	१५२
१०१.	उम्बरदत्त नामकरण	१५३
१०२.	उम्बरदत्त रोगग्रस्त	१५५
१०३.	भविष्य पृच्छा	१५६
	शौरिकदत्त नामक आठवां अध्ययन	
१०४.	प्रस्तावना	१५८
१०५.	पूर्व भव पृच्छा	१५९
१०६.	श्रीयक की हिंसकवृत्ति	१६१
१०७.	श्रीयक की नरक उत्पत्ति	१६४
१०८.	शौरिकदत्त का जन्म	१६४
१०९.	शौरिकदत्त की महावेदना	१६७
११०.	कृत कर्मों का फल	१६८
१११.	भविष्य-पृच्छा	१७०
	देवदत्ता नामक नववां अध्ययन	
११२.	प्रस्तावना	१७२
११३.	पूर्वभव-पृच्छा	१७३
११४.	भगवान् का समाधान	१७४
११५.	श्यामा देवी का आर्त्तध्यान	१७५
११६.	सिंह सेन का दुष्कृत्य	१७९
११७.	देवदत्ता के रूप में जन्म	१८१
११८.	देवदत्ता का रूप-लावण्य	१८२
११९.	देवदत्ता की याचना	१८३
१२०.	देवदत्ता का राजा को अर्पण	१८६
१२१.	देवदत्ता का विवाह	१८७
१२२.	पुष्यनंदी द्वारा मातृसेवा	१८८
१२३.	श्रीदेवी की अकाल मृत्यु	१८९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं. विषय	पृष्ठ	क्रं. विषय	पृष्ठ
१२४. राजा को सूचना	१६०	१२८. पूर्व भव-पृच्छा	१६६
१२५. पुष्यनंदी का कोप	१६०	१२६. भगवान् का समाधान	१६६
१२६. भविष्य-पृच्छा	१६३	१३०. अंजूश्री का सुखोपभोग	१६७
अंजू नामक दसवां अध्ययन		१३१. अंजूश्री की महावेदना	१६८
१२७. प्रस्तावना	१६५	१३२. भविष्य-पृच्छा	२००

सुख विपाक नामक द्वितीय श्रुतस्कन्ध

क्रं. विषय	पृष्ठ	क्रं. विषय	पृष्ठ
१. सुबाहु नामक प्रथम अध्ययन		१४. जन्मोत्सव	२४१
१. उत्थानिका	२०३	१५. अनेक संस्कार	२४२
२. गौतम स्वामी की जिज्ञासा	२०४	१६. नामकरण संस्कार	२४४
३. नगर आदि का वर्णन	२०५	१७. सुबाहुकुमार का लालन-पालन	२४५
४. धारिणी रानी का वर्णन	२१०	१८. पुत्र के लिए माता-पिता के कौतुक	२४७
५. धारिणी का स्वप्न-दर्शन	२१२	१६. सुबाहुकुमार का कला-शिक्षण	२४७
६. स्वप्न-निवेदन	२१६	२०. कलाचार्य का सम्मान	२५०
७. राजा द्वारा स्वप्न फल-कथन	२१६	२१. माता-पिता द्वारा महलों का निर्माण	२५१
८. राजा का आदेश	२२२	२२. सुबाहुकुमार का पांच सौ कन्याओं के साथ पाणिग्रहण एवं प्रीतिदान	२५५
६. स्वप्न पाठकों को बुलावा	२३०	२३. सुबाहुकुमार का पत्नियों को प्रीतिदान	२६१
१०. स्वप्न पाठकों द्वारा फलादेश	२३३	२४. सांसारिक सुखोपभोग	२६२
११. स्वप्न पाठकों को प्रीतिदान	२३६	२५. भगवान् महावीर स्वामी का वर्णन	२६३
१२. गर्भ की सुरक्षा	२३७	२६. भगवान् का आगमन	२७१
१३. सुबाहुकुमार का जन्म	२३६		

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
२७.	सुबाहुकुमार की जिज्ञासा	२७२
२८.	कौटुम्बिक पुरुषों को आज्ञा	२७६
२६.	भगवान् की पर्युपासना	२७७
३०.	श्रावक धर्म ग्रहण	२७६
३१.	गौतम स्वामी की जिज्ञासा	२८१
३२.	महावीर स्वामी का समाधान	२८४
३३.	श्रावक व्रतों का पालन	२८८
३४.	सुबाहुकुमार की धर्म जागरणा	२८६
३५.	भगवान् की देशना	२६३
३६.	प्रव्रज्या का संकल्प	२६४
३७.	माता-पिता के समक्ष निवेदन	२६५
३८.	माता-पिता और पुत्र संवाद	२६८
३६.	एक दिवस का राज्य	३०६
४०.	संयमोपकरण की मांग	३०८
४१.	दीक्षा की तैयारी	३११
४२.	दीक्षा ग्रहण	३१६
४३.	साधना और समाधि मरण	३२१
४४.	भविष्य कथन और सिद्धि गमन	३२२
२.	**भद्रनंदी नामक दूसरा अध्ययन**	**३२७**
३.	**सुजात नामक तीसरा अध्ययन**	**३२६**
४.	**सुवासव नामक चौथा अध्ययन**	**३३०**
५.	**जिनदास नामक पांचवा अध्ययन**	**३३१**
६.	**धनपति नामक छठा अध्ययन**	**३३२**
७.	**महाबल नामक सातवां अध्ययन**	**३३३**
८.	**भद्रनन्दी नामक आठवां अध्ययन**	**३३४**
६.	**महच्चन्द्र नामक नववां अध्ययन**	**३३५**
१०.	**वरदत्त नामक दसवां अध्ययन**	**३३६**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

"णमो णाणस्स"

विपाक सूत्र

(मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ और विवेचन सहित)

प्रस्तावना

उत्थानिका - भूतकाल में अनन्त तीर्थंकर हो चुके हैं। भविष्य में फिर अनन्त तीर्थंकर होवेंगे और वर्तमान में संख्यात तीर्थंकर विद्यमान हैं। अतएव जैन धर्म अनादिकाल से है इसीलिये इसे सनातन (सदातन-अनादिकालीन) धर्म कहते हैं।

केवलज्ञान हो जाने के बाद सभी तीर्थंकर भगवंत अर्थ रूप से प्रवचन फरमाते हैं, वह प्रवचन द्वादशांग वाणी रूप होता है। तीर्थंकर भगवंतों की उस द्वादशांग वाणी को गणधर सूत्र रूप से गूंथन करते हैं। द्वादशांग (बारह अंगों) के नाम इस प्रकार हैं -

१. आचारांग २. सूयगडांग ३. ठाणांग (स्थानांग) ४. समवायांग ५. विवाहपण्णत्ति (व्याख्याप्रज्ञप्ति या भगवती) ६. ज्ञाताधर्मकथांग ७. उपासकदशांग ८. अंतगडदशांग ९. अनुत्तरौपपातिक दशा १०. प्रश्नव्याकरण ११. विपाक और १२. दृष्टिवाद।

जिस प्रकार धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय-ये पांच अस्तिकाय कभी नहीं थे, कभी नहीं हैं और कभी नहीं रहेंगे ऐसी बात नहीं, किंतु ये पांच अस्तिकाय भूतकाल में थे, वर्तमान में हैं और भविष्यत् काल में रहेंगे। इसी प्रकार यह द्वादशांग वाणी कभी नहीं थी, कभी नहीं है और कभी नहीं रहेगी, ऐसी बात नहीं किंतु भूतकाल में थी, वर्तमान में है और भविष्यत् काल में रहेगी। अतएव यह मेरु पर्वत के समान ध्रुव है, लोक के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समान नियत है, काल के समान शाश्वत है, निरन्तर वाचना के समान नियत है, निरन्तर वाचना आदि देते रहने पर भी इसका क्षय नहीं होने के कारण अक्षय है, गंगा सिन्धु नदियों के प्रवाह के समान अव्यय है, जम्बूद्वीप लवण समुद्र आदि द्वीप समुद्रों के समान अवस्थित है और आकाश के समान नित्य है।

यह द्वादशांग वाणी गणि-पिटक के समान है अर्थात् गुणों के गण एवं साधुओं के गण को धारण करने से आचार्य को गणी कहते हैं। पिटक का अर्थ है - पेटी या पिटारी अथवा मंजूषा। आचार्य एवं उपाध्याय आदि सब साधु साध्वियों के सर्वस्व रूप श्रुत रत्नों की पेटी (मंजूषा) को 'गणि-पिटक' कहते हैं।

जिस प्रकार पुरुष के बारह अंग होते हैं। यथा - दो पैर, दो जंघा, दो उरू (साथल), दो पसवाड़े, दो हाथ, एक गर्दन और एक मस्तक। इसी प्रकार श्रुत रूपी परम पुरुष के भी आचारांग आदि बारह अंग होते हैं।

बारह अंगों में सम्पूर्ण दृष्टिवाद तो दो पाट तक ही चलता है इसलिये दृष्टिवाद का तो विच्छेद हो गया है। वर्तमान में ग्यारह अंग ही उपलब्ध होते हैं। उसमें विपाक सूत्र ग्यारहवां-अंतिम अंग सूत्र है।

विपाक सूत्र का अर्थ है - वह सूत्र (शास्त्र) जिसमें विपाक - कर्मफल का वर्णन हो। कर्मफल भी दो प्रकार का होता है - सुखरूप और दुःखरूप। कर्मफल के इन दो भेदों के कारण ही विपाक सूत्र के दो विभाग - श्रुतस्कंध हैं - १. दुःखविपाक और २. सुखविपाक। दुःख विपाक में दुःख रूप फल का और सुखविपाक में सुख रूप फल का वर्णन है। दुःख विपाक के दश अध्ययन हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं - १. मृगापुत्र २. उज्झितक ३. अभग्नसेन ४. शकट ५. बृहस्पति ६. नन्दिवर्धन ७. उम्बरदत्त ८. शौरिकदत्त ९. देवदत्ता और १०. अञ्जू। इनमें दस ऐसे व्यक्तियों का जीवन वृत्तान्त है जिन्होंने पूर्वजन्म में अशुभ कर्मों का उपार्जन किया था। सुखविपाक के भी दश अध्ययन हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं - १. सुबाहु २ भद्रनन्दी ३. सुजात ४. सुवासव ५. जिनदास ६. धनपति ७. महाबल ८. भद्रनंदी ९. महचन्द्र और १०. वरदत्त। इनमें दश ऐसे व्यक्तियों का जीवन वृत्तान्त है जिन्होंने पूर्वजन्म में शुभ कर्मों का उपार्जन किया था। दुःख विपाक और सुखविपाक के समुदाय का नाम विपाक सूत्र है।

विपाक सूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध दुःखविपाक के दश अध्ययनों का वर्णन इस प्रकार है --

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम श्रुतस्कंध का प्रथम अध्ययन

मियापुत्ते णामं पढमं अज्झयणं

मृगापुत्र नामक प्रथम अध्ययन

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था वण्णओ, पुण्णभद्दे चेइए॥१॥

कठिन शब्दार्थ - **तेणं कालेणं** - उस काल में, **तेणं समएणं** - उस समय में, **णयरी**- नगरी, **होत्था** - थी, **वण्णओ** - वर्णक-वर्णन ग्रंथ, **पुण्णभद्दे चेइए** - पूर्णभद्र चैत्य।

भावार्थ - उस काल और उस समय में चम्पा नाम की एक नगरी थी। चम्पा नगरी का वर्णन औपपातिक सूत्र के अनुसार समझ लेना चाहिये। उस नगरी के बाहर ईशान कोण में एक पूर्णभद्र नामक चैत्य-उद्यान था।

विवेचन - '**तेणं कालेणं**' - में 'काल' शब्द अवसर्पिणी काल के चौथे आरे का बोधक है और '**तेणं समएणं**' में 'समय' शब्द से चौथे आरे के उस भाग का ग्रहण है जब यह कथा कही जा रही है।

'**वण्णओ**' पद से सूत्रकार का अभिप्राय वर्णन ग्रंथ से है अर्थात् जिस प्रकार औपपातिक आदि सूत्रों में नगर, चैत्य आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है उसी प्रकार यहां भी चम्पा नगरी का वर्णन जान लेना चाहिये।

आगमों के संख्या क्रम में प्रश्न व्याकरण सूत्र दशवां और विपाक सूत्र ग्यारहवां अंग है। प्रश्नव्याकरण के बाद विपाक सूत्र का स्थान है। इन दोनों सूत्रों में पारस्परिक संबंध इस प्रकार है - प्रश्न व्याकरण सूत्र के प्रथम पांच अध्ययनों में पांच आस्रवों और अन्त के पांच अध्ययनों में पांच संवरों का निरूपण किया गया है जबकि ग्यारहवें अंग विपाक सूत्र में आस्रवजन्य अशुभ तथा संवरजन्य शुभ कर्मों के विपाक-फल का वर्णन किया गया है। इस प्रकार दोनों में पारस्परिक संबंध रहा हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुधर्मा स्वामी का पदार्पण

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मे णामं अणगारे जाइसंपण्णे वण्णओ चउद्दसपुव्वी चउणाणोवगए पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं जाव जेणेव पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ, परिसा णिग्गया, धम्मं सोच्चा णिसम्म, जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।।२॥

कठिन शब्दार्थ - **अंतेवासी** - शिष्य, **जाइसंपण्णे** - जातिसम्पन्न-जिसका मातृ-पक्ष विशुद्ध हो, **चउद्दसपुव्वी** - चौदह पूर्वों के ज्ञाता, **चउणाणोवगए** - चार ज्ञानों के धारक, **अज्जसुहम्मे** - आर्य सुधर्मा, **संपरिवुडे** - सम्परिवृत्त-घिरे हुए, **पुव्वाणुपुव्विं** - पूर्वानुपूर्वी से-क्रमशः, **चरमाणे** - विहार करते हुए, **अहापडिरूवं** - यथाप्रतिरूप-अनगारोचित (साधु वृत्ति के अनुरूप) अवग्रह ग्रहण करके, **परिसा** - परिषद्-जनता, **णिग्गया** - निकली, **धम्मं** - धर्मकथा, **सोच्चा** - सुनकर, **णिसम्म** - हृदय में धारण कर, **पाउब्भूया** - आई थी, **दिसिं** - दिशा में, **पडिगया** - लौट गयी-चली गयी।

भावार्थ - उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य चतुर्दश पूर्व के ज्ञाता, चार ज्ञानों के धारक, जातिसंपन्न आर्य सुधर्मा स्वामी पांच सौ अनगारों से घिरे हुए क्रमशः विहार करते हुए यावत् जहां चंपानगरी का पूर्णभद्र उद्यान था वहां पधारे, पधार कर साधुवृत्ति के अनुरूप अवग्रह स्थान ग्रहण करके यावत् तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। परिषद् (जनता) निकली। धर्मकथा सुन करके, हृदय में धारण करके जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा में लौट गयी।

विवेचन - आर्य सुधर्मा स्वामी का वर्णन करते हुए सूत्रकार ने '**जाइसंपण्णे**' के बाद प्रयुक्त '**वण्णओ**' पद से ज्ञाताधर्मकथांग सूत्रगत निम्न पाठ का ग्रहण किया है -

''कुलसंपण्णे बल-रूव-विणय-णाण-दंसण-चरित्त-लाघव संपण्णे, ओयंसी, तेयंसी, वच्चंसी, जसंसी, जियकोहे, जियमाणे, जियमाए, जियलोहे, जियइंदिए, जियणिद्दे, जियपरिसहे, जीवियासमरणभयविप्पमुक्के तवप्पहाणे, गुणप्पहाणे एवं करण-चरण-णिग्गह-णिच्छय-अज्जव-मद्दव-लाघव-खंति-गुत्ति-मुत्ति-विज्जामंत-बंभवय-णय-णियम-सच्च-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोय-णाणदंसण चरित्ते ओराले घोरे घोरव्वए घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढ सरीरे संखित्त विउल तेउल्लेसे......

अर्थात् आर्य सुधर्मा स्वामी जातिसंपन्न (जिसका मातृपक्ष निर्मल हो) कुल संपन्न (उत्तम पितृपक्ष), बल संपन्न, रूप संपन्न, विनय वाले, चार ज्ञान सहित, क्षायिक समकित युक्त, चारित्र संपन्न, लाघव संपन्न - द्रव्य से अल्प उपधि वाले और भाव से ऋद्धि, रस और साता रूप तीन गौरव से रहित, ओजस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी, क्रोध, मान, माया और लोभ को जीतने वाले, इन्द्रिय विजेता, निद्रा के विजेता, परीषहों को जीतने वाले, जीने की आशा तथा मृत्यु के भय से रहित, तप प्रधान-उत्कृष्ट तप करने वाले, गुणप्रधान-उत्कृष्ट संयम गुण वाले, पिण्डशुद्धि आदि करण सत्तरी प्रधान, महाव्रत आदि चरणसत्तरी प्रधान, निग्रह प्रधान-अनाचार में प्रवर्तित नहीं होने वाले, निश्चय-तत्त्व का निश्चय करने में उत्तम, आर्जव, मार्दव, लाघव, क्षमा आदि गुणों से युक्त, गुप्ति और मुक्ति-निर्लोभीपन में श्रेष्ठ, विद्या और मंत्र में कुशल, ब्रह्मचर्य की साधना में कुशल, वेद, नय और नियम प्रधान, सत्य, ज्ञान, दर्शन और चारित्र में श्रेष्ठ उदार, घोरव्रत-दूसरों के लिये जिन व्रतों का अनुष्ठान दुष्कर प्रतीत हो ऐसे विशुद्ध महाव्रतों को पालने वाले, घोर तपस्वी-उग्र तपस्या करने वाले, घोर ब्रह्मचर्यवासी-उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य के धारक, उज्झित शरीर-शरीर के सत्कार-श्रृंगार से रहित और संक्षिप्त विपुल तेजोलेश्या के धारक आदि गुणों से युक्त थे।

चउद्दसपुव्वी - चतुर्दशपूर्वी-आर्य सुधर्मा स्वामी चौदह पूर्वों के पूर्ण ज्ञाता थे।

तीर्थ का प्रवर्तन करते समय तीर्थंकर भगवान् जिस अर्थ का गणधरों को पहले पहल उपदेश देते हैं अथवा गणधर सर्वप्रथम जिस अर्थ को सूत्ररूप में गूंथते हैं उसे 'पूर्व' कहते हैं। नंदीसूत्र में चौदह पूर्वों के नाम और अर्थ इस प्रकार दिये हैं -

१. उत्पाद पूर्व - इस पूर्व में सभी द्रव्य और सभी पर्यायों के उत्पाद को लेकर प्ररूपणा की गई है।

२. अग्रायणीय पूर्व - इसमें सभी द्रव्य, सभी पर्याय और सभी जीवों के परिमाण का वर्णन है।

३. वीर्यप्रवाद पूर्व - इसमें जीवों और अजीवों की शक्ति का वर्णन है।

४. अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व - संसार में धर्मास्तिकाय आदि जो वस्तुएं विद्यमान हैं तथा आकाश कुसुम आदि जो अविद्यमान है उन सब का इस पूर्व में वर्णन है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५. ज्ञानप्रवाद पूर्व - इसमें मतिज्ञान आदि ज्ञान के ५ भेदों का वर्णन है।

६. सत्य प्रवाद पूर्व - इसमें सत्यरूप संयम अथवा सत्यवचन का विस्तृत विवेचन है।

७. आत्म प्रवाद पूर्व - इसमें अनेक नय तथा मतों की अपेक्षा से आत्मा का वर्णन है।

८. कर्म प्रवाद पूर्व - इसमें आठ कर्मों का प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश आदि भेदों के द्वारा विस्तृत वर्णन किया गया है।

९. प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व - इसमें प्रत्याख्यानों का भेद प्रभेद युक्त वर्णन है।

१०. विद्यानुप्रवाद पूर्व - इस पूर्व में विविध प्रकार की विद्याओं तथा सिद्धियों का वर्णन है।

११. अवन्ध्य पूर्व - इस पूर्व में ज्ञान, तप, संयम आदि शुभ फल वाले तथा प्रमाद आदि अशुभ फल वाले अवन्ध्य अर्थात् निष्फल नहीं जाने वाले कार्यों का वर्णन है।

१२. प्राणायुष्प्रवाद पूर्व - इसमें दश प्राण और आयु आदि का भेद प्रभेद पूर्वक विस्तृत वर्णन है।

१३. क्रियाविशाल पूर्व - इसमें कायिकी, आधिकरणिकी आदि क्रियाओं तथा संयम में उपकारक क्रियाओं का वर्णन है।

१४. लोक बिंदु सार पूर्व - संसार में श्रुतज्ञान में जो शास्त्र बिंदु की तरह सबसे श्रेष्ठ है वह लोक बिंदु सार पूर्व है।

ऐसे आर्य सुधर्मा स्वामी के चंपा नगरी में पधारने पर नगर की श्रद्धालु जनता उनके दर्शनार्थ एवं धर्मोपदेश सुनने के लिये आई और धर्मोपदेश सुन कर, उसे हृदय में धारण कर चली गई।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मस्स अंतेवासी अज्जजंबू णामं अणगारे सत्तुस्सेहे जहा गोयमसामी तहा जाव झाणकोट्ठोवगए विहरइ॥३॥

कठिन शब्दार्थ - सत्तुस्सेहे - सात हाथ प्रमाण शरीर वाले, **झाणकोट्ठोवगए** - ध्यान रूप कोष्ठ को प्राप्त हुए।

भावार्थ - उस काल में और उस समय में आर्य सुधर्मा स्वामी के शिष्य आर्य जम्बूस्वामी जो सात हाथ प्रमाण शरीर वाले थे। जिस प्रकार गौतम स्वामी का वर्णन है उसी प्रकार के आचार को धारण करने वाले यावत् ध्यान रूप कोष्ठ को प्राप्त हुए आर्य जम्बू नामक अनगार विचर रहे थे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - सुधर्मा स्वामी का वर्णन करने के बाद सूत्रकार ने जंबू स्वामी ने विषय में अधिक कुछ नहीं लिखते हुए गौतम स्वामी के समान इनके जीवन को बतला कर इनकी आदर्श साधुचर्या का संक्षेप में परिचय दे दिया है। गौतम स्वामी के साधु जीवन का वर्णन भगवती सूत्र के शतक १ उद्देशक १ में किया गया है। जिज्ञासुओं के लिए वह स्थल दर्शनीय एवं मननीय है।

जंबू स्वामी की पृच्छा और सुधर्मा स्वामी का उत्तर

तए णं अज्जजंबू णामं अणगारे जायसड्ढे जाव जेणेव अज्जसुहम्मे अणगारे तेणेव उवागए तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ करेत्ता, वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जाव पज्जुवासइ (पज्जुवासमाणे) एवं वयासी-जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं दसमस्स अंगस्स पण्हावागरणाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, एक्कारसमस्स णं भंते! अंगस्स विवागसुयस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?॥४॥

तए णं अज्जसुहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स अंगस्स विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा पण्णत्ता, तंजहा-दुहविवागा य सुहविवागा य॥५॥

जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स अंगस्स विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा पण्णत्ता, तंजहा-दुहविवागा य सुहविवागा य, पढमस्स णं भंते! सुयक्खंधस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता?॥६॥

तए णं अज्जसुहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! समणेणं० आइगरेणं तित्थगरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा-

'मियापुत्ते य उज्झियए अभग्ग सगडे बहस्सई णंदी।
उंबर सोरियदत्ते य देवदत्ता य अंजू य॥१॥'॥७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **जायसड्ढे** - जातश्रद्धः-श्रद्धा से युक्त, **पज्जुवासइ** - पर्युपासना करते हैं, **अयमट्ठे** - यह अर्थ, **पण्णत्ते** - प्रतिपादन किया है-फरमाया है, **विवागसुयस्स** - विपाक श्रुत (सूत्र), **सुयखंधा** - श्रुतस्कन्ध, **दुहविवागा** - दुःखविपाक, **सुहविवागा** - सुखविपाक।

भावार्थ - तदनन्तर आर्य जंबू नामक अनगार श्रद्धा से युक्त यावत् जहाँ पर सुधर्मा स्वामी विराजमान थे वहाँ आये, आकर तीन बार आदक्षिणा प्रदक्षिणा सहित विधि युक्त वंदना नमस्कार करते हैं। वंदना नमस्कार करके यावत् पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले-

हे भगवन्! मोक्ष संप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दशवें अंग प्रश्नव्याकरण सूत्र का यह अर्थ प्रतिपादन किया है तो हे भगवन्! ग्यारहवें अंग विपाकश्रुत का यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने क्या अर्थ फरमाया है?

तब आर्य सुधर्मा अनगार ने आर्य जम्बू नामक अनगार को इस प्रकार कहा-हे जम्बू! निश्चय से इस प्रकार यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने ग्यारहवें अंग विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कन्ध प्रतिपादित किये हैं। यथा-दुःखविपाक और सुखविपाक।

हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाक सूत्र नामक ग्यारहवें अंग के दो श्रुतस्कन्ध फरमाये हैं - जैसे कि-दुःखविपाक तथा सुखविपाक, तो हे भगवन्! प्रथम दुःखविपाक नामक श्रुतस्कन्ध के यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने कितने अध्ययन प्रतिपादित किये हैं?

तब आर्य सुधर्मा अनगार ने जम्बू अनगार को इस प्रकार कहा - हे जम्बू! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के दश अध्ययन प्रतिपादित किये हैं। वे इस प्रकार हैं - १. मृगापुत्र २. उज्झितक ३. अभग्न ४. शकट ५. वृहस्पति ६. नन्दी ७. उम्बर ८. शौरिकदत्त ९. देवदत्ता और १०. अंजू।

विवेचन - आर्य जंबूस्वामी, आर्य सुधर्मा स्वामी को विधिवत् वन्दना नमस्कार कर उनकी सेवा में उपस्थित हुए और उपस्थित होकर बड़े विनम्र भाव से उनके श्रीचरणों में निवेदन किया कि-'हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने प्रश्नव्याकरण नामक दशवें अंग का जो अर्थ फरमाया है वह तो मैंने आपके श्रीमुख से सुन लिया है अब आप यह बतलाने की कृपा करें कि प्रभु ने विपाक सूत्र नामक ग्यारहवें अंग का क्या अर्थ फरमाया है?'

सुधर्मा स्वामी ने जंबू अनगार की जिज्ञासा का समाधान करते हुए फरमाया कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने ग्यारहवें अंग सूत्र-विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कंध कहे हैं। श्रुतस्कंध का अर्थ है - विभाग विशेष अर्थात् आगम के एक मुख्य विभाग अथवा कतिपय अध्ययनों के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समुदाय का नाम श्रुतस्कंध है। दो श्रुतस्कंधों में पहले का नाम दुःखविपाक है और दूसरे का नाम सुखविपाक है। जिसमें अशुभकर्मों के दुःखरूप विपाक-परिणाम विशेष का दृष्टान्त पूर्वक वर्णन हो, उसे **दुःखविपाक** और जिसमें शुभकर्मों के सुखरूप फल विशेष का दृष्टान्त पूर्वक प्रतिपादन हो, उसे **सुखविपाक** कहते हैं।

'दुःखविपाक नामक प्रथम श्रुतस्कंध के कितने अध्ययन हैं?'

जंबू स्वामी के इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मास्वामी ने दश अध्ययनों के नाम इस प्रकार फरमाये हैं - १. मृगापुत्र २. उज्झितक ३. अभग्नसेन ४. शकट ५. वृहस्पति ६. नंदीवर्धन ७. उम्बरदत्त ८. शौरिकदत्त ९. देवदत्ता और १०. अञ्जू।

प्रस्तुत श्रुतस्कंध में मृगापुत्र आदि के नामों पर ही अध्ययनों का नाम निर्देश किया गया है क्योंकि दश अध्ययनों में क्रमशः इन्हीं दशों के जीवन वृत्तान्त की प्रधानता है।

जइ णं भंते! समणेणं० आइगरेणं तित्थगरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा-मियापुत्ते य जाव अंजू य, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?॥८॥

भावार्थ - हे भगवन्! यदि मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के दश अध्ययन फरमाये हैं यथा - मृगापुत्र यावत् अंजू तो हे भगवन्! दुःखविपाक के प्रथम अध्ययन का यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने क्या अर्थ प्रतिपादन किया है?

विवेचन - दुःखविपाक के दश अध्ययनों में से प्रथम अध्ययन में किस विषय का प्रतिपादन किया गया है? जम्बूस्वामी के इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी प्रथम अध्ययनगत विषय का वर्णन आरंभ करते हैं -

तए णं से सुहम्मे अणगारे जंबुं अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं मियग्गामे णामं णयरे होत्था वण्णओ, तस्स णं मियग्गामस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए चंदणपायवे णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउय पुप्फ-फल-समिद्धे वण्णओ। तत्थ णं सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था चिराइय जहा पुण्णभद्दे। तत्थ णं मियग्गामे णयरे विजए णामं खत्तिए राया परिवसइ वण्णओ। तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स मियाणामं देवी होत्था अहीण पडिपुण्ण पंचिंदिय सरीरा वण्णओ॥९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **मियग्गामे** - मृगा ग्राम, **उत्तरपुरत्थिमे** - उत्तर पूर्व, **दिसिभाए** - दिग्भाग में अर्थात् ईशान कोण में, **चंदण पायवे** - चन्दन पादप, **सव्वोउय पुप्फ-फल-समिद्धे** - सर्व ऋतुओं में होने वाले फल फूलों से युक्त, **जक्खाययणे** - यक्षायतन, **चिराईए**- पुराना, **खत्तिए** - क्षत्रिय, **राया** - राजा, **परिवसइ** - रहता था, **अहीण पडिपुण्ण पंचिंदिय सरीरा** - पांचों इन्द्रियाँ परिपूर्ण या निर्दोष शरीर।

भावार्थ - तत्पश्चात् सुधर्मा अनगार जम्बू अनगार को इस प्रकार कहने लगे - हे जम्बू! उस काल और उस समय में मृगा ग्राम नामक एक प्रसिद्ध नगर था। उस मृगाग्राम नगर के बाहर उत्तर पूर्व दिशा के मध्य अर्थात् ईशान कोण में संपूर्ण ऋतुओं में होने वाले फल पुष्पादि से युक्त चंदन पादप नामक एक रमणीय उद्यान था। उस उद्यान में सुधर्मा नामक यक्ष का एक पुराना (प्राचीन) यक्षायतन था जिसका वर्णन पूर्णभद्र के समान समझ लेना चाहिये। उस मृगाग्राम नगर में विजय नाम का एक क्षत्रिय राजा रहता था। उस विजय नामक क्षत्रिय राजा की मृगा नामक रानी थी जो सर्वांग सुंदर, रूप लावण्य से युक्त थी।

विवेचन - प्रस्तुत मूल पाठ में चार स्थानों पर **'वण्णओ'** (वर्णक) पद का प्रयोग हुआ है। प्रथम का नगर के साथ, दूसरा उद्यान के साथ, तीसरा विजय राजा और चौथा मृगादेवी के साथ। जैनागमों की यह विशिष्ट वर्णन शैली है कि यदि किसी एक आगम में उद्यान, नगर, चैत्य, राजा, रानी तथा संयमशील साधु या साध्वी का सांगोपांग वर्णन कर दिया हो तो दूसरे स्थान में अर्थात् दूसरे आगमों में प्रसंगवश वर्णन की आवश्यकता को देखते हुए बिस्तार भय से उसका पूरा वर्णन नहीं करते हुए आगमकार उसके लिये **'वण्णओ'** यह सांकेतिक शब्द प्रयुक्त कर देते हैं। अतः **'वण्णओ'** शब्द से औपपातिक सूत्र में वर्णित नगर, उद्यान, यक्षायतन, राजा और रानी के वर्णन के अनुसार मृगाग्राम नगर, चन्दन पादप उद्यान, सुधर्मा यक्षायतन, विजय राजा और मृगावती का वर्णन समझ लेना चाहिये।

मृगापुत्र का वर्णन

तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते णामं दारए होत्था जाइअंधे जाइमूए जाइबहिरे जाइपंगुले य हुंडे य वायव्वे, णत्थि णं तस्स दारगस्स हत्था वा पाया वा कण्णा वा अच्छी वा णासा वा, केवलं से तेसिं अंगोवंगाणं आगिई आगिइमेत्ते। तए णं सा मियादेवी तं मियापुत्तं दारगं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तेपाणेणं पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ॥१०॥

कठिन शब्दार्थ - अत्तए - आत्मज, **मियापुत्ते** - मृगापुत्र, **दारए** - बालक, **जाइअंधे**- जाति अन्ध-जन्म से अंधा, **जाइमूए** - जन्म से मूक-गूंगा, **जाइबहिरे** - जन्म से बहरा, **जाइपंगुले**- जन्म से पंगुल-लूला लंगडा, **हुण्डे** - हुण्ड, **आयवे** - वात (वायु) प्रधान, वात व्याधि से पीड़ित, **हत्था** - हाथ, **पाया** - पांव, **कण्णा** - कान, **अच्छी** - आंखे, **णासा** - नाक, **अंगोवंगाणं** - अंगोपांगों की, **आगिई** - आकृति, **आगिइमित्ते** - आकार मात्र थी, **रहस्सियंसि** - गुप्त, **भूमिघरंसि**- भूमिगृह (मकान के नीचे के तलघर-भौंयरे) में, **रहस्सिएणं**- गुप्त रूप से, **भत्तपाणएणं**- आहार पानी से, **पडिजागरमाणी** - सेवा करती हुई।

भावार्थ - उस विजय क्षत्रिय का पुत्र और मृगादेवी का आत्मज मृगापुत्र नाम का एक बालक था। जो कि जन्मकाल से ही अन्धा, गूंगा, बहरा, पंगु, हुण्ड और वातरोगी था। उसके हाथ, पांव, कान, आंखें और नाक भी नहीं थी। केवल इन अंगोपांगों का आकार मात्र था और वह आकार चिह्न भी उचित स्वरूप वाला नहीं था। तदनन्तर वह मृगादेवी गुप्त भूमिगृह में गुप्त रूप से आहार पानी आदि के द्वारा उस मृगापुत्र बालक की सेवा करती हुई जीवन व्यतीत कर रही थी।

जन्मान्ध पुरुष का वर्णन

तत्थ णं मियग्गामे णयरे एगे जाइअंधे पुरिसे परिवसइ, से णं एगेणं सचक्खुएणं पुरिसेणं पुरओ दंडएणं पगड्डिज्जमाणे पगड्डिज्जमाणे फुट्टहडाहडसीसे मच्छिया-चडगर-पहकरेणं अण्णिज्जमाणमग्गे मियग्गामे णयरे गेहे गेहे कालुणवडियाए वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ॥११॥

कठिन शब्दार्थ - सचक्खुएणं - चक्षु वाले, **पुरओ** - आगे, **दंडएणं** - दण्ड के द्वारा, **पगड्डिज्जमाणे** - ले जाया जाता हुआ, **फुट्टहडाहडसीसे** - मस्तक के बाल अत्यंत अस्तव्यस्त-बिखरे हुए, **मच्छिया-चडगर-पहकरेणं** - मक्षिकाओं (मक्खियों) के विस्तृत समूह से, **अण्णिज्जमाणमग्गे** - जिसका मार्ग अनुगत हो रहा था, **कालुणवडियाए** - कारुण्य-दैन्य वृत्ति से, **वित्तिं** - आजीविका।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस मृगाग्राम नगर में एक जन्मान्ध पुरुष रहता था। आंखों वाला एक मनुष्य उसकी लकड़ी पकड़े हुए रहा करता था। उसी के सहारे वह चला करता था। उसके शिर के बाल अत्यंत अस्तव्यस्त-बिखरे हुए थे। अत्यंत मलिन होने के कारण उसके पीछे मक्खियों के झुण्ड के झुण्ड लगे रहते थे। ऐसा वह जन्मान्ध पुरुष मृगाग्राम नगर के घर-घर में कारुण्य-दैन्यमय भिक्षा वृत्ति से अपनी आजीविका चला रहा था।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए जाव परिसा णिग्गया। तए णं से विजए खत्तिए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जहा कूणिए तहा णिग्गए जाव पज्जुवासइ॥१२॥

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी नगर के बाहर चंदनपादप उद्यान में पधारे। उनके पधारने के समाचार मिलते ही जनता उनके दर्शनार्थ निकली। तत्पश्चात् विजय नामक क्षत्रिय राजा भी महाराजा कोणिक के समान भगवान् के चरणों में उपस्थित होकर उनकी पर्युपासना करने लगा।

जन्मान्ध पुरुष भगवान् की सेवामें

तए णं से जाइअंधे पुरिसे तं महया जणसद्दं जाव सुणेत्ता तं पुरिसं एवं वयासी-किं णं देवाणुप्पिया! अज्ज मियग्गामे णयरे इंदमहेइ वा जाव णिग्गच्छइ?

तए णं से पुरिसे तं जाइअंधपुरिसं एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिया! इंदमहेइ वा जाव णिग्गच्छइ, एवं खलु देवाणुप्पिया! समणे जाव विहरइ, तए णं एए जाव णिग्गच्छंति। तए णं से अंधपुरिसे तं पुरिसं एवं वयासी-गच्छामो णं देवाणुप्पिया! अम्हेवि समणं भगवं जाव पज्जुवासामो।

तए णं से जाइअंधे पुरिसे तेणं पुरओ-दंडएणं (पुरिसेणं) पगड्ढिज्जमाणे पगड्ढिज्जमाणे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए २ त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करेत्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जाव पज्जुवासइ। तए णं समणे भगवं महावीरे विजयस्स खत्तियस्स तीसे य० धम्ममाइक्खइ जाव परिसा (जाव) पडिगया, विजए वि गए॥१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - इंदमहेइ - इन्द्र महोत्सव, **णिग्गच्छइ** - नागरिक जा रहे हैं, **धम्ममाइक्खइ** - धर्मोपदेश करते हैं।

भावार्थ - तब वह जन्मान्ध पुरुष नगर के कोलाहलमय वातावरण को जान कर उस पुरुष के प्रति इस प्रकार बोला - 'हे देवानुप्रिय! क्या आज मृगाग्राम नगर में इन्द्र महोत्सव है जिसके कारण जनता नगर से बाहर जा रही है?'

उस पुरुष ने कहा - 'हे देवानुप्रिय! आज नगर में इन्द्र महोत्सव नहीं है किंतु श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे हैं वहां ये सब लोग दर्शनार्थ जा रहे हैं।' तब उस जन्मांध पुरुष ने कहा - 'चलो हम भी चलें और चल कर भगवान् की पर्युपासना करें।'

तदनन्तर दण्ड के द्वारा आगे को ले जाया जाता हुआ वह जन्मांध पुरुष जहां पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विराजमान थे वहां पर आया। आकर वह तीन बार दक्षिण ओर से प्रारंभ करके प्रदक्षिणा करता है। प्रदक्षिणा करके वंदना नमस्कार किया तत्पश्चात् वह भगवान् की पर्युपासना में तत्पर हुआ। तदनन्तर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विजय राजा और परिषद् को धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश को सुन कर विजय राजा तथा परिषद् चली गई।

गौतमस्वामी की जिज्ञासा

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे जाव विहरइ। तए णं से भगवं गोयमे तं जाइअंधपुरिसं पासइ पासित्ता जायसड्ढे जाव एवं वयासी-अत्थि णं भंते! केइ पुरिसे जाइअंधे जाइअंधारूवे? हंता अत्थि, कहि णं भंते! से पुरिसे जाइअंधे जाइअंधारूवे? एवं खलु गोयमा! इहेव मियग्गामे णयरे विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियादेवीए अत्तए मियापुत्ते णामं दारए जाइअंधे जाइअंधारूवे, णत्थि णं तस्स दारगस्स जाव आगिइमेत्ते, तए णं सा मियादेवी जाव पडिजागरमाणी-पडिजागरमाणी विहरइ॥१४॥

कठिन शब्दार्थ - जाइअंधारूवे - जन्मान्ध रूप।

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार भी वहां विराजमान थे। भगवान् गौतमस्वामी ने उस अंधे पुरुष को

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देखा, देख कर जातश्रद्ध (प्रवृत्त हुई श्रद्धा वाले) गौतमस्वामी ने भगवान् महावीर स्वामी से निवेदन किया - 'हे भगवन्! क्या कोई ऐसा पुरुष भी है जो जन्मान्ध और जन्मान्ध रूप हो?'

भगवान् ने फरमाया - 'हाँ, ऐसा पुरुष है।'

हे भगवन्! वह पुरुष कहां है जो जन्मान्ध और जन्मान्ध-रूप हो?

भगवान् ने फरमाया - 'हे गौतम! इसी मृगाग्राम नगर के विजय नामक क्षत्रिय राजा का पुत्र, मृगादेवी का आत्मज मृगापुत्र नामक बालक है जो जन्मान्ध और जन्मान्ध रूप है। उसके हाथ, पैर, आंखें आदि अंगोपांग भी नहीं हैं मात्र उन अंगोपांगों के आकार ही हैं। महारानी मृगादेवी सावधानी पूर्वक उसका पालन पोषण कर रही है।

विवेचन - शंका - जन्मान्ध और जन्मान्ध-रूप में क्या अंतर है?

समाधान - जन्मान्ध का अर्थ है - जो जन्मकाल से अंधा हो, नेत्र ज्योति हीन हो तथा जन्मान्ध-रूप अर्थात् जिसके नेत्रों की उत्पत्ति ही नहीं हो पाई हो। दोनों में अंतर इतना है कि जन्मान्ध के नेत्रों का मात्र आकार होता है उसमें देखने की शक्ति नहीं होती जबकि जन्मांध-रूप के नेत्रों का आकार भी नहीं बनने पाता, इसलिये वह अत्यधिक कुरूप तथा बीभत्स होता है।

गौतम स्वामी का प्रयोजन

तए णं से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं भंते! अहं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मियापुत्तं दारयं पासित्तए। अहासुहं देवाणुप्पिया!

तए णं से भगवं गोयमे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठतुट्ठे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता अतुरियं जाव सोहेमाणे-सोहेमाणे जेणेव मियग्गामे णयरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता मियग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव मियाए देवीए गिहे तेणेव उवागच्छइ।

तए णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ जाव एवं वयासी-संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमागमणप्पओयणं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से भगवं गोयमे मियादेविं एवं वयासी-अहं णं देवाणुप्पिए! तव पुत्तं पासिउं हव्वमागए॥१५॥

कठिन शब्दार्थ - **अब्भणुण्णाए समाणे** - अभ्युनुज्ञात होकर अर्थात् आपकी आज्ञा प्राप्त कर, **पासित्तए** - देखना, **अतुरियं** - अशीघ्रता से, **सोहेमाणे** - ईर्यासमिति पूर्वक गमन करते हुए, **किमागमणप्पओयणं** - आपके पधारने का क्या प्रयोजन है? **संदिसंतु** - बतलावें।

भावार्थ - तदनन्तर भगवान् गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किया, वंदना नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया - 'हे भगवन्! यदि आपकी आज्ञा प्राप्त हो तो मैं मृगापुत्र बालक को देखना चाहता हूँ।'

भगवान् ने फरमाया - 'हे गौतम! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।'

तब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के द्वारा आज्ञा प्राप्त कर गौतम स्वामी प्रसन्न एवं संतुष्ट हुए और भगवान् महावीर स्वामी के पास से निकले, निकल कर शीघ्रता रहित यावत् ईर्यासमिति पूर्वक गमन करते हुए जहां मृगाग्राम नगर था वहां आये और मृगाग्राम नगर के मध्य में से होते हुए जहां मृगादेवी का घर था वहां आये।

तदनन्तर उस मृगादेवी ने भगवान् गौतमस्वामी को आते हुए देखा और देख कर हृष्टतुष्ट हुई यावत् इस प्रकार कहा - 'हे भगवन्! आपके यहां पधारने का क्या प्रयोजन है? कृपा कर बतलावें।' तब गौतमस्वामी ने कहा - 'हे देवानुप्रिये! मैं तुम्हारे पुत्र को देखने आया हूँ।'

मृगापुत्र को ही देखने की भावना

तए णं सा मियादेवी मियापुत्तस्स दारयस्स अणुमग्गजायए चत्तारि पुत्ते सव्वालंकारविभूसिए करेइ करेत्ता भगवओ गोयमस्स पाएसु पाडेइ पाडित्ता एवं वयासी-एए णं भंते! मम पुत्ते पासह।

तए णं से भगवं गोयमे मियं देविं एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिए! अहं एए तव पुत्ते पासिउं हव्वमागए, तत्थ णं जे से तव जेट्ठे पुत्ते मियापुत्ते दारए जाइअंधे जाइअंधारूवे जं णं तुमं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी-पडिजागरमाणी विहरसि, तं णं अहं पासिउं हव्वमागए॥१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - अणुमग्गजायए - पश्चात् उत्पन्न हुए, सव्वालंकारविभूसिए - सर्व अलंकारों से विभूषित।

भावार्थ - तत्पश्चात् मृगादेवी ने मृगापुत्र के पश्चात् उत्पन्न हुए चार पुत्रों को सर्व अलंकारों से अलंकृत किया और अलंकृत करके भगवान् गौतमस्वामी के चरणों में नमस्कार कराया, भगवान् के चरणों में नमस्कार कराके इस प्रकार बोली - 'हे भगवन्! ये मेरे पुत्र हैं आप इन्हें देख लीजिये।'

तब भगवान् गौतमस्वामी, मृगादेवी से बोले - 'हे देवानुप्रिये! मैं तुम्हारे इन पुत्रों को देखने के लिये यहां नहीं आया हूँ किंतु तुम्हारा जो ज्येष्ठ पुत्र मृगापुत्र है जो जन्मान्ध एवं जन्मान्धरूप है, जिसको तुमने एकान्त भूमिगृह में गुप्त रूप से रखा हुआ है और जिसका तुम सावधानी पूर्वक गुप्त रूप से आहार पानी आदि के द्वारा पालन पोषण कर रही हो, मैं उसी को देखने के लिये यहां आया हूँ।'

मृगापुत्र के भोजन की तैयारी

तए णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी-से के णं गोयमा! से तहारूवे णाणी वा तवस्सी वा जेणं तव एसमट्ठे मम ताव रहस्सिकए तुब्भं हव्वमक्खाए जओ णं तुब्भे जाणह? तए णं भगवं गोयमे मियं देविं एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिए! मम धम्मायरिए समणे भगवं महावीरे जाव जओ णं अहं जाणामि, जावं च णं मियादेवी भगवया गोयमेण सद्धिं एयमट्ठं संलवइ तावं च णं मियापुत्तस्स दारगस्स भत्तवेला जाया यावि होत्था।

तए णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी-तुब्भे णं भंते! इहं चेव चिट्ठह जा णं अहं तुब्भंमियापुत्तं दारगं उवदंसेमि त्तिकट्टु जेणेव भत्तपाणघरए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता वत्थपरियट्टयं करेइ, करेत्ता कट्ठसगडियं गिण्हइ गिण्हेत्ता विउलस्स असण-पाण-खाइम-साइमस्स भरेइ, भरेत्ता तं कट्ठसगडियं अणुकड्ढमाणी-अणुकड्ढमाणी जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भगवं गोयमं एवं वयासी-एह णं तुब्भे भंते! ममं अणुगच्छह जा णं अहं तुब्भं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मियापुत्तं दारगं उवदंसेमि। तए णं से भगवं गोयमे मियादेविं पिट्ठओ समणुगच्छइ॥१७॥

कठिन शब्दार्थ - **तहारूवे** - तथारूप, **णाणी** - ज्ञानी, **तवस्सी** - तपस्वी, **धम्मायरियए**- धर्माचार्य, **संलवइ** - संलाप-संभाषण कर रही थी, **भत्तवेला** - भोजन समय, **उवदंसेमि** - दिखलाती हूँ, **वत्थपरियट्टं** - वस्त्र परिवर्तन, **कट्ठसगडियं** - काष्ठशकडी-लकड़ी की छोटी गाड़ी, **अणुकड्ढमाणी** - खिंचती हुई, **अणुगच्छह** - पीछे पीछे चलें।

भावार्थ - यह सुन कर मृगादेवी ने भगवान् गौतम से निवेदन किया - 'हे भगवन्! वह ऐसा ज्ञानी और तपस्वी कौन है? जिसने मेरी इस रहस्यपूर्ण गुप्त वार्ता को आपसे कहा, जिससे आपने उस गुप्त रहस्य को जाना है।'

तब भगवान् गौतमस्वामी ने मृगादेवी को कहा - 'हे देवानुप्रिये! इस बालक का वृत्तांत मेरे धर्माचार्य श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने मेरे को कहा था, इसलिये मैं जानता हूँ।' जिस समय मृगादेवी भगवान् गौतम के साथ संलाप-संभाषण कर रही थी उसी समय मृगापुत्र बालक के भोजन का समय हो गया था। अतः मृगादेवी ने गौतमस्वामी से निवेदन किया कि - 'हे भगवन्! आप यहीं ठहरें। मैं मृगापुत्र बालक को आपको दिखलाती हूँ।' इतना कह कर वह जिस स्थान पर भोजनालय था वहां आती है वहां आकर प्रथम वेश परिवर्तन करती है, वस्त्र बदल कर काष्ठ शकडी-काठ की गाड़ी को ग्रहण करती है तथा उसमें अशन, पान, खादिम, स्वादिम को अधिक मात्रा में भरती है तदनन्तर उस काष्ठ शकडी को खिंचती हुई जहां गौतमस्वामी थे वहां आती है, आकर उसने भगवान् गौतमस्वामी से कहा - 'हे भगवन्! आप मेरे पीछे पीछे आएं। मैं आपको मृगापुत्र बालक को दिखलाती हूँ।' तब भगवान् गौतम मृगादेवी के पीछे-पीछे चलने लगे।

माता द्वारा मृगापुत्र को दिखलाना

तए णं सा मियादेवी तं कट्ठसगडियं अणुकड्ढमाणी-अणुकड्ढमाणी जेणेव भूमिघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चउप्पुडेणं वत्थेणं मुहं बंधमाणी भगवं गोयमं एवं वयासी-तुब्भे वि णं भंते! मुहपोत्तियाए मुहं बंधह, तए णं से भगवं गोयमे मियादेवीए एवं वुत्ते समाणे मुहपोत्तियाए मुहं बंधेइ॥१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **चउप्पुडेणं** - चार पुट वाले, **वत्थेणं** - वस्त्र से, **मुहं** - मुख को, **बंधमाणी**- बांधती हुई, **मुहपोत्तियाए** - मुखपोतिका-एक वस्त्र खंड-मुख को वस्त्र से, **बंधह**- बांध ले।

भावार्थ - तदनन्तर वह मृगादेवी काष्ठ शकडी को खिंचती हुई जहां पर भूमि गृह था वहां आई, आकर चतुष्पुट-चार पुट वाले वस्त्र से अपने मुख (नाक) को बांधती हुई भगवान् गौतम स्वामी से इस प्रकार बोली - आप भी मुख के वस्त्र से मुंह (नाक) को बांध ले। तब भगवान् गौतमस्वामी ने मृगादेवी के इस प्रकार कहे जाने पर मुख के वस्त्र से अपने मुख (नाक) को बांध लिया।

तए णं सा मियादेवी परंमुही भूमिघरस्स दुवारं विहाडेइ, तए णं गंधे णिग्गच्छइ से जहाणामए अहिमडेइ वा (सप्पकडेवरे इ वा) जाव तओ वि य णं अणिट्ठतराए चेव जाव गंधे पण्णत्ते॥१६॥

कठिन शब्दार्थ - **परंमुही** - परांमुख होकर (पीछे मुख करके), **विहाडेइ** - खोलती है, **अहिमडेइ** - मरे हुए सर्प के समान, **अणिट्ठतराए** - अनिष्टतर।

भावार्थ - तत्पश्चात् मृगादेवी ने परांमुख होकर जब उस भूमिगृह के द्वार को खोला तब उसमें से दुर्गन्ध आने लगी वह दुर्गन्ध मृत सर्प आदि प्राणियों की दुर्गन्ध से भी अनिष्टतर थी।

तए णं से मियापुत्ते दारए तस्स विउलस्स असण-पाण-खाइम-साइमस्स गंधेणं अभिभूए समाणे तंसि विउलंसि असण-पाण-खाइम-साइमंसि मुच्छिए० तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसएणं आहारेइ, आहारित्ता खिप्पामेव विद्धंसेइ, विद्धंसित्ता तओ पच्छा पूयत्ताए य सोणियत्ताए य परिणामेइ तं पि य णं पूयं च सोणियं च आहारेइ॥२०॥

कठिन शब्दार्थ - **अभिभूए समाणे** - अभिभूत-आकृष्ट, **मुच्छिए** - मूर्च्छित, **आसएणं**- मुख से, **खिप्पामेव** - शीघ्र ही, **विद्धंसेइ** - नष्ट हो जाता है, **पूयत्ताए** - पूय-पीब रूप में, **सोणियत्ताए** - शोणित-रुधिर रूप में, **परिणामेइ** - परिणमन को प्राप्त होता है।

भावार्थ - तदनन्तर उस महान् अशन, पान, खादिम, स्वादिम की गंध से अभिभूत-आकृष्ट तथा मूर्च्छित हुए उस मृगापुत्र ने उस महान् अशन, पान, खादिम, स्वादिम का मुख से आहार किया और शीघ्र ही वह नष्ट हो गया, जठराग्नि से पचा दिया गया। वह आहार शीघ्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पीव (मवाद) और रुधिर में परिणत-परिवर्तित हो गया। मृगापुत्र ने पीव व रुधिर रूप में परिवर्तित उस आहार का वमन कर दिया और तत्काल उस वमन किये हुए पदार्थ को वह चाटने लगा अर्थात् वह बालक अपने द्वारा वमन किये हुए पीव रुधिर आदि को भी खा गया।

गौतम स्वामी का चिन्तन

तए णं भगवओ गोयमस्स तं मियापुत्तं दारगं-पासित्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए ५ समुप्पज्जित्था - अहो णं इमे दारए पुरापोराणाणं दुच्चिणाणं दुप्पडिक्कंताणं असुभाणं पावाणं कडाणं कम्माणं पावगं फलवित्तिविसेसं पच्चणुभवमाणे विहरइ, ण मे दिट्ठा णरगा वा णेरइया वा पच्चक्खं खलु अयं पुरिसे णरयपडिरूवियं वेयणं वेएइ त्तिकट्टु मियं देविं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता मियाए देवीए गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता मियग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करेत्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु अहं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मियग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं अणुप्पविसामि जेणेव मियाए देवीए गिहे तेणेव उवागए, तए णं सा मियादेवी ममं एज्जमाणं पासइ पासित्ता हट्ठा तं चेव सव्वं जाव पूयं च सोणियं च आहारेइ, तए णं मम इमे अज्झत्थिए० समुप्पज्जित्था-अहो णं इमे दारए पुरा जाव विहरइ॥२१॥

कठिन शब्दार्थ - **अज्झत्थिए** - विचार, **समुप्पज्जित्था** - उत्पन्न हुए, **पोराणाणं** - प्राचीन, **दुच्चिण्णा** - दुश्चीर्ण-दुष्टता से उपार्जन किये गये, **दुप्पडिक्कंताणं** - दुष्प्रतिक्रान्त-जो धार्मिक क्रियानुष्ठान से नष्ट नहीं किये गये हों, **असुभाणं** - अशुभ, **पावाणं** - पापमय, **कडाणकम्माणं** - किये हुए कर्मों के, **पावगं** - पाप रूप, **फलवित्तिविसेसं** - फल वृत्ति विशेष-विपाक का, **पच्चणुभवमाणे** - अनुभव करता हुआ, **णरयपडिरूवियं** - नरक के प्रतिरूप-सदृश, **पच्चक्खं** - प्रत्यक्ष, **वेयणं** - वेदना का, **वेएइ** - वेदन-अनुभव कर रहा है।

भावार्थ - तदनन्तर मृगापुत्र बालक की ऐसी दशा देखकर भगवान् गौतमस्वामी के मन में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विचार उत्पन्न हुए - 'अहो! यह बालक पूर्व के प्राचीन (पूर्वजन्मों के) दुच्चीर्ण और दुष्प्रतिक्रान्त अशुभ पापमय किये हुए कर्मों के पापरूप फल वृत्ति विशेष का - पाप रूप फल का अनुभव करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है। नरक और नारकी तो मैंने नहीं देखे किंतु यह पुरुष-मृगापुत्र नरक के प्रतिरूप-सदृश प्रत्यक्ष रूप से वेदना का अनुभव कर रहा है। इस प्रकार विचार करते हुए भगवान् गौतमस्वामी ने मृगादेवी से पूछ कर कि अब मैं जा रहा हूं, उसके घर से निकले और निकल कर मृगाग्राम के मध्य-मध्य होते हुए जहां भगवान् महावीर स्वामी विराजमान थे वहां पधारे। पधार कर भगवान् महावीर स्वामी को आदक्षिणा-प्रदक्षिणा करके वंदन-नमस्कार किया और वंदना नमस्कार करके इस प्रकार बोले - 'हे भगवन्! आपकी आज्ञा प्राप्त करके मैं मृगाग्राम नगर के मध्य भाग में होता हुआ जहां मृगादेवी का घर था वहां पहुँचा।' मुझे आते देखकर मृगादेवी अत्यंत हृष्टतुष्ट हुई यावत् पीव और रक्त शोणित युक्त आहार करते हुए मृगापुत्र को देख कर मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ - 'अरे! यह बालक पूर्वजन्मों के महान् पाप कर्मों का फल भोगता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।'

पूर्वभव पृच्छा

से णं भंते! पुरिसे पुव्वभवे के आसि? किं णामए वा किं गोए वा कयरंसि गामंसि वा णयरंसि वा? किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरित्ता केसिं वा पुरा जाव विहरइ?

गोयमाइ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी-एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सयदुवारे णामं णयरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे वण्णओ॥२२॥

कठिन शब्दार्थ - **पुव्वभवे** - पूर्व भव में, **के आसि** - कौन था? **किं**-क्या, **णामए**-नाम वाला, **गोए** - गोत्र वाला, **दच्चा** - दे कर, **भोच्चा** - भोग कर, **समायरित्ता** - आचरण कर, **पुरा** - पूर्व, **रिद्धत्थिमियसमिद्धे** - रिद्धस्तिमित समृद्धः-रिद्ध अर्थात् सम्पन्न, स्तिमित अर्थात् स्व चक्र और परचक्र के भय से विमुक्त, समृद्ध अर्थात् उत्तरोत्तर बढ़ते हुए धन धान्यादि से परिपूर्ण।

भावार्थ - हे भगवन्! वह पुरुष (मृगापुत्र) पूर्व भव में क्या था? किस नाम का था?

Jain Education International　　For Personal & Private Use Only　　www.jainelibrary.org

किस गोत्र का था? किस ग्राम अथवा नगर में रहता था? क्या देकर, क्या भोग कर, क्या आचरण कर और किन पुराने कर्मों के फल को भोगता हुआ वह जीवन व्यतीत कर रहा था?

'हे गौतम!' इस प्रकार आमंत्रण करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने गौतमस्वामी से कहा - हे गौतम! उस काल और उस समय में इसी जंबू नामक द्वीप के भारत वर्ष में शतद्वार नाम का एक समृद्धिशाली नगर था, नगर का वर्णन कह देना चाहिये।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में मृगापुत्र के पूर्व भव संबंधी किये गये प्रश्नों का भगवान् महावीर स्वामी क्रमशः उत्तर दे रहे हैं।

शंका - नाम और गोत्र में क्या अंतर है?

समाधान - नाम और गोत्र में अर्थगत भिन्नता इस प्रकार है - **'नाम यादृच्छिकमभिधानं, गोत्रं तु यथार्थकुलम्'** अर्थात् नाम यादृच्छिक-इच्छानुसारी होता है। उसमें अर्थ की प्रधानता नहीं भी होती, किंतु गोत्र पद सार्थक होता है किसी अर्थ विशेष का द्योतक होता है।

'पुरा जाव विहरइ' में 'जाव' शब्द से निम्न पाठ का ग्रहण किया गया है - **"पोराणाणं दुच्चिण्णाणं दुप्पडिकंताणं असुहाणं पावाणं कम्माणं पावगं फलविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ॥"** इन पदों का अर्थ पूर्व में दिया जा चुका है।

ईकाई राष्ट्रकूट का परिचय

तत्थ णं सयदुवारे णयरे धणवई णामं राया होत्था वण्णओ। तस्स णं सयदुवारस्स णयरस्स अदूरसामंते दाहिणपुरत्थिमे दिसीभाए विजयवद्धमाणे णामं खेडे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे। तस्स णं विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंच गामसयाइं आभोए यावि होत्था, तत्थ णं विजयवद्धमाणे खेडे एक्काई णामं रट्ठकूडे होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे। से णं एक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंचण्हं गामसयाणं आहेवच्चं जाव पालेमाणे विहरइ॥२३॥

कठिन शब्दार्थ - अदूरसामंते - अदूरसामन्त-न तो अधिक दूर और न अधिक समीप, **खेडे** - खेट-नदी और पर्वतों से घिरा हुआ अथवा जिसके चारों ओर धूलि-मिट्टी का कोट बना हुआ हो ऐसा नगर खेट कहलाता है, **आभोए** - आभोग (विस्तार), **रट्ठकूडे** - राष्ट्रकूट-राजा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की ओर से नियुक्त प्रतिनिधि, **अहम्मिए** - अधार्मिक, **दुप्पडियाणंदे** - दुष्प्रत्यानन्द-असंतोषी जो किसी तरह से प्रसन्न नहीं किया जा सके, **आहेवच्चं** - आधिपत्य करता हुआ, **पालेमाणे**- पालन-रक्षण करता हुआ।

भावार्थ - उस शतद्वार नगर में धनपति नाम का राजा राज्य करता था। उस नगर के अदूरसामन्त-कुछ दूरी पर (न अधिक दूर न अधिक नजदीक) दक्षिण और पूर्व दिशा के मध्य (आग्नेय कोण में) विजय वर्द्धमान नाम का एक खेट था जो ऋद्धि समृद्धि आदि से परिपूर्ण था। उस विजय वर्द्धमान खेट का पांच सौ गांवों का विस्तार था। उसमें ईकाई नाम का एक राष्ट्रकूट था जो कि महाअधर्मी, दुष्प्रत्यानन्दी (परम असंतोषी), साधु जन विद्वेषी अथवा दुष्कृत करने में ही सदा आनंद मानने वाला था। वह ईकाई विजय वर्द्धमान खेट के पांच सौ गांवों का आधिपत्य करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

तए णं से एक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंच गामसयाइं बहूहिं करेहि य भरेहि य विद्धीहि य उक्कोडाहि य पराभवेहि य देज्जेहि य भेज्जेहि य कुंतेहि य लंछपोसेहि य आलीवणेहि य पंथकोट्टेहि य ओवीलेमाणे ओवीलेमाणे विहम्मेमाणे-विहम्मेमाणे तज्जेमाणे-तज्जेमाणे तालेमाणे-तालेमाणे णिद्धणे करेमाणे-करेमाणे विहरइ॥२४॥

कठिन शब्दार्थ - **करेहि** - करों से, **भरेहि** - करों की प्रचुरता से, **विद्धीहि** - द्वि गुण आदि ग्रहण करने से, **उक्कोडाहि** - रिश्वतों से, **पराभवेहि** - पराभव (दमन) करने से, **दिज्जेहि** - अधिक ब्याज से, **भिज्जेहि** - हनन आदि का अपराध लगा देने से, **कुंतेहि** - धन ग्रहण के निमित्त किसी स्थान आदि के प्रबन्धक बना देने से, **लंछपोसेहि** - चोर आदि के पोषण से, **आलीवणेहि** - ग्राम आदि को जलाने से, **पंथकोट्टेहि** - पथिकों के हनन से, **ओवीलेमाणे** - पीड़ित करता हुआ, **विहम्मेमाणे** - धर्म से विमुख करता हुआ, **तज्जेमाणे** - तिरस्कृत करता हुआ, **तालेमाणे** - ताड़ित करता हुआ, **णिद्धणे** - निर्धन।

भावार्थ - तब वह ईकाई नामक राष्ट्रकूट-राज्य नियुक्त प्रतिनिधि विजय वर्द्धमान खेट के पांच सौ गांवों को, करो-महसूलों से, करों की प्रचुरता से, किसान आदि को दिये गये धान्य आदि के द्विगुण आदि के ग्रहण करने से, रिश्वतों से, दमन करने से, अधिक ब्याज से, हत्या आदि के अपराध लगा देने से, धन के निमित्त किसी को स्थान आदि का प्रबंधक बना देने से,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चोर आदि के पोषण से, ग्राम आदि को जलाने से, पथिकों के हनन (मारपीट) से, लोगों को व्यथित-पीड़ित करता हुआ, धर्म से विमुख करता हुआ तिरस्कृत, ताडित और निर्धन (धन-रहित) करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

विवेचन - जिस तरह आज भी मंडल-जिले के अंतर्गत अनेकों शहर कस्बे और ग्राम होते हैं उसी प्रकार विजय वर्द्धमान खेट में भी पांच सौ ग्राम थे। अर्थात् पांच सौ ग्रामों का एक प्रांत था। मंडल (प्रांत विशेष) से आजीविका करने वाले राज्याधिकारी को 'राष्ट्रकूट' कहा जाता है। टीकाकार ने कहा है - **"राष्ट्रकूटो मण्डलोपजीवी राजनियोगिकः"**। विजय वर्द्धमान खेट का एकादि (ईकाई) नाम का एक राष्ट्रकूट-राजनियुक्त प्रतिनिधि-प्रांताधिपति था।

ईकाई के लिए मूल पाठ में **'अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे'** विशेषण दिये हैं। **'जाव'** शब्द से **"अधम्माणुए अधम्मिट्ठे, अधम्मक्खाई अधम्मपलोई अधम्मपलज्जणे अधम्मसमुदाचारे अधम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे दुस्सीले दुव्वए"** का ग्रहण हुआ है। ये सब पद ईकाई के अधार्मिकता के व्याख्या रूप ही हैं। ईकाई अधर्मी-धर्म विरोधी, धार्मिक क्रियानुष्ठानों का प्रतिद्वन्द्वी और साधु पुरुषों का द्वेषी और किसी से संतुष्ट नहीं किया जाने वाला था। अतः ईकाई राष्ट्रकूट पांच सौ गांवों में निवास करने वाली प्रजा को निम्नलिखित कारणों से आचार भ्रष्ट, तिरस्कृत, ताड़ित एवं पीड़ित कर रहा था। जैसे कि -

१. क्षेत्र आदि में उत्पन्न होने वाले पदार्थों के कुछ भाग को कर-महसूल के रूप में ग्रहण करना।

२. करों-टेक्सों में अन्धाधुन्ध वृद्धि करके संपत्ति को लूट लेना।

३. किसान आदि श्रमजीवी वर्ग को दिये गये अन्न आदि के बदले दुगुना तिगुना कर ग्रहण करना।

४. अपराधी के अपराध को दबा देने के निमित्त से उत्कोच-रिश्वत लेना।

५. प्रजा अपने हित के लिये कोई न्यायोचित आवाज उठाये तो उस पर राज्य-विद्रोह के बहाने दमन चक्र चलाना।

६. ऋणी व्यक्ति से अधिक मात्रा में ब्याज लेना।

७. निर्दोष व्यक्तियों पर हत्या आदि का अपराध लगा कर उन्हें दण्डित करना।

८. अपने स्वार्थ-धन ग्रहण के निमित्त से किसी को स्थान आदि का प्रबंधक बना देना आदि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ईक्काई रोगग्रस्त

तए णं से एक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स बहूणं राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहाणं अण्णेसिं च बहूणं गामेल्लग-पुरिसाणं बहूसु कज्जेसु य कारणेसु य मंतेसु य गुज्झएसु य णिच्छएसु य ववहारेसु य सुणमाणे भणइ ण सुणेमि असुणमाणे भणइ सुणेमि एवं पस्समाणे भासमाणे गिण्हमाणे जाणमाणे। तए णं से एक्काई रट्ठकूडे एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं कलिकलुसं समज्जिणमाणे विहरइ।

तए णं तस्स एक्काइयस्स रट्ठकूडस्स अण्णया कयाइ सरीरगंसि जमगसमगमेव सोलस रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा-

सासे कासे जरे दाहे कुच्छिसूले भगंदरे।
अरिसा अजीरए दिट्ठीमुद्धसूले अकारए॥१॥
अच्छिवेयणा कण्णवेयणा कंडू उयरे कोढे॥२५॥

कठिन शब्दार्थ - राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहाणं - राजा-माडंलिक, ईश्वर-युवराज, तलवर-राजा के कृपा पात्र अथवा जिन्होंने राजा की ओर से उच्च आसन प्राप्त किया हो, माडंबिक-मडम्ब के अधिपति, जिसके निकट दो-दो योजन तक कोई ग्राम न हो उस प्रदेश को मडम्ब कहते हैं, कौटुम्बिक-कुटुम्बों के स्वामी, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह-सार्थनायक, **गामेल्लगपुरिसाणं** - ग्रामीण पुरुषों के, **बहुसु**- बहुत से, **कज्जेसु** - कार्यों में, **कारणेसु** - कारणों-कार्यसाधक हेतुओं में, **मंतेसु** - मंत्रों-कर्त्तव्य का निश्चय करने के लिये किये गये गुप्त विचारों में, **गुज्झएसु** - गुप्त, **णिच्छएसु** - निश्चयों-निर्णयों में, **ववहारेसु** - व्यवहारों-विवादों में या व्यावहारिक बातों में, **सुणमाणे** - सुनता हुआ, **भणति**- कहता है, **सुणेमि** - सुनता हूँ, **असुणमाणे** - नहीं सुनता हुआ, **पस्समाणे**- देखता हुआ, **भासमाणे** - बोलता हुआ, **गेण्हमाणे**- ग्रहण करता हुआ, **जाणमाणे**- जानता हुआ, **एयकम्मे** - इस प्रकार के कर्म करने वाला, **एयप्पहाणे** - इस प्रकार के कर्मों में तत्पर, **एयविज्जे** - इसी प्रकार की विद्या-विज्ञान वाला, **एयसमायारे** - इस प्रकार के आचार वाला, **सुबहुं** - अत्यधिक, **कलिकलुसं** - कलह का कारणीभूत होने से मलीन,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समणिज्जमाणे - उपार्जन करता हुआ, **जमगसमगमेव** - युगपद्-एक साथ ही, **रोगायंका** - रोगांतक-कष्ट साध्य अथवा असाध्य रोग, **सासे** - श्वास, **कासे** - कास, **जरे** - ज्वर, **दाहे**- दाह, **कुच्छिसूले** - उदरशूल, **भगंदरे** - भगंदर, **अरिसे** - अर्श-बवासीर, **अजीरतए**- अजीर्ण, **दिट्ठी**- दृष्टिशूल (नेत्र पीड़ा), **मुद्धसूले** - मस्तकशूल-शिरोवेदना, **अकारए** - अरुचि-भोजन की इच्छा का न होना, **अच्छिवेयणा**- आंख की वेदना, **कण्णवेयणा** - कर्ण वेदना (पीड़ा), **कंडू** - खुजली, **उयरे** - दकोदर-जलोदर-उदर का रोग विशेष, **कोढे** - कुष्ठ रोग।

भावार्थ - तदनन्तर वह ईकाई राष्ट्रकूट विजय वर्द्धमान खेट के राजा, ईश्वर, तलवर, माडंबिक, कोटुंबिक, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह तथा अन्य अनेक ग्रामीण पुरुषों के बहुत से कार्यों में, कारणों में, गुप्त मंत्रणाओं में, निश्चयों में और विवादास्पद निर्णयों में अथवा व्यावहारिक बातों में सुनता हुआ कहता है कि मैंने नहीं सुना, नहीं सुनता हुआ कहता है कि मैंने सुना है, इसी प्रकार देखता हुआ, बोलता हुआ, ग्रहण करता हुआ और जानता हुआ भी यह कहता है कि मैंने देखा नहीं, बोला नहीं, ग्रहण किया नहीं और जाना नहीं तथा इसके विपरीत नहीं देखे, नहीं बोले, नहीं ग्रहण किये और नहीं जाने के विषय में कहता है कि मैंने देखा है, बोला है, ग्रहण किया है तथा जाना है। इस प्रकार के मायामय (वंचना युक्त) व्यवहार को ही उसने अपना कर्त्तव्य समझ लिया था। मायाचार करना ही उसके जीवन का प्रधान कार्य और प्रजा को व्याकुल करना ही उसका विज्ञान था। इस प्रकार के आचार वाला वह अत्यधिक कलह (दुःख) का कारणीभूत पाप कर्म का उपार्जन करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

तदनन्तर उस ईकाई राष्ट्रकूट के किसी अन्य समय में युगपद-एक साथ ही सोलह रोगांतक (कष्ट साध्य अथवा असाध्य रोग) उत्पन्न हो गये। यथा - १. श्वास २. कास ३. ज्वर ४. दाह ५. कुक्षिशूल-उदरशूल ६. भगंदर ७. अर्श (बवासीर) ८. अजीर्ण ९. दृष्टिशूल १०. मस्तक शूल (शिर वेदना) ११. अरुचि (भोजन की इच्छा न होना) १२. अक्षिवेदना १३. कर्णवेदना १४. खुजली १५. दकोदर (जलोदर) १६. कुष्ठ रोग।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में ईकाई राष्ट्रकूट के जीवन का वर्णन किया गया है। उसकी प्रत्येक क्रिया मनमानी, मायापूर्ण और प्रजा के लिये अहितकर थी अतः वह दुःखों के उत्पादक अत्यंत नीच और भयानक पापकर्मों का संचय करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था। **"कडाण कम्माण ण मुक्ख अत्थि"** - (उत्तरा० अ० ४-३) के अनुसार कृत पाप कर्मों का फल भोगना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवश्य पड़ता है। कर्मों को भोगे बिना उनसे छुटकारा नहीं हो सकता। पापों के फल भोग के रूप में ईकाई राष्ट्रकूट के शरीर में एक साथ श्वास आदि सोलह रोगांतक उत्पन्न हो गये।

जो रोग अत्यंत कष्टजनक हों तथा जिनका प्रतिकार कष्ट साध्य अथवा असाध्य हो उन्हें रोगांतक कहते हैं। ऐसे सोलह रोगों के नाम कठिन शब्दार्थ एवं भावार्थ में दिये गये हैं।

राष्ट्रकूट की घोषणा

तए णं से एक्काई रट्ठकूडे सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! विजयवद्धमाणे खेडे सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-महापहपहेसु महया-महया सद्देणं उग्घोसेमाणा-उग्घोसेमाणा एवं वयह - इहं खलु देवाणुप्पिया! एक्काईरट्ठकूडस्स सरीरगंसि सोलस-रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा-सासे कासे जरे जाव कोढे, तं जो णं इच्छइ देवाणुप्पिया! वेज्जो वा वेज्जपुत्तो वा जाणुओ वा जाणुयपुत्तो वा तेगिच्छिओ वा तेगिच्छियपुत्तो वा एक्काईरट्ठकूडस्स तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए, तस्स णं एक्काई रट्ठकूडे विउलं अत्थसंपयाणं दलयइ, दोच्चंपि तच्चंपि उग्घोसेह उग्घोसेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति॥२६॥

कठिन शब्दार्थ - अभिभूए समाणे - खेद को प्राप्त, **सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-महापह-पहेसु** - श्रृंगाटक (त्रिकोण मार्ग), त्रिक-त्रिपथ-जहां तीन मार्ग मिलते हों, चतुष्क-चतुष्पथ-जहां चार मार्ग मिलते हों, चत्वर-जहां चार से भी अधिक रास्ते मिलते हों, महापथ-राजमार्ग-जहां बहुत से मनुष्यों का गमनागमन होता हो और सामान्य मार्गों में, **महया-महया सद्देणं** - बड़े ऊंचे स्वर से, **उग्घोसेमाणा** - उद्घोषणा करते हुए, **वयह** - कहो, **वेज्जो** - वैद्य-शास्त्र तथा चिकित्सा में कुशल, **वेज्जपुत्तो** - वैद्य-पुत्र, **जाणओ** - ज्ञायक-केवल शास्त्र में कुशल, **जाणयपुत्तो** - ज्ञायक पुत्र, **तेगिच्छिओ** - चिकित्सक-चिकित्सा-इलाज कराने में निपुण, **तेगिच्छियपुत्तो** - चिकित्सक पुत्र, **उवसामित्तए** - उपशान्त करना, **अत्थसंपयाणं** - अर्थ संपदा, **एयमाणत्तियं** - इस आज्ञप्ति-आज्ञा को, **पच्चप्पिणह** - प्रत्यर्पण करो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर वह ईकाई राष्ट्रकूट सोलह रोगांतकों से अत्यंत दुःखी हुआ कौटुंबिक पुरुषों-सेवकों को बुलाता है और बुला कर उनसे इस प्रकार कहता है कि - हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और विजय वर्द्धमान खेट के शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, महापथ और अन्य साधारण मार्गों पर जा कर बड़े ऊंचे स्वर से इस प्रकार घोषणा करो कि - हे देवानुप्रियो! ईकाई राष्ट्रकूट के शरीर में श्वास, कास आदि १६ भयंकर रोग उत्पन्न हो गये हैं। यदि कोई वैद्य या वैद्यपुत्र, ज्ञायक या ज्ञायक पुत्र, चिकित्सक अथवा चिकित्सक पुत्र उन सोलह रोगांतकों में से किसी एक भी रोगांतक को उपशान्त करे तो ईकाई राष्ट्रकूट उसको बहुत-सा धन देगा। इस प्रकार दो तीन बार उद्घोषणा करके मेरी इस आज्ञा के यथावत् पालन की मुझे सूचना दो। तब वे कौटुम्बिक पुरुष ईकाई राष्ट्रकूट की आज्ञानुसार विजय वर्द्धमान खेट में जाकर उद्घोषणा करते हैं और वापिस आकर ईकाई राष्ट्रकूट को उसकी सूचना दे देते हैं।

रोगोपचार के प्रयास

तए णं (से) विजयवद्धमाणे खेडे इमं एयारूवं उग्घोसणं सोच्चा णिसम्म बहवे वेज्जा य वेज्जपुत्ता य जाणुया य जाणुयपुत्ता य तेगिच्छिया य तेगिच्छियपुत्ता य सत्थकोसहत्थगया सएहिंतो सएहिंतो गिहेहिंतो पडिणिक्खमंति-पडिणिक्खमित्ता विजयवद्धमाणस्स खेडस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव एक्काईरट्ठकूडस्स गिहे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता एक्काईरट्ठकूडस्स सरीरगं परामुसंति परामुसित्ता तेसिं रोगाणं णिदाणं पुच्छंति, पुच्छित्ता एक्काईरट्ठकूडस्स बहूहिं अब्भंगेहि य उव्वट्टणेहि य सिणेहपाणेहि य वमणेहि य विरेयणेहि य सेयणेहि य अवद्दहणाहि य अवण्हाणेहि य अणुवासणाहि य बत्थिकम्मेहि य णिरूहेहि य सिरावेहेहि य तच्छणेहि य पच्छणेहि य सिरोबत्थीहि य तप्पणाहि य पुडपागेहि य छल्लीहि य मूलेहि य कंदेहि य पत्तेहि य पुप्फेहि य फलेहि य बीएहि य सिलियाहि य गुलियाहि य ओसहेहि य भेसज्जेहि य इच्छंति तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए, णो चेव णं संचाएंति उवसामित्तए॥२७॥

कठिन शब्दार्थ - उग्घोसणं - उद्घोषणा को, सोच्चा - सुन कर, णिसम्म - अवधारण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर, **सत्थकोसहत्थगया** - शस्त्रकोष-औजार रखने की पेटी (बक्स) हाथ में लेकर, **सएहिं** - अपने, **गेहेहिंतो** - घरों से, **परामुसंति** - स्पर्श करते हैं, **पुच्छंति** - पूछते हैं, **अब्भंगेहि** - अभ्यंगन-मालिश करने से, **उवट्टणाहि** - उद्वर्तन (उबटन आदि मलने) से, **सिणेहपाणेहि** - स्नेह पान कराने-घृत आदि स्निग्ध पदार्थों का पान कराने से, **वमणेहि**-वमन (उल्टी) कराने से, **विरेयणाहि**- विरेचन-मल को बाहर निकालने से, **सेयणाहि** - सेचन-जलादि सिंचन करने अथवा स्वेदन करने से, **अवद्दाहणाहि** - अवदहन-गर्म लोहे के कोश आदि से चर्म पर दागने से, **अवण्हाणेहि** - अवस्नान-चिकनाहट दूर करने के लिए विशेष प्रकार के द्रव्यों द्वारा संस्कारित-जल द्वारा स्नान कराने से, **अणुवासणाहि** - अनुवासन कराने-अपान-गुदा द्वार से पेट में तैलादि के प्रवेश कराने से, **वत्थिकम्मेहि** - बस्तिकर्म करने-गुदा में वर्ति (बत्ती) आदि के प्रक्षेप करने से, **णिरुहेहि** - निरूह-औषधियाँ डाल कर पकाए गए तैल के प्रयोग से-विरेचन विशेष से, **सिरावेधेहि** - शिरावेध-नाड़ी वेध करने से, **तच्छणेहि** - तक्षण करने-क्षुरक-छुरा उस्तरा आदि द्वारा त्वचा को काटने से, **पच्छणेहि** - प्रतक्षण-त्वचा को बारीक शस्त्रों से सूक्ष्म विदीर्ण करने से, **सिरोबत्थेहि** - शिरोबस्तिकर्म से-मस्तक पर चमड़े की पट्टी बांध कर उसमें नाना विधि द्रव्यों से संस्कार किये गये तेल को भरने का नाम शिरोबस्ति है, **तप्पणेहि** - तर्पण-तृप्त करने-तैलादि स्निग्ध पदार्थों के द्वारा शरीर का उपबृंहण करने से, **पुडपागेहि** - पुटपाक-पाक विधि से निष्पन्न औषधियों से, **छल्लीहि** - छालों से, **मूलेहि** - वृक्ष आदि के मूलों-जड़ों से, **सिलियाहि** - शिलिका-चिरायता आदि से, **गुलियाहि** - गुटिकाओं-गोलियों से, **ओसहेहि**- औषधियों-जो एक द्रव्य से निर्मित हो, **भेसज्जेहि**- भैषज्यों-अनेक द्रव्यों से निर्माण की गई औषधियों से, **संचाएंति** - समर्थ हुए।

भावार्थ - तत्पश्चात् विजय वर्द्धमान खेट में इस प्रकार की उद्घोषणा को सुन कर अनेक वैद्य, वैद्यपुत्र, ज्ञायक, ज्ञायकपुत्र, चिकित्सक और चिकित्सकपुत्र हाथ में शस्त्रपेटिका लेकर अपने-अपने घरों से निकल पड़ते हैं, निकल कर विजय वर्द्धमान खेट के मध्य में से होते हुए जहां ईकाई राष्ट्रकूट का घर था वहां आते हैं, आकर एकादि राष्ट्रकूट के शरीर का स्पर्श करते हैं, शरीर संबंधी परामर्श करने के बाद रोग विनिश्चयार्थ विविध प्रकार के प्रश्न पूछते हैं, प्रश्न पूछने के बाद उन १६ रोगांतकों में से किसी एक ही रोगांतक को उपशांत करने के लिये अनेक अभ्यंगन, उद्वर्तन, स्नेहपान, वमन, विरेचन, सेचन अथवा स्वेदन, अवदाहन, अवस्नान, अनुवासन, बस्तिकर्म, निरूह, शिरावेध, तक्षण, प्रतक्षण, शिरोबस्ति, तर्पण इन क्रियाओं से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा पुटपाक, त्वचा, मूल, कन्द, पत्र, पुष्प, फल और बीज तथा शिलिका (चिरायता) के उपयोग से तथा गुटिका, औषध, भैषज्य आदि के प्रयोग से प्रयत्न करते हैं अर्थात् इन पूर्वोक्त साधनों का रोगोपशांति के लिये उपयोग करते हैं किंतु नानाविध उपचारों से वे उन १६ रोगों में से किसी एक भी रोग को उपशांत करने में समर्थ न हो सके।

तए णं ते बहवे वेज्जा य वेज्जपुत्ता य जाहे णो संचाएंति तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए ताहे संता तंता परितंता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया॥२८॥

कठिन शब्दार्थ - संता - श्रान्त-देह के खेद से खिन्न, **तंता** - तांत-मन के दुःख से दुःखित, **परितंता** - परितांत-शरीर और मन दोनों के खेद से खिन्न।

भावार्थ - जब उन वैद्य और वैद्यपुत्रादि से उन १६ रोगांतकों में से एक रोगांतक का भी उपशमन न हो सका तब वे वैद्य और वैद्यपुत्र आदि श्रान्त, तान्त और परितान्त हो कर जिधर से आये थे उधर ही चल दिये।

मृगादेवी की कुक्षि में

तए णं एक्काईरट्ठकूडे वेज्जेहि य ६ पडियाइक्खिए परियारगपरिच्चत्ते णिविण्णोसहभेसज्जे सोलसरोगायंकेहिं अभिभूए समाणे रज्जे य रट्ठे य जाव अंतेउरे य मुच्छिए रज्जं च रट्ठं च आसाएमाणे पत्थेमाणे पीहेमाणे अभिलसमाणे अट्टदुहट्टवसट्टे अड्ढाइज्जाइं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसेणं सागरोवमट्ठिइएसु णेरइएसु णेरइयत्ताए उववण्णे।

से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव मियग्गामे णयरे विजयस्स खत्तियस्स मियाए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे॥२९॥

कठिन शब्दार्थ - पडियाइक्खिए - प्रत्याख्यात-निषिद्ध किया गया, **परियारगपरिचत्ते** - परिचारकों (नौकरों) द्वारा परित्यक्त, **णिव्विण्णोसहभेसज्जे** - औषध और भैषज्य से निर्विण्ण-विरक्त, **आसाएमाणे** - आस्वादन् करता हुआ, **पत्थेमाणे** - प्रार्थना करता हुआ, **पीहेमाणे** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्पृहा-इच्छा करता हुआ, **अहिलसमाणे** - अभिलाषा करता हुआ, **अट्ट** - आर्त्त-मानसिक वृत्तियों से दुःखित, **दुहट्ट** - दुःखार्त-देह से दुःखी-शारीरिक व्यथा से आकुलित, **वसट्टे** - वशार्त-इन्द्रियों के वशीभूत होने से पीड़ित, **अड्ढाइज्जाइं वाससयाइं** - अढाई सौ वर्ष, **परमाउयं**- परमायु-संपूर्ण आयु, **पालइत्ता** - पालन कर, **अणंतरं** - अन्तर रहित, **उव्वट्टित्ता** - निकल कर, **कुच्छिंसि** - कुक्षि में-उदर में, **पुत्तत्ताए** - पुत्र रूप से, **उववण्णे** - उत्पन्न हुआ।

भावार्थ - तदनन्तर वैद्यों के द्वारा प्रत्याख्यात अर्थात् इन रोगों का प्रतिकार हमसे नहीं हो सकता, इस प्रकार कहे जाने पर तथा सेवकों से परित्यक्त, औषध और भैषज्य से निर्विण्ण-दुःखित, सोलह रोगांतकों से अभिभूत, राज्य, राष्ट्र यावत् अंतःपुर में मूर्च्छित-आसक्त तथा राज्य और राष्ट्र का आस्वादन, प्रार्थना, इच्छा (स्पृहा) और अभिलाषा करता हुआ वह ईकाई आर्त्त (मनोव्यथा से व्यथित) दुःखार्त्त और वशार्त होकर जीवन व्यतीत करके २५० वर्ष की पूर्णायु को भोग कर यथासमय काल करके इस रत्नप्रभा पृथ्वी-प्रथम नरक में उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ। तत्पश्चात् वह ईकाई का जीव भवस्थिति पूरी होने पर नरक से निकल कर मृगाग्राम में विजय क्षत्रिय की मृगावती देवी की कुक्षि में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ।

गर्भ का असर

तए णं तीसे मियाए देवीए सरीरे वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा, जप्पभिइं च णं मियापुत्ते दारए मियाए देवीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववण्णे तप्पभिइं च णं मियादेवी विजयस्स खत्तियस्स अणिट्ठा अकंता अप्पिया अमणुण्णा अमणामा जाया यावि होत्था॥३०॥

कठिन शब्दार्थ - **उज्जला** - उत्कट, **जलंता** - जाज्वल्यमान-अति तीव्र, **वेयणा** - वेदना, **पाउब्भूया** - उत्पन्न हुई, **जप्पभिइं** - जब से, **तप्पभिइं** - तब से लेकर, **अणिट्ठा** - अनिष्ट, **अकंता** - अकांत-सौन्दर्य रहित, **अप्पिया** - अप्रिय, **अमणुण्णा** - अमनोज्ञ-असुंदर, **अमणामा** - अमनाम-मन से उतरी हुई।

भावार्थ - तदनन्तर उस मृगादेवी के शरीर में उज्जल (उत्कट) यावत् जाज्वल्यमान (अति तीव्र) वेदना उत्पन्न हुई। जब से मृगापुत्र नामक बालक मृगादेवी के उदर में गर्भ रूप से उत्पन्न

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

हुआ तब से लेकर वह मृगादेवी विजय नामक क्षत्रिय को अनिष्ट, अमनोहर, अप्रिय, अमनोज्ञ और अमनाम-सी लगने लगी।

विवेचन - पापी जीव जहां भी जाता है वहां अनिष्ट ही अनिष्ट होता है। ईकाई का जीव नरक से निकल कर मृगादेवी की कुक्षि में आया तो उसके शरीर में तीव्र वेदना उत्पन्न हो गई और वह विजय नरेश की अप्रिय होने लगी।

गर्भ नाश का प्रयास

तए णं तीसे मियाए देवीए अण्णया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियाए जागरमाणीए इमे एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु अहं विजयस्स खत्तियस्स पुव्विं इट्ठा ५ धेज्जा वेसासिया अणुमया आसी, जप्पभिइं च णं मम इमे गब्भे कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववण्णे, तप्पभिइं च णं अहं विजयस्स खत्तियस्स अणिट्ठा जाव अमणामा जाया यावि होत्था, णिच्छइ णं विजए खत्तिए मम णामं वा गोयं वा गिण्हित्तए वा किमंग पुण दंसणं वा परिभोगं वा, तं सेयं खलु मम एयं गब्भं बहूहिं गब्भसाडणाहि य पाडणाहि य गालणाहि य मारणाहि य साडित्तए वा पाडित्तए वा, गालित्तए वा मारित्तए वा एवं संपेहेइ, संपेहित्ता बहूणि खाराणि य कडुयाणि य तूवराणि य गब्भसाडणाणि य ४ खायमाणी य पीयमाणी य इच्छइ तं गब्भं साडित्तए वा ४ णो चेव णं से गब्भे सडइ वा पडइ वा गलइ वा मरइ वा॥३१॥

कठिन शब्दार्थ - **पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि** - मध्य रात्रि में, **कुडुंब जागरियाए** - कुटुम्ब जागरणा-कुटुम्ब की चिन्ता से, **जागरमाणीए** - जागती हुई, **अज्झत्थिए** - विचार, **समुप्पण्णे** - उत्पन्न हुआ, **इट्ठा** - इष्ट-प्रीतिकारक, **धेज्जा** - चिन्तनीय, **वेसासिया** - विश्वासपात्र, **अणुमया**- अनुमत, **गिण्हित्तए** - ग्रहण करना-स्मरण करना भी, **सेयं** - श्रेयस्कर, **गब्भसाडणाहि** - गर्भशातनाओं-गर्भ को खण्ड खण्ड करके गिराने रूप क्रियाओं से, **पाडणाहि**- पातनाओं-अखण्ड रूप से गिराने रूप क्रियाओं से, **गालणाहि** - गालनाओं-द्रवीभूत करके गिराने रूप क्रियाओं से, **मारणाहि** - मारणाओं-मारण रूप क्रियाओं द्वारा, **संपेहेइ** - विचार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करती है, **खाराणि** - खारी, **कडुयाणि** - कटु-कड़वी, **तूवराणि** - कषाय रस युक्त, कसैली औषधियों को, **खायमाणी**- खाती हुई, **पीयमाणी** - पीती हुई।

भावार्थ - तदनन्तर किसी काल में मध्य रात्रि के समय कुटुम्ब चिंता से जागती हुई उस मृगादेवी के हृदय में इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ कि मैं पहले तो विजय नरेश को इष्ट (प्रिय) यावत् चिंतनीय विश्वासपात्र, अनुमत (सम्मत) थी किंतु जब से मेरे उदर में यह गर्भ, गर्भरूप से उत्पन्न हुआ है तब से विजय क्षत्रिय को मैं अप्रिय यावत् अमनाम (मन से भी अग्राह्य) हो गई हूँ। इस समय विजय नरेश मेरे नाम तथा गोत्र को सुनना भी नहीं चाहते तो फिर दर्शन व परिभोग-भोग विलास की तो बात ही क्या है? अतः मेरे लिये यही श्रेयस्कर है कि मैं इस गर्भ को अनेक प्रकार की शातनाओं (गर्भ को खण्ड खण्ड करके गिरा देने वाली क्रियाओं) से, पातनाओं (गर्भ को अखण्ड रूप से गिराने रूप क्रियाओं) से, गालनाओं (गर्भ को द्रवीभूत करके गिराने रूप उपायों) से और मारणाओं (मारने वाले प्रयोगों) से नष्ट कर दूं। वह इस प्रकार का विचार कर गर्भपात हेतु खारी, कड़वी और कषैली औषधियों का भक्षण तथा पान करती हुई उस गर्भ को शातना आदि क्रियाओं (उपायों) से नष्ट कर देना चाहती है परंतु वह गर्भ उक्त उपायों से भी नाश को प्राप्त नहीं हुआ।

मृगापुत्र की गर्भस्थ अवस्था

तए णं सा मियादेवी जाहे णो संचाएइ तं गब्भं साडित्तए वा ४ ताहे संता तंता परितंता अकामिया असयंवसा तं गब्भं दुहंदुहेणं परिवहइ, तस्स णं दारगस्स गब्भगयस्स चेव अट्ठणालीओ अब्भिंतरप्पवहाओ अट्ठणालीओ बाहिरप्पवहाओ अट्ठपूयप्पवहाओ अट्ठसोणियप्पवहाओ दुवे-दुवे कण्णंतरेसु दुवे-दुवे अच्छिअंतरेसु दुवे-दुवे णक्कंतरेसु दुवे-दुवे धमणिअंतरेसु अभिक्खणं-अभिक्खणं पूयं च सोणियं च परिसवमाणीओ-परिसवमाणीओ चेव चिट्ठंति॥३२॥

कठिन शब्दार्थ - **अकामिया** - अभिलाषा रहित, **असयंवसा** - विवश-परतंत्र हुई, **दुहंदुहेणं**- अत्यंत दुःख से, **परिवहइ** - धारण करती है, **अट्ठ णालीओ** - आठ नाडियाँ, **अब्भिंतरप्पवहाओ** - अंदर की ओर बहती है, **बाहिरप्पवहाओ** - बाहर की ओर बहती है, **पूयप्पवहाओ** - पूय-पीब बह रहा है, **सोणियप्पवहाओ** - शोणित-रुधिर बह रहा है,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कण्णंतरेसु-कर्ण छिद्रों में, **अच्छिंतरेसु**- नेत्र छिद्रों में, **णक्कंतरेसु** - नासिका के छिद्रों में, **धमणिअंतरेसु** - धमनी के मध्य में, **परिस्रवमाणीओ** - परिस्राव करती हुई।

भावार्थ - तब वह मृगादेवी शरीर से श्रान्त, तांत-मन से दुःखित, परितांत-शारीरिक और मानसिक खेद से खिन्न होती हुई इच्छा न रहते हुए विवशता के कारण अत्यंत दुःख के साथ उस गर्भ को धारण करने लगी। गर्भगत उस बालक की आठ नाडियाँ अन्दर की ओर बह रही थी और आठ नाडियाँ बाहर की ओर बह रही थी उनमें प्रथम की आठ नाडियों से पूय-पीब बह रहा था और शेष आठ नाडियों से रुधिर बह रहा था। इन सोलह नाडियों में से दो नाडियां कर्ण छिद्रों में, दो-दो नाडियाँ नेत्र छिद्रों में, दो दो नाडियां नासिका छिद्रों में तथा दो दो धमनियों से बार बार पीव व रुधिर बहा रही थी।

तस्स णं दारगस्स गब्भगयस्स चेव अग्गिए णामं वाही पाउब्भूए, जे णं से दारए आहारेइ से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ पूयत्ताए य सोणियत्ताए य परिणमइ, तं पि य से पूयं च सोणियं च आहारेइ॥३३॥

कठिन शब्दार्थ - **अग्गिए णामं** - अग्निक-भस्मक नामक, **वाही** - व्याधि-रोग विशेष, **विद्धंसमागच्छइ** - नाश को प्राप्त हो जाता है, **पूयत्ताए** - पूय (पीब) रूप में, **सोणियत्ताए**- शोणित रूप में, **परिणमइ** - परिणमन हो जाता है।

भावार्थ - उस बालक को गर्भ में ही अग्निक-भस्मक नाम की व्याधि उत्पन्न हो गई थी जिसके कारण वह बालक जो कुछ खाता वह शीघ्र ही भस्म-नष्ट हो जाता था तथा तत्काल ही वह पूय और शोणित (रक्त) के रूप में परिणत हो जाता था। तदनन्तर वह बालक उस पूय और शोणित को भी खा जाता था।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में मृगापुत्र की गर्भगत अवस्था का वर्णन किया गया है। कर्मों की गति विचित्र है। अशुभ पाप कर्मों का उदय कैसा भयंकर होता है, यह जानने के लिये मृगापुत्र का यह वर्णन काफी है।

मृगापुत्र के रूप में जन्म

तए णं सा मियादेवी अण्णया कयाइ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारगं पयाया जाइअंधे जाव आगिइमेत्ते। तए णं सा मियादेवी तं दारगं हुंडं अंधारूवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पासइ, पासित्ता भीया ४ अम्मधाइं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं देवाणुप्पिया! तुमं एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि। तए णं सो अम्मधाई मियादेवीए तहत्ति एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणेत्ता जेणेव विजए खत्तिए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-एवं खलु सामी! मियादेवी णवण्हं मासाणं जाव आगिइमेत्ते, तए णं सा मियादेवी तं दारगं हुंडं अंधारूवं पासइ, पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा संजायभया ममं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया! एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि, तं संदिसह णं सामी! तं दारगं अहं एगंते उज्झामि उदाहु मा?॥३४॥

कठिन शब्दार्थ - पडिपुण्णाणं - परिपूर्ण होने पर, **पयाया** - जन्म दिया, **आगइमित्तं**- आकृति मात्र, **हुंडं** - हुण्ड-अव्यवस्थित अंगों वाले, **भीया** - भय को प्राप्त हुई, **अम्माधाइं** - धायमाता को, **उक्कुरुडियाए** - उकरड़ी-कूडा-कचरा डालने का स्थान, **उज्झाहि** - फैंक दो, **एयमट्ठं** - इस अर्थ-प्रयोजन को, **तहत्ति** - तथास्तु-'बहुत अच्छा' इस प्रकार कह कर, **करयलपरिग्गहियं** - दोनों हाथ जोड़ कर, **सामी** - हे स्वामिन्! **संदिसह णं** - आप आज्ञा दें कि क्या, **एगंते** - एकान्त में, **उज्झामि** - फैंक दूं-छोड़ दूं, **उदाहु** - अथवा, **मा** - नहीं।

भावार्थ - तदनन्तर लगभग नौ मास पूर्ण होने पर मृगादेवी ने एक जन्मान्ध यावत् अवयवों की आकृति मात्र रखने वाले एक बालक को जन्म दिया। उस हुण्ड-अव्यवस्थित अंगों वाले जन्मांध बालक को देख कर भयभीत, त्रस्त, उद्विग्न-व्याकुल तथा भय से कांपती हुई मृगादेवी ने धायमाता को बुला कर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिये! तुम जाओ और एकांत में ले जाकर इस बालक को किसी कूडे कचरे के ढेर पर फैंक आओ।' तदनन्तर धायमाता मृगादेवी के इस कथन को तथास्तु कह कर स्वीकृत करती हुई जहां पर विजय नरेश थे वहां आई और हाथ जोड़ कर इस प्रकार निवेदन किया कि-'हे स्वामिन्! लगभग नौ मास पूर्ण होने पर मृगादेवी ने एक जन्मान्ध यावत् आकृति मात्र अवयवों वाले बालक को जन्म दिया है उस हुंड-विकृतांग-भद्दी आकृति वाले जन्मान्ध बालक को देख कर वह भयभीत हुई और उसने मुझे बुला कर कहा कि-'हे देवानुप्रिये! तुम जाओ और इस बालक को ले जाकर एकांत में किसी कूडे कचरे के ढेर पर फैंक आओ।' अतः हे स्वामिन्! अब आप ही बतलायें कि मैं एकांत में ले जाकर उस बालक को फैंक आऊं या नहीं?'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजा की आज्ञा

तए णं से विजए खत्तिए तीसे अम्मधाईए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तहेव संभंते उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता जेणेव मियादेवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मियादेविं एवं वयासी-देवाणुप्पिया! तुब्भं पढमं गब्भे तं जइ णं तुमं एयं (दा०) एगंते उक्कुरुडियाए उज्झासि (तो) तओ णं तुब्भं पया णो थिरा भविस्सइ, तो णं तुमं एयं दारगं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी-पडिजागरमाणी विहराहि तो णं तुब्भं पया थिरा भविस्सइ॥३५॥

कठिन शब्दार्थ - **संभंते** - संभ्रांत-व्याकुल हुआ, **पढमगब्भे** - प्रथम गर्भ, **पया** - प्रजा-संतति, **थिरा** - स्थिर, **रहस्सियंसि** - गुप्त।

भावार्थ - तदनन्तर उस धायमाता से यह सारा वृत्तांत सुन कर विजय नरेश संभ्रांत-व्याकुल हो तथैव अर्थात् जिस रूप में बैठे हुए थे उसी रूप में उठ कर खड़े हो गये और जहां मृगादेवी थी वहां पर आये, आकर उससे इस प्रकार कहा - "हे देवानुप्रिये! यह तुम्हारा प्रथम गर्भ है, यदि तुम इसको किसी एकान्त स्थान-कूडे कचरे के ढेर पर फिकवा दोगी तो तुम्हारी संतान स्थिर नहीं रहेगी अतः तुम इस बालक को गुप्त रख कर गुप्त रूप से भक्त पान आदि के द्वारा इसका पालन पोषण करो। ऐसा करने से तुम्हारी प्रजा-संतति भविष्य में स्थिर रहेगी।"

पुत्र का भूमिगृह में पालन

तए णं सा मियादेवी विजयस्स खत्तियस्स तहत्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ पडिसुणेत्ता तं दारगं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी-पडिजागरमाणी विहरइ, एवं खलु गोयमा! मियापुत्ते दारए पुरापोराणाणं जाव पच्चणुभवमाणे विहरइ॥३६॥

भावार्थ - तत्पश्चात् वह मृगादेवी, विजय नरेश के इस कथन को विनय पूर्वक स्वीकार करती है और वह उस बालक को गुप्त भूमिगृह में रख कर गुप्त रूप से आहार पानी आदि के द्वारा उसका पालन पोषण करने लगी। इस प्रकार हे गौतम! मृगापुत्र स्वकृत पूर्व के पाप कर्मों का प्रत्यक्ष फल भोगता हुआ समय बिता रहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - गौतमस्वामी द्वारा मृगापुत्र के पूर्व भव के विषय में पूछे गये प्रश्न का प्रभु ने इस प्रकार समाधान कर गौतमस्वामी की जिज्ञासा को शांत की। तत्पश्चात् गौतमस्वामी मृगापुत्र के आगामी भव के संबंध में भी जानकारी प्राप्त करने की इच्छा से इस प्रकार पृच्छा करते हैं-

आगामी भव की पृच्छा

मियापुत्ते णं भंते! दारए इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! मियापुत्ते दारए छव्वीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव जंबूद्दीवे भारहे वासे वेयड्डगिरिपायमूले सीहकुलंसि सीहत्ताए पच्चायाहिइ, से णं तत्थ सीहे भविस्सइ अहम्मिए जाव साहसिए सुबहुं पावं जाव समज्जिणइ, समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोससागरोवमट्ठिइएसु जाव उववज्जिहिइ, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता सिरीसवेसु उववज्जिहिइ, तत्थ णं कालं किच्चा दोच्चाए पुढवीए उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं.....से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता पक्खीसु उववज्जिहिइ, तत्थ वि कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए सत्त सागरोवमाइं.....से णं तओ सीहेसु य..... तयाणंतरं चोत्थीए उरगो पंचमीए, इत्थीओ, छट्ठीए, मणुओ, अहेसत्तमाए, तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता से जाइं इमाइं जलयरपंचिंदिय-तिरिक्खजोणियाणं मच्छ-कच्छभ-गाह-मगर-सुंसुमाराईणं अद्धतेरस जाइकुलकोडिजोणिपमुहसयसहस्साइं, तत्थ णं एगमेगंसि जोणी विहाणंसि अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो-भुज्जो पच्चायाइस्सइ, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता.,........चउप्पएसु उरपरिसप्पेसु भुयपरिसप्पेसु खहयरेसु चउरिंदिएसु तेइंदिएसु बेइंदिएसु वणप्फइएसु कडुयरुक्खेसु कडुयदुद्धिएसु वाउ० तेउ० आउ० पुढवी० अणेगसयसहस्सखुत्तो..... से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता सुपइट्ठपुरे णयरे गोणत्ताए पच्चायाहिइ, से णं तत्थ उम्मुक्क जाव अण्णया कयाइ पढमपाउसंसि गंगाए महाणईए खलीणमट्टियं खणमाणे तडीए पेल्लिए समाणे कालगए तत्थेव सुपइट्ठपुरे णयरे सेट्ठिकुलंसि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुत्तत्ताए पच्चायाइस्सइ। से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे जाव जोव्वणगमणुप्पत्ते तहारूवाणं थेराणं अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सइ, से णं तत्थ अणगारे भविस्सइ इरियासमिए जाव बंभयारी, से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिइ, से णं तओ अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं....जहा दढपइण्णे सा चेव वत्तव्वया कलाओ जाव सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि॥३७॥

॥ पढमं अज्झयणं समत्तं॥

कठिन शब्दार्थ - **कहिं** - कहां पर, **गमिहिइ** - जायगा, **उववज्जिहिइ** - उत्पन्न होगा, **वेयड्ढगिरि पायमूले** - वैताढ्य पर्वत की तलहटी में, **सीहकुलंसि** - सिंह कुल में, **साहसिए**- साहसी, **समज्जिणइ** - एकत्रित करेगा, **सरीसवेसु** - सरीसृपों में, **मच्छ** - मत्स्य, **कच्छभ** - कच्छप, **गाह** - ग्राह, **मगर** - मगर मच्छ, **सुंसुमाराईणं** - सुंसुमार आदि की, **अद्धतेरसजातिकुलकोडीजोणिपमुहसयसहस्साइं** - जाति प्रमुख साढे बारह लाख कुल कोटियाँ, **जोणीविहाणंसि**- योनि विधान में-योनि भेद में, **अणेगसयसहस्सक्खुत्तो** - लाखों बार, **उद्दाइत्ता**- उत्पन्न हो कर, **चउप्पएसु** - चतुष्पदों-चौपायों में, **कडुयरुक्खेसु** - कटु-कड़वे वृक्षों में, **कडुयदुद्धिएसु** - कटु दुग्ध वाले अर्कादि वनस्पतियों में, **उम्मुक्कबालभावे** - त्याग दिया है बालभाव-बाल्यावस्था को, **पढमपाउसंसि** - प्रथम वर्षा ऋतु में, **खलीणमट्टियं** - किनारे पर स्थित मिट्टी का, **खणमाणे** - खनन करता हुआ, **तडीए** - किनारे के गिर जाने पर, **पेल्लित्तेसमाणे** - पीड़ित होता हुआ, **सिट्ठिकुलंसि** - श्रेष्ठि के कुल में, **जोव्वणगमणुप्पत्ते** - यौवन अवस्था को प्राप्त, **इरियासमिए** - ईर्या समिति से युक्त, **सामण्णपरियागं** - श्रमण पर्याय का, **पाउणित्ता** - पालन कर, **आलोइयपडिक्कंते** - आलोचना तथा प्रतिक्रमण कर, **अड्ढाइं** - आढ्य-संपन्न, **सिज्झिहिइ** - सिद्ध पद को प्राप्त करेगा, **बुज्झिहिइ** - केवलज्ञान के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वारा सम्पूर्ण लोक अलोक को जानेगा, **मुच्चिहिइ** - सम्पूर्ण कर्मों से मुक्त होगा, **परिणिव्वाहिइ**- संपूर्ण कषाय के नष्ट होने से तथा सम्पूर्ण कर्मों के क्षय होने से शीतल बन जायेगा, **सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ** - शारीरिक तथा मानसिक सब दुःखों का अन्त करेगा।

भावार्थ - गौतमस्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् ने फरमाया - हे गौतम! वह मृगापुत्र २६ वर्ष की पूर्ण आयु भोग कर कालमास में काल करके इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के भारतवर्ष के वैताढ्य पर्वत की तलहटी में सिंह रूप से सिंहकुल में जन्म लेगा, जो कि महा अधमी और साहसी बन कर अधिक से अधिक पाप कर्मों का उपार्जन करेगा। फिर वह सिंह समय आने पर काल करके इस रत्नप्रभा नामक पृथ्वी में जिसकी उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है, उसमें उत्पन्न होगा, फिर वह वहां से निकल कर सीधा भुजाओं के बल से चलने वाले अथवा पेट के बल चलने वाले जीवों की योनि में उत्पन्न होगा। वहां से काल करके दूसरी पृथ्वी (नरक) जिसकी उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की है उसमें उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर सीधा पक्षियोनि में उत्पन्न होगा, वहां से काल करके तीसरी नरक पृथ्वी जिसकी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है उसमें उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर सिंह की योनि में उत्पन्न होगा। वहां पर काल करके चौथी नरक पृथ्वी में उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर सर्प बनेगा। वहां से पांचवीं नरक में उत्पन्न होगा, वहां से निकल कर स्त्री बनेगा। वहां से काल करके छठी नरक में उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर पुरुष बनेगा। वहां से काल करके अधःसप्तम-सातवीं नरक पृथ्वी में उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर जलचर पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में मत्स्य, कच्छप, ग्राह, मकर और सुंसुमार आदि जलचर पंचेन्द्रिय जाति में योनियां-उत्पत्ति स्थान हैं, उन योनियों से उत्पन्न होने वाली कुल कोटियों की संख्या साढे बारह लाख हैं, उनके एक-एक योनि भेद में लाखों बार जन्म और मरण करता हुआ इन्हीं में बार-बार उत्पन्न होगा। तदनन्तर वहां से निकल कर चतुष्पदों-चौपायों में, छाती के बल चलने वाले, भुजा के बल चलने वाले तथा आकाश में विचरने वाले जीवों में तथा चार इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय और दो इन्द्रिय वाले प्राणियों तथा वनस्पतिगत कटु (कड़वे) वृक्षों और कटु दुग्ध वाले वृक्षों में, वायुकाय, तेजस्काय, अप्काय और पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा।

तत्पश्चात् वहां से निकल कर सुप्रतिष्ठपुर नाम के नगर में बैल रूप से उत्पन्न होगा। जब वह बालभाव को त्याग कर युवावस्था में आवेगा तब गंगा महानदी के किनारे मृतिका (मिट्टी) को खोदता हुआ नदी के किनारे के गिर जाने पर पीड़ित होता हुआ मृत्यु को प्राप्त हो जायगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृत्यु को प्राप्त होने पर वहीं सुप्रतिष्ठपुर नामक नगर में किसी श्रेष्ठि के घर में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वहां पर बालभाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त होने पर तथारूप के साधुओं के पास धर्म श्रवण करेगा। धर्म सुन कर चिंतन मनन करेगा, तत्पश्चात् मुंडित होकर अगारवृत्ति को त्याग कर अनगार धर्म को प्राप्त करेगा और ईर्यासमिति युक्त यावत् ब्रह्मचारी होगा। वहां बहुत वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन कर आलोचना प्रतिक्रमण से आत्मशुद्धि करता हुआ समाधि को प्राप्त कर काल के समय काल करके सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में देव रूप से उत्पन्न होगा। तदनन्तर देवभव की स्थिति पूरी होने पर वहां से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जो धनाढ्य कुल है उनमें उत्पन्न होगा वहां उसका कलाभ्यास, प्रव्रज्या ग्रहण यावत् मोक्ष गमन आदि सारा वृत्तांत दृढप्रतिज्ञ कुमार की तरह समझ लेना चाहिये।

सुधर्मास्वामी कहते हैं कि - हे जम्बू! इस प्रकार निश्चय ही श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जो कि मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, दुःखविपाक सूत्र के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है। जैसा मैंने प्रभु से सुना है वैसा ही तुम से कहता हूँ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में मृगापुत्र की भवपरंपरा का वर्णन किया गया है। अंत में मृगापुत्र का जीव प्रथम देवलोक से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में दृढ़प्रतिज्ञ के समान धनी कुल में उत्पन्न होगा और दृढ़प्रतिज्ञ की तरह ही सभी कलाओं में निष्णात होकर प्रव्रज्या ग्रहण करेगा तथा आठ कर्मों का संपूर्ण क्षय कर मोक्ष प्राप्त करेगा।

दृढ़प्रतिज्ञ का जीव पूर्वभव में अम्बड परिव्राजक के नाम से विख्यात था। उसका वर्णन औपपातिक सूत्र में किया गया है। जिज्ञासुओं को वहां से देख लेना चाहिये।

इस प्रकार मृगापुत्र के अतीत, अनागत और वर्तमान वृत्तांत के विषय में गौतमस्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्रमण भगवान् महावीर ने जो कुछ फरमाया उसका वर्णन करने के बाद आर्य सुधर्मा स्वामी जंबू स्वामी से कहते हैं कि हे जम्बू! मोक्षप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के दस अध्ययनों में से प्रथम अध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रतिपादन किया है।

त्तिबेमि-'इति ब्रवीमि'-इस प्रकार मैं कहता हूँ। यहां पर 'इति' शब्द समाप्ति अर्थ का सूचक है तथा 'ब्रवीमि' का भावार्थ है कि मैंने तीर्थंकर देव से इस अध्ययन का जैसा स्वरूप सुना है वैसा ही तुम से कह रहा हूँ। इसमें मेरी निजी कल्पना कुछ भी नहीं है। इस कथन से आर्य सुधर्मा स्वामी की विनीतता प्रकट होती है क्योंकि धर्मरूपी वृक्ष का मूल ही विनय है।

॥ प्रथम अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उज्झियए णामं बीयं अज्झयणं

उज्झितक नामक द्वितीय अध्ययन

प्रथम अध्ययन में मृगापुत्र का वर्णन करने के बाद सूत्रकार ने प्रस्तुत सूत्र के उज्झितक नामक द्वितीय अध्ययन में आचरण हीनता का दुष्परिणाम बता कर आचरण शुद्धि के लिये बलवती प्रेरणा प्रदान की है। इस अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?

तए णं से सुहम्मे अणगारे जंबुं अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे णामं णयरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे। तस्स णं वाणियगामस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए दूईपलासे णामं उज्जाणे होत्था। तत्थ णं दूइपलासे सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था। तत्थ णं वाणियगामे मित्ते णामं राया होत्था वण्णओ। तस्स णं मित्तस्स रण्णो सिरीणामं देवी होत्था वण्णओ॥३८॥

भावार्थ - हे भगवन्! यदि मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है तो हे भगवन्! दुःखविपाक सूत्र के द्वितीय अध्ययन का मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने क्या अर्थ फरमाया है?

तदनन्तर सुधर्मा स्वामी ने जम्बू अनगार से इस प्रकार कहा कि - 'हे जम्बू! उस काल तथा उस समय में वाणिज्यग्राम नाम का एक समृद्धशाली नगर था। उस नगर के ईशानकोण में दूतिपलाश नाम का एक उद्यान था। उस उद्यान में सुधर्मा नामक यक्ष का एक यक्षायतन था। उस वाणिज्यग्राम नामक नगर में मित्र नाम का राजा था। वर्णन पूर्ववत् जानना। उस मित्र राजा की श्रीनाम की पट्टरानी थी। वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - प्रथम अध्ययन की समाप्ति पर जम्बूस्वामी ने सुधर्मा स्वामी से विनयपूर्वक निवेदन किया कि हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाक सूत्र के प्रथम मृगापुत्र नामक अध्ययन का जो भाव फरमाया है उसका मैंने आपके श्रीमुख से श्रवण किया है परंतु हे भगवन्! दूसरे अध्ययन में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने क्या अर्थ प्रतिपादन किया है सो कृपा कर फरमाइये। जम्बू स्वामी के इस प्रकार निवेदन करने पर सुधर्मा स्वामी ने दूसरे अध्ययन का वर्णन किया है।

तत्थ णं वाणियगामे कामज्झया णामं गणिया होत्था अहीण जाव सुरूवा बावत्तरीकलापंडिया चउसट्ठिगणियागुणोववेया एगूणतीसविसेसे रममाणी एक्कवीसरइगुणप्पहाणा बत्तीसपुरिसोवयारकुसला णवंगसुत्तपडिबोहिया अट्ठारस-देसीभासाविसारया सिंगारागारचारुवेसा गीयरइयगंधव्व-णट्टकुसला संगयगय० सुंदरथण० ऊसियज्झया सहस्सलंभा विदिण्णछत्तचामरवालवीयणीया कण्णीरह-प्पयाया यावि होत्था, बहूणं गणियासहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ॥३६॥

कठिन शब्दार्थ - **बावत्तरीकलापंडिया** - बहत्तर कलाओं में प्रवीण, **चउसट्ठिगणिया-गुणोववेया** - चौसठ गणिका गुणों से युक्त, **एगूणतीसविसेसे** - २९ विशेषों में, **रममाणी** - रमण करने वाली, **एक्कवीसरइगुणप्पहाणा** - इक्कीस प्रकार के रति गुणों में प्रधान, **बत्तीसपुरिसोवयारकुसला** - कामशास्त्र प्रसिद्ध पुरुष के ३२ उपचारों में कुशल, **णवंगसुत्त-पडिबोहिया** - सुप्त नव अंगों से जागृत अर्थात् दो कान, दो नेत्र, दो नासिका, एक मुंह, एक त्वचा और एक मन, ये नौ अंग जिसके जागे हुए हैं, **अट्ठारसदेसीभासाविसारया** - अठारह देशों की भाषा में प्रवीण, **सिंगारागारचारुवेसा** - श्रृंगार प्रधान सुंदर वेश युक्त, **गीयरइयगंधव्व-णट्टकुसला** - गीत (संगीत विद्या) रति (कामक्रीड़ा) गान्धर्व (नृत्य युक्त गीत) और नाट्य में कुशल, **संगय गय०** - मनोहर गत गमन आदि से युक्त, **सुंदरथण०** - कुचादि गत सौन्दर्य से युक्त, **ऊसियज्झया** - जिसके विलास भवन पर ध्वजा फहराती थी, **सहस्सलंभा** - सहस्र का लाभ लेने वाली, **विदिण्णछत्तचामर वाल वीयणीया** - जिसे राजा की कृपा से छत्र तथा चमर एवं बाल व्यजनिका प्राप्त थी, **कण्णीरहप्पयाया** - कर्णीरथ नामक रथ विशेष से गमन करने वाली, **कामज्झया णामं** - काम ध्वजा नामक, **गणिया** - गणिका, **बहूणं गणिया सहस्साणं**-हजारों गणिकाओं का, **आहेवच्चं** - आधिपत्य-स्वामित्व करती हुई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस वाणिज्यग्राम नगर में संपूर्ण पंचेन्द्रियों से युक्त शरीर वाली, यावत् सुरूपा-परम सुंदरी, ७२ कलाओं में प्रवीण, गणिका के ६४ गुणों से युक्त, २९ प्रकार के विशेषों-विषय के गुणों में रमण करने वाली, २१ प्रकार के रति गुणों में प्रधान, ३२ पुरुष के उपचारों में निपुण, जिसके प्रस्तुत नव अंग जागे हुए हैं, १८ देशों की भाषा में विशारद, जिसकी सुंदर वेषभूषा श्रृंगार रस का घर बनी हुई है एवं गीत, रति और गान्धर्व, नाट्य तथा नृत्य कला में प्रवीण, सुंदर गति-गमन करने वाली, कुचादिगत सौन्दर्य से सुशोभित, गीत, नृत्य आदि कलाओं से हजार मुद्रा कमाने वाली, जिसके विलास भवन पर ऊँची ध्वजा लहरा रही थी, जिसको राजा की ओर से पारितोषिक रूप में छत्र तथा चामर-चंवर, बालव्यजनिका (चंवरी या छोटा पंखा) मिली हुई थी और जो कर्णीरथ में गमनागमन किया करती थी, ऐसी कामध्वजा नाम की एक गणिका (वेश्या) जो कि हजारों गणिकाओं पर आधिपत्य-स्वामित्व करती हुई यावत् समय व्यतीत कर रही थी।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में कामध्वजा गणिका के सांसारिक वैभव का वर्णन किया गया है।

प्रभु का पदार्पण

तत्थ णं वाणियगामे विजयमित्ते णामं सत्थवाहे परिवसइ अड्ढे०, तस्स णं विजयमित्तस्स सुभद्दा णामं भारिया होत्था अहीण०, तस्स णं विजयमित्तस्स पुत्ते सुभद्दाए भारियाए अत्तए उज्झियए णामं दारए होत्था अहीण जाव सुरूवे। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे परिसा णिग्गया राया वि जहा कूणिओ तहा णिग्गओ धम्मो कहिओ परिसा पडिगया राया य गओ॥४०॥

भावार्थ - उस वाणिज्यग्राम नगर में विजयमित्र नाम का एक धनी सार्थवाह-व्यापारी वर्ग का मुखिया निवास करता था। उस विजयमित्र की सर्वांग संपन्न सुभद्रा नाम की भार्या थी। उस विजयमित्र का पुत्र और सुभद्रा का आत्मज उज्झितक नाम का एक सर्वांग सम्पन्न और रूपवान् बालक था।

उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वाणिज्यग्राम नामक नगर में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पधारे। प्रजा उनके दर्शनार्थ नगर से निकली और वहाँ का राजा कोणिक नरेश की तरह भगवान् के दर्शन करने को निकला, भगवान् ने धर्मोपदेश दिया, धर्मोपदेश को सुन कर राजा और प्रजा दोनों वापिस चले गये।

वध्य पुरुष का वर्णन

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे जाव लेसे छट्ठंछट्ठेणं जहा पण्णत्तीए पढम जाव जेणेव वाणियगामे णयरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता उच्चणीय.....अडमाणे जेणेव रायमग्गे तेणेव ओगाढे।

तत्थ णं बहवे हत्थी पासइ संणद्ध-बद्धवम्मिय-गुडिय उप्पीलियकच्छे उद्दामियघंटे णाणामणिरयण-विविह-गेवेज्जउत्तरकंचुइज्जे पडिकप्पिए झयपडागवर-पंचामेलआरूढहत्थारोहे गहियाउहप्पहरणे अण्णे य तत्थ बहवे आसे पासइ संणद्धबद्धवम्मियगुडिए आविद्धगुडे ओसारियपक्खरे उत्तरकंचुइयओचूल-मुहचंडाधर-चामरथासगपरिमंडियकडिए आरूढअस्सारोहे गहियाउहप्पहरणे अण्णे य तत्थ बहवे पुरिसे पासइ संणद्धबद्धवम्मियकवए उप्पीलियसरासणपट्टीए पिणद्धगेवेज्जे विमलवरबद्धचिंधपट्टे गहियाउहप्पहरणे।

तेसिं च णं पुरिसाणं मज्झगयं एगं पुरिसं पासइ अवओडयबंधणं उक्खित्तकण्णणासं णेहतुप्पियगत्तं बज्झकरकडियजुय-णियत्थं कंठेगुणरत्तमल्लदामं चुण्णगुंडियगायं चुण्णयं वज्झपाणपीयं तिलं-तिलं चेव छिज्जमाणं कागणिमंसाइं खावियंतं पावं खक्खरगसएहिं हम्ममाणं अणेग-णर-णारीसंपरिवुडं चच्चरे-चच्चरे खंडपडहएणं उग्घोसिज्जमाणं, इमं च णं एयारूवं उग्घोसणं पडिसुणेइ-णो खलु देवाणुप्पिया! उज्झियगस्स दारगस्स केइ राया वा रायपुत्तो वा अवरज्झइ अप्पणो से सयाइं कम्माइं अवरज्झंति॥४१॥

कठिन शब्दार्थ - लेसे - तेजोलेश्या को संक्षिप्त किये हुए, छट्ठंछट्ठेणं - बेले बेले की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपस्या करते हुए, **पण्णत्तीए** - प्रतिपादन किया गया है, **अडमाणे** - फिरते हुए, **रायमग्गे** - राजमार्ग, **ओगाढे** - पधारे, **संणद्धबद्धवम्मियगुडिय उप्पीलियकच्छे** - युद्ध के लिये उद्यत हैं जिन्हें कवच पहनाये हुए हैं तथा जिन्हें शारीरिक रक्षा के उपकरण पहनाये गये हैं, **उद्दामियघंटे**- जिनके दोनों ओर घण्टे लटक रहे हैं, **णाणामणिरयण-विविह-गेवेज्ज-उत्तरकंचुइज्जे** - नाना प्रकार के मणि, रत्न, विविध भांति के ग्रैवेयक-ग्रीवा के भूषण तथा बखतर विशेष से युक्त, **पडिकप्पिए**- परिकल्पित-विभूषित, **झयपडागवरपंचामेलआरूढहत्थारोहे** - ध्वज और पताकाओं से सुशोभित, पंच शिरोभूषणों से युक्त तथा हस्त्यारोहों-हाथीवानों (महावतों) से युक्त, **गहियाउहप्पहरणे** - आयुध (वह शस्त्र जो फैंका नहीं जाता है तलवार आदि) और प्रहरण (वह शस्त्र जो फैंका जाता है तीर आदि) ग्रहण किये हुए हैं, **आसे** - अश्वों-घोड़ों को, **आविद्धगुडे** - सोने चांदी की बनी हुई झूल से युक्त, **ओसारियपक्खरे** - लटकाये हुए तनुत्राण से युक्त, **उत्तरकंचुइयओचूलमुहचंडाधर-चामरथासगपरिमंडियकडिए** - बखतर विशेष से युक्त, लगाम से अन्वित मुख वाले, क्रोध पूर्ण अधरों से युक्त, चामर, स्थासक (आभरण विशेष) से परिमंडित (विभूषित) कटि भाग है जिनका, **आरूढ अस्सारोहे** - अश्वारोही (घुड़सवार) जिन पर आरूढ हो रहे हैं, **उप्पीलियसरासणपट्टीए** - जिन्होंने शरासन पट्टिका-धनुष खिंचने के समय हाथ की रक्षा के लिये बांधा जाने वाला चर्मपट्ट- कस कर बांधी हुई है, **पिणद्धगेवेज्जे**- ग्रैवेयक-कण्ठाभरण धारण किये हुए, **विमलवरबद्धचिंधपट्टे**- जिन्होंने उत्तम तथा निर्मल चिह्नपट्ट रूप वस्त्र धारण किये हुए हैं, **अवओडयबंधणं** - गले और दोनों हाथों को मोड़ कर पृष्ठभाग में जिसके दोनों हाथ रस्सी से बांधे हुए हैं, **उक्कित्तकण्णणासं**- जिसके कान और नाक कटे हुए हैं, **णेहतुप्पियगत्तं** - घृत से स्निग्ध शरीर, **बज्झकरकडियजुयणियत्थं** - जिसके कर और कटिप्रदेश में वध्यपुरुषोचित वस्त्र युग्म धारण किया हुआ है अथवा जिसके दोनों हाथों में हथकडियां पड़ी हुई है, **कंठेगुणरत्तमल्लदामं** - जिसके कंठ में लाल पुष्पों की माला है, **चुण्णगुंडियगायं चुण्णयं** - जिसका शरीर गेरु के चूर्ण से पोता हुआ है, **वज्झपाणपीयं** - जिसे प्राण प्रिय हो रहे हैं, **तिलं तिलं चेव छिज्जमाणं** - जिसको तिल तिल कर के काटा जा रहा है, **कागणिमंसाइं खावियंतं** - जिसके मांस के छोटे-छोटे टुकड़े काक आदि पक्षियों के खाने योग्य हो रहे हैं, **खक्खरगसएहिं** - सैकड़ों पत्थरों (चाबुकों) से, **हम्ममाणं** - मारा जा रहा है, **खंडपडहएणं** - फूटे हुए ढोल से, **उग्घोसिज्जमाणं** - उद्घोषित किया जा रहा है, **अवरज्झंति**- अपराध-दोष किया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के प्रधान शिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार जो कि तेजोलेश्या को संक्षिप्त करके अपने अंदर धारण किये हुए हैं तथा बेले बेले पारणा करने वाले हैं तथा भगवती सूत्र में वर्णित जीवन चर्या वाले हैं, भिक्षा के लिये वाणिज्यग्राम नगर में गए वहां ऊंच नीच सभी घरों में भिक्षा के निमित्त भ्रमण करते हुए राजमार्ग पर पधारे।

वहां राजमार्ग में भगवान् गौतमस्वामी ने अनेक हाथियों को देखा जो कि युद्ध के लिये उद्यत थे, जिन्हें कवच पहनाये हुए थे और जो शरीर रक्षक उपकरण-झूल आदि युक्त थे तथा जिनके उदर-पेट दृढ़ बंधन से बांधे हुए थे। जिनके झूले के दोनों ओर बड़े बड़े घण्टे लटक रहे थे एवं जो मणियों और रत्नों से जड़े हुए ग्रैवेयक-कण्ठाभूषण पहने हुए थे तथा जो उत्तर कंचुक नामक तनुत्राण विशेष एवं अन्य कवचादि सामग्री धारण किये हुए थे। जो ध्वजा पताका तथा पंचविध शिरोभूषणों (शिर के पांच आभूषण-तीन ध्वजाएं और उनके बीच में दो पताकाएं) से विभूषित थे। जिन पर आयुध और प्रहरण आदि लिये हुए हाथीवान-महावत सवार हो रहे थे अथवा जिन पर आयुध और प्रहरण लदे हुए थे। और भी वहां पर अनेक अश्वों को देखा जो कि युद्ध के लिये उद्यत तथा जिन्हें कवच पहनाये हुए थे और जिन्हें शारीरिक रक्षा उपकरण धारण कराये हुए थे। जिनके शरीर पर झूलें पड़ी हुई थी, जिनके मुख में लगाम दिये गये थे जो क्रोध से होठों को चबा रहे थे तथा चामर एवं स्थासक (आभरण विशेष) से जिनका कटिभाग विभूषित हो रहा था और जिन पर बैठे हुए घुड़सवार आयुध और प्रहरणादि से युक्त थे। इसी भांति वहां पर बहुत से पुरुषों को देखा, जिन्होंने दृढ़ बंधनों से बंधे हुए और लोहमय कसूलक आदि से युक्त कवच शरीर पर धारण किये हुए थे। उनकी भुजा में शरासन पट्टिका (धनुष खैंचते समय हाथ की रक्षा के निमित्त बांधी जाने वाली चमड़े की पट्टी) बंधी हुई थी। गले में आभूषण धारण किये हुए थे। उनके शरीर पर उत्तम चिह्नपट्टिका-वस्त्र खण्ड निर्मित चिह्न-निशानी विशेष लगी हुई थी तथा आयुध और प्रहरण आदि को धारण किये हुए थे।

उन पुरुषों के मध्य में भगवान् गौतम ने एक और पुरुष को देखा जिसके गले और हाथों को मोड़ कर पीछे रस्सी से बांधा हुआ था। उसके नाक और कान कटे हुए थे। शरीर को घृत से स्निग्ध किया हुआ था तथा वह वध्य-पुरुषोचित वस्त्र युग्म से युक्त था अथवा जिसके दोनों हाथों में हथकड़ियां पड़ी हुई थीं, उसके गले में कण्ठसूत्र के समान रक्त पुष्पों की माला थी और उसका शरीर गेरू के चूर्ण से पोता गया था, जो भय से संत्रस्त तथा प्राण धारण किये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहने का इच्छुक था, उसके शरीर को तिल तिल करके काटा जा रहा था, जिसके मांस के छोटे-छोटे टुकड़े काक आदि पक्षियों के खाने योग्य हो रहे थे ऐसा वह पापी पुरुष सैकड़ों पत्थरों या चाबुकों से मारा जा रहा था और अनेकों नरनारियों से घिरा हुआ प्रत्येक चौराहे आदि (जहाँ पर चार या इससे अधिक रास्ते मिले हुए हों ऐसे स्थानों) पर फूटे हुए ढोल से उसके संबंध में इस प्रकार घोषणा की जा रही थी - 'हे महानुभावो!' उज्झितक नामक बालक ने किसी राजा अथवा राजपुत्र का कोई अपराध नहीं किया किंतु यह इसके अपने ही कर्मों का अपराध-दोष है जिसके कारण इस दुरवस्था को प्राप्त हो रहा है।

विवेचन - भिक्षा के लिये वाणिज्यग्राम नगर में भ्रमण करते हुए गौतमस्वामी ने राजमार्ग पर बहुत से हाथी घोड़े तथा सैनिकों के दल को देखा। जिस तरह किसी उत्सव विशेष के अवसर पर अथवा युद्ध के समय हाथियों, घोड़ों और सैनिकों को श्रृंगारित, सुसज्जित एवं अस्त्र शस्त्र आदि से विभूषित किया जाता है उसी प्रकार वे हस्ती, घोड़े और सैनिक आदि विभूषित थे। उनके मध्य में एक अपराधी पुरुष उपस्थित था जिसे वध्यभूमि की ओर ले जाया जा रहा था और नगर के प्रसिद्ध स्थानों पर उसके अपराध की सूचना दी जा रही थी। प्रस्तुत सूत्र में हाथियों, घोड़ों और सैनिकों का वर्णन करने के साथ साथ उज्झितक कुमार को वध्य स्थल की ओर ले जाने आदि का कारुणिक दृश्य खिंचा गया है।

मानव को उसके कृत कर्म के अनुसार फल भोगना ही पड़ता है। प्रभु सूत्रकृतांग सूत्र के अध्ययन ५ उद्देशक २ में फरमाते हैं -

जं जारिसं पुव्वमकासि कम्मं तमेव आगच्छइ संपराए।
एगं तु दुक्खं भवमज्जणित्ता, वेदंति दुक्खी तमणंत दुक्खं॥ २३॥

अर्थात् - जिस जीव ने जैसा कर्म किया है वही उसको दूसरे भव में प्राप्त होता है। जिसने एकान्त दुःख रूप नरक भव का कर्म बांधा है वह अनंत दुःख रूप नरक को भोगता है।

उज्झितक कुमार के विषय में भी यही घोषणा की जा रही थी कि इस व्यक्ति को कोई दूसरा दण्ड देने वाला नहीं है किंतु इसके अपने कर्म ही इसे दण्ड दे रहे हैं अर्थात् राज्य की ओर से इसके साथ जो व्यवहार हो रहा है वह इसी के किये हुए कर्मों का परिणाम है।

उज्झितक कुमार की इस दशा को देख कर भगवान् गौतमस्वामी के हृदय में क्या विचार उत्पन्न हुआ और उसके विषय में उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से क्या कहा? अब सूत्रकार उसका वर्णन करते हैं -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वभव पृच्छा

तए णं से भगवओ गोयमस्स तं पुरिसं पासित्ता इमे अज्झत्थिए ५-अहो णं इमे पुरिसे जाव णिरयपडिरूवियं वेयणं वेएइ त्तिकट्टु वाणियगामे णयरे उच्चणीयमज्झिमकुलाइं अडमाणे अहापज्जत्तं समुदाणं गिण्हइ गिण्हेत्ता वाणियगामे णयरे मज्झंमज्झेणं जाव पडिदंसेइ, पडिदंसेत्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु अहं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे वाणियगामं जाव तहेव णिवेएइ। से णं भंते! पुरिसे पुव्वभवे के आसी जाव पच्चणुभवमाणे विहरइ?॥४२॥

कठिन शब्दार्थ - अज्झत्थिए - आध्यात्मिक संकल्प, **णिरयपडिरूवियं** - नरक के सदृश, **उच्चणीयमज्झिमकुले** - ऊंचे (धनिक), नीचे (निर्धन) मध्यम (मध्य) कोटि के घरों में, **अहापज्जत्तं** - आवश्यकतानुसार, **समुयाणं** - सामुदानिक भिक्षा, **णिवेएइ** - अनुभव करता है।

भावार्थ - तदनन्तर उस पुरुष को देख कर भगवान् गौतमस्वामी को यह संकल्प उत्पन्न हुआ कि अहो! यह पुरुष कैसी नरक सदृश वेदना का अनुभव कर रहा है। तत्पश्चात् वाणिज्यग्राम नगर में उच्च, नीच, मध्यम कोटि के घरों में भ्रमण करते हुए आवश्यकतानुसार भिक्षा लेकर वाणिज्यग्राम के मध्य में से होते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये और उन्हें लाई हुई भिक्षा दिखलाई। तदनन्तर भगवान् को वंदना नमस्कार करके इस प्रकार बोले - हे भगवन्! आपकी आज्ञा से मैं भिक्षा के लिये वाणिज्यग्राम नगर में गया, वहाँ मैंने नरक सदृश वेदना का अनुभव करते हुए एक पुरुष को देखा।

हे भगवन्! वह पुरुष पूर्वभव में कौन था जो यावत् नरक तुल्य वेदना का अनुभव करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

विवेचन - भगवान् से आज्ञा प्राप्त कर भिक्षा के निमित्त वाणिज्यग्राम नगर में गये गौतमस्वामी ने लौट कर भगवान् महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किया, लाई हुई भिक्षा दिखलायी और राजमार्ग में जो कुछ देखा वहां का अथ से इति पर्यंत संपूर्ण वृत्तांत भगवान् से कह सुनाया। सुनाने के बाद उस पुरुष के पूर्वभव संबंधी वृत्तांत को जानने की इच्छा से भगवान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से गौतमस्वामी ने पूछा कि - 'हे भगवन्! यह पुरुष पूर्वभव में कौन था? कहां रहता था? उसका क्या नाम और गोत्र था? एवं किस पाप मय कर्म के प्रभाव से वह इस हीनदशा का अनुभव कर रहा है?'

भगवान् का समाधान

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे णामं णयरे होत्था रिद्ध०। तत्थ णं हत्थिणाउरे णयरे सुणंदे णामं राया होत्था महया० तत्थ णं हत्थिणाउरे णयरे बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे गोमंडवे होत्था अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे पासाईए दरिसणीए अभिरूवे पडिरूवे। तत्थ णं बहवे णयरगोरूवा णं सणाहा य अणाहा य णगरगाविओ य णगरवसभा य णगरबलीवद्दा य णगरपड्डियाओ य पउरतणपाणिया णिब्भया णिरुवसग्गा सुहं सुहेणं परिवसंति ॥४३॥

कठिन शब्दार्थ - गोमंडवे - गोमण्डप-गोशाला, **णगरगोरूवा** - नगरगोरूपा-नगर के गाय बैल आदि चतुष्पद पशु, **सणाहा** - सनाथ, **अणाहा** - अनाथ, **णगरगाविओ** - नगर की गायें, **णगरबलीवद्दा** - नगर के बैल, **णगरपड्डियाओ** - नगर की छोटी गायें या भैंसे, **णगरवसभा** - नगर के सांड, **पउरतणपाणिया** - प्रचुर तृण पानी वा जिन्हें प्रचुर घास और पानी मिलता था, **णिब्भया** - निर्भय-भय से रहित, **णिरुवसग्गा** - निरुपसर्ग-उपसर्ग से रहित, **सुहंसुहेणं** - सुखपूर्वक, **परिवसंति** - निवास करते हैं।

भावार्थ - हे गौतम! उस पुरुष के पूर्वभव का वृत्तांत इस प्रकार है - उस काल तथा उस समय में इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के भारत वर्ष में हस्तिनापुर नामक एक समृद्धिशाली नगर था। उस नगर में सुनंद नाम का राजा था। जो महाहिमवान् (हिमालय के समान, पुरुषों में महान्) था। उस हस्तिनापुर नगर के लगभग मध्यप्रदेश में सैंकड़ों स्तंभों से निर्मित प्रासादीय, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप एक महान् गोमंडप था, वहां पर नगर के अनेक सनाथ और अनाथ पशु अर्थात् नगर की गौएं, नगर के बैल, नगर की छोटी-छोटी बछडिएं एवं सांड सुखपूर्वक रहते थे। उनको वहां घास और पानी आदि प्रचुर मात्रा में मिलता था और वे भय तथा उपसर्ग आदि से रहित होकर घूमते थे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भीम नामक कूटग्राह

तत्थ णं हत्थिणाउरे णयरे भीमे णामं कूडग्गाहे होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे। तस्स णं भीमस्स कूडग्गाहस्स उप्पला णामं भारिया होत्था अहीण०। तए णं सा उप्पला कूडग्गाहिणी अण्णया कयाइ आवण्णसत्ता जाया यावि होत्था॥४४॥

कठिन शब्दार्थ - **कूडग्गाहे** - कूटग्राह-धोखे से जीवों को फंसाने वाला, **अधम्मिए** - अधर्मी, **दुप्पडियाणंदे** - दुष्प्रत्यानन्दः-बड़ी कठिनता से प्रसन्न होने वाला, **आवण्णसत्ता** - गर्भवती।

भावार्थ - उस हस्तिनापुर में महान् अधर्मी यावत् कठिनाई से प्रसन्न होने वाला भीम नाम का एक कूटग्राह-धोखे से जीवों को फंसाने वाला रहता था। उसकी उत्पला नामक स्त्री थी जो अन्यून पंचेन्द्रिय शरीर वाली थी। किसी समय वह उत्पला गर्भवती हुई।

उत्पला को दोहद

तए णं तीसे उप्पलाए कूडग्गाहिणीए तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए-धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ ४ जाव सुलद्धे जम्मजीवियफले जाओ णं बहूणं णगरगोरूवाणं सणाहाण य जाव वसभाण य ऊहेहि य थणेहि य वसणेहि य छेप्पाहि य ककुहेहि य वहेहि य कण्णेहि य अच्छीहि य णासाहि य जिब्भाहि य ओट्ठेहि य कंबलेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य परिसुक्केहि य लावणेहि य सुरं च महुं च मेरगं च जाइं च सीधुं च पसण्णं च आसाएमाणीओ विसाएमाणीओ परिभाएमाणीओ परिभुंजेमाणीओ दोहलं विणेंति।

तं जइ णं अहमवि बहूणं णगर जाव विणिज्जामि त्ति कट्टु तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्खा भुक्खा णिम्मंसा ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा णित्तेया दीणविमणवयणा पंडुल्लइयमुहा ओमंथियणयणवयणकमला जहोइयं पुप्फ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वत्थगंध-मल्लालंकाराहारं अपरिभुंजमाणी करयलमलियव्व कमलमाला ओहय जाव झियाइ॥४५॥

कठिन शब्दार्थ - **बहुपडिपुण्णाणं** - परिपूर्ण-पूरे, **दोहले** - दोहद (दोहला), **अम्मयाओ**- माताएं, **धण्णाओ** - धन्य हैं, **जम्मजीवियफले** - जन्म और जीवन के फल को, **ऊहेहिं** - ऊधस्-वह थैली जिसमें दूध भरा रहता है, **थणेहि** - स्तन, **वसणेहि** - वृषण-अण्डकोष, **छेप्पाहि** - पूंछ, **ककुहेहि** - ककुद-स्कंध का ऊपरी भाग, **वहेहि** - स्कन्ध, **कण्णेहि** - कर्ण, **अच्छीहि** - नेत्र, **णासाहि** - नासिका, **कंबलेहि** - कम्बल-सास्ना-गाय के गले का चमड़ा, **सोल्लेहि** - शूल्य-शूलाप्रोत मांस, **तलिएहि** - तलित-तला हुआ, **भज्जेहि** - भुना हुआ, **परिसुक्केहि** - परिशुष्क-स्वतः सूखा हुआ, **लावणेहि** - लवण से संस्कृत मांस, **सुरं**- सुरा, **महुं** - मधु-पुष्पनिष्पन्न सुरा विशेष, **मेरगं** - मेरक-मद्य विशेष जो कि ताल फल से बनाई जाती है, **जाइं** - मद्य विशेष जो कि जाति कुसुम के जैसे वर्ण वाली होती है, **सीधुं** - सीधु-मद्य विशेष जो कि गुड़ और धातकी के मेल से बनाई जाती है, **पसण्णं** - प्रसन्ना-मद्य विशेष जो कि द्राक्षा आदि से निष्पन्न होती है, **आसाएमाणीओ** - आस्वाद लेती हुई, **विसाएमाणीओ** - विशेष आस्वाद लेती हुई, **परिभाएमाणीओ** - दूसरों को देती हुई, **परिभुंजेमाणीओ** - परिभोग करती हुई, **विणेंति** - पूर्ण करती है, **अविणिज्जमाणंसि** - पूर्ण न होने से, **सुक्खा** - सूखने लगी, **भुक्खा** - भोजन न करने से बल रहित होकर भूखे व्यक्ति के समान दिखने लगी, **णिम्मंसा** - मांस रहित अत्यंत दुर्बल-सी हो गई, **ओलुग्गा** - रोगिणी, **ओलुग्गसरीरा** - रोगी के समान शिथिल शरीर वाली, **णित्तेया** - निस्तेज-तेज से रहित, **दीणविमणवयणा** - दीन तथा चिंतातुर मुख वाली, **पंडुल्लइयमुही** - जिसका मुख पीला पड़ गया है, **ओमंथियणयणवयणकमला** - जिसेक नेत्र तथा मुख कमल मुर्झा गया, **जहोइयं**- यथोचित, **पुप्फ-वत्थगंधमल्लालंकाराहारं** - पुष्प, वस्त्र, गंध, माल्य-फूलों की गुंथी हुई माला, अलंकार-आभूषण और हार का, **करयलमलियव्व कमलमाला** - करतल से मर्दित कमलमाला की तरह।

भावार्थ - लगभग तीन माह के पश्चात् उत्पला को इस प्रकार का दोहद उत्पन्न हुआ - धन्य हैं वे माताएं यावत् उन्होंने ही जन्म तथा जीवन को भलीभांति सफल किया है जो अनेक अनाथ या सनाथ नागरिक पशुओं यावत् वृषभों के उधस्, स्तन, वृषण, पुच्छ, ककुद, स्कंध, कर्ण, नेत्र, नासिका, जिह्वा, ओष्ठ तथा कम्बलसास्ना जो कि शूल्य (शूला-प्रोत) तलित-तले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुए, भृष्ट-भुने हुए, शुष्क-स्वयं सूखे हुए और लवण-संस्कृत मांस के साथ सुरा, मधु, मेरक, जाति, सीधु और प्रसन्ना-इन मद्यों का सामान्य और विशेष रूप से आस्वादन, विस्वादन, परिभाजन तथा परिभोग करती हुई अपने दोहद को पूर्ण करती है। कांश! मैं भी उसी प्रकार अपने दोहद को पूर्ण करूं।

इस विचार के अनन्तर उस दोहद के पूर्ण न होने से वह उत्पला नामक कूटग्राह स्त्री सूख गई, बुभुक्षित हो गई, मांस रहित हो गई अर्थात् मांस के सूख जाने से शरीर की अस्थियां दिखने लग गई, शरीर शिथिल पड़ गया, तेज रहित हो गई, दीन तथा चिंतातुर मुखवाली हो गई, बदन पीला पड़ गया। नेत्र तथा मुख मुर्झा गया। यथोचित पुष्प, वस्त्र, गंध माल्य, अलंकार और हार आदि का उपभोग नहीं करती हुई करतल मर्दित पुष्पमाला की तरह म्लान हुई उत्साह रहित यावत् चिंता ग्रस्त हो कर विचार कर ही रही थी।

उत्पला की चिंता

इमं च णं भीमे कूडग्गाहे जेणेव उप्पला कूडग्गाहिणी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता ओहय जाव पासइ, पासित्ता एवं वयासी-किं णं तुमं देवाणुप्पिए! ओहय जाव झियासि? तए णं सा उप्पला भारिया भीमं कूडग्गाहं एवं वयासी- एवं खलु देवाणुप्पिया! ममं तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दोहले पाउब्भूए धण्णाणं ताओ० जाओ णं बहूणं गोरूवाणं ऊहेहि य जाव लावणेहि य सुरं च ३ आसाएमाणीओ० दोहलं विणेंति, तए णं अहं देवाणुप्पिया! तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि जाव झियामि ॥४६॥

भावार्थ - इतने में भीम नामक कूटग्राह जहां पर उत्पला कूटाग्राहिणी थी वहां पर आया और आकर उसने यावत् चिंताग्रस्त उत्पला को देखा, देख कर कहने लगा कि - 'हे भद्रे! तुम इस प्रकार शुष्क निर्मांस यावत् हतोत्साह हो कर किस चिंता में निमग्न हो रही हो?' तदनन्तर उत्पला नामक भार्या ने इस प्रकार कहा - 'हे स्वामिन्! लगभग तीन मास पूरे होने पर यह दोहद उत्पन्न हुआ कि वे मातायें धन्य हैं कि जो चतुष्पाद पशुओं के ऊधस् और स्तन आदि के लवण-संस्कृत मांस का सुरा आदि के साथ आस्वादन आदि करती हुई अपने दोहद को पूर्ण करती है। तदनन्तर हे देवानुप्रिय! मैं उस दोहद के पूर्ण नहीं होने से शुष्क यावत् हतोत्साह होकर चिंता में निमग्न हूँ। अर्थात् उस दोहद का पूर्ण नहीं होना ही मेरी इस दशा का कारण है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भीम का आश्वासन

तए णं से भीमे कूडग्गाहे उप्पलं भारियं एवं वयासी-मा णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहय० झियाहि, अहं णं तहा करिस्सामि जहा णं तव दोहलस्स संपत्ती भविस्सइ, ताहिं इट्ठाहिं ५ जाव वग्गूहिं समासासेइ॥४७॥

कठिन शब्दार्थ - **संपत्ती** - संप्राप्ति-पूर्ति, **वग्गूहिं** - वचनों से, **समासासेइ** - आश्वासन देता है।

भावार्थ - तत्पश्चात् कूटग्राह भीम ने अपनी उत्पला भार्या से कहा कि-हे भद्रे! तू चिंता मत कर मैं वही कुछ करूंगा, जिससे कि तुम्हारे इस दोहद की पूर्ति हो जाय। इस प्रकार के इष्ट-प्रिय वचनों से वह उसे आश्वासन देता है।

विवेचन - सगर्भा स्त्री को गर्भ रहने के दूसरे या तीसरे महीने में गर्भगत जीव के भविष्य के अनुसार अच्छी या बुरी जो इच्छा उत्पन्न होती है उसको 'दोहद' कहते हैं। प्रस्तुत सूत्र में भीम नामक कूटग्राह की उत्पला स्त्री के दोहद का वर्णन किया गया है। उसे नागरिक पशुओं के विविध प्रकार के शूल्य (शूलाप्रोत) आदि मांसों के साथ सुरा आदि का सेवन करने का दोहद उत्पन्न हुआ और दोहद के पूर्ण नहीं होने से वह चिंताग्रस्त हो सूखने लगी और उसका शरीर मांस के सूखने से अस्थिपंजर-सा हो गया। भीम ने उत्पला के चिंताग्रस्त होने के कारण को जान कर उसे संपूर्ति करवाने का आश्वासन दिया।

दोहद पूर्ति एवं पुत्रजन्म

तए णं से भीमे कूडग्गाहे अद्धरत्तकालसमयंसि एगे अबीए संणद्ध जाव पहरणे सयाओ गिहाओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता हत्थिणाउरे णयरे मज्झंमज्झेणं जेणेव गोमंडवे तेणेव उवागए २ त्ता बहूणं णगरगोरूवाणं जाव वसभाण य अप्पेगइयाणं ऊहे छिंदइ जाव अप्पेगइयाणं कंबले छिंदइ अप्पेगइयाणं अण्णमण्णाणं अंगोवंगाणं वियंगेइ वियंगेत्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता उप्पलाए कूडग्गाहिणीए उवणेइ। तए णं सा उप्पला भारिया तेहिं बहूहिं गोमंसेहि य सोल्लेहि य सुरं च (५) आसाएमाणी० तं दोहलं विणेइ। तए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं सा उप्पला कूडग्गाहिणी संपुण्णदोहला संमाणियदोहला विणीयदोहला वोच्छिण्णदोहला संपण्णदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ। तए णं सा उप्पला कूडग्गाहिणी अण्णया कयाइं णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारगं पयाया॥४८॥

कठिन शब्दार्थ - **अद्धरत्तकालसमयंसि** - अर्द्ध रात्रि के समय, **छिंदइ** - काटता है, **अण्णमण्णाइं** - अन्यान्य, **अंगोवंगाणं** - अंगोपांगों को, **वियंगेइ** - काटता है, **उवणेइ** - देता है, **संपुण्णदोहला** - संपूर्ण दोहद वाली, **संमाणियदोहला** - सम्मानित दोहद वाली, **विणीयदोहला**- विनीत दोहद वाली, **वोच्छिण्णदोहला** - व्युच्छिन्न दोहद वाली, **संपण्णदोहला**- संपन्न दोहद वाली, **परिवहइ** - धारण करती है।

भावार्थ - तत्पश्चात् भीम कूटग्राह अर्द्धरात्रि के समय अकेला ही दृढ बंधनों से बद्ध और लोहमय कसूलर्क आदि से युक्त कवच को धारण कर आयुध और प्रहरण लेकर घर से निकला और हस्तिनापुर नगर के मध्य से होता हुआ जहां पर गोमण्डप था वहां पर आया, आकर अनेक नागरिक पशुओं यावत् वृषभों में से कई एक के ऊधस् यावत् कई एक के कम्बल-सास्ना आदि एवं कई एक के अन्यान्य अंगोपांगों को काटता है, काट कर अपने घर आता है और आकर अपनी उत्पला भार्या को दे देता है। तदनन्तर वह उत्पला उन अनेकविध शूल्य (शूलाप्रोत) आदि गोमांसों के साथ सुरा आदि का आस्वादन प्रस्वादन आदि करती हुई अपनी दोहद की पूर्ति करती है, इस प्रकार संपूर्ण दोहद वाली, सम्मानित दोहद वाली, विनीत दोहद वाली, व्यच्छिन्न दोहद वाली और संपन्न दोहद वाली वह उत्पला कूटग्राही उस गर्भ को सुखपूर्वक धारण करती है। तदनन्तर उस उत्पला नामक कूटग्राहिणी ने किसी समय नौ मास पूरे होने पर बालक को जन्म दिया।

पुत्र का 'गोत्रास' नामकरण

तए णं ते णं दारएणं जायमेत्तेणं चेव महया महया सद्देणं विघुट्ठे विस्सरे आरसिए। तए णं तस्स दारगस्स आरसियसद्दं सोच्चा णिसम्म हत्थिणाउरे णयरे बहवे णगरगोरूवा जाव वसभा य भीया तत्था तसिया उव्विग्गा सव्वओ समंता विप्पलाइत्था। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं णामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमेणं दारएणं जायमेत्तेणं चेव महया महया चिच्चीसद्देणं विघुट्ठे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विस्सरे आरसिए तए णं एयस्स दारगस्स आरसियसद्दं सोच्चा णिसम्म हत्थिणाउरे बहवे णगरगोरूवा जाव भीया ४ सव्वओ समंता विप्पलाइत्था तम्हा णं होउ अम्हं दारए गोत्तासे णामेणं॥४६॥

कठिन शब्दार्थ - **जायमेत्तेणं** - जन्म लेते ही, **आरसिए** - भयंकर आवाज की, **विघुट्ठे** - चीत्कार पूर्ण, **विस्सरे** - कर्णकटु, **आरसियसद्दं** - आरसित शब्द-चिल्लाहट को, **विप्पलाइत्था** - भागने लगे।

भावार्थ - उस बालक ने जन्मते ही महान् कर्णकटु एवं चीत्कार पूर्ण भयंकर शब्द किया। उसके चीत्कार पूर्ण शब्द को सुन कर तथा अवधारण कर हस्तिनापुर नगर के नागरिक पशु यावत् वृषभ आदि भयभीत हुए, उद्वेग को प्राप्त हो कर चारों तरफ भागने लगे। तदनन्तर उस बालक के माता पिता ने इस प्रकार से उसका नामकरण किया कि जन्म लेते ही इस बालक ने महान् कर्णकटु और चीत्कारपूर्ण भीषण शब्द किया है जिसे सुन कर हस्तिनापुर के गौ आदि नागरिक पशु भयभीत और उद्विग्न होकर चारों तरफ भागने लगे इसलिये इस बालक का नाम 'गोत्रास'-गो आदि पशुओं को त्रास देना-रखा जाता है।

भीम कूटग्राह की मृत्यु

तए णं से गोत्तासे दारए उम्मुक्कबालभावे० जाए यावि होत्था। तए णं से भीमे कूडग्गाहे अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते। तए णं से गोत्तासे दारए बहूणं मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणेणं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे भीमस्स कूडग्गाहस्स णीहरणं करेइ करेत्ता बहूणं लोइयमयकिच्चाइं करेइ॥५०॥

कठिन शब्दार्थ - **उम्मुक्कबालभावे** - बालभाव को त्याग कर, **कालधम्मुणा** - काल धर्म से, **संजुत्ते** - संयुक्त हुआ, **मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणेणं** - मित्र-सुहृद, ज्ञातिजन निजक-आत्मीय पुत्र आदि, स्वजन-पिता आदि, संबंधी-श्वसुर आदि, परिजन-दासदासी आदि से, **संपरिवुडे** - संपरिवृत-घिरा हुआ, **रोयमाणे** - रुदन करता हुआ, **कंदमाणे** - आक्रंदन करता हुआ, **विलवमाणे** - विलाप करता हुआ, **लोइयमयकिच्चाइं** - लौकिक मृतक क्रियाएं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर गोत्रास बालक ने बालभाव को त्याग कर युवावस्था में पदार्पण किया तत्पश्चात् भीम कूटग्राह किसी समय कालधर्म को प्राप्त हुआ तब गोत्रास ने अपने मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, संबंधी और परिजनों से परिवृत हो कर रुदन, आक्रन्दन और विलाप करते हुए कूटग्राह का दाह संस्कार किया और अनेक लौकिक मृतक क्रियाएं कीं।

विवेचन - सदा एकान्त हित का उपदेश देने वाले सखा को 'मित्र' कहते हैं। समान आचार विचार वाले जाति समूह को 'ज्ञाति' कहते हैं। माता, पिता, पुत्र, कलत्र (स्त्री) आदि को 'निजक' कहते हैं। भाई, चाचा, मामा आदि को 'स्वजन' कहते हैं। श्वसुर, जामाता, साले, बहनोई आदि को 'संबंधी' तथा मंत्री, नौकर, दास, दासी आदि को 'परिजन' कहते हैं।

गोत्रास की नरक में उत्पत्ति

तए णं से सुणंदे राया गोत्तासं दारयं अण्णया कयाइ सयमेव कूडग्गाहत्ताए ठवेइ। तए णं से गोत्तासे दारए कूडग्गाहे जाए यावि होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे। तए णं से गोत्तासे दारए कूडग्गाहित्ताए कल्लाकल्लिं अद्धरत्तयकालसमयंसि एगे अबीए संणद्धबद्धवम्मियकवए जाव गहियाउहप्पहरणे सयाओ गिहाओ णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव गोमंडवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बहूणं णगरगोरूवाणं सणाहाण य जाव वियंगेइ वियंगेत्ता जेणेव सए गेहे तेणेव उवागए।

तए णं से गोत्तासे कूडग्गाहे तेहिं बहूहिं गोमंसेहि य सोल्लेहि य......सुरं च ६ आसाएमाणे विसाएमाणे जाव विहरइ। तए णं से गोत्तासे कूडग्गाहे एयकम्मे......सुबहूं पावकम्मं समज्जिणित्ता पंचवाससयाइं परमाउयं पालइत्ता अट्टदुहट्टोवगए कालमासे कालं किच्चा दोच्चाए पुढवीए उक्कोसं तिसागरोवमठिइएसु णेरइएसु णेरइयत्ताए उववण्णे॥५१॥

कठिन शब्दार्थ - कल्लाकल्लिं - प्रतिदिन, अट्टदुहट्टोवगए - चिंताओं और दुःखों से पीड़ित हो कर।

भावार्थ - तदनन्तर सुनंद राजा ने गोत्रास को स्वयमेव कूटग्राह के पद पर नियुक्त कर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिया। तत्पश्चात् अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद वह गोत्रास कूटग्राह प्रतिदिन अर्द्धरात्रि के समय सैनिक की तरह तैयार होकर, कवच पहन कर एवं अस्त्र शस्त्रों को ग्रहण कर अपने घर से निकलता है और गोमंडप में जाता है वहां पर अनेक गौ आदि नागरिक पशुओं के अंगोपांगों को काटकर अपने घर आ जाता है आकर उन गौ आदि पशुओं के शूल-पक्व मांसों के साथ सुरा आदि का आस्वादन आदि करता हुआ जीवन व्यतीत करता है।

तत्पश्चात् वह गोत्रास कूटग्राह इस प्रकार के कर्मों वाला, इस प्रकार के कार्यों में प्रधानता रखने वाला, एवंविधविद्या-पाप रूप विद्या को जानने वाला तथा एवंविध आचरणों वाला नानाप्रकार के पाप कर्मों का उपार्जन कर पांच सौ वर्ष की परम आयु को भोग कर चिंताओं और दुःखों से पीड़ित होता हुआ कालमास में काल करके उत्कृष्ट तीन सागरोपम की स्थिति वाली दूसरी नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ।

विवेचन-गोत्रास हिंसक और पापमय प्रवृत्ति करने वाला था अतः पाप कर्मों का उपार्जन करके तीन सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति वाले दूसरे नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ।

उज्झितक कुमार का जन्म

तए णं सा विजयमित्तस्स सत्थवाहस्स सुभद्दा णामं भारिया जायणिंदुया यावि होत्था जाया-जाया दारगा विणिहायमावज्जंति। तए णं से गोत्तासे कूडग्गाहे दोच्चाए पुढवीए अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव वाणियगामे णयरे विजयमित्तस्स सत्थवाहस्स सुभद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं सा सुभद्दा सत्थवाही अण्णया कयाइ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारगं पयाया।।५२।।

कठिन शब्दार्थ - **जायणिंदुया** - जात निंदुका-जिसके बच्चे उत्पन्न होते ही मर जाते हैं।

भावार्थ - तदनन्तर विजयमित्र सार्थवाह की सुभद्रा नाम की भार्या जो कि जातनिंदुका थी अर्थात् जन्म लेते ही मर जाने वाले बच्चों को जन्म देने वाली थी। उसके बालक उत्पन्न होते ही विनाश को प्राप्त हो जाते थे। तत्पश्चात् वह कूटग्राह गोत्रास का जीव दूसरी नरक से निकल कर वाणिज्यग्राम नगर के विजयमित्र सार्थवाह की सुभद्रा भार्या के उदर में (कुक्षि में) पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। *तदनन्तर वह सुभद्रा सार्थवाही ने किसी अन्य समय में नव मास के परिपूर्ण* होने पर बालक को जन्म दिया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उज्झितक कुमार का बाल्यकाल

तए णं सा सुभद्दा सत्थवाही तं दारगं जायमेत्तयं चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झावेइ, उज्झावेत्ता दोच्चंपि गिण्हावेइ, गिण्हावेत्ता अणुपुव्वेणं सारक्खेमाणी संगोवेमाणी संवड्ढेइ।

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो ठिइवडियं च चंदसूरदंसणं च जागरियं च महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं करेंति। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो एक्कारसमे दिवसे णिव्वत्ते संपउत्ते बारसमे दिवसे इमेयारूवं गोण्णं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमेत्तए चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झिए तम्हा णं होउ अम्हं दारए उज्झियए णामेणं। तए णं से उज्झियए दारए पंचधाईपरिग्गहिए तंजहा-खीरधाईए १ मज्जणधाईए २ मंडणधाईए ३ कीलावणधाईए ४ अंकधाईए ५ जहा दढपइण्णे जाव णिव्वाघाए गिरिकंदर-मल्लीणे व चंपगपायवे सुहंसुहेणं विहरइ॥५३॥

कठिन शब्दार्थ - ठिइवडियं - स्थिति पतित-कुल मर्यादा के अनुसार पुत्र-जन्मोचित बधाई बांटने आदि की पुत्र जन्म क्रिया, **चंदसूरदंसणं** - चन्द्र सूर्य दर्शन, **जागरियं** - जागरण, **इड्ढिसक्कारसमुदएणं** - ऋद्धि और सत्कार के साथ, **बारसाहे संपत्ते** - बारहवें दिन के आने पर, **गोण्णं** - गौण-गुण से संबंधित, **गुणणिप्फण्णं** - गुण निष्पन्न, **उज्झियए** - उज्झितक, **पंचधाई परिग्गहीए** - पांच धायमाताओं की देखरेख में, **खीरधाईए** - क्षीरधात्री-दूध पिलाने वाली, **मज्जणधाईए** - स्नानधात्री-स्नान कराने वाली, **मंडणधाईए** - मंडनधात्री-वस्त्राभूषण से अलंकृत कराने वाली, **कीलावणधाईए** - क्रीड़ावनधात्री-क्रीड़ा कराने वाली, **अंकधाईए** - अंकधात्री-गोद में खिलाने वाली, **णिव्वाय** - निर्वात-वायु रहित, **णिव्वाघाय** - निर्व्याघात-आघात से रहित, **गिरिकंदर-मल्लीणे** - पर्वतीय कंदरा में अवस्थित, **चंपगपायवे** - चम्पक वृक्ष की तरह, **सुहंसुहेणं**- सुखपूर्वक, **परिवड्ढइ** - वृद्धि को प्राप्त होने लगा।

भावार्थ - सुभद्रा सार्थवाही ने उस बालक को जन्म देते ही एकान्त में उकरडी-कूडा गिराने की जगह पर फिकवा दिया और फिर उसे उठवा लिया और उठवा कर क्रमपूर्वक संरक्षण एवं संगोपन करती हुई वह उसका परिवर्द्धन करने लगी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्पश्चात् उस बालक के माता पिता ने महान् ऋद्धि सत्कार के साथ कुल मर्यादा के अनुसार पुत्र जन्मोचित बधाई बांटने आदि की पुत्र जन्म क्रिया और तीसरे दिन चन्द्र सूर्य दर्शन संबंधी उत्सव विशेष, छठे दिन कुल मर्यादानुसार जागरिका-जागरण महोत्सव किया। ग्यारहवें दिन के व्यतीत होने पर बारहवें दिन उसके माता पिता ने उसका गुण से संबंधित, गुण निष्पन्न नामकरण किया। जन्मते ही यह बालक एकान्त कूडा फैंकने के स्थान पर त्यागा गया था अतः इस बालक का नाम 'उज्झितक' रखा जाता है। तदनन्तर वह उज्झितक कुमार पांच धायमाताओं (क्षीरधात्री, मंजनधात्री, मंडनधात्री, क्रीडावनधात्री और अंकधात्री) से युक्त दृढप्रतिज्ञ की तरह यावत् निर्वात एवं निर्व्याघात पर्वतीय कंदरा में विद्यमान चम्पक वृक्ष की तरह सुखपूर्वक वृद्धि को प्राप्त होने लगा।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में उज्झितकुमार का जन्म एवं बाल्यकाल वर्णित है। उज्झितक कुमार का बाल्यकाल का वर्णन दृढ प्रतिज्ञ कुमार की तरह समझ लेना चाहिये। दृढप्रतिज्ञ का वर्णन औपपातिक सूत्र अथवा राजप्रश्नीय सूत्र से जान लेना चाहिये।

पुत्र जन्म के तीसरे दिन चन्द्र सूर्य दर्शन, छठे दिन जागरण आदि समस्त बातें उस समय की कुल मर्यादा के रूप में ही समझनी चाहिये। आध्यात्मिक जीवन से इन बातों का कोई संबंध प्रतीत नहीं होता है।

सुभद्रा को पति वियोग

तए णं से विजयमित्ते सत्थवाहे अण्णया कयाइ गणिमं च १ धरिमं च २ मेज्जं च ३ पारिच्छेज्जं च ४ चउव्विहं भंडगं गहाय लवणसमुद्दं पोयवहणेण उवागए। तए णं से विजयमित्ते तत्थ लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए णिब्बुड्डभंडसारे अत्ताणे असरणे कालधम्मुणा संजुत्ते। तए णं तं विजयमित्तं सत्थवाहं जे जहा बहवे ईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सत्थवाहा लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए छूढं णिब्बुड्डभंडसारं कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेंति ते तहा हत्थणिक्खेवं च बाहिरभंडसारं च गहाय एगंतं अवक्कमंति।

तए णं सा सुभद्दा सत्थवाही विजयमित्तं सत्थवाहं लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिब्बुड्ड० कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेइ, सुणेत्ता महया पइसोएणं अप्फुण्णा समाणी परसुणियत्ताविव चंपगलया धस-त्ति धरणीयलंसि सव्वंगेहिं संणिवडिया॥५४॥

कठिन शब्दार्थ - **सत्थवाहे** - सार्थवाह-व्यापारियों का मुखिया, **पोयवहणेणं** - पोतवहन-जहाज द्वारा, **गणिमं** - गणिम-गिनती से बेची जाने वाली वस्तु जिसका भाव संख्या पर हो जैसे-नारियल आदि, **धरिमं** - धरिम-जो तराजू से तोल कर बेची जाय जैसे-घृत-गुड़ आदि, **मेज्जं** - मेय-जिसका माप किया जाय जैसे-वस्त्र आदि, **परिच्छेज्जं** - परिच्छेद्य-जिसका क्रय विक्रय परीक्षा पर निर्भर हो जैसे-रत्न, नीलम आदि, **भंडं** - भाण्ड-बेचने योग्य वस्तुएं, **पोयविवत्तिए** - जहाज पर आपत्ति आने से, **णिब्बुडभंडसारे** - बहुमूल्य वस्तुएं जल मग्न हो गई, **अत्ताणे** - अत्राण-जिसका कोई रक्षक नहीं हो, **असरणे** - अशरण-जिसका कोई आश्रयदाता न हो, **हत्थणिक्खेवं** - हस्तनिक्षेप-हाथ से लिया हो-धरोहर, **बाहिरभंडसारं** - बाह्य-धरोहर से अतिरिक्त भाण्डसार-बहुमूल्य वस्तुएं, **पइसोएणं** - पति शोक से, **परसुणियत्ता** - कुल्हाडे से काटी गई, **धसत्ति**- धड़ाम से, **धरणीतलंसि**- जमीन पर, **सव्वंगेहिं** - सर्व अंगों से, **संणिवडिया** - गिर पड़ी।

भावार्थ - तब किसी समय विजयमित्र सार्थवाह ने जहाज से गणिम (गिनती से बेची जाने वाली वस्तुएं) धरिम (जो तराजू से तोल कर बेची जाये) मेय (जिसका माप किया जाय और परिच्छेद्य (जिसा क्रय विक्रय परीक्षा से हो) रूप चार प्रकार की बेचने योग्य वस्तुएं लेकर लवण समुद्र में प्रस्थान किया परंतु लवण समुद्र में जहाज पर विपत्ति आने से विजयमित्र की ये चारों प्रकार की बहुमूल्य वस्तुएं जलमग्न हो गई और वह स्वयं भी अत्राण-त्राण रहित एवं अशरण-शरण रहित होने से कालधर्म को प्राप्त हो गया।

तदनन्तर ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य-श्रेष्ठी और सार्थवाहों ने जब लवण समुद्र में जहाज के नष्ट होने एवं महामूल्य वाले वस्तुओं के जलमग्न हो जाने पर त्राण और शरण रहित विजयमित्र की मृत्यु का समाचार सुना तब वे हस्तनिक्षेप और बाह्य भांडसार को लेकर एकान्त स्थान में चले गये।

सुभद्रा सार्थवाही ने जिस समय लवण समुद्र में जहाज पर विपत्ति आ जाने के कारण भांडसार के जलमग्न होने के साथ ही विजयमित्र की मृत्यु का वृत्तांत सुना तब वह पति वियोग जन्य महान् शोक से व्याप्त हो गयी और कुल्हाड़े से कटी हुई चम्पक वृक्ष की लता (शाखा) की भांति धड़ाम से पृथ्वीतल पर गिर पड़ी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुभद्रा की मृत्यु

तए णं सा सुभद्दा सत्थवाही मुहुत्तंतरेण आसत्था समाणी बहूहिं मित्त जाव परिवुडा रोयमाणी कंदमाणी विलवमाणी विजयमित्तसत्थवाहस्स लोइयाइं मयकिच्चाइं करेइ। तए णं सा सुभद्दा सत्थवाही अण्णया कयाइ लवणसमुद्दोत्तरणं च लच्छिविणासं च पोयविणासं च पइमरणं च अणुचिंतेमाणी-अणुचिंतेमाणी कालधम्मुणा संजुत्ता॥५५॥

कठिन शब्दार्थ - **आसत्था** - आश्वस्त, **लवणसमुद्दोत्तरणं** - लवण समुद्र में गमन, **लच्छिविणासं** - लक्ष्मी विनाश, **पोयविणासं** - जहाज विनाश, **पइमरणं** - पति मृत्यु, **अणुचिंतेमाणी** - सोचती हुई।

भावार्थ - तदनन्तर वह सुभद्रा सार्थवाही एक मुहूर्त के अनन्तर आश्वस्त हुई-सावधान हुई। अनेक मित्र, ज्ञाति आदि यावत् संबंधियों से घिरी हुई रुदन करती हुई, क्रंदन करती हुई विलाप करती हुई विजयमित्र सार्थवाह के लौकिक मृतक क्रिया कर्म को करती है। तत्पश्चात् वह सुभद्रा सार्थवाही किसी अन्य समय लवण समुद्र पर पति का गमन, लक्ष्मी का विनाश, जहाज का जलमग्न होना तथा पतिदेव के मृत्यु की चिंता में निमग्न हुई कालधर्म को प्राप्त हो गई।

उज्झितक का व्यसनी बनना

तए णं ते णगरगुत्तिया सुभद्दं सत्थवाहिं कालगयं जाणित्ता उज्झियगं दारगं सयाओ गिहाओ णिच्छुभंति, णिच्छुभित्ता तं गिहं अण्णस्स दलयंति। तए णं से उज्झियए दारए सयाओ गिहाओ णिच्छूढे समाणे वाणियगामे णयरे सिंघाडग जाव पहेसु जूयखलएसु वेसियाघरेसु पाणागारेसु य सुहंसुहेणं परिवड्ढइ। तए णं से उज्झियए दारए अणोहट्टिए अणिवारिए सच्छंदमई सइरप्पयारे मज्जप्पसंगी चोरजूयवेसदारप्पसंगी जाए यावि होत्था। तए णं से उज्झियए अण्णया कयाइ कामज्झयाए गणियाए सद्धिं संपलग्गे जाए यावि होत्था, कामज्झयाए गणियाए सद्धिं विउलाइं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **णगरगुत्तिया** - नगर रक्षक, **णिच्छुभंति** - निकाल देते हैं, **जूयखलएसु**- द्युत स्थानों-जूए खानों में, **वेसियाघरएसु** - वेश्या गृहों में, **पाणागारेसु** - मद्य स्थानों-शराब खानों में, **अणोहट्टिए** - अनपघट्टक-बलपूर्वक हाथ आदि पकड़ कर जिसको कोई रोकने वाला नहीं हो, **अणिवारिए** - अनिवारक-जिसको वचन से भी कोई हटाने वाला नहीं हो, **सच्छंदमई**- स्वच्छंदमति-अपनी बुद्धि से ही काम करने वाला-किसी दूसरे की नहीं मानने वाला, **सइरप्पयारे**- निजमत्यनुसार-यातायात करने वाला, **मज्जप्पसंगी** - मदिरा पीने वाला, **संपलग्गे**- संप्रलग्न-संलग्न।

भावार्थ - तत्पश्चात् नगर रक्षक पुरुषों ने सुभद्रा सार्थवाही की मृत्यु का समाचार प्राप्त कर उज्झितक कुमार को घर से निकाल दिया और उसका घर किसी दूसरे को दे दिया। अपने घर से निकाला जाने पर वह उज्झितकुमार वाणिज्यग्राम नगर के त्रिपथ, चतुष्पथ यावत् सामान्य मार्गों पर तथा द्युतगृहों (जूआघरों) वेश्याघरों और पानगृहों में सुखपूर्वक परिभ्रमण करने लगा। तदनन्तर बेरोकटोक, स्वच्छंदमति और निरंकुश होता हुआ वह उज्झितककुमार चौर्य कर्म, द्यूतकर्म, वेश्यागमन, परस्त्रीगमन में आसक्त हो गया। तत्पश्चात् किसी समय कामध्वजा वेश्या से स्नेह संबंध स्थापित हो जाने के कारण वह उज्झितक उसी वेश्या के साथ पर्याप्त उदार-प्रधान मनुष्य संबंधी कामभोगों का उपभोग करता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

उज्झितक कुमार की चिंता

तए णं तस्स विजयमित्तस्स रण्णो अण्णया कयाइ सिरीए देवीए जोणिसूले पाउब्भूए यावि होत्था, णो संचाएइ विजयमित्ते राया सिरीए देवीए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए। तए णं से विजयमित्ते राया अण्णया कयाइ उज्झियदारयं कामज्झयाए गणियाए गिहाओ णिच्छुभावेइ णिच्छुभावेत्ता कामज्झयं गणियं अब्भिंतरियं ठावेइ ठावेत्ता कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।

तए णं से उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए गिहाओ णिच्छुभेमाणे कामज्झयाए गणियाए मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे अण्णत्थ कत्थइ सुइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

च रइं च धिइं च अविंदमाणे तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तयप्पियकरणे तब्भावणाभाविए कामज्झयाए गणियाए बहूणि अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणे-पडिजागरमाणे विहरइ॥५७॥

कठिन शब्दार्थ - **जोणिसूले** - योनिशूल-योनि में उत्पन्न होने वाली तीव्र वेदना विशेष, **मुच्छिए** - मूर्च्छित, **गिद्धे** - गृद्ध-आकांक्षा वाला, **गढिए** - ग्रथित-स्नेह जाल में बंधा हुआ, **अज्झोववण्णे** - अध्युपपन्न-उसमें आसक्त हुआ, **सुइं** - स्मृति-स्मरण, **रइं** - रति-प्रीति, **धिइं**-धृति-मानसिक स्थिरता, **अविंदमाणे** - प्राप्त न करता हुआ, **तच्चित्ते** - तद्गतचित्त-उसी में चित्त वाला, **तम्मणे** - उसी में मन रखने वाला, **तल्लेसे** - तद्विषयक परिणामों वाला, **तदज्झवसाणे** - तद्विषयक अध्यवसाय, **तदट्ठोवउत्ते** - उसकी प्राप्ति के लिये उपयुक्त-उपयोग रखने वाला, **तयप्पियकरणे** - उसी में समस्त इन्द्रियों को अर्पित करने वाला, **तब्भावणाभाविए**- उसी की भावना करने वाला, **छिद्दाणि** - छिद्र, **विवराणि** - विवर।

भावार्थ - तब उस विजयमित्र नामक राजा की श्रीनामक देवी को योनिशूल उत्पन्न हो गया अतः विजयमित्र नरेश रानी के साथ उदार-प्रधान मनुष्य संबंधी कामभोगों के सेवन में समर्थ नहीं रहा। तदनन्तर अन्य किसी समय उस राजा ने उज्झितक कुमार को कामध्वजा गणिका के स्थान में से निकलवा दिया और कामध्वजा वेश्या को अन्तःपुर में रख लिया तथा उसके साथ मनुष्य संबंधी प्रधान कामभोगों को भोगने लगा।

तदनन्तर कामध्वजा गणिका के गृह से निकाले जाने पर कामध्वजा वेश्या में मूर्च्छित-उस वेश्या के ध्यान में ही मूढ-पगला बना हुआ, गृद्ध-उस वेश्या की आकांक्षा-इच्छा रखने वाला, ग्रथित-उस गणिका के ही स्नेहजाल में जकड़ा हुआ और अध्युपपन्न-उस वेश्या की चिंता में अत्यधिक आसक्त रहने वाला वह उज्झितक कुमार और किसी स्थान पर भी स्मृति, रति और धृति न करता हुआ उसी में चित्त और मन लगाए हुए, तद्विषयक परिणाम वाला, तत्संबंधी कामभोगों में प्रयत्नशील, उसकी प्राप्ति के लिये उद्यत और तदर्पितकरण-जिसका मन, वचन और काया ये सब उसी के लिये अर्पित हो रहे हैं अतएव उसी की भावना से भावित होता हुआ कामध्वजा वेश्या के अन्तर, छिद्र और विवरों की गवेषणा करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से उज्झियए दारए अण्णया कयाइ कामज्झयं गणियं अंतरं लब्भेइ लब्भेत्ता कामज्झयाए गणियाए गिहं रहसियं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥५८॥

भावार्थ - तदनन्तर वह उज्झितक कुमार किसी अन्य समय में कामध्वजा गणिका के पास जाने का अवसर प्राप्त कर गुप्त रूप से उसके घर में प्रवेश कर के कामध्वजा वेश्या के साथ मनुष्य संबंधी उदार कामभोगों को भोगता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

उज्झितक की दुर्दशा

इमं च णं मित्ते राया ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउय-मंगल-पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए मणुस्सवागुरापरिक्खित्ते जेणेव कामज्झयाए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तत्थ णं उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं जाव विहरमाणं पासइ पासित्ता आसुरुत्ते ४ तिवलियभिउडिं णिडाले साहट्टु उज्झियगं दारगं पुरिसेहिं गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता अट्ठि-मुट्ठि-जाणु-कोप्परपहारसंभग्गमहियगत्तं करेइ करेत्ता अवओडयबंधणं करेइ करेत्ता एएणं विहाणेणं वज्झं आणावेइ।

एवं खलु गोयमा! उज्झियए दारए पुरापोराणाणं कम्माणं जाव पच्चणुभवमाणे विहरइ॥५९॥

कठिन शब्दार्थ-मणुस्सवागुरापरिक्खित्ते - मनुष्य समूह से घिरा हुआ, **तिवलियभिउडिं**-त्रिवलिका-तीन रेखाओं से युक्त भृकुटि, **अट्ठि-मुट्ठि-जाणु-कोप्परपहार-संभग्ग-महियगत्तं** - यष्टि (लाठी) मुष्टि (मुक्का) जानु (घुटने) कूर्पर कोहनी के प्रहरणों से संभग्न-चूर्णित तथा मथित गात्र वाला, **अवओडयबंधणं** - अवकोटकबन्धन-जिसमें रस्सी से गला और हाथों को मोड़ कर पृष्ठ भाग के साथ बांधा जाता है, **वज्झं** - वध्य, **आणवेइ** - आज्ञा देता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इधर किसी समय मित्र नरेश स्नान यावत् दुष्ट स्वप्नों के फल को विनष्ट करने के लिये प्रायश्चित्त के रूप में मस्तक पर तिलक एवं अन्य मांगलिक कार्य करके संपूर्ण अलंकारों से विभूषित हो मनुष्यों से घिरा हुआ कामध्वजा गणिका के घर पर गया। वहां उसने कामध्वजा वेश्या के साथ मनुष्य संबंधी भोगों को भोगते हुए उज्झितक कुमार को देखा, देखते ही वह क्रोध में लाल पीला हो गया, मस्तक में त्रिवलिक भृकुटि चढ़ा कर अपने अनुचर पुरुषों द्वारा उज्झितक कुमार को पकड़वाया, पकड़वा कर लाठी, मुक्का, जानु और कूर्पर के प्रहारों से उसके शरीर को संभग्न, चूर्णित और मथित कर अवकोटक बंधन से बांधा और बांध कर वध करने योग्य है, ऐसी आज्ञा दी।

हे गौतम! इस प्रकार उज्झितक कुमार पूर्वकृत पुरातन कर्मों का यावत् फलानुभव करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

उज्झितक कुमार का आगामी भव वर्णन

उज्झियए णं भंते! दारए इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! उज्झियए दारए पणवीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलीभिण्णे कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिइ, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढगिरिपायमूले वाणरकुलंसि वाणरत्ताए उववज्जिहिइ। से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तिरियभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे जाए-जाए वाणरवेल्लए वहेइ तं एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमुयारे कालमासे कालं किच्चा इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इंदपुरे णयरे गणियाकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ॥६०॥

भावार्थ - हे भगवन्! उज्झितक कुमार यहां से कालमास में मृत्यु का समय आ जाने पर काल करके कहां जाएगा? कहां उत्पन्न होगा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उज्झितक कुमार पच्चीस वर्ष की पूर्णायु को भोग कर आज ही त्रिभागावशेष-दिन के चौथे प्रहर में शूली द्वारा भेद को प्राप्त हुआ कालमास में काल करके रत्नप्रभा नामक पृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर सीधा इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारतवर्ष के वैताढ्य पर्वत की तलहटी में वानर कुल में वानर के रूप में उत्पन्न होगा। वहां पर बाल्यभाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त हुआ वह तिर्यंचभोगों-पशु संबंधी भोगों में मूर्च्छित, आसक्त, गृद्ध, ग्रथित-भोगों के स्नेह पाश से जकड़ा हुआ और अध्युपपन्न-भोगों में ही मन को लगाये रखने वाला होकर उत्पन्न हुए वानर शिशुओं का अवहनन किया करेगा। ऐसे कर्म में तल्लीन हुआ वह कालमास में काल करके इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारतवर्ष के इन्द्रपुर नामक नगर में गणिका कुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा।

तए णं तं दारयं अम्मापियरो जायमेत्तकं वद्धेहिंति णपुंसगकम्मं सिक्खावेहिंति। तए णं तस्स दारयस्स अम्मापियरो णिव्वत्तबारसाहस्स इमं एयारूवं णामधेज्जं करेहिंति तं०-होउ णं अम्हं इमे दारए पियसेणे णामं णपुंसए। तए णं से पियसेणे णपुंसए उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुप्पत्ते विण्णयपरिणयमेत्ते रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठे उक्किट्ठसरीरे भविस्सइ।

तए णं से पियसेणे णपुंसए इंदपुरे णयरे बहवे राईसर जाव पभियओ बहूहि य विज्जापओगेहि य मंतचुण्णेहि य हियउड्डावणेहि य णिण्हवणेहि य पण्हवणेहि य वसीकरणेहि य आभिओगिएहि य आभिओगित्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्सइ ॥६१॥

कठिन शब्दार्थ - **जायमेत्तकं** - पैदा होने के अनन्तर अर्थात् तत्काल ही, **वद्धेहिंति** - वर्द्धितक-नपुंसक करेंगे, **णपुंसगकम्मं** - नपुंसक का कर्म, **सिक्खावेहिंति** - सिखावेंगे, **विण्णायपरिणयमेत्ते** - विज्ञान-विशेष ज्ञान और बुद्धि आदि में परिपक्वता को प्राप्त कर, **विज्जापओगेहि** - विद्या के प्रयोगों से, **मंतचुण्णेहि** - मंत्र द्वारा मंत्रित चूर्ण-भस्म आदि के योग से, **हिय उड्डावणेहि** - हृदय को शून्य कर देने वाले, **णिण्हवणेहि** - अदृश्य कर देने वाले, **पण्हवणेहि** - प्रसन्न कर देने वाले, **वसीकरणेहि** - वशीकरण करने वाले, **आभिओगेहि**-पराधीन करने वाले प्रयोगों से, **आभिओगित्ता** - वश में करके।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस बालक को माता पिता नपुंसक करके नपुंसक कर्म सिखलावेंगे। बारह दिन व्यतीत हो जाने पर उसके माता पिता उसका 'प्रियसेन' नामकरण करेंगे। बालभाव का त्याग कर युवावस्था को प्राप्त विशेष ज्ञान रखने वाला एवं बुद्धि आदि की परिपक्व अवस्था को उपलब्ध करने वाला वह प्रियसेन नपुंसक रूप, यौवन और लावण्य से उत्कृष्ट और उत्तम शरीर वाला होगा।

तत्पश्चात् वह प्रियसेन नपुंसक इन्द्रपुर नगर के राजा, ईश्वर यावत् अन्य मनुष्यों को अनेकविध विद्या प्रयोगों से, मंत्रों द्वारा मंत्रित चूर्ण-भस्म आदि के योग से हृदय को शून्य कर देने वाले, अदृश्य कर देने वाले, वश में कर देने वाले तथा पराधीन-परवश कर देने वाले प्रयोगों से वश में करके मनुष्य संबंधी उदार-प्रधान भोगों को भोगता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

तए णं से पियसेणे णपुंसए एयकम्मे० सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एक्कवीसं वाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिइ, तओ सिरिसिवेसु संसारो तहेव जहा पढमो जाव पुढवी० से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे चंपाए णयरीए महिसत्ताए पच्चायाहिइ, से णं तत्थ अण्णया कयाइ गोट्ठिल्लएहिं जीवियाओ ववरोविए समाणे तत्थेव चंपाए णयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ, से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं.......अणगारे सोहम्मे कप्पे जहा पढमे जाव अंतं काहिइ। णिक्खेवो॥६२॥

॥ बीयं अज्झयणं समत्तं॥

कठिन शब्दार्थ - **एयकम्मे** - इन कर्मों को करने वाला, **समज्जिणित्ता** - उपार्जन करके, **परमाउयं** - परमायु को, **पालइत्ता** - भोग कर, **सिरिसिवेसु** - सरीसृपों-पेट अथवा भुजा के बल पर चलने वाले प्राणियों की योनि में, **महिसत्ताए** - महिष रूप में, **गोट्ठिल्लएहिं**- गौष्ठिकों के द्वारा, **सेट्ठिकुलंसि** - श्रेष्ठी के कुल में, **णिक्खेवो** - निक्षेप-उपसंहार।

भावार्थ - वह प्रियसेन नपुंसक इन पापपूर्ण कार्यों को ही अपना कर्त्तव्य, प्रधान लक्ष्य, विज्ञान तथा सर्वोत्तम आचरण बनाएगा। इन दुष्प्रवृत्तियों के द्वारा वह अत्यधिक पाप कर्मों का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपार्जन करके १२० वर्ष की परमायु का उपभोग कर कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा नामक प्रथम नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा। वहां से निकल कर सरीसृप-छाती के बल से चलने वाले सर्प आदि अथवा भुजा के बल से चलने वाले नकुल आदि प्राणियों की योनियों में जन्म लेगा। वहां से उसका संसार भ्रमण प्रथम अध्ययन में वर्णित मृगापुत्र के समान होगा। यावत् पृथ्वीकाय में जन्म लेगा। वहां से निकल कर जंबूद्वीप नामक द्वीप में भारतवर्ष की चम्पानामक नगरी में महिष रूप से उत्पन्न होगा। वहां पर वह किसी अन्य समय गौष्ठिकों-मित्र मण्डली के द्वारा मारा जाने पर उसी चम्पा नगरी के श्रेष्ठि कुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वहां पर बाल्यभाव का त्याग कर यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ वह तथारूप-विशिष्ट संयमी स्थविरों के पास शंका आदि दोषों से रहित बोधि-लाभ को प्राप्त कर अनगार धर्म को अंगीकार करेगा। वहां से काल के समय काल करके सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में उत्पन्न होगा। शेष **जिस प्रकार मृगापुत्र के प्रथम अध्ययन** में कहा है उसी प्रकार समझना यावत् कर्मों का अंत करेगा। निक्षेप-उपसंहार की कल्पना कर लेनी चाहिये।

विवेचन - प्रस्तुत अध्ययन में सूत्रकार ने उज्झितक कुमार के भवभ्रमण का वर्णन किया है। इस अध्ययन से स्पष्ट है कि शुभाशुभ कर्मों का चक्र कितना विकट और विलक्षण होता है। अशुभ कर्मों के उदय से जीव नरक तिर्यंच के असह्य दुःखों को सहन करता हुआ भवभ्रमण करता है। मांसाहार और व्यभिचार से जीव का कितना पतन होता है यह उज्झितक कुमार के उदाहरण से स्पष्ट है। अंत में उज्झितक कुमार का जीव धर्मश्रवण कर परम दुर्लभ सम्यक्त्व रत्न को प्राप्त करेगा और साधु धर्म अंगीकार करेगा। साधु धर्म का यथोचित पालन करता हुआ कर्मों का क्षय कर अंत में मोक्ष प्राप्त कर लेगा।

॥ द्वितीय अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्गसेणे णामं तइयं अज्झयणं

अभग्नसेन नामक तीसरा अध्ययन

उत्क्षेप-प्रस्तावना

तच्चस्स उक्खेवो-एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरिमताले णामं णयरे होत्था रिद्ध०। तस्स णं पुरिमतालस्स णयरस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं अमोहदंसी उज्जाणे तत्थ णं अमोहदंसिस्स जक्खस्स आययणे होत्था। तत्थ णं पुरिमताले णं० महाबले णामं राया होत्था ॥६३॥

भावार्थ - तृतीय अध्ययन की प्रस्तावना पूर्ववत् समझ लेनी चाहिये। हे जम्बू! उस काल और उस समय में पुरिमताल नामक एक नगर था जो ऋद्धि समृद्धि से परिपूर्ण था। उस नगर में ईशान कोण में अमोघदर्शी नाम का एक रमणीय उद्यान था। उस उद्यान में अमोघदर्शी नामक यक्ष का यक्षायतन था। पुरिमताल नगर में महाबल नाम का राजा राज्य करता था।

विवेचन - तीसरे अध्ययन की प्रस्तावना - श्री जम्बू स्वामी ने विनम्रता पूर्वक सुधर्मा स्वामी से कहा - हे भगवन्! आपने विपाक सूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध के दूसरे अध्ययन का जो भाव (अर्थ) फरमाया है वह मैंने सुन लिया है। अब आप मुझे यह बतलाने की कृपा करें कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने तीसरे अध्ययन का क्या भाव फरमाया है ?

जंबू स्वामी की जिज्ञासा पूर्ति के लिए सुधर्मा स्वामी तीसरे अध्ययन का प्रारंभ करते हुए फरमाते हैं कि हे जंबू! इस अवसर्पिणी काल का चौथा आरा जब बीत रहा था उस समय पुरिमताल नामक एक सुप्रसिद्ध नगर था। जो कि यथोचित गुणों से युक्त और वैभव पूर्ण था। उसके ईशान कोण में अमोघदर्शी नामक एक रमणीय उद्यान था। उस उद्यान में अमोघदर्शी नामक एक प्रसिद्ध यक्ष का यक्षायतन बना हुआ था। पुरिमताल नगर का राजा महाबल था।

विजय नामक चोर सेनापति का वर्णन

तत्थ णं पुरिमतालस्स णयरस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए देसप्पंते अडवी संठिया, एत्थ णं सालाडवी णामं चोरपल्ली होत्था विसमगिरिकंदर-कोलंब-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संणिविट्ठा वंसीकलंक-पागारपरिक्खित्ता छिण्णसेल-विसमप्पवाय-फरिहोवगूढा अब्भिंतरपाणीया-सुदुल्लभजलपेरंता अणेगखंडीं विदियजणदिण्ण-णिग्गमप्पवेसा सुबहुयस्सवि कुवियस्स जणस्स दुप्पहंसा यावि होत्था।

तत्थ णं सालाडवीए चोरपल्लीए विजय णामं चोरसेणावई परिवसइ अहम्मिए जाव लोहियपाणी बहुणयरणिग्गयजसे सूरे दढप्पहारे साहसिए सद्दवेही असि-लट्ठि-पढममल्ले, से णं तत्थ सालाडवीए चोरपल्लीए पंचण्हं चोरसयाणं आहेवच्चं जाव विहरइ॥६४॥

कठिन शब्दार्थ - **देसप्पंते** - देश प्रान्त-सीमा पर, **अडवी संठिया** - अटवी में स्थित, **सालाडवी** - शालाटवी, **चोरपल्ली** - चोर पल्ली-चोरों के निवास का गुप्त स्थान, **विसमगिरिकंदर-कोलंबसंणिविट्ठा** - पर्वत की विषम (भयानक) कंदरा (गुफा) के प्रांतभाग (किनारे पर) संस्थापित, **वंसीकलंकपागार परिक्खित्ता** - बांस की जाली की बनी हुई प्राकार (कोट) से परिक्षिप्त-घिरी हुई, **छिण्णसेल-विसमप्पवाय-फरिहोवगूढा** - छिन्न (विभक्त-अपने अवयवों से कटे हुए, शैल (पर्वत) के विषम (ऊंचे नीचे) प्रपात, परिखा (खाई) युक्त, **अब्भिंतरपाणीया-सुदुल्लभजलपेरंता** - आभ्यंतर जल से युक्त तथा बाहर दूर-दूर तक जल अत्यंत दुर्लभ, **अणेगखंडी** - अनेकों गुप्त द्वारों से युक्त, **विदियजणदिण्णणिग्गमप्पवेसा** - ज्ञात मनुष्य ही निर्गम और प्रवेश कर सकते थे, **सुबहुयस्स वि** - अनेकानेक, **कुवियस्स** - मोष व्यावर्तक-चोरों द्वारा चुराई हुई वस्तु को वापिस लाने के लिए उद्यत रहने वाले, **दुप्पहंसा**- दुष्प्रध्वस्या-नाश न किया जा सके, ऐसी, **लोहियपाणी** - लोहितपाणि-उसके हाथ खून से लाल रहते थे, **बहुणगरणिग्गयजसे**- जिसकी प्रसिद्धि अनेक नगरों में हो रही थी, **सूरे** - शूरवीर, **दढप्पहारे** - दृढ़ता से प्रहार करने वाला, **सद्दवेही** - शब्द भेदी-शब्द को लक्ष्य में रख कर बाण चलाने वाला, **असि-लट्ठि-पढममल्ले** - तलवार और लाठी का प्रथम मल्ल-प्रधान योद्धा।

भावार्थ - उस पुरिमताल नगर के ईशानकोण में सीमान्त पर स्थित अटवी में शालाटवी नामक एक चोरपल्ली थी, जो पर्वतीय भयानक गुफाओं के किनारे पर स्थित थी, बांस की बनी हुई बाड़ रूप प्राकार से घेरी हुई ती। विभक्त-अपने अवयवों से कटे हुए पर्वत के विषम-ऊंचे नीचे प्रपात-गर्त, तद्रूप परिखा-खाई वाली थी। उस के भीतर पानी का पर्याप्त प्रबंध था और उसके बाहर दूर दूर तक पानी नहीं मिलता था। उसके अन्दर अनेकानेक खण्डी (गुप्तद्वार-चोर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दरवाजे) थे और उस चोरपल्ली में परिचित व्यक्तियों का ही प्रवेश अथवा निर्गम हो सकता था। बहुत से चोरों की खोज लगाने वाले अथवा चोरों द्वारा अपहृत धनादि के वापिस लाने में उद्यत, मनुष्यों के द्वारा भी उसका नाश नहीं किया जा सकता था।

उस शालाटवी नामक चोरपल्ली में विजय नामक चोर सेनापति रहता था, जो कि महाअधर्मी यावत् उसके हाथ खून से रंगे रहते थे, उसका नाम अनेक नगरों में फैला हुआ था। वह शूरवीर, दृढप्रहारी, साहसी, शब्दवेधी और तलवार तथा लाठी का प्रथममल्ल-प्रधान योद्धा था। वह सेनापति उस चोरपल्ली में चोरों का आधिपत्य-स्वामित्व यावत् सेनापतित्व करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

विवेचन - पुरिमताल नगर की सीमा पर ईशानकोण में शालाटवी नाम की एक चोरपल्ली (चोरों के निवास करने का गुप्त स्थान) थी। चोरपल्ली में विजय नाम का चोर सेनापति रहता था। वह बड़े क्रूर विचारों का था, उसके हाथ सदैव रक्त से सने रहते थे उसके अत्याचारों से पीड़ित सारा प्रांत उसके नाम से कांप उंठता था। वह निर्भय, बहादुर और सबका डट कर सामना करने वाला था। उसका प्रहार बड़ा तीव्र और अमोघ-निष्फल नहीं जाने वाला था। वह शब्द भेदी बाण के प्रयोग में निष्णात था। तलवार और लाठी के युद्ध में भी वह अग्रसर था। इसी कारण वह ५०० चोरों का मुखिया बना हुआ था। पांच सौ चोर उसके शासन में रहते थे। शालाटवी का निर्माण ही कुछ ऐसे ढंग का था कि जिसके बल से सर्व प्रकार से अपने को सुरक्षित रखे हुए था।

इस प्रकार प्रस्तुत सूत्र में शालाटवी नामक चोरपल्ली का तथा चोर सेनापति विजय का विस्तृत वर्णन किया गया है।

चोरसेनापति के कुकृत्य

तए णं से विजए चोरसेणावई बहूणं चोराण य पारदारियाण य गंठिभेयाण य संधिच्छेयाण य खंडपट्टाण य अण्णेसिं च बहूणं छिण्ण-भिण्ण-बाहिराहियाणं कुडंगे यावि होत्था।

तए णं से विजए चोरसेणावई पुरिमतालस्स णयरस्स उत्तरपुरत्थिमिल्लं जणवयं बहूहिं गामघाएहि य णगरघाएहि य गोग्गहणेहि य बंदिग्गहणेहि य पंथकोट्टेहि य खत्तखणणेहि य ओवीलेमाणे-ओवीलेमाणे विद्धंसेमाणे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्धंसेमाणे तज्जेमाणे-तज्जेमाणे तालेमाणे-तालेमाणे णित्थाणे णिद्धणे णिक्कणे करेमाणे विहरइ। महब्बलस्स रण्णो अभिक्खणं अभिक्खणं कप्पायं गेण्हइ।

तस्स णं विजयस्स चोरसेणावइस्स खंदसिरी णामं भारिया होत्था अहीण-पडिपुण्णपंचिंदियसरीरे। तस्स णं विजयचोरसेणावइस्स पुत्ते खंदसिरीए भारियाए अत्तए अभग्गसेणे णामं दारए होत्था अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरे विण्णाय-परिणयमेत्ते जोव्वणगमणुपत्ते ॥६५॥

कठिन शब्दार्थ - **पारदारियाण** - परस्त्री लम्पटों, **गंठिभेयाण** - ग्रंथि भेदकों-गांठ कतरने वालों, **संधिच्छेयाण** - संधि छेदकों-सांध लगाने वालों, **खंडपट्टाण** - जिनके ऊपर पहनने लायक पूरा वस्त्र भी नहीं, **छिण्ण-भिण्ण-बाहिराहियाणं** - छिन्न-जिनके हाथ आदि अवयव काटे गये हों, भिन्न-जिनके नासिका आदि अवयव काटे गये हों, बहिष्कृत-जो नगर आदि से बाहर निकाल दिये गये हों, **कुडंगे** - कुटंक-वंश गहन (बांस के वन) के समान रक्षा करने वाला, **गामघाएहि** - ग्रामों को नष्ट करने से, **णगरघाएहि** - नगरों का नाश करने से, **गोग्गहणेहि** - गाय आदि पशुओं के अपहरण से, **बंदिग्गहणेहि** - कैदियों का अपहरण करने से, **पंथकोट्टहि** - पथिकों को लूटने से, **खत्तखणणेहि** - खात लगा कर चोरी करने से, **ओवीलेमाणे** - पीड़ित करता हुआ, **विद्धंसेमाणे** - धर्म भ्रष्ट करता हुआ, **तज्जेमाणे** - तर्जित-तर्जना युक्त करता हुआ, **तालेमाणे** - चाबुक आदि से ताडित करता हुआ, **णित्थाणे** - स्थान रहित, **णिद्धणे** - निर्धन-धन रहित, **णिक्कणे** - निष्कण-धान्यादि से रहित करता हुआ, **कप्पायं**- राजदेय कर-महसूल को, **अभिक्खणं**- बार बार, **अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरे** - अन्यून एवं निर्दोष पांच इन्द्रिय वाले, **विण्णायपरिणयमेत्ते** - विज्ञात-विशेष ज्ञान रखने वाला एवं बुद्धि आदि की परिपक्व अवस्था को प्राप्त किये हुए, **जोव्वणगमणुपत्ते** - युवावस्था को प्राप्त किये हुए।

भावार्थ - तदनन्तर वह विजय नामक चोर सेनापति अनेक चोर, पारदारिक-परस्त्री लम्पट, ग्रंथिभेदक, संधिछेदक, जुआरी धूर्त तथा अन्य बहुत से छिन्न-हाथ आदि जिनके काटे हुए हैं, भिन्न-नासिका आदि से रहित और बहिष्कृत किये हुए मनुष्यों के लिये कुटंक-आश्रयदाता था।

वह पुरिमताल नगर के ईशानकोणगत जनपद-देश को अनेक ग्रामघात, नगरघात, गौहरण बंदी-ग्रहण, पथिकजनों के धनादि के अपहरण तथा सेंध का खनन अर्थात् पाड़ लगा कर चोरी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करने से पीड़ित, धर्मच्युत, तर्जित, ताडित-ताडनायुक्त एवं स्थान रहित, धन और धान्य से रहित करता हुआ महाबल नरेश के राज देय कर-महसूल को भी बारम्बार स्वयं ग्रहण करके समय व्यतीत कर रहा था।

उस विजय नामक चोर सेनापति की स्कंदश्री नाम की निर्दोष पांच इन्द्रियों वाले शरीर से युक्त परमसुंदरा भार्या थी। विजय चोर सेनापति का पुत्र स्कंदश्री का आत्मज अभग्नसेन नाम का एक लड़का था जो कि अन्यून एवं निर्दोष पांच इन्द्रियों से युक्त विज्ञात-विशेष ज्ञान रखने वाला और बुद्धि आदि की परिपक्वता से युक्त युवावस्था को प्राप्त किये हुए था।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में विजयसेन चोर सेनापति के कृत्यों का वर्णन किया गया है।

विजय अनाथों का नाथ और निराश्रितों का आश्रय बना। उसने अंगोपांगों से रहित व्यक्तियों तथा बहिष्कृत दीन-जनों की भरसक सहायता की, इसके अलावा स्वकार्य सिद्धि के लिए उसने चोरों, गांठ कतरों, परस्त्री लम्पटों, जुआरी तथा धूर्तों को आश्रय देने का यत्न किया। इससे उसका प्रभाव इतना बढ़ा कि वह प्रांत की जनता से राजदेय कर को भी स्वयं ग्रहण करने लगा तथा राजकीय प्रजा को पीड़ित, तर्जित और संत्रस्त करके उस पर अपनी धाक जमाने में सफल हुआ।

सूत्रकार ने विजयसेन चोर सेनापति को कुटंक कहा है। इसका अभिप्राय यही है कि जिस तरह बांसों का वन प्रच्छन्न रहने वालों के लिए उपयुक्त एवं निरापद स्थान होता है वैसे ही विजयसेन चोर सेनापति परस्त्री लम्पट और ग्रंथि भेदक इत्यादि लोगों के लिये बड़ा सुरक्षित एवं निरापद स्थान था। तात्पर्य यह है कि वहां उन्हें किसी प्रकार की चिंता नहीं रहती थी। अपने को वहां वे निर्भय पाते थे।

'गामघाएहिं' आदि पदों की व्याख्या इस प्रकार है -

१. ग्रामघात - घात का अर्थ है नाश करना। ग्रामों-गांवों का घात, ग्रामघात कहलाता है। तात्पर्य यह है कि ग्रामीण लोगों की चल (जो वस्तुएं इधर उधर ले जाई जा सके जैसे चांदी, सोना, रुपया तथा वस्त्र आदि) और अचल (जो इधर उधर नहीं की जा सके जैसे मकान आदि) संपत्ति को विजयसेन चोर सेनापति हानि पहुंचाया करता था तथा वहां के लोगों को मानसिक, वाचिक और कायिक सभी तरह की पीड़ा और व्यथा पहुंचाता था।

२. नगरघात - ग्राम घात की तरह ही नगरों का घात-नाश नगरघात कहलाता है।

३. गो ग्रहण - यहां गो शब्द गाय आदि सभी पशुओं का परिचायक है। गो ग्रहण-गो का अपहरण (चुराना) गो ग्रहण कहलाता है। विजयसेन लोगों के पशुओं को चुरा कर ले जाता था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४. **बंदिग्रहण** - कैदियों-बंदियों का ग्रहण-अपहरण बंदिग्रहण कहलाता है अर्थात् विजयसेन चोर सेनापति राजा के अपराधियों को चुरा कर ले जाता था।

५. **पांथकुट्ट** - पांथ अर्थात् पथिक, कुट्ट अर्थात् ताड़ित करना, पथिकों को ताडित करना। विजयसेन मार्ग में आने जाने वाले व्यक्तियों को धन आदि छीनने के लिये पीटा करता था।

६. **खत्तखनन** - खत्त का अर्थ है सेंध। सेंध का खनन-खोदना, खत्त खनन कहलाता है। विजयसेन चोर सेनापति लोगों के घरों में सेंध लगा कर चोरी करता था।

इस प्रकार ग्रामघात आदि के द्वारा विजयसेन लोगों को दुःख दिया करता था। उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि विजयसेन चोर सेनापति लोगों को विपत्तिग्रस्त करने में किसी प्रकार की ढील नहीं कर रहा था। जहां उसका प्रजा के साथ इतना क्रूर एवं निर्दय व्यवहार था वहां वह महाबल नरेश को भी नुकसान पहुंचाने में पीछे नहीं था। अनेकों बार राजा को लूटा, उसके बदले प्रजा से स्वयं कर वसूला। यही उसके जीवन का कृत्य बना हुआ था।

विजयसेन चोर सेनापति की पत्नी का नाम स्कंदश्री था जो सर्वांग सुंदरी थी। उनके अभग्नसेन नामक पुत्र था जो शरीर से हृष्ट पुष्ट, विद्या संपन्न और घर में उद्योत करने वाला था।

गौतम स्वामी द्वारा करुणाजनक दृश्य देखना

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पुरिमताले णयरे समोसढे परिसा णिग्गया राया णिग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया य पडिगओ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी गोयमे जाव रायमग्गं समोगाढे, तत्थ णं बहवे हत्थी पासइ बहवे आसे पुरिसे सण्णद्धबद्धकवए, तेसिं णं पुरिसाणं मज्झगयं एगं पुरिसं पासइ अवओडय जाव उग्घोसिज्जमाणं, तए णं तं पुरिसं रायपुरिसा पढमंसि चच्चरंसि णिसीयावेंति णिसीयावेत्ता अट्ठ चुल्लपिउए अग्गओ घाएंति घाएत्ता कसप्पहारेहिं तालेमाणा तालेमाणा कलुणं कागणिमंसाइं खावेंति खावेत्ता रुहिरप्पाणियं च पाएंति तयाणंतरं च णं दोच्चंसि चच्चरंसि अट्ठ चुल्लमाउयाओ अग्गओ घाएंति एवं तच्चे चच्चरे अट्ठ महापिउए चउत्थे अट्ठ महामाउयाओ पंचमे पुत्ते छट्ठे सुण्हाओ सत्तमे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जामाउया अट्ठमे धूयाओ णवमे णत्तुया दसमे णत्तुईओ एक्कारसमे णत्तुयावई बारसमे णत्तुइणीओ तेरसमे पिउस्सियपइया चोद्दसमे पिउस्सियाओ पण्णरसमे माउसियापइया सोलसमे माउस्सियाओ सत्तरसमे मामियाओ अट्ठारसमे अवसेसं मित्तणाइणियग-सयणसंबंधिपरियणं अग्गओ घाएंति घाएत्ता कसप्पहारेहिं तालेमाणा तालेमाणा कलुणं कागणिमंसाइं खावेंति खावेत्ता रुहिरपाणियं च पाएंति॥६६॥

कठिन शब्दार्थ - सण्णद्धबद्धकवए - शस्त्र आदि से सुसज्जित एवं कवच पहने हुए, **अवओडय०** - अवकोटक-बंधन, **उग्घोसिज्जमाणं** - उद्‌घोषित, **रायपुरिसा**- राजपुरुष, **चच्चरंसि**- चत्वर (जहां चार मार्ग मिलते हों वहां) पर, **णिसीयावेंति** - बैठा लेते हैं, **चुल्लपिउए** - पिता के छोटे भाई-चाचों को, **अग्गओ** - आगे से, **घाएंति** - मारते हैं, **कसप्पहारेहिं** - कशा (चाबुक) के प्रहारों से, **तालेमाणा** - ताडित करते हुए, **कलुणं** - करुणा के योग्य, **कागणिमंसाइं** - शरीर से निकाले हुए मांस के छोटे छोटे टुकड़ों को, **रुहिरपाणं** - रुधिर पान, **पाएंति** - कराते (पिलाते) हैं, **चुल्लमाउयाओ** - लघु माताओं-चाचियों के, **महामाउयाओ** - महामाता-पिता के ज्येष्ठ भाई की पत्नियों-ताइयों को, **सुण्हाओ**-स्नुषाओं-पुत्रवधुओं को, **जामाउया**- जामाताओं को, **धुयाओ**- लड़कियों को, **णत्तुया** - नप्ताओं-पौत्रों और दौहित्रों को, **णत्तुइओ** - लड़की की पुत्रियों को और लड़के की लड़कियों को, **णत्तुयावई** - नप्तृकापति-पौत्रियों और दौहित्रियों के पतियों को, **णत्तुइणीओ** - नप्तृभार्या-पौत्रों और दौहित्रों की स्त्रियों को, **पिउस्सियपइया** - पितृष्वसृपति-पिता के बहिनों के पतियों को-बहनोइयों को, **पिउस्सियाओ** - पितृष्वसा-पिता की बहिनों को, **माउसियापइया** - मातृष्वसृपति-माता की बहिनों के पतियों को, **माउस्सियाओ** - मातृष्वसा-माता की बहिनों को, **मामियाओ** - मामियों को, **घाएंति** - मारते हैं।

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में पुरिमताल नगर में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे। परिषद् (जनता) नगर से निकली तथा राजा भी प्रभु के दर्शनार्थ पहुंचा। भगवान् ने धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुन कर राजा तथा परिषद् स्वस्थान लौट गई।

उस काल तथा उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ शिष्य श्री गौतमस्वामी यावत् राजमार्ग में पधारे। वहां उन्होंने अनेक हाथियों, घोड़ों तथा सैनिकों की तरह शस्त्रों से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुसज्जित एवं कवच पहने हुए अनेकों पुरुषों को और उन पुरुषों के मध्य अवकोटक बंधन से युक्त यावत् उद्घोषित एक पुरुष को देखा। तदनन्तर राजपुरुष उस पुरुष को प्रथम चत्वर (चौराहे) पर बैठा कर उसके आगे चाचाओं को मारते हैं तथा कशादि के प्रहारों से ताडित करते हुए वे राजपुरुष करुणाजनक स्थिति को प्राप्त हुए उस पुरुष को उसके शरीर में से काटे हुए मांस के छोटे छोटे टुकड़ों को खिलाते हैं और रुधिर का पान कराते हैं। तत्पश्चात् द्वितीय चत्वर पर उसकी आठ लघुमाताओं-चाचियों को उसके आगे ताड़ित करते हैं। इसी प्रकार तीसरे चत्वर पर आठ महापिताओं (तायों) को, चौथे पर आठ महामाताओं (ताइयों) को, पांचवें पर पुत्रों को, छठे पर पुत्रवधुओं को, सातवें पर जामाताओं को, आठवें पर लड़कियों को, नवमें पर नप्ताओं (पौत्रों और दौहित्रों) को, दसवें चत्वर पर लड़के और लड़की के लड़कियों को (पौत्रियों और दौहित्रियों) को, ग्यारहवें पर नप्तृकापतियों (पौत्रियों और दौहित्रियों के पतियों) को, बारहवें पर नप्तृभार्याओं (पौत्रों और दौहित्रों की स्त्रियों) को, तेरहवें पर पिता की बहिनों के पतियों (फूफाओं) को, चौदहवें पर पिता की भगिनियों को, पन्द्रहवें पर माता की बहिनों के पतियों को, सोलहवें पर माता की बहिनों को, सतरहवें पर मामा की स्त्रियों को, अठारहवें पर शेष मित्र, ज्ञातिजन, निजक, स्वजन, संबंधी और परिजनों को उस पुरुष के आगे मारते हैं तथा चाबुक के प्रहारों से ताड़ित करते हुए वे राजपुरुष दया के योग्य उस पुरुष को, उसके शरीर से निकाले हुए मांस के टुकड़े खिलाते और रुधिर का पान कराते हैं।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गौतमस्वामी द्वारा अवलोकित करुणाजनक दृश्य का वर्णन किया गया है।

जब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के प्रमुख शिष्य गौतमस्वामी बेले के पारणे के निमित्त पुरिमताल नगर में भिक्षार्थ पधारे और राजमार्ग पर पहुंचे तो वहां उन्होंने जो दृश्य देखा वह इस प्रकार है -

बहुत से सुसज्जित हस्ती तथा श्रृंगारित घोड़े एवं कवच पहने हुए अस्त्र शस्त्रों से सन्नद्ध अनेक सैनिक पुरुष खड़े हैं। उनके मध्य अवकोटक बंधन से बंधा हुआ एक पुरुष है जिसके साथ अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा है। साथ ही उसको दिये गये दण्ड के कारण की-इसके अपने कर्म ही इसकी इस दुर्दशा का कारण है, राजा आदि कोई अन्य नहीं है - इस रूप से उद्घोषणा भी की जा रही है। उद्घोषणा के बाद राज्य अधिकारी उस पुरुष को प्रथम चत्वर-चौतरे पर बिठाते हैं तत्पश्चात् उसके सामने उसके आठ चाचों-पिता के लघुभ्राताओं को बड़ी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्दयता के साथ मारते हैं और दयाजनक स्थिति रखने वाले उस पुरुष को काकिणी मांस-उसकी देह से निकाले हुए छोटे छोटे मांस खण्ड खिलाते तथा रुधिर का पान कराते हैं। तदनन्तर दूसरे चत्वर पर आकर उसके सामने उसकी आठ चाचियों को लाकर बड़ी क्रूरता से पीटते हैं। इसी प्रकार तीसरे, चौथे, पांचवें, छठे, सातवें, आठवें, नवमें, दसवें, ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें, चौदहवें, पन्द्रहवें, सोलहवें, सतरहवें और अठारहवें चौतरे पर भी उसके निजी संबंधियों को कशा (चाबुक) से पीटते हैं।

इस वर्णन में उस समय की दंड की भयंकरता का निर्देश किया गया है। दण्डित व्यक्ति के अलावा उसके परिवार को भी दण्ड देना, दण्ड की पराकाष्ठा है। परन्तु इसके पीछे यह भावना भी रही होगी कि भविष्य में अगर किसी ने अपराध किया तो अपराधी के अतिरिक्त उसके सगे संबंधी भी दण्डित होने से नहीं बच सकेंगे ताकि आगे अपराध की बहुलता न हो।

सगे संबंधियों के सामने मारने पीटने का अर्थ - दोषी या अपराधी को अधिकाधिक दुःखित करना होता है अथवा महाबल राजा ने क्रोधावेश के कारण वध्य व्यक्ति के निर्दोष परिवार को भी मारने की आज्ञा दे दी हो। विशेष तो ज्ञानी कहे वही प्रमाण है।

"मित्तणाइ णियगसयणसंबंधी परियणं" की व्याख्या टीकाकार ने इस प्रकार की है-

"मित्राणि सुहृदाः ज्ञातयः-समानजातीयाः, निजकाः-पिता मातरश्चय, स्वजनाः-मातुलपुत्रादयः सम्बन्धिन - श्वसुर सालादयः, परिजन-दासीदासादिस्ततो द्वन्द्वः अतस्तान् तत्।"

अर्थात् - 'मित्र' अर्थात् सुहृद-जो साथी, सहायक और शुभ चिंतक हो उसे मित्र कहते हैं। 'ज्ञाति' शब्द से समान जाति (बिरादरी) वाले व्यक्तियों का ग्रहण होता है। 'निजक' पद माता-पिता आदि का बोधक है। 'स्वजन' शब्द मामा के पुत्र आदि का परिचायक है। श्वसुर, साला आदि का ग्रहण 'सम्बन्धी' शब्द से होता है। परिजन दास और दासी आदि का नाम है।

पूर्वभव पृच्छा

तए णं से भगवं गोयमे तं पुरिसं पासइ पासित्ता इमे एयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे जाव तहेव णिग्गए एवं वयासी-एवं खलु अहं णं भंते! तं चेव जाव से णं भंते! पुरिसे पुव्वभवे के आसी जाव विहरइ?॥६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर भगवान् गौतमस्वामी के हृदय में उस पुरुष को देख कर यह संकल्प उत्पन्न हुआ यावत् पूर्वानुसार वे नगर से बाहर निकले तथा भगवान् के पास आकर निवेदन किया- 'हे भगवन्! मैं आपकी आज्ञा लेकर नगर में गया, वहां मैंने एक पुरुष को देखा यावत् हे भगवन्! वह पुरुष पूर्वभव में कौन था? जो कि यावत् समय व्यतीत कर रहा है - कर्मों का फल पा रहा है?'

विवेचन - अज्ञानी जीव कर्म बांधते समय तो कुछ नहीं सोचता किंतु जिस समय उन कर्मों का फल भोगना पड़ता है उस समय वह अपने किये पर पश्चात्ताप करता है, रोता है, चिल्लाता है पर अब कुछ नहीं होता, इस प्रकार के विचारों में निमग्न गौतमस्वामी पुरिमताल नगर से निकले और ईर्यासमिति पूर्वक गमन करते हुए भगवान् महावीर स्वामी के पास पहुँचे, पहुंच कर वंदना नमस्कार किया और सारा वृत्तांत कह सुनाया तथा विनयपूर्वक उस वध्य व्यक्ति के पूर्व भव संबंधी वृत्तांत को जानने की अभिलाषा प्रकट की।

गौतमस्वामी के प्रश्न के उत्तर में प्रभु फरमाते हैं -

भगवान् का समाधान

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पुरिमताले णामं णयरे होत्था रिद्ध०। तत्थ णं पुरिमताले णयरे उदिओदिए णामं राया होत्था महया०। तत्थ णं पुरिमताले णिण्णए णामं अंडयवाणियए होत्था अड्ढे जाव अपरिभूए अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं णिण्णयस्स अंडयवाणियस्स बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा कल्लाकल्लिं कुद्दालियाओ य पत्थियपिडए य गिण्हंति गिण्हित्ता पुरिमतालस्स णयरस्स परिपेरंतेसु बहवे काइअंडए य घूइअंडए य पारेवइअंडए य टिट्टिभिअंडए य खगि अंडए य मयूरिअंडए य कुक्कुडिअंडए य अण्णेसिं च बहूणं जलयर-थलयर-खहयरमाईणं अंडाइं गेण्हंति गेण्हित्ता पत्थियपिडगाइं भरेंति, भरेत्ता जेणेव णिण्णए अंडवाणियए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता णिण्णयस्स अंडवाणियस्स उवणेंति ॥६८॥

कठिन शब्दार्थ - **णिण्णए** - निर्णय, **अंडयवाणियए** - अण्डवाणिज-अण्डों का व्यापारी, **दिण्णभइभत्तवेयणा** - दत्तभृतिभक्तवेतन-जिन्हें वेतन रूप में पैसे आदि तथा घृत धान्य आदि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिये जाते हों अर्थात् नौकर, **कल्लाकल्लिं** - प्रतिदिन, **कुद्दालियाओ** - कुद्दाल-भूमि खोदने वाले शस्त्र विशेषों को, **पत्थियपिडए** - पत्थिका पिटक-बांस के निर्मित पात्र विशेषों-पिटारियों को, **परिपेरंतेसु** - चारों ओर, **काइअंडए** - काकी-कौए की मादा-के अण्डों को, **घूइअण्डए**-घूकी-उल्लूकी (उल्लू की मादा) के अण्डों को, **पारेवइ अण्डए** - कबूतरी के अण्डों को, **टिट्टिभि अण्डए** - टिट्टिभी-टिटिहरी के अण्डों को, **खगिअण्डए** - बकी-बगुली के अण्डों को, **जलयर-थलयर-खहयर-माईणं** - जलचर, स्थलचर, खेचर जंतुओं के, **अण्डाइं** - अण्डों को, **उवर्णेति** - दे देते हैं।

भावार्थ - इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! उस काल तथा उस समय इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के भारतवर्ष में पुरिमताल नामक एक विशाल भवन आदि से युक्त, स्वचक्र परचक्रभय से मुक्त समृद्धशाली नगर था। उस पुरिमताल नगर में उदित नामक राजा था जो कि महाहिमवान्-हिमालय आदि पर्वतों के सदृश महान् था। उस पुरिमताल नगर में निर्णय नामक अण्डवाणिज-अण्डों का व्यापारी था जो धनी यावत् प्रतिष्ठित था एवं अधार्मिक यावत् दुष्प्रत्यानंद (किसी तरह संतुष्ट नहीं किया जा सके, ऐसा) था।

उस निर्णय नामक अण्डवाणिज के अनेकों नौकर-वेतनभोगी पुरुष (रुपया, पैसा और भोजन के रूप से वेतन ग्रहण करने वाले) थे जो कुद्दाल तथा बांस की पिटारियों को लेकर पुरिमताल नगर के चारों ओर अनेक काकी-कौए की मादा-के अण्डों को, घूकी (उल्लू की मादा) के अण्डों को, कबूतरी के अण्डों को, टिटिहरी के अण्डों को, बगुली के अण्डों को, मोरनी के अंडों को और मुर्गी के अण्डों को तथा अनेक जलचर, स्थलचर और खेचर आदि जंतुओं के अण्डों को लेकर बांस की पिटारियों में भरते थे, भर कर निर्णय नामक अण्डवाणिज के पास आते थे, आकर उस अण्डवाणिज को अण्डों से भरी हुई वे पिटारियां दे देते थे।

निर्णय का हिंसक व्यापार

तए णं तस्स णिण्णयस्स अंडवाणियस्स बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा बहवे काइअंडए य जाव कुक्कुडिअंडए य अण्णेसिं च बहूणं जलयर-थलयर-खहयरमाईणं अंडयए तवएसु य कवल्लीसु य कंदुएसु य भज्जणएसु य इंगालेसु य तलेंति भज्जेंति सोल्लेंति तलेंता भज्जंता सोल्लेंता रायमग्गे अंतरावणंसि अंडयपणिएणं वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति ॥६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **तवएसु** - तवों पर, **कवल्लीसु** - कवल्ली-कडाहा-गुड़ आदि पकाने का पात्र विशेष में, **कंदुएसु** - कंदु-हांडे-एक प्रकार का बर्तन विशेष जिसमें मांड आदि पकाया जाता है-में, **भज्जणएसु** - भर्जनक-भूनने का पात्र विशेष, **इंगालेसु** - अंगारों पर, **तलेंति** - तलते थे, **भज्जेंति** - भूनते थे, **सोलेंति** - शूल से पकाते थे, **रायमग्गे** - राजमार्ग के, **अंतरावणंसि** - अन्तर-मध्यवर्ती आपण-दूकान पर अथवा राजमार्ग की दूकानों के भीतर, **अंडयपणिएणं** - अण्डों के व्यापार से, **वित्तिं कप्पेमाणा** - आजीविका करते हुए, **विहरंति** - विचरते-समय व्यतीत करते थे।

भावार्थ - तदनन्तर निर्णय नामक अंडवाणिज के अनेक वेतनभोगी पुरुष बहुत से काकी यावत् मुर्गी के अण्डों तथा अन्य जलचर स्थलचर और खेचर आदि जंतुओं के अण्डों को तवों पर, कडाहों पर, हांडों में और अंगारों पर तलते थे, भूनते थे तथा पकाते थे। तलते हुए, भूनते हुए और पकाते हुए राजमार्ग के मध्यवर्ती दूकानों पर अथवा राजमार्ग की दूकानों के भीतर अण्डों के व्यापार से आजीविका करते हुए समय व्यतीत करते थे।

निर्णय का नरक उपपात

अप्पणावि य णं से णिण्णए अंडवाणियए तेहिं बहूहिं काइअंडएहि य जाव कुक्कुडिअंडएहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च....... आसाएमाणे विसाएमाणे विहरइ। तए णं से णिण्णए अंडवाणियए एयकम्मे ४ सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एगं वाससहस्सं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए उक्कोससत्तसागरोवमठिइएसु णेरइएसु णेरइयत्ताए उववण्णे ।।७०।।

भावार्थ - और वह निर्णय नामक अंडवाणिज स्वयं भी अनेक काकी यावत् कुकडी के अण्डों को जो कि पकाये हुए, तले हुए और भूने हुए थे के साथ सुरा आदि पंचविध मदिराओं का आस्वादन आदि करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

तदनन्तर वह निर्णय नामक अंडवाणिज इस प्रकार के पाप कर्मों में तत्पर हुआ, इन्हीं पापपूर्ण कर्मों में प्रधान, इन्हीं कर्मों के विज्ञान वाला और यही पाप कर्म उसका आचरण बना हुआ था ऐसा वह निर्णय अत्यधिक पाप रूप कर्म को उपार्जित करके एक हजार वर्ष की परम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयु को भोग कर कालमास में-मृत्यु का समय आ जाने पर काल करके तीसरी पृथ्वी-नरक में उत्कृष्ट सात सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गौतमस्वामी की जिज्ञासा का समाधान करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने फरमाया कि - हे गौतम! जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र में पुरिमताल नामक नगर था। वहां उदित नाम के राजा राज्य करते थे। उस नगर में निर्णय नामक एक अण्डों का व्यापारी रहता था जो धनी एवं प्रतिष्ठित था किंतु अधर्मी और असंतोषी था। जीव हिंसा करना उसके जीवन का प्रधान लक्ष्य बना हुआ था। निर्णय के अनेकों नौकर थे जो काकी, मयूरी, कपोती और मुर्गी आदि पक्षियों के अण्डे पिटारियों में भर कर उन्हें सुपुर्द करते थे तथा अनेक नौकर ऐसे थे जो राजमार्गों में स्थित दुकानों में बैठ कर अंडों का क्रय विक्रय करते थे। इस प्रकार निर्णय ने अण्डों का व्यवसाय काफी फैला रखा था।

निर्णय के अण्डों का व्यापार ही नहीं था किंतु वह स्वयं भी मांसाहारी था। अण्डों के आहार के साथ मदिरा पान भी करता था। इस प्रकार हिंसक व्यापार एवं मद्य मांस का सेवन करने से उसने अपने जीवन में भारी पाप कर्मों का संचय किया फलस्वरूप वह मर कर तीसरी नरक में उत्पन्न हुआ।

स्कंदश्री को उत्पन्न दोहद

से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव सालाडवीए चोरपल्लीए विजयस्स चोर-सेणावइस्स खंदसिरीए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं तीसे खंदसिरीए भारियाए अण्णया कयाइ तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं इमे एयारूवे दोहले पाउब्भूए-धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं बहूहिं मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणमहिलाहिं अण्णाहि य चोरमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता सव्वालंकारविभूसिया विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च महुं च मेरगं च जाइं च सीधुं च पसण्णं च आसाएमाणी विसाएमाणी परिभाएमाणी परिभुंजेमाणी विहरंति॥७१॥

भावार्थ - वह निर्णय नामक अण्डों का व्यापारी नरक से निकल कर इसी शालाटवी नामक चोरपल्ली में विजय नामक चोर सेनापति की स्कंदश्री भार्या के उदर में पुत्र रूप से उत्पन्न

Jain Education International	For Personal & Private Use Only	www.jainelibrary.org

हुआ। किसी अन्य समय लगभग तीन मास पूर्ण होने पर स्कंदश्री को इस प्रकार दोहद उत्पन्न हुआ - वे माताएं धन्य हैं जो अनेक मित्रों, ज्ञातिजनों, निजकजनों, स्वजनों, संबंधियों और परिजनों की स्त्रियों के तथा अन्य चोर महिलाओं के साथ घिरी हुई तथा नहाई हुई यावत् अनिष्टोत्पादक स्वप्न को निष्फल करने के लिये प्रायश्चित्त के रूप में तिलक एवं मांगलिक कृत्यों को करके सर्व प्रकार के अलंकारों से विभूषित हो, बहुत से अशन, पान, खादिम और स्वादिम पदार्थों सुरा, मधु आदि मदिराओं का आस्वादन, विस्वादन, परिभाजन और परिभोग करती हुई विचर रही हैं।

स्कंदश्री की चिंता

जिमियभुत्तुत्तरागयाओ पुरिसणेवत्थिया संणद्धबद्ध जाव गहियाउहप्पहरणा-वरणाभरिएहिं फलएहिं णिक्किट्ठाहिं असीहिं अंसागएहिं तोणेहिं सजीवेहिं धणूहिं समुक्खित्तेहिं सरेहिं समुल्लालियाहि दामाहिं लंबियाहि य ओसारियाहिं ऊरुघंटाहिं छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं वज्जमाणेणं महया उक्किट्ठ जाव समुद्दरवभूयं पिव करेमाणीओ सालाडवीए चोरपल्लीए सव्वओ समंता ओलोएमाणीओ-ओलोएमाणीओ आहिंडमाणीओ-आहिंडमाणीओ दोहलं विणेंति। तं जइ णं अहंपि जाव दोहलं विणिज्जामि-त्ति कट्टु तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि जाव झियाइ ॥७२॥

कठिन शब्दार्थ - जिमियभुत्तुत्तरागयाओ - जेमितभुक्तोत्तरागता-जो भोजन करके अनन्तर उचित स्थान पर आ गई हैं, **पुरिसणेवत्थिया** - पुरुष वेश को धारण किये हुए, **संणद्धबद्ध** - दृढ बंधनों से बांधे हुए, **गहियाउहप्पहरणावरणाभरिएहिं** - जिन्होंने आयुध और प्रहरण ग्रहण किये हुए हैं, वामहस्त में धारण किये हुए, **फलएहिं** - फलक-ढालों के द्वारा, **णिक्किट्ठाहिं असीहिं** - कोश-म्यान से निकली हुई कृपाणों के द्वारा, **अंसागएहिं** - अंशागत स्कंध देश को प्राप्त, **तोणेहिं**- तूण-इषुधि (जिसमें बाण रखे जाते हैं) के द्वारा, **सजीवेहिं धणुहिं** - सजीव-प्रत्यंचाडोरी-से युक्त धनुषों के द्वारा, **समुक्खित्तेहिं** - लक्ष्य वेधन करने के लिये धनुष पर आरोपित किये गये, **सरेहिं**- शरों-बाणों द्वारा, **समुल्लालियाहिं** - समुल्लसित-ऊंचे किये हुए, **दामाहिं** - पाशों-जालों अथवा शस्त्र विशेषों से, **लंबियाहि** - लम्बित-जो लटक रही हों,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवसरियाहि - अवसारित-चालित अर्थात् हिलाई जाने वाली, **उरुघंटाहिं** - जंघा में अवस्थित घंटिकाओं से, **छिप्पतुरेणं वज्जमाणेणं** - शीघ्रता से बजने वाले बाजे के बजाने से, **समुद्दरवभूयं पिव** - समुद्र शब्द के समान महान् शब्द को प्राप्त हुए के समान, **करेमाणीओ** - करती हुई, **ओलोएमाणीओ** - अवलोकन करती हुई, **आहिंडेमाणीओ** - भ्रमण करती हुई, **अविणिज्जमाणंसि** - पूर्ण न होने पर।

भावार्थ - तथा भोजन करके जो उचित स्थान पर आ गई हैं जिन्होंने पुरुष का वेश पहना हुआ है और जो दृढ बंधनों से बंधे हुए और लोहमय कसूलक आदि से युक्त कवच (लोहमय बखतर) को शरीर पर धारण किये हुए हैं यावत् आयुध और प्रहरणों से युक्त हैं तथा जो वामहस्त में धारण किये हुए फलक-ढालों से, कोश-म्यान से बाहर निकली हुई कृपाणों (तलवारों) से, कंधे पर रखे हुए शरधि-तरकशों से, सजीव (प्रत्यंचा) डोरी युक्त धनुषों से, सम्यक्त्या फैंके जाने वाले शरो-बाणों से, ऊंचे किये हुए पाशों-जालों से अथवा शस्त्र विशेषों से अवलम्बित तथा अवसारित (चालित) जंघा घंटियों के द्वारा तथा शीघ्र बजाया जाने वाला बाजा बजाने से, महान् उत्कृष्ट-आनंदमय महाध्वनि से समुद्र के रव-शब्द को प्राप्त हुए के समान गगन मण्डल को ध्वनित (शब्दायमान) करती हुई शालाटवी नामक चोरपल्ली के चारों तरफ का अवलोकन और उसके चारों तरफ भ्रमण कर दोहद को पूर्ण करती है। क्या ही अच्छा हो, यदि मैं भी इसी प्रकार अपने दोहद को पूर्ण करूँ, ऐसा विचार करने के बाद दोहद के पूर्ण नहीं होने से वह उदास हुई यावत् आर्त्तध्यान करने लगी।

विवेचन - निर्णय नामक अण्डवाणिज का जीव स्वकृत पापाचरण से तीसरी नरक में उत्पन्न हुआ। वहां की स्थिति को पूर्ण कर पुरिमताल नगर के ईशान कोण में स्थित शालाटवी नामक चोरपल्ली में विजय की स्त्री स्कंदश्री के गर्भ में पुत्र रूप से उत्पन्न होता है। जब अशुभ कर्म वाले जीव माता के गर्भ में आते हैं तो उस समय माता के संकल्प भी अशुभ होने लग जाते हैं। निर्णय के जीव को गर्भ में आये अभी तीन मास ही हुए थे कि गर्भस्थ जीव के प्रभाव से स्कंदश्री के मन में यह संकल्प (दोहद) उत्पन्न हुआ कि जो गर्भवती महिलाएं अपनी जीवन सहचारियों के साथ यथा रुचि सानंद खान पान करती है तथा पुरुष का वेष बना कर अनेकविध शस्त्रों से सैनिक तथा शिकारी की भांति तैयार होकर नाना प्रकार के शब्द करती हुई बाहर जंगलों में सानंद बिना किसी प्रतिबंध के भ्रमण करती हैं वे भाग्यशालिनी हैं और उन्होंने अपने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मातृजीवन को सफल किया है। क्या ही अच्छा हो यदि मुझे भी ऐसा करने का अवसर मिले और मैं भी अपने को भाग्यशाली समझूँ?

स्कंदश्री के दोहद-इच्छित संकल्प की पूर्ति न होने से वह उदास रहने लगी और उसका सारा समय आर्त्तध्यान में व्यतीत होने लगा।

इस प्रकार प्रस्तुत सूत्र में निर्णय के नरक से निकल कर स्कंदश्री के गर्भ में आने का तथा स्कंदश्री को उत्पन्न दोहद का वर्णन किया गया है।

दोहद पूर्ति

तए णं से विजए चोरसेणावई खंदसिरिभारियं ओहय जाव पासइ, पासित्ता एवं वयासी-किं णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहय जाव झियासि? तए णं सा खंदसिरी भारिया विजयं एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! मम तिण्हं मासाणं जाव झियामि। तए णं से विजए चोरसेणावई खंदसिरीए भारियाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म खंदसिरिभारियं एवं वयासी - अहासुहं देवाणुप्पियत्ति एयमट्ठं पडिसुणेइ।

तए णं सा खंदसिरीभारिया विजएणं चोरसेणावइणा अब्भणुण्णाया समाणी हट्ठतुट्ठ० बहूहिं मित्त जाव अण्णाहि य बहूहिं चोरमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा ण्हाया जाव विभूसिया विउलं असणं ४ सुरं च ६ आसाएमाणी ४ विहरइ जिमियभुत्तुत्तरागया पुरिस णेवत्था संणद्धबद्ध जाव आहिंडमाणी दोहलं विणेइ।

तए णं सा खंदसिरिभारिया संपुण्णदोहला संमाणियदोहला विणीयदोहला वोच्छिण्णदोहला संपण्णदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ॥७३॥

कठिन शब्दार्थ - संपुण्णदोहला - संपूर्णदोहदा-जिसका दोहद पूर्ण हो गया है, **संमाणियदोहला** - सम्मानित दोहदा-इच्छित पदार्थ ला कर देने के कारण जिसके दोहद का सन्मान किया गया है, **विणीयदोहला** - विनीतदोहदा-अभिलाषा के निवृत्ति होने से जिसके दोहद की निवृत्ति हो गई है, **वोच्छिण्णदोहला** - व्युच्छिन्नदोहदा-इच्छित वस्तु की आसक्ति न रहने से उसका दोहद व्युच्छिन्न-आसक्ति रहित हो गया है, **संपण्णदोहदा** - सम्पन्नदोहदा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभिलषित अर्थ-धनादि और भोग-इन्द्रिय विषयों से संपादित आनंद की प्राप्ति होने से जिसका दोहद संपन्न हो गया है।

भावार्थ - तदनन्तर विजय नामक चोर सेनापति ने आर्त्तध्यान करती हुई स्कंदश्री को देख कर इस प्रकार कहा - 'हे सुभगे! तुम उदास हुई आर्त्तध्यान क्यों कर रही हो?' स्कंदश्री ने विजय के उक्त प्रश्न के उत्तर में कहा कि 'स्वामिन्! मुझे गर्भ धारण किये हुए तीन मास हो चुके हैं अब मुझे यह दोहद उत्पन्न हुआ है, उसके पूर्ण न होने पर कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के विवेक से रहित हुई यावत् मैं आर्त्तध्यान कर रही हूं।' तब विजय चोर सेनापति अपनी स्कंदश्री भार्या के पास से इस बात को सुन कर तथा हृदय में धारण कर स्कंदश्री भार्या को इस प्रकार कहने लगा - 'हे देवानुप्रिये! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।' इस प्रकार से उस बात को स्वीकार करता है। अर्थात् विजय ने स्कंदश्री के दोहद को पूर्ण कर देने की स्वीकृति दी।

तदनन्तर वह स्कंदश्री भार्या विजय चोर सेनापति के द्वारा उसे आज्ञा मिल जाने पर बहुत प्रसन्न हुई और अनेक मित्रों की यावत् अन्य बहुत-सी चोर महिलाओं के साथ संपरिवृत हुई, स्नान करके यावत् संपूर्ण अलंकारों से विभूषित हो कर विपुल अशन पानादि तथा सुरा आदि का आस्वादन विस्वादन आदि करने लगी। इस प्रकार सब के साथ भोजन करने के अनन्तर उचित स्थान पर आकर पुरुषवेश से युक्त हो तथा दृढ बंधनों से बंधे हुए लोहमय कसूलक आदि से युक्त कवच को शरीर पर धारण करके यावत् भ्रमण करती हुई अपने दोहद की पूर्ति करती है।

तब वह स्कंदश्री दोहद के संपूर्ण होने, सम्मानित होने, विनीत होने, व्युच्छिन्न-निरन्तर इच्छा आसक्ति रहित होने अथवा संपन्न होने पर अपने उस गर्भ को सुखपूर्वक धारण करती है।

विवेचन - पति देव द्वारा अपने दोहद की यथेच्छ पूर्ति के लिये पूरी पूरी स्वतंत्रता देने और दोहद की पूर्ति हो जाने पर स्कंदश्री अपने गर्भ का यथाविधि बड़े आनंद और उल्लास के साथ गर्भ का पालन पोषण करने लगी।

अभग्नसेन का जन्म एवं लालन-पालन

तए णं सा खंदसिरी चोरसेणावइणी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारगं पयाया। तए णं से विजए चोरसेणावई तस्स दारगस्स महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं दसरत्तं ठिइवडियं करेइ। तए णं से विजय चोरसेणावई तस्स दारगस्स एक्कारसमे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिवसे विउलं असणं ४ उवक्खडावेइ उवक्खडावेत्ता मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबधि परियणं आमंतेइ आमंतित्ता जाव तस्सेव मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि परियणस्स पुरओ एवं वयासी-जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भगयंसि समाणंसि इमे एयारूवे दोहले पाउब्भूए तम्हा णं होउ अम्हं दारए अभग्गसेणे णामेणं तए णं से अभग्गसेणे कुमारे पंचधाईए जाव परिवड्ढइ॥७४॥

भावार्थ - तब उस चोर सेनापत्नी स्कंदश्री ने नौ मास के पूर्ण होने पर पुत्र को जन्म दिया। विजय नामक चोर सेनापति उस बालक का महान् ऋद्धि (वस्त्र सुवर्ण आदि) सत्कार-सम्मान के समुदाय से दस दिन तक स्थिति पतित-कुल क्रमागत उत्सव विशेष करता है। तत्पश्चात् विजय चोर सेनापति उस बालक के जन्म से ग्यारहवें दिन महान् अशन, पान, खादिम, स्वादिम को तैयार करवाता है तथा मित्र, ज्ञाति, स्वजन आदि को आमंत्रित करता है और उन्हें सत्कार पूर्वक जीमाता है तदनन्तर यावत् उनके सामने कहता है कि - "हे देवानुप्रियो! जिस समय यह बालक गर्भ में आया था, उस समय इसकी माता को एक दोहद उत्पन्न हुआ था और वह सब तरह से अभग्न रहा इसलिए हमारा यह बालक 'अभग्नसेन' इस नाम से हो अर्थात् इस बालक का नाम अभग्नसेन रखा जाता है।" तदनन्तर वह अभग्नसेन कुमार पांच धायमाताओं के द्वारा पोषित होता हुआ यावत् वृद्धि को प्राप्त होने लगा।

विवेचन - पुत्र का जन्म माता पिता आदि के लिये अथाह हर्ष का कारण होता है अतः पुत्र जन्म से सारे घर परिवार में विविध प्रकार से खुशी मनाई जाती है। अभग्नसेन कुमार के जन्म पर विजयसेन चोर सेनापति द्वारा उत्सव महोत्सव आयोजित किये गये। कुल क्रमागत-कुल परंपरा से चले आने वाले पुत्र जन्म संबंधी अनुष्ठान विशेष को 'स्थिति पतित' कहते हैं जो कि दश दिन में संपन्न होता है।

अभग्नसेन चोर सेनापति बना

तए णं से अभग्गसेणे कुमारे उम्मुक्कबालभावे यावि होत्था अट्ठ दारियाओ जाव अट्ठओ दाओ.....उप्पिंपासा०.......भुंजमाणे विहरइ।

तए णं से विजए चोर सेणावई अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते। तए णं से अभग्गसेणे कुमारे पंचहिं चोरसएहिं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विलवमाणे विजयस्स चोरसेणावइस्स महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं णीहरणं करेइ करेत्ता बहूणं लोइयाइं करेइ करेत्ता केणइ कालेणं अप्पसोए जाए यावि होत्था। तए णं ते पंच चोरसयाइं अण्णया कयाइ अभग्गसेणं कुमारं सालाडवीए चोरपल्लीए महया महया चोरसेणावइत्ताए अभिसिंचंति। तए णं से अभग्गसेणे कुमारे चोरसेणावई जाए अहम्मिए जाव कप्पायं गिण्हइ ॥७५॥

कठिन शब्दार्थ - **अट्ठओ** - आठ प्रकार का, **दाओ** - प्रीतिदान-दहेज, **काल धम्मुणा**-कालधर्म से, **संजुत्ते** - संयुक्त, **कंदमाणे** - आक्रन्दन करता हुआ, **विलवमाणे** - रोता हुआ, **णीहरणं** - निस्सरण, **लोइयाइं** - लौकिक, **मयकिच्चाइं** - मृतक संबंधी कृत्यों को, **अप्पसोए**-अल्पशोक, **कप्पायं** - राजदेय कर को।

भावार्थ - तदनन्तर अभग्नसेन कुमार बाल भाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त हुआ तथा उसका आठ लड़कियों के साथ पाणिग्रहण (विवाह) किया गया। उसे आठ प्रकार का प्रीतिदान-दहेज प्राप्त हुआ और वह महलों में रह कर आनंद पूर्वक उसका उपभोग करने लगा।

तत्पश्चात् किसी अन्य समय वह विजय चोर सेनापति कालधर्म (मृत्यु) को प्राप्त हुआ। तब अभग्नसेन कुमार पांच सौ चोरों के साथ रुदन करता हुआ, आक्रंदन करता हुआ तथा विलाप करता हुआ विजय चोर सेनापति का अत्यधिक ऋद्धि एवं सत्कार के साथ निस्सरण करता है अर्थात् अभग्नसेन बड़े समारोह के साथ अपने पिता के शव को श्मशान भूमि में पहुँचाता है तदनन्तर अनेक लौकिक मृतक संबंधी कृत्यों को अर्थात् दाहसंस्कार से लेकर पिता के निमित्त करणीय दान भोजन आदि कर्म करता है। तत्पश्चात् कितनेक समय के बाद वह अल्पशोक हुआ अर्थात् उसका शोक कुछ न्यूनता को प्राप्त हो गया। तदनन्तर उन पांच सौ चोरों ने किसी समय अभग्नसेन कुमार का शालाटवी नामक चोरपल्ली में महान् ऋद्धि और सत्कार के साथ चोर सेनापतित्व से उसका अभिषेक किया। तब से वह अभग्नसेन कुमार चोर सेनापति बन गया जो कि अधर्मी यावत् उस प्रांत के राजदेय कर को स्वयं ग्रहण करने लगा।

विवेचन - कुमार अभग्नसेन जब पांचों धायमाताओं के यथाविधि संरक्षण में बढ़ता और फलता फूलता हुआ जब बाल भाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त हुआ तो वहाँ के आठ प्रतिष्ठित घरों की कन्याओं के साथ उसका पाणिग्रहण हुआ और आठों के यहाँ से उसको आठ-आठ प्रकार का पर्याप्त दहेज मिला जिसको लेकर वह उन आठों कन्याओं के साथ अपने विशाल महल में रह कर सांसारिक विषयभोगों का उपभोग करने लगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुछ समय बाद जब विजय सेनापति का स्वर्गवास हो गया तो पांच सौ चोरों ने मिलकर उसे पिता के स्थान पर स्थापित कर दिया तब से कुमार अभग्नसेन चोरसेनापति के नाम से विख्यात हो गया और वह उस चोरपल्ली का शासन करने लगा।

अभग्नसेन के दुष्कृत्य

तए णं ते जाणवया पुरिसा अभग्गसेणेणं चोरसेणावइणा बहूगामघायावणाहिं ताविया समाणा अण्णमण्णं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! अभग्गसेणे चोरसेणावई पुरिमतालस्स णयरस्स उत्तरिल्लं जणवयं बहूहिं गामघाएहिं जाव णिद्धणं करेमाणे विहरइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णयरे महाबलस्स रण्णो एयमट्ठं विण्णवित्तए॥७६॥

कठिन शब्दार्थ - **जाणवया** - जनपद देश में रहने वाले, **बहूगामघायावणाहिं** - बहुत से ग्रामों के घात (विनाश) से, **ताविया** - संतप्त-दुःखी, **गामघाएहिं** - ग्रामों के विनाश से, **णिद्धणे** - निर्धन, **सेयं** - श्रेयस्कर, **विण्णवित्तए** - विदित करें-अवगत करें।

भावार्थ - तदनन्तर अभग्नसेन नामक चोर सेनापति के द्वारा बहुत से गांवों से संतप्त दुःखी हुए उस देश के लोगों ने एक दूसरे को बुला कर इस प्रकार कहा - 'हे देवानुप्रियो! चोर सेनापति अभग्नसेन पुरिमताल नगर के उत्तर दिशा के बहुत से गांवों का विनाश करके वहाँ के लोगों को धन धान्यादि से शून्य करता हुआ विचर रहा है इसलिए हे देवानुप्रिये! हमारे लिए यह श्रेयस्कर-कल्याणकारी है कि हम पुरिमताल नगर में महाबल राजा को इस बात से विदित करें-अवगत करें।

राजा से निवेदन

तए णं ते जाणवया पुरिसा एयमट्ठं अण्णमण्णेणं पडिसुणेंति पडिसुणेत्ता महत्थं महग्घं महरिहं रायारिहं पाहुडं गिण्हेंति गिण्हेत्ता जेणेव पुरिमताले णयरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता जेणेव महाबले राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता महाबलस्स रण्णो तं महत्थं जाव पाहुडं उवणेंति उवणेत्ता करयल....अंजलिं कट्टु महाबलं रायं एवं वयासी—एवं खलु सामी! सालाडवीए चोरपल्लीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्गसेणे चोरसेणावई अम्मे बहूहिं गामघाएहि य जाव णिद्धणे करेमाणे विहरइ, तं इच्छामि णं सामी! तुज्झं बाहुच्छायापरिग्गहिया णिब्भया णिरुवसग्गा सुहेणं परिवसित्तए त्तिकट्टु पायवडिया पंजलिउडा महाबलं रायं एयमट्ठं विण्णवेंति॥७७॥

कठिन शब्दार्थ - महग्घं - महार्घ-बहुमूल्य वाला, **महरिहं** - महार्ह-महत् पुरुषों के योग्य, **पाहुडं** - प्राभृत-उपायन-भेंट, **बाहुच्छाया परिग्गहिया** - भुजाओं की छाया से परिग्रहीत हुए-आपसे संरक्षित होते हुए, **णिब्भया** - निर्भय, **णिरुवसग्गा**-उपसर्ग रहित होकर, **परिवसित्तए**-बसें, **पायवडिया** - पैरों में पड़े हुए।

भावार्थ - तदनन्तर वे जानपदपुरुष - उस देश के रहने वाले लोग इस बात को परस्पर-आपस में स्वीकार करते हैं स्वीकार कर महार्थ (महाप्रयोजन का सूचन करने वाला), महार्घ (बहुमूल्य वाला) महार्ह (महत् पुरुषों के योग्य) तथा राजा के योग्य प्राभृत-भेंट लेकर जहाँ पर पुरिमताल नगर था और जहाँ पर महाबल राजा था वहाँ पर आये और दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि रख कर महाबलराजा को वह प्राभृत-भेंट अर्पण की तथा अर्पण करके महाबल नरेश से इस प्रकार बोले - 'हे स्वामिन्! शालाटवी नामक चोरपल्ली के अभग्नसेन नामक चोर सेनापति हमें अनेक गांवों के विनाश से यावत् निर्धन करता हुआ विचरण कर रहा है इसलिए हे स्वामिन्! हम चाहते हैं कि आप की भुजाओं की छाया से परिगृहीत हुए अर्थात् आप से संरक्षित हुए निर्भय और उद्वेग रहित होकर सुख पूर्वक निवास करें।' इस प्रकार कह कर वे लोग पैरों में पड़े हुए तथा दोनों हाथ जोड़े हुए महाबल राजा को यह बात निवेदन करते हैं।

विवेचन - अभग्नसेन के दुष्कृत्यों से पीड़ित एवं संतप्त जनपद में रहने वाले लोगों ने महाबल नरेश को अपना दुःख सुनाया और निवेदन किया कि महाराज! आप हमारे स्वामी है आप तक ही हमारी पुकार है। हम तो इतना ही चाहते हैं कि आपकी सबल और शीतल छत्र-छाया के तले निर्भय होकर सुख और शांति पूर्वक जीवन व्यतीत करें।

राजा का आदेश

तए णं से महाबले राया तेसिं जाणवयाणं पुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं णिडाले साहट्टु दंडं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया! सालाडविं चोरपल्लिं विलुंपाहि विलुंपित्ता अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवग्गाहं गिण्हाहि गेण्हित्ता ममं उवणेहि। तए णं से दंडे तहत्ति एयमट्ठं पडिसुणेइ। तए णं से दंडे बहूहिं पुरिसेहिं संणद्धबद्ध जाव पहरणेहिं सद्धिं संपरिवुडे मग्गइएहिं फलएहिं जाव छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं महया जाव उक्किट्ठ जाव करेमाणे पुरिमतालं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव पहारेत्थ गमणाए॥७८॥

कठिन शब्दार्थ - आसुरुत्ते - आशुरुप्त-शीघ्र क्रोध से परिपूर्ण हुआ, **मिसिमिसिमाणे**-मिसमिस करता हुआ-दांत पीसता हुआ, **तिवलियं भिउडिं** - त्रिवलिका-तीन रेखाओं से युक्त भृकुटि को, **णिडाले** - मस्तक पर, **जीवग्गाहं** - जीते जी, **मग्गइएहिं** - हाथ में बांधी हुई।

भावार्थ - तदनन्तर महाबल राजा उन देश में रहने वाले पुरुषों के पास से इस बात को सुनकर तथा अवधारण कर क्रोध से तमतमा उठा, क्रोधातुर होने के कारण मिसमिस करता हुआ-दांत पीसता हुआ माथे पर तिउडी चढा कर दंडनायक कोतवाल को बुलाता है और बुला कर कहता है कि हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और जा कर शालाटवी चोरपल्ली को नष्ट कर दो, लूट लो, लूट कर अभग्नसेनापति को जीते जी पकड़ कर मेरे सामने उपस्थित करो।

दण्डनायक महाबल नरेश की इस आज्ञा को विनयपूर्वक स्वीकार करता हुआ दृढ़ बंधनों से बंधे हुए और लोहमय कसूलक आदि से युक्त कवच को धारण कर यावत् आयुधों और प्रहरणों से युक्त अनेक पुरुषों को साथ लेकर हाथों में ढाल बांधे हुए यावत् क्षिप्रकूर्य नामक वाद्य को बजाने से और महान् उत्कृष्ट आनंदमय महाध्वनि तथा सिंहनाद आदि शब्दों द्वारा आकाश को शब्दायमान करता हुआ पुरिमताल नगर के मध्य में से निकल कर जिधर शालाटवी चोरपल्ली थी उसी तरफ जाने का निश्चय किया।

गुप्तचरों की सूचना

तए णं तस्स अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स चारपुरिसा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जेणेव सालाडवी चोरपल्ली जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावई तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता करयल जाव एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया!

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुरिमताले णयरे महाबलेणं रण्णा महयाभडचडगरेणं दंडे आणत्ते गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सालाडविं चोरपल्लिं विलुंपाहि अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवग्गाहं गेण्हाहि गेण्हित्ता ममं उवणेहि, तए णं से दंडे महया भडचडगरेणं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥७९॥

कठिन शब्दार्थ - **चारपुरिसा** - गुप्तचर पुरुष, **उवणेहिं** - उपस्थित करो, **भडचडगरेणं**- सुभटों के समूह के साथ।

भावार्थ - तदनन्तर उस अभग्नसेन चोर सेनापति के गुप्तचरों को इस सारी बात का पता लग गया वे शालाटवी चोरपल्ली में जहाँ पर अभग्नसेन चोर सेनापति था, वहाँ पर आये और दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि करके इस प्रकार बोले - 'हे स्वामिन्! पुरिमताल नगर में महाबल राजा ने महान् योद्धाओं के समुदाय के साथ दण्डनायक को आज्ञा दी है कि तुम जाओ और जाकर शालाटवी चोरपल्ली को विनष्ट कर दो, लूट लो, लूट कर अभग्नसेन चोरसेनापति को जीते जी पकड़ कर मेरे सामने उपस्थित करो। राजा की आज्ञा को शिरोधार्य कर दण्डनायक ने योद्धाओं के साथ शालाटवी चोर पल्ली में जाने का निश्चय किया है।'

अभग्नसेन की योजना

तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई तेसिं चारपुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म पंचचोरसयाइं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णयरे महाबले जाव तेणेव पहारेत्थ गमणाए (आगए, तए णं से अभग्गसेणे ताइं पंचचोरसयाइं एवं वयासी-) तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं तं दंडं सालाडविं चोरपल्लिं असंपत्तं अंतरा चेव पडिसेहित्तए। तए णं ताइं पंचचोरसयाइं अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स तहत्ति जाव पडिसुणेंति। तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ उवक्खडावेत्ता पंचहिं चोरसएहिं सद्धिं ण्हाए जाव पायच्छित्ते भायणमंडवंसि तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ आसाएमाणे ४ विहरइ।

जिमियभुत्तुत्तरागए वि य णं समाणे आयंते चोक्खे परमसुइभूए पंचहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चोरसएहिं सद्धिं अल्लं चम्मं दुरुहइ दुरुहित्ता संणद्धबद्ध जाव पहरणेहिं मग्गइएहिं जाव रवेणं पच्चावरण्हकालसमयंसि सालाडवीओ चोरपल्लीओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता विसमदुग्गगहणं ठिए गहियभत्तपाणे दंडं पडिवालेमाणे चिट्ठइ॥८०॥

कठिन शब्दार्थ - **पडिसेहित्तए** - निषिद्ध करना-रोक देना, **भोयणमंडवंसि** - भोजन मंडप में, **आयंते** - आचमन किया, **चोक्खे** - लेप आदि को दूर करके शुद्धि की, **परमसूइभूए**- परमशूचिभूत-परम शुद्ध, **अल्लं** - आर्द्र-गीले, **चम्मं** - चर्म (चमड़े) पर, **पच्चावरण्हकालसमयंसि**- मध्याह्न काल में, **विसमदुग्गगहणं** - विषम-ऊंचा नीचा दुर्ग-जिसमें कठिनता से प्रवेश किया जाए ऐसे गहन-वृक्ष वन जिसमें वृक्षों का आधिक्य हो, **ठिए** - ठहरा, **गहियभत्तपाणे** - भक्त पानादि खाद्यसामग्री को साथ लिए हुए, **पडिवालेमाणे** - प्रतीक्षा करता हुआ, **चिट्ठइ** - ठहरता है।

भावार्थ - तदनन्तर अभग्नसेन चोर सेनापति ने अपने गुप्तचरों की बात को सुन कर तथा अवधारण कर पांच सौ चोरों को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा - हे देवानुप्रियो! पुरिमताल नगर के राजा महाबल ने आज्ञा दी है कि यावत् दण्डनायक ने शालाटवी चोरपल्ली पर आक्रमण करने तथा मुझे पकड़ने को वहाँ अर्थात् चोर पल्ली में जाने का निश्चय कर लिया है अतः उस दण्डनायक को शालाटवी चोरपल्ली तक पहुँचने से पहले ही रास्ते में रोक देना हमारे लिए उचित प्रतीत होता है। अभग्नसेन के इस परामर्श को चोरों ने 'तथेत्ति' - बहुत ठीक है ऐसा ही होना चाहिए, ऐसा कह कर स्वीकार किया। तत्पश्चात् अभग्नसेन चोर सेनापति ने विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम वस्तुओं को तैयार कराया तथा पांच सौ चोरों के साथ स्नान से निवृत्त हो कर दुःस्वप्न आदि के फल को विफल करने के लिए मस्तक पर तिलक तथा अन्य मांगलिक कृत्य करके भोजन शाला में उस विपुल अशनादि तथा पांच प्रकार की मदिराओं का यथारुचि आस्वादन, विस्वादन आदि करता हुआ विहरण करने लगा।

भोजन के बाद उचित स्थान पर आकर आचमन किया और मुख के लेपादि को दूर कर, परम शूचिभूत हो कर पांच सौ चोरों के साथ आर्द्र चर्म पर आरोहण किया। तदनन्तर दृढ़ बंधनों से बंधे हुए और लोहमय कसूलक आदि से युक्त कवच को धारण करके यावत् आयुधों और प्रहरणों से सुसज्जित हो कर हाथों में ढाले बांध कर यावत् महान् उत्कृष्ट और सिंहनाद आदि के शब्दों द्वारा समुद्र शब्द को प्राप्त हुए के समान गगन मंडल को शब्दायमान करते हुए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्नसेन ने शालाटवी चोरपल्ली से मध्याह्न के समय प्रस्थान किया और वह खाद्य पदार्थों को साथ लेकर विषम दुर्ग गहन वृक्ष वन में स्थिति करके उस दण्डनायक की प्रतीक्षा करने लगा।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में अभग्नसेन सेनापति द्वारा दण्डनायक के प्रतिरोध के लिए किये जाने वाली सैनिक तैयारी का वर्णन किया गया है।

राजा का प्रयास

तए णं से दंडे जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावई तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अभग्गसेणेणं चोरसेणावइणा सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था। तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई तं दंडं खिप्पामेव हयमहिय जाव पडिसेहिइ।

तए णं से दंडे अभग्गसेणेणं चोरसेणावइणा हय जाव पडिसेहिए समाणे अथामे अबले अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जमितिकट्टु जेणेव पुरिमताले णयरे जेणेव महाबले राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० एवं वयासी-एवं खलु सामी! अभग्गसेणे चोरसेणावई विसमदुग्गगहणं ठिए गहियभत्तपाणिए णो खलु से सक्का केणइ सुबहुएणावि आसबलेण वा हत्थिबलेण वा जोहबलेण वा रहबलेण वा चाउरिंगिणिं-पि० उरंउरेणं गिण्हित्तए ताहे सामेण य भेएण य उवप्पयाणेण य वीसंभमाणे उवयए यावि होत्था। जे वि य से अब्भिंतरगा सीसगभमा मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणं च विउलधण-कणग-रयण-संतसार-सावएज्जेणं भिंदइ अभग्गसेणस्स य चोरसेणावइस्स अभिक्खणं अभिक्खणं महत्थाइं महग्घाइं महरिहाइं रायारिहाइं पाहुडाइं पेसेइ पेसेइ अभग्गसेणं चोरसेणावइं वीसंभमाणेइ॥८१॥

कठिन शब्दार्थ - **संपलग्गे** - युद्ध में प्रवृत्त, **हयमहिय** - हतमथित कर अर्थात् हनन किया-मारपीट की और मान का मर्दन कर, **अथामे** - तेजहीन, **अबले** - बलहीन, **अवीरिए**- वीर्यहीन, **अपुरिसक्कारपरक्कमे** - पुरुषार्थ तथा पराक्रम से हीन, **अधारणिज्जमितिकट्टु** - शत्रुसेना को पकड़ना कठिन है-ऐसा विचार कर, **आसबलेण** - अश्व बल से, **हत्थिबलेण** - हाथियों के बल से, **जोहबलेण** - योद्धाओं-सैनिकों के बल से, **चाउरिंगिणिं** - चतुरंगिणी सेना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से भी, **गेण्हित्तए** - पकड़ने में, **उवप्पयाणेण** - उप प्रदान से-दान की नीति से, **वीसंभमाणे**- विश्वास में लाने के लिए, **सीसगभमा** - शिर या शिर के कवच समान, **अब्भिंतरगा** - अंतरंग-समीप में रहने वाले।

भावार्थ - तदनन्तर वह दण्डनायक (कोतवाल) जहाँ अभग्नसेन चोर सेनापति था वहाँ आता है आकर उसके साथ युद्ध में प्रवृत्त हो जाता है। तब वह अभग्न सेनापति उस दण्डनायक को शीघ्र ही हतमथित कर अर्थात् उस दण्ड नायक की सेना का हनन कर-मारपीट कर और उस दण्डनायक के मान का मर्दन कर यावत् भगा देता है।

तब वह दण्डनायक, अभग्नसेन चोर सेनापति के द्वारा हत यावत् प्रतिषिद्ध हुआ। तेजहीन, बलहीन, वीर्यहीन, पुरुषार्थ तथा पराक्रम से हीन हुआ शत्रु सेना को पकड़ना कठिन है ऐसा विचार कर जहाँ पुरिमताल नगर था और जहाँ पर महाबल राजा था वहाँ पर आता है आकर दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि करके इस प्रकार कहने लगा-'हे स्वामिन्! अभग्नसेन चोर सेनापति विषम-ऊँचा नीचा दुर्ग जिस में कठिनता से प्रवेश किया जा सके ऐसे गहन-वृक्ष वन में पर्याप्त भक्त पानादि के साथ अवस्थित है अतः बहुत से अश्वबल, हस्तिबल, योद्ध-बल और रथबल से अथवा चतुरंगिणी सेना से भी वह साक्षात् जीते जी पकड़ा नहीं जा सकता।

दण्डनायक के इस प्रकार कहने पर महाबल राजा उस अभग्नसेन को सामनीति से, भेदनीति से अथवा उपप्रदान से-दान की नीति से विश्वास में लाने के लिए प्रयत्न करने लगा और जो भी उसके शिष्य तुल्य समीप रहने वाले मंत्री आदि पुरुषों को अथवा जिन अंगरक्षकों को वह शिर या शिर के कवच समान मानता था उनको तथा मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन संबंधी और परिजनों को धन, सुवर्ण, रत्न तथा उत्तम सार भूत द्रव्यों और रुपयों पैसों का प्रलोभन देकर उससे भिन्न-अलग करता है और अभग्नसेन बारबार महार्थ, महाप्रयोजन वाले, महार्घ-विशेष मूल्यवान और महार्ह-किसी बड़े पुरुष को देने योग्य, राजा के योग्य भेंट भेजता है और अभग्नसेन चोर सेनापति को विश्वास में लाता है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में अभग्नसेन के निग्रह के लिये महाबल राजा ने जो उपाय किये, उसका वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्नसेन को बुलावा

तए णं से महाबले राया अण्णया कयाइ पुरिमताले णयरे एगं महं महइमहालियं कूडागारसालं करेइ अणेगक्खंभसयसंणिविट्ठं पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं। तए णं से महाबले राया अण्णया कयाइ पुरिमताले णयरे उस्सुक्कं जाव दसरत्तं पमोयं उग्घोसावेइ, उग्घोसावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सालाडवीए चोरपल्लीए तत्थ णं तुब्भे अभग्गसेणं चोरसेणावइं करयल जाव एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णयरे महाबलस्स रण्णो उस्सुक्के जाव दसरत्ते पमोए उग्घोसिए तं किं णं देवाणुप्पिया! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारे य इहं हव्वमाणिज्जउ उदाहु सयमेव गच्छित्ता?

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा महाबलस्स रण्णो करयल जाव पडिसुणेंति पडिसुणेंत्ता पुरिमतालाओ णयराओ पडि० णाइविकिट्ठेहिं अद्धाणेहिं सुहेहिं वसहिपायरासेहिं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता अभग्गसेणं चोरसेणावइं करयल जाव एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णयरे महाबलस्स रण्णो उस्सुक्के जाव उदाहु सयमेव गच्छित्ता? तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई ते कोडुंबियपुरिसे एवं वयासी-अहं णं देवाणुप्पिया! पुरिमतालणयरं सयमेव गच्छामि। ते कोडुंबियपुरिसे सक्कारेइ.............. पडिविसज्जेइ॥८२॥

कठिन शब्दार्थ - कूडागारसालं - कूटाकार शाला-जिस भवन का आकार पर्वत के शिखर-चोटी के समान है, **अणेगक्खंभसय संणिविट्ठं** - सैंकड़ों स्तंभों से युक्त, **पासाईयं** - प्रासादीय-मन को हर्षित करने वाली, **दरिसणिज्जं** - दर्शनीय-जिसे बारम्बार देखने पर भी आँखें न थकें, **अभिरूवं** - अभिरूप-जिसे एक बार देख लेने पर भी पुनः देखने की लालसा बनी रहे, **पडिरूवं** - प्रतिरूप-जिसे जब भी देखा जाय तब भी वहाँ नवीनता ही प्रतिभासित हो, **णाइविकिट्ठेहिं** - नीति विकृष्ट- जो कि ज्यादा लम्बे नहीं ऐसे, **अद्धाणेहिं** - यात्राओं से, **वसहि पायरासेहिं** - विश्राम स्थानों, **उस्सुक्के** - उच्छुल्क।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर किसी अन्य समय महाबल राजा ने पुरिमताल नगर में एक प्रशस्त और अत्यंत विशाल सैंकड़ो स्तंभों से युक्त कूटाकार शाला बनवाई जो प्रासादीय, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप थी। तत्पश्चात् महाबल नरेश ने किसी समय उसके निमित्त उच्छुल्क यावत् दश दिन के उत्सव की उद्घोषणा करवाई और कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहा - 'हे देवानुप्रियो! तुम शालाटवी चोरपल्ली में जाओ वहाँ अभग्नसेन चोर सेनापति से दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि करके इस प्रकार निवेदन करो। 'हे देवानुप्रिय! पुरिमताल नगर में महाबल राजा ने उच्छुल्क यावत् दस दिन तक उत्सव विशेष की उद्घोषणा करवाई है तो क्या आप के लिए विपुल अशन आदि तथा पुष्प, वस्त्र, सुगंधित द्रव्य, माला और अलंकार आदि यहीं पर लाये जाय अथवा आप स्वयं ही वहाँ पधारेंगे?'

तदनन्तर वे कौटुम्बिक पुरुष महाबल राजा की आज्ञा को दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि करके अर्थात् विनयपूर्वक सुन कर तदनुसार पुरिमताल नगर से निकलते हैं और छोटी-छोटी यात्राएं करते हुए सुखद विश्राम स्थानों एवं प्रातःकालीन भोजन आदि के सेवन के द्वारा जहाँ शालाटवी चोर पल्ली थी वहाँ पहुँचे और अभग्न सेनापति से दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक पर दसों नखों वाली अंजलि करके इस प्रकार निवेदन किया - हे देवानुप्रिय! पुरिमताल नगर में महाबल नरेश ने उच्छुल्क यावत् दस दिन का उत्सव उद्घोषित किया है तो क्या आप के लिए अशनादिक यावत् अलंकार यहाँ पर उपस्थित किये जाएं अथवा आप स्वयं वहाँ पर चलने की कृपा करेंगे?' तब अभग्नसेन चोर सेनापति ने उन कौटुम्बिक पुरुषों को इस प्रकार कहा - 'हे देवानुप्रिय! मैं स्वयं ही पुरिमताल नगर में जाऊँगा। तत्पश्चात् अभग्नसेन ने उन कौटुम्बिक पुरुषों का उचित सत्कार कर उन्हें बिदा किया।

अभग्नसेन का सत्कार-सम्मान

तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई बहूहिं मित्त जाव परिवुडे ण्हाए जाव सव्वालंकारविभूसिए सालाडवीओ चोरपल्लीओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुरिमताले णयरे जेणेव महाबले राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० महाबलं रायं जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावेत्ता महत्थं जाव पाहुडं उवणेइ। तए णं से महाबले राया अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महत्थं जाव पडिच्छइ, अभग्गसेणं चोरसेणावइं सक्कारेइ संमाणेइ पडिविसज्जेइ कूडागारसालं च से आवसहं दलयइ॥८३॥

कठिन शब्दार्थ - **आवसहं** - ठहरने के लिए स्थान, **दलयइ** - दिया।

भावार्थ - तदन्तर मित्रों आदि से घिरा हुआ वह अभग्नसेन चोर सेनापति स्नान से निवृत्त हो यावत् अशुभ स्वप्न का फल विनष्ट करने के लिए प्रायश्चित्त के रूप में मस्तक पर तिलक और अन्य मांगलिक कार्य करके समस्त आभूषणों से अलंकृत हो शालाटवी चोरपल्ली से निकल कर जहाँ महाबल राजा था वहा पर आता है आकर दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर अंजलि करके महाबल नरेश को जय विजय आदि शब्दों से बधाता है बधा कर महार्थ यावत् राजा के योग्य भेंट देता है। तदनन्तर महाबल नरेश अभग्नसेन चोर सेनापति द्वारा प्रदत्त भेंट को स्वीकार करता है तत्पश्चात् अभग्नसेन चोर सेनापति का सत्कार सम्मान करके उसे प्रतिविसर्जित किया-विदा किया और उसे कूटाकारशाला में ठहरने के लिए स्थान दिया।

तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई महाबलेणं रण्णा विसज्जिए समाणे जेणेव कूडागारसाला तेणेव उवागच्छइ। तए णं से महाबले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ सुबहुं पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारं च अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स कूडागारसालाए उवणेह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव उवणेंति। तए णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई बहूहिं मित्तणाइ जाव सद्धिं संपरिवुडे ण्हाए जाव विभूसिए तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ आसाएमाणे ४ पमत्ते विहरइ॥८४॥

कठिन शब्दार्थ - **विसज्जिए समाणे** - बिदा किया हुआ, **उवक्खडावेह** - तैयार करवाओ, **पमत्ते** - प्रमत्त हो कर।

भावार्थ - तत्पश्चात् वह अभग्नसेन चोर सेनापति महाबल राजा से बिदा किया हुआ जहाँ पर कूटाकारशाला थी वहाँ पर आता है और आकर ठहर जाता है। तदनन्तर महाबल राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुला कर कहा - 'हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और विपुल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अशनादिक सामग्री तैयार कराओ। तैयार करा कर उस विपुल अशनादिक और सुरादिक पांच प्रकार के मद्यों को तथा अनेकविध पुष्प, वस्त्र, सुगंधित द्रव्य, माला तथा अलंकारादि को अभग्नसेन चोर सेनापति को कूटाकारशाला में पहुँचाओ। तदनन्तर वे कौटुम्बिक पुरुष दोनों हाथ जोड़ मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि करके यावत् उन सब पदार्थों को वहाँ पहुँचा देते हैं। तब वह अभग्नसेन चोर सेनापति अनेक मित्र आदि के साथ संपरिवृत्त स्नान किये हुए यावत् संपूर्ण अलंकारों से विभूषित हुआ उस विपुल अशनादिक सुरादिक-पांच प्रकार के मद्यों का आस्वादन विस्वादन आदि करता हुआ प्रमत्त होकर विचरण करता है।

अभग्नसेन बंदी बना

तए णं से महाबले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी- गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! पुरिमतालस्स णयरस्स दुवाराइं पिहेह पिहेत्ता अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवगाहं गिण्हह गिण्हित्ता ममं उवणेह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव पडिसुणेंति पडिसुणंत्ता पुरिमतालस्स णयरस्स दुवाराइं पिहेंति अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवगाहं गिण्हंति गिण्हित्ता महाबलस्स रण्णो उवणेंति। तए णं से महाबले राया अभग्गसेणं चोरसेणावइं एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेइ।

एवं खलु गोयमा! अभग्गसेणे चोरसेणावई पुरापोराणाणं जाव विहरइ॥८५॥

कठिन शब्दार्थ - **दुवाराइं** - द्वारों को, **पिहेइ** - बंद कर दो, **वज्झं** - वध्य-मारा जाए ऐसी, **आणवेइ** - आज्ञा देता है।

भावार्थ - तदनन्तर महाबल राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहा - हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और पुरिमताल नगर के द्वारों को बन्द कर दो, बंद करके अभग्नसेन चोर सेनापति को जीते जी पकड़ लो, पकड़ कर मेरे सामने उपस्थित करो। तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुष दोनों हाथों को जोड़ यावत् राजा के उक्त आदेश को स्वीकार करते हैं और पुरिमताल नगर के द्वारों को बंद कर देते हैं तथा अभग्नसेन चोर सेनापति को जीते जी पकड़ कर महाबल राजा के पास उपस्थित कर देते हैं। तदनन्तर महाबल नरेश अभग्नसेन चोर सेनापति को इस प्रकार से-'यह मारा जाए'-ऐसी आज्ञा प्रदान करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! अभग्नसेन चोर सेनापति पूर्वकृत पुराने दुष्कर्मों का यावत् प्रत्यक्ष फल भोगता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा है।

विवेचन - इस प्रकार गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से जो प्रश्न पूछा था, उसका प्रभु ने उत्तर दे दिया। अब गौतम स्वामी उसके भविष्य विषयक अपनी जिज्ञासा प्रकट करते हैं -

आगामी भव

अभग्गसेणे णं भंते! चोरसेणावई कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! अभग्गसेणे चोरसेणावई सत्ततीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलभिण्णे कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए उक्कोस.....णेरइएसु उववज्जिहिइ, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता.... एवं संसारो जहा पढमे जाव पुढवीए, तओ उव्वट्टित्ता वाणारसीए णयरीए सूयरत्ताए पच्चायाहिइ। से णं तत्थ सोयरिएहिं जीवियाओ ववरोविए समाणे तत्थेव वाणारसीए णयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ। से णं तत्थ उम्मुक्क-बालभावे......एवं जहा पढमे जाव अंतं काहिइ॥ णिक्खेवो॥८६॥

॥ तइयं अज्झयणं समत्तं॥

कठिन शब्दार्थ - **अज्जेव** - आज ही, **तिभागावसेसे** - त्रिभागावशेष अर्थात् जिसका तीसरा भाग बाकी हो ऐसे, **सूलभिण्णे** - शूली से भिन्न, **सूयरत्ताए** - शूकर रूप में, **सोयरिएहिं**- शूकर का शिकार करने वालों के द्वारा, **सेट्ठिकुलंसि** - श्रेष्ठि कुल में, **पच्चायाहिइ** - उत्पन्न होगा, **उम्मुक्कबालभावे** - बाल भाव-बाल्यावस्था को त्याग कर।

भावार्थ - हे भगवन्! अभग्नसेन चोर सेनापति कालमास में-मृत्यु के समय काल करके कहाँ जायगा? कहां पर उत्पन्न होगा?

हे गौतम! अभग्नसेन चोर सेनापति ३७ वर्ष की परम आयु को भोग कर आज ही *त्रिभागावशेष दिन में सूली पर चढ़ाये जाने से काल करके रत्नप्रभा नामक प्रथम नरक में नैरयिक*

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूप से - जिसकी उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है, उत्पन्न होगा। वहाँ से-नरक से व्यवधान रहित निकल कर वह इसी प्रकार संसार परिभ्रमण करता हुआ जैसे प्रथम अध्ययन में मृगापुत्र का वर्णन किया है यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा।

वहाँ से निकल कर वाराणसी (बनारस) नगरी में शूकर के रूप में उत्पन्न होगा, वहाँ पर शौकरिकों-शूकर के शिकारियों द्वारा जीवन से रहित किया हुआ उसी बनारस नगरी के श्रेष्ठि कुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वहाँ बालभाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त होता हुआ जिस प्रकार प्रथम अध्ययन में प्रतिपादन किया गया उसी प्रकार यावत् जन्म मरण का अंत करेगा-निर्वाण पद को प्राप्त करेगा। निक्षेप-उपसंहार पूर्ववत् समझ लेना चाहिये।

विवेचन - गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने फरमाया कि - अभग्नसेन चोर सेनापति कुल ३७ वर्ष की आयु भोग कर शूली के द्वारा मृत्यु को प्राप्त कर पूर्वकृत दुष्कर्मों से रत्नप्रभा नामक प्रथम नरक में उत्पन्न होगा। नरक में भी उन नैरयिकों में उत्पन्न होगा, जिनकी उत्कृष्ट आयु एक सागरोपम की है। नरक में यह नानाविध यातनाओं का अनुभव करेगा। आगे के संसार भ्रमण के लिए सूत्रकार ने फरमाया - **"एवं संसारो जहा पढमे"** अर्थात् जैसे कि प्रथम अध्ययन में मृगापुत्र का संसार भ्रमण का कथन किया है ठीक उसी प्रकार पृथ्वीकायोत्पत्ति पर्यन्त अभग्नसेन चोर सेनापति के जीव का भी संसार परिभ्रमण समझ लेना चाहिये। दोनों में विशेष अंतर यह है कि मृगापुत्र का जीव नरक से निकल कर प्रतिष्ठानपुर में गो रूप से उत्पन्न होगा जबकि अभग्नसेन का जीव बनारस नगरी में शूकर रूप से जन्म लेगा और शिकारियों के द्वारा मारा जाकर बनारस नगरी में ही एक प्रतिष्ठित कुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। युवावस्था में संयमशील मुनि की सत्संगति से वह मानव जीवन के महत्त्व को समझ कर दीक्षा अंगीकार करेगा। संयम का यथाविधि पालन कर प्रथम देवलोक में देवरूप से उत्पन्न होगा। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा। वहाँ युवावस्था में संयम अंगीकार करेगा और सकल कर्मों का क्षय कर निर्वाण पद को प्राप्त करेगा।

इस अध्ययन का उपसंहार करते हुए सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि - हे जम्बू! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के तीसरे अध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रतिपादन किया है। हे जम्बू! जैसा मैंने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से सुना है वैसा ही तुझे कहा है। मैंने अपनी तरफ से कुछ नहीं कहा है।

प्रस्तुत तीसरे अध्ययन की विशिष्ट शिक्षाएं इस प्रकार है -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१. जो लोग अण्डों में जीव नहीं मानते हैं उन्हें प्रस्तुत अध्ययन में वर्णित निर्णय अण्डवाणिज के जीवन वृत्तांत से समझ लेना चाहिए कि अण्डा मांस है और उसमें भी हमारी तरह जीव है क्योंकि दशवैकालिक सूत्र के चौथे अध्ययन में जहाँ त्रस प्राणियों का वर्णन किया है वहाँ अण्डज को त्रस प्राणी माना है। अण्डे से पैदा होने वाले पक्षी, मछली आदि प्राणी अण्डज कहलाते हैं। अतः अण्डों को नष्ट कर देना या खा जाना या क्रय विक्रय करने का अर्थ है प्राणियों के जीवन को लूट लेना। किसी के जीवन को लूट लेना पाप है। यही कारण है कि अभग्नसेन के जीव को निर्णय अण्डवाणिज के भव में किये गये अण्डों के भक्षण एवं उनके अनार्य एवं अधमपूर्ण व्यवसाय के कारण ही सात सागरोपम तक नरक के भीषण दुःखों को भोगना पड़ा। इसलिए सुखाभिलाषी प्राणियों को अण्डों के पाप पूर्ण भक्षण एवं उनके हिंसक और अनार्य व्यवसाय से सदैव बचना चाहिये।

२. धन, सत्ता आदि के अहंकार में जो अज्ञानी जीव पाप कर्मों का आचरण करते हैं और पाप करके खुशियाँ मनाते हैं उन्हें अभग्नसेन चोर सेनापति की तरह पाप कर्मों के दुःखद परिणाम को भुगतना पड़ता है अतः पाप कर्मों से बचते रहना चाहिए।

॥ तृतीय अध्ययन समाप्त ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सगडे णामं चउत्थं अज्झयणं

शकट नामक चतुर्थ अध्ययन

उत्थानिका-प्रस्तावना

इस चतुर्थ अध्ययन में ब्रह्मचर्य की महिमा और मैथुन के दुष्परिणामों का वर्णन किया गया है। जिसका प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

जइ णं भंते!.....चउत्थस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं साहंजणी णामं णयरी होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धा। तीसे णं साहंजणीए णयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए देवरमणे णामं उज्जाणे होत्था। तत्थ णं अमोहस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था-पुराणे०। तत्थ णं साहंजणीए णयरीए महचंदे णामं राया होत्था-महया०। तस्स णं महचंदस्स रण्णो सुसेणे णामं अमच्चे होत्था सामभेयदंड० णिग्गह कुसले॥८७॥

कठिन शब्दार्थ - **जक्खाययणे** - यक्षायतन, **णिग्गह** - निग्रह करने में, **कुसले** - कुशल-प्रवीण।

भावार्थ - 'हे भगवन्! यदि तीसरे अध्ययन का इस प्रकार अर्थ प्रतिपादन किया है तो हे भगवन्! चतुर्थ अध्ययन का क्या अर्थ प्रतिपादन किया गया है?' - जम्बूस्वामी के इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि-हे जम्बू! उस काल और उस समय में साहंजनी नाम की नगरी थी जो ऋद्धि समृद्धि तथा धन धान्यादि से परिपूर्ण थी। उस साहंजनी नगरी के बाहर उत्तर पूर्व दिशा के मध्य भाग (ईशान कोण) में एक देवरमण उद्यान था। उस उद्यान में अमोघ नाम के यक्ष का यक्षायतन था जो कि पुरातन था। उस साहंजनी नगरी में महाचन्द्र नामक राजा राज्य करता था जो हिमालय आदि पर्वतों के समान दूसरे राजाओं की अपेक्षा महान् था। उस महाचन्द्र राजा का सामनीति, भेदनीति, दण्डनीति का प्रयोग करने वाला और न्याय नीति की विधियों को जानने वाला, निग्रह करने वाला तथा प्रवीण सुषेण नाम का अमात्य-मंत्री था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - श्री जम्बूस्वामी ने विपाकसूत्र के तीसरे अध्ययन में चोर सेनापति श्री अभग्नसेन का जीवन वृत्तांत सुधर्मा स्वामी के मुखारविंद से ध्यानपूर्वक सुना तो उनके हृदय में विपाक सूत्र के चौथे अध्ययन के भाव श्रवण की जिज्ञासा उत्पन्न हुई अतः उन्होंने सुधर्मा स्वामी के चरणों में चौथे अध्ययन के भाव फरमाने हेतु प्रार्थना की।

सुधर्मास्वामी ने फरमाया कि हे जम्बू! इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में साहंजनी नाम की वैभवशाली नगरी थी। उस नगरी के बाहर ईशानकोण में देवरमण उद्यान था। उस उद्यान में अमोघ नामक यक्ष का स्थान बहुत प्राचीन तथा सुंदर था। साहंजनी नगरी के राजा महाचन्द्र थे। जिस प्रकार हिमालय आदि पर्वत निष्प्रकंप तथा महान् होते हैं उसी प्रकार नरेश महाचन्द्र भी धैर्यशील और महाप्रतापी थे। राजा के सभी गुणों से युक्त और प्रजा के मन को आनंदित करने वाले थे।

महाचन्द्र के सुषेण नामक एक सुयोग्य अनुभवी मंत्री था जो साम, भेद, दण्ड और दान नीति के विषय में पूरा पूरा निष्णात था और इन के प्रयोग से वह विपक्षियों का निग्रह करने में भी पूरी निपुणता प्राप्त किये हुए था।

शकट-परिचय

तत्थ णं साहंजणीए णयरीए सुदरिसणा णामं गणिया होत्था वण्णओ। तत्थ णं साहंजणीए णयरीए सुभद्दे णामं सत्थवाहे होत्था-अड्ढे०। तस्स णं सुभद्दस्स सत्थवाहस्स भद्दा णामं भारिया होत्था अहीण-पडिपुण्ण-पंचेंदियसरीरा। तस्स णं सुभद्दसत्थवाहस्स पुत्ते भद्दाए भारियाए सगडे णामं दारए होत्था अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरे॥८८॥

भावार्थ - उस साहंजनी नगरी में सुदर्शना नाम की गणिका वेश्या थी जिसका वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिये। उस साहंजनी नगरी में सुभद्र नामक सार्थवाह था जो कि धनी एवं बड़ा प्रतिष्ठित था। उस सुभद्र सार्थवाह की भद्रा नामक भार्या थी जो अन्यून एवं निर्दोष पंचेन्द्रिय शरीर वाली थी। उस सुभद्र सार्थवाह का पुत्र और भद्रा भार्या का आत्मज शकट नाम का बालक था जो कि अन्यून एवं निर्दोष पंचेन्द्रिय शरीर से युक्त था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान

तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं महावीरे.........समोसरणं। परिसा राया य णिग्गए, धम्मो कहिओ, परिसा रा० पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जाव रायमग्गमोगाढे, तत्थ णं हत्थी आसे पुरिसे....तेसिं च णं पुरिसाणं मज्झगयं पासइ एगं सइत्थीयं पुरिसं अवओडयबंधणं उक्खित्त जाव घोसिज्जमाणं चिंता तहेव जाव भगवं वागरेइ।८९।

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में साहंजनी नगरी के बाहर देवरमण उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पदार्पण हुआ। भगवान् के दर्शनार्थ परिषद् (जनता) और राजा निकले। भगवान् ने उन्हें धर्मदेशना दी। परिषद् चली गई। राजा भी चले गये। उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ शिष्य श्री गौतमस्वामी यावत् राजमार्ग में गये। वहां उन्होंने हाथियों, अश्वों और पुरुषों को देखा। उन पुरुषों के मध्य में स्त्री सहित अवकोटक बंधन अर्थात् जिस बंधन में गल और दोनों हाथों को मोड़ कर पृष्ठ भाग पर रज्जु के साथ बांधा जाए उस बंधन से युक्त जिसके कान और नासिका कटे हुए हैं यावत् उद्घोषणा से युक्त एक पुरुष को देखते हैं, देख कर गौतमस्वामी ने विचार किया और भगवान् से आकर निवेदन किया यावत् भगवान् महावीर स्वामी गौतमस्वामी के उत्तर में इस प्रकार कहते हैं -

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में भिक्षार्थ गये गौतमस्वामी ने क्या दृश्य देखा, उसका वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है -

जब भगवान् महावीर स्वामी की आज्ञा लेकर गौतमस्वामी भिक्षा के निमित्त साहंजनी नगरी के राजमार्ग में पहुंचे तो वहां हाथियों के झुंड, घोड़ों के समूह और सैनिक पुरुषों को देखते हैं। उन सैनिकों के बीच में एक स्त्री सहित पुरुष को देखा जिसके कान, नाक कटे हुए थे और वह अवकोटक बंधन से बंधा हुआ था तथा राजपुरुष उन दोनों को (स्त्री व पुरुष को) कोड़ों से पीट रहे थे तथा उद्घोषणा कर रहे थे कि इन दोनों को कष्ट देने वाले यहां के राजा अथवा कोई अधिकारी आदि नहीं हैं किंतु इनके अपने दुष्कर्मों के कारण ही ये कष्ट पा रहे हैं। राजकीय पुरुषों के द्वारा की गई उस स्त्री पुरुष की इस दयनीय दशा को देख कर गौतमस्वामी सोचने लगे कि - मैंने नरकों को नहीं देखा किंतु श्रुतज्ञान के बल से नरकों के विषय में जो जाना है उससे यह प्रतीत होता है कि यह पुरुष नरक के समान ही यातना को प्राप्त कर रहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। अहो! यह कितनी कर्मजन्य विडम्बना है? इस प्रकार चिंतन करते हुए गौतमस्वामी देवरमण उद्यान में आये, आकर प्रभु को वंदन नमस्कार किया और राजमार्ग के दृश्य का सारा वृत्तांत कह सुनाया।

तदनन्तर उस पुरुष के इस प्रकार दुःख भोगने का कारण जानने की इच्छा से गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से विनम्रता पूर्वक निवेदन किया कि - 'हे भगवन्! यह पुरुष पूर्व भव में कौन था? और उसने पूर्वजन्म में ऐसा कौनसा कर्म किया जिसके फलस्वरूप उसे इस प्रकार के कष्टों को सहन करना पड़ रहा है?'

गौतम स्वामी के इस प्रश्न के उत्तर में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जो कुछ फरमाया, वह इस प्रकार है -

पूर्वभव वर्णन

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे छगलपुरे णामं णयरे होत्था। तत्थ णं सीहगिरी णामं राया होत्था महया०। तत्थ णं छगलपुरे णयरे छणिए णामं छागलिए परिवसइ अड्ढे० अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे॥६०॥

कठिन शब्दार्थ - छागलिए - छागलिक-छागों-बकरों के मांस से आजीविका करने वाला वधिक-कसाई, दुप्पडियाणंदे - दुष्प्रत्यानन्द-बड़ी कठिनाई से प्रसन्न होने वाला।

भावार्थ - हे गौतम! उस काल तथा उस समय में इसी जंबू नामक द्वीप के अंतर्गत भारतवर्ष में छगलपुर नाम का एक नगर था। वहां सिंहगिरि नामक राजा राज्य करता था जो कि हिमालय आदि पर्वतों के समान महान् था। उस नगर में छण्णिक नामक एक छागलिक-छागादि के मांस का व्यापार करने वाला वधिक रहता था जो कि धनाढ्य, अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद-बड़ी कठिनाई से प्रसन्न होने वाला था।

छण्णिक छागलिक के हिंसक कृत्य

तस्स णं छणियस्स छागलियस्स बहवे अयाण य एलयाण य रोज्झाण य वसभाण य ससयाण य सूयराण य पसयाण य सिंघाण य हरिणाण य मयूराण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य महिसाण य सयबद्धाण य सहस्सबद्धाण य जूहाणि वाडगंसि संणिरुद्धाइं चिट्ठंति, अण्णे य तत्थ बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा बहवे अए य जाव महिसे य सारक्खमाणा संगोवेमाणा चिट्ठंति, अण्णे य से बहवे पुरिसा अयाण य जाव गिहंसि संणिरुद्धा चिट्ठंति, अण्णे य से बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा बहवे अए य जाव सहस्(महि)से य जीवियाओ ववरोवेंति ववरोवेत्ता मंसाइं कप्पणिकप्पियाइं करेंति करेत्ता छणियस्स छागलियस्स उवणेंति, अण्णे य से बहवे पुरिसा ताइं बहूयाइं अयमंसाइं जाव महिसमंसाइं तवएसु य कवल्लीसु य कंदुएसु य भज्जणेसु य इंगालेसु य तलेंति य भज्जेंति य सोल्लेंति य० तओ रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणा वि य णं से छणिए छागलिए तेहिं बहुवि० मंसेहिं जाव महिसमंसेहिं सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च ६ आसाएमाणे ४ विहरइ॥६१॥

कठिन शब्दार्थ - **अयाण** - अजों-बकरों, **एलाण** - भेड़ों, **रोज्झाण** - रोझों-नील गायों, **वसभाण** - वृषभों, **ससयाण** - शशकों-खरगोशों, **पसयाण** - मृग विशेषों अथवा मृगशिशुओं, **सूयराण** - शूकरों-सूयरों, **सिंहाण** - सिंहों, **हरिणाण** - हरिणों, **मऊराण** - मयूरों, **महिसाण**- महिषों-भैंसों, **सयबद्धाण** - शतबद्ध-जिसमें १०० बंधे हुए हों, **सहस्सबद्धाण**- सहस्रबद्ध-जिसमें १००० बंधे हुए हों, **जूहाणि** - यूथ-समूह, **वाडगंसि** - वाटक-बाड़े में, **सण्णिरुद्धाइं** - सम्यक् प्रकार से रोके हुए, **दिण्णभइभत्तवेयणा** - दत्तभृत्तिभक्तवेतना-जिन्हें वेतन के रूप में भृत्ति-रुपये पैसे और भक्त-भोजनादि दिया जाता हो ऐसे पुरुष, **सारक्खमाणा**- संरक्षण करते हुए, **संगोवेमाणा**- संगोपन करते हुए, **कप्पणिकप्पियाइं** - कर्तनी-कैंची अथवा छुरी के द्वारा टुकड़े, **तवएसु** - तवों पर, **कवल्लीसु** - कडाहों में, **कंदुएसु** - कंदुओं (हांडों अथवा कडाहियों या लोहे के पात्र विशेषों) में, **भज्जणेसु** - भर्जनकों-भूनने के पात्रों में, **इंगालेसु**-अंगारों पर, **तलेंति**-तलते हैं, **भज्जेंति** - भूनते हैं, **सोल्लेंति** - शूल द्वारा पकाते हैं।

भावार्थ - उस छण्णिक छागलिक के अनेक अजों (बकरों), भेड़ों, नीलगायों, वृषभों, शशकों, मृगविशेषों (मृगशिशुओं) शूकरों, सिंहों, हरिणों, मयूरों और महिषों के शतबद्ध एवं सहस्रबद्ध अर्थात् सौ-सौ तथा हजार-हजार पशु जिनमें बंधे रहते थे ऐसे यूथवाटक-बाडे में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक् प्रकार में रोके हुए रहते थे। वहां उसके ऐसे पुरुष जिनको वेतन के रूप में रुपया, पैसा और भोजन दिया जाता था, अनेक अजादि यावत् महिषादि पशुओं का संरक्षण तथा संगोपन करते हुए उनकों घरों में रोके रहते थे। और दूसरे अनेक पुरुष जिनको वेतन के रूप में रुपया पैसा तथा भोजन दिया जाता था अनेक अजों को यावत् महिषों को जो कि सैंकड़ों तथा हजारों की संख्या में थे जीवन से रहित किया करते थे और उनके मांस को कैंची अथवा छुरी के द्वारा टुकड़े करके छण्णिक छागलिक को लाकर देते थे। उसके अनेक नौकर पुरुष उन मांसों को तवों, कवल्लियों, भर्जनकों और अंगारों पर तलते, भूनते और शूल द्वारा पकाते हुए उन मांसों को राजमार्ग में बेच कर आजीविका चलाते थे।

छण्णिक छागलिक स्वयं भी तले हुए, भूने हुए और शूल द्वारा पकाये हुए उन मांसों के साथ सुरा आदि पंचविध मद्यों का आस्वादनादि करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा था।

छण्णिक का नरक उपपात

तए णं से छणिए छागलिए एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता सत्त-वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा चोत्थीए पुढवीए उक्कोसेणं दससागरोवमठिइएसु णेरइयत्ताए उववण्णे ॥६२॥

भावार्थ - तदनन्तर वह छण्णिक छागलिक इस प्रकार के कर्म का करने वाला, इस कर्म में प्रधान, इस प्रकार के कर्म के विज्ञान वाला तथा इस कर्म को अपना सर्वोत्तम आचरण बनाने वाला, क्लेशजनक और मलिन रूप अत्यधिक पाप कर्म का उपार्जन कर सात सौ वर्ष की परम आयु भोग कर काल मास में काल करके उत्कृष्ट दस सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से चौथी नरक में उत्पन्न हुआ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में भगवान् महावीर स्वामी ने दुष्ट व्यक्ति के पूर्वभव का वर्णन किया। वह पूर्वभव में छण्णिक नामक छागलिक था जो अपनी सावद्य जीवनचर्या के कारण अधार्मिक, अधर्माभिरुचि, अधर्मानुरागी और अधर्माचारी था। छण्णिक छागलिक केवल मांस विक्रेता ही नहीं था अपितु वह स्वयं भी नाना प्रकार की मदिराओं के साथ मांस भक्षण किया करता था। इस प्रकार मांस विक्रय और मांसभक्षण के द्वारा उसने जिन पापकर्मों का उपार्जन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किया उनके फलस्वरूप ही वह चौथी नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ। वहां की भवस्थिति को पूरा करने के बाद उसने कहां जन्म लिया अब सूत्रकार उसका वर्णन करते हैं -

शकटकुमार की दुर्दशा

तए णं तस्स सुभद्द-सत्थवाहस्स भद्दा भारिया जायणिंदुया यावि होत्था। जाया-जाया दारगा विणिहायमावज्जंति। तए णं से छणिए छागलिए चोत्थीए पुढवीए अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव साहंजणीए णयरीए सुभद्दस्स सत्थवाहस्स भद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं सा भद्दा सत्थवाही अण्णया कयाइ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारगं पयाया। तए णं तं दारगं अम्मापियरो जायमेत्तं चेव सगडस्स हेट्ठाओ ठावेंति० दोच्चंपि गिण्हावेंति अणुपुव्वेणं सारक्खेंति संगोवेंति संवड्ढेंति जहा उज्झियए जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमेत्ते चेव सगडस्स हेट्ठा ठाविए तम्हा णं होउ णं अम्हं एस दारए सगडे णामेणं, सेसं जहा उज्झियए सुभद्दे लवणसमुद्दे कालगए मायावि कालगया। से वि सयाओ गिहाओ णिच्छूढे।।६३।।

कठिन शब्दार्थ - **जायणिंदुया** - जात निन्दुका-जिसके बच्चे उत्पन्न होते ही मर जाते हों, ऐसी, **जाया-जाया** - उत्पन्न होते होते, **दारगा** - बालक, **विणिहायमावज्जंति** - विनाश को प्राप्त हो जाते थे, **सगडस्स** - शकट-छकड़े के, **हेट्ठओ** - नीचे, **णिच्छूढे** - निकाल दिया गया।

भावार्थ - तदनन्तर सुभद्र सार्थवाह की भद्रा नाम की भार्या जातनिन्दुका थी, उसके उत्पन्न होते ही बालक मर जाते थे इधर छण्णिक नामक छागलिक (वधिक) का जीव चौथी नरक से निकल कर सीधा इसी साहंजनी नगरी में सुभद्र सार्थवाह की भद्रा भार्या के गर्भ में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। लगभग नौ मास पूरे हो जाने पर किसी समय सुभद्रा सार्थवाही ने बालक को जन्म दिया। उत्पन्न होते ही माता-पिता उस बालक को शकट-छकड़े के नीचे स्थापित करते हैं और फिर उठा लेते हैं, उठा कर उसका यथाविधि संरक्षण, संगोपन और संवर्द्धन करते हैं।

उज्झितक कुमार की तरह यावत् जात मात्र-उत्पन्न होता ही हमारा यह बालक शकट-छकड़े के नीचे स्थापित किया गया था इसलिए इसका 'शकटकुमार' ऐसा नामकरण किया जाता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। उसका शेष जीवन उज्झितक कुमार के जीवन के समान समझ लेना चाहिये। सुभद्र सार्थवाह लवण समुद्र में काल को प्राप्त हुआ तथा शकट कुमार की माता भी मृत्यु को प्राप्त हो गयी थी। वह शकटकुमार भी घर से निकाल दिया गया।

तए णं से सगडे दारए सयाओ गिहाओ णिच्छूढे समाणे सिंघाडग....तहेव जाव सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था। तए णं से सुसेणे अमच्चे तं सगडं दारगं अण्णया कयाइ सुदरिसणाए गणियाए गिहाओ णिच्छुभावेइ णिच्छुभावेत्ता सुदरिसणियं गणियं अब्भिंतरियं ठावेइ ठावेत्ता सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥९४॥

भावार्थ - तदनन्तर अपने घर से निकाले जाने पर शकटकुमार साहंजनी नगरी के श्रृंगाटक त्रिकोण मार्ग आदि स्थानों में घूमता हुआ यावत् किसी समय सुदर्शना गणिका के साथ उसकी गाढ प्रीति हो गयी।

तदनन्तर अमात्य सुषेण किसी अन्य समय उस शकट कुमार को सुदर्शना गणिका के घर से निकलवा देता है और सुदर्शना गणिका को अपने घर में स्थापित कर लेता है-रख लेता है तथा सुदर्शना गणिका के साथ उदार प्रधान मनुष्य संबंधी विषय भोगों का उपभोग करता हुआ समय व्यतीत करता है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में छण्णिक छागलिक के जीव का सुभद्रा के गर्भ में आने, उसके जन्म लेने पर शकट कुमार नाम से प्रसिद्ध होने, माता-पिता के स्वर्गवास एवं घर से निकालने, सुदर्शना गणिका का संग मिलने तथा वहाँ से निकाले जाने का विस्तार से वर्णन किया गया है।

तए णं से सगडे दारए सुदरिसणाए गिहाओ णिच्छूढे समाणे अण्णत्थ कत्थइ सुइं वा......अलभ० अण्णया कयाइ रहस्सियं सुदरिसणा-गेहं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता सुदरिसणाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ। इमं च णं सुसेणे अमच्चे ण्हाए जाव विभूसिए मणुस्सवग्गुराए जेणेव सुदरिसणाए गणियाए गेहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सगडं दारयं सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ, पासित्ता आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं णिडाले साहट्टु सगडं दारयं पुरिसेहिं गिण्हावेइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गिण्हावेत्ता अट्ठि जाव महियं करेइ, करेत्ता अवओडयबंधणं करेइ, करेत्ता जेणेव महचंदे राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव एवं वयासी-एवं खलु सामी! सगडे दारए ममं अंतेउरंसि अवरद्धे।।९५।।

कठिन शब्दार्थ - **अण्णत्थ** - अन्यत्र, **कत्थइ** - कहीं पर भी, **रहस्सियं** - गुप्त रूप से, **मणुस्स वग्गुराए** - मनुष्य वागुरा-मनुष्य समुदाय से, **परिक्खित्ते** - परिवेष्टित हुआ, **णिडाले** - मस्तक पर, **अंतेउरंसि** - अन्तःपुर-रनिवास में, **अवरुद्धे** - अपराध किया है।

भावार्थ - तदनन्तर वह शकटकुमार सुदर्शना के घर से मंत्री के द्वारा निकाले जाने पर अन्यत्र कहीं भी स्मृति, रति और धृति को प्राप्त न करता हुआ किसी अन्य समय अवसर पाकर वह गुप्त रूप से सुदर्शना के घर पहुँच गया और सुदर्शना के साथ उदार-प्रधान कामभोगों को भोगता हुआ सानंद समय व्यतीत करने लगा।

इधर एक दिन स्नान कर और सब प्रकार के अलंकारों-आभूषणों से विभूषित होकर अनेक मनुष्यों से परिवेष्टित हुआ सुषेण मंत्री सुदर्शना के घर पर आया, आकर सुदर्शना के साथ यथा रुचि कामभोगों का उपभोग करते हुए उसने शकट कुमार को देखा और देख कर वह क्रोध के मारे लाल पीला हो, दांत पीसता हुआ मस्तक पर तीन सल वाली भृकुटि चढ़ाता है और शकटकुमार को अपने पुरुषों से पकड़वा कर यष्टि से यावत् उसको मथित-अत्यंत ताड़ित करता है और अवकोटक बंधन को बांध कर जहाँ पर महाचन्द्र राजा था वहाँ ले जाता है। ले जाकर महाचन्द्र नरेश से दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहता है - 'हे स्वामिन्! इस शकरटकुमार ने मेरे अंतःपुर में प्रवेश करने का अपराध किया है।'

अपराध की सजा

तए णं से महचंदे राया सुसेणं अमच्चं एवं वयासी-तुमं चेव णं देवाणुप्पिया! सगडस्स दारगस्स दंडं णिवत्तेहि। तए णं से सुसेणे अमच्चे महचंदेणं रण्णा अब्भणुण्णाए समाणे सगडं दारयं सुदरिसणं च गणियं एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेइ।

तं एवं खलु गोयमा! सगडे दारए पुरापोराणाणं.......पच्चणुभवमाणे विहरइ ।।९६।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर महाचन्द्र राजा ने सुषेण अमात्य को इस प्रकार कहा - 'हे देवानुप्रिय! तुम ही शकटकुमार को दण्ड दे डालो।' तत्पश्चात् महाचन्द्र राजा से आज्ञा प्राप्त कर सुषेण मंत्री शकटकुमार और सुदर्शना गणिका को इस (पूर्वोक्त) विधान-प्रकार से मारा जाएं, ऐसी आज्ञा देता है।

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! शकट कुमार बालक पूर्वकृत पुरातन तथा दुश्चीर्ण-दुष्टता से किये गये यावत् कर्मों का अनुभव करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में शकट कुमार के विषय में पूछे गये प्रश्न का समाधान करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी से कहा कि - हे गौतम! छण्णिक छागलिक का जीव अपने पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मों का फल भोगने के लिए चौथी नरक में गया और वहाँ भीषण नारकीय यातनाएं भोग कर शकटकुमार के रूप में जन्म लेता है और वहाँ पर भी उसकी ऐसी दुर्दशा का कारण उसके पूर्वोपार्जित अशुभ कर्म ही है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से शकटकुमार के पूर्वभव का वृत्तांत सुन लेने के पश्चात् गौतम स्वामी को उसके आगामी भवों को जानने की जिज्ञासा हुई अतः वे भगवान् से इस प्रकार पूछते हैं -

आगामी भव-पृच्छा

सगडे णं भंते! दारए कालगए कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

सगडे णं दारए गोयमा! सत्तावण्णं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे एगं महं अयोमयं तत्तं समजोइभूयं इत्थिपडिमं अवयासाविए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिइ।

से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता रायगिहे णयरे मातंगकुलंसि जमलत्ताए (जुगलत्ताए) पच्चायाहिइ। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णिव्वत्तबारसगस्स इमं एयारूवं गोण्णं णामधेज्जं करिस्संति। तं होउ णं दारए सगडे णामेणं होउ णं दारिया सुदरिसणा णामेणं। तए णं से सगडे दारए उम्मुक्कबालभावे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विण्णयपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते भविस्सइ। तए णं सा सुदरिसणावि दारिया उम्मुक्कबालभावा विण्णयपरिणयमेत्ता जोव्वणगमणुप्पत्ता रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा यावि भविस्सइ।।६७।।

कठिन शब्दार्थ - समजोइभूयं - अग्नि के समान देदीप्यमान, **इत्थीपडिमं** - स्त्री की प्रतिमा से, **अवयासाविए** - अवयासावित-आलिङ्गित, **मातंगकुलंसि** - मातंगकुल में-चांडाल कुल में, **जमलत्ताए** - युगल रूप से।

भावार्थ - हे भगवन्! शकटकुमार बालक यहाँ से काल करके कहां जायगा? कहां उत्पन्न होगा?

हे गौतम! शकटकुमार बालक ५७ वर्ष की परम आयु को भोग कर आज ही तीसरा भाग शेष रहे दिन में एक महान् लोहमय तपी हुई अग्नि के समान देदीप्यमान स्त्री प्रतिमा से आलिंगित कराया हुआ मृत्यु समय में काल करके रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा।

वहाँ से निकल कर सीधा राजगृह नगर में मातंग-चांडाल कुल में युगल रूप से उत्पन्न होगा। उस युगल के माता-पिता बारहवें दिन उस बालक का शकट कुमार और उस बालिका का सुदर्शना, इस प्रकार नामकरण करेंगे। शकटकुमार बाल्यभाव को त्याग कर विशिष्ट ज्ञान तथा बुद्धि आदि की परिपक्वता को प्राप्त करता हुआ यौवन को प्राप्त करेगा। सुदर्शना भी बालभाव को त्याग कर विशिष्ट ज्ञान तथा बुद्धि आदि की परिपक्वता को प्राप्त करती हुई युवावस्था को प्राप्त होगी। वह रूप में, यौवन में और लावण्य में उत्कृष्ट (उत्तम) एवं उत्कृष्ट शरीर वाली होगी।

तए णं से सगडे दारए सुदरिसणाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे सुदरिसणाए भइणीए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्सइ। तए णं से सगडे दारए अण्णया कयाइ सयमेव कूडग्गाहित्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरिस्सइ। तए णं से सगडे दारए कूडग्गाहे भविस्सइ अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे एयकम्मे० सुबहुं पावकम्मं जाव समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववण्णे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संसारो तहेव जाव पुढवीए। से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता वाणारसीए णयरीए मच्छत्ताए उववज्जिहिइ। से णं तत्थ णं मच्छबंधिएहिं वहिए तत्थेव वाणारसीए णयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ बोहिं बुद्धे० पव्व० सोहम्मे कप्पे.....महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ।। णिक्खेवो।।६८।।

।। चउत्थं अज्झयणं समत्तं।।

कठिन शब्दार्थ - कूडग्गाहत्तं - कूटग्राहित्व-कूड-कपट से अन्य प्राणियों को अपने वश में करने की कला को, **कूडग्गाहे** - कूटग्राह-कपट से जीवों को वश में करने वाला, **मच्छत्ताए**- मत्स्य के रूप में, **मच्छबंधिएहिं** - मत्स्यवधिकों-मछली मारने वालों के द्वारा, **वहिए** - हनन किया हुआ।

भावार्थ - तदनन्तर शकटकुमार बालक, सुदर्शना के रूप, यौवन और लावण्य में मूर्च्छित गृद्ध, ग्रथित और अध्युपपन्न हुआ सुदर्शना बहिन के साथ उदार-प्रधान मनुष्य संबंधी विषयभोगों का उपभोग करता हुआ विचरण करेगा।

तदनन्तर वह शकट बालक किसी अन्य समय स्वयं ही कूटग्राहित्व-कपट से अन्य प्राणियों को अपने वश में करने की कला को संप्राप्त कर विहरण करेगा, कूटग्राह बना हुआ वह शकट महाअधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद होगा। इन कर्मों को करने वाला, इन में प्रधानता लिये हुए तथा इनके विज्ञान वाला एवं इन्हीं पाप कर्मों को अपना सर्वोत्तम आचरण बनाए हुए अधर्म प्रधान कर्मों से वह बहुत से पाप कर्मों को उपार्जित कर काल के समय काल करके रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा।

उसका संसार परिभ्रमण पूर्वानुसार ही समझ लेना चाहिये यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहाँ से निकल कर वह सीधा वाराणसी नगरी में मत्स्य के रूप में जन्म लेगा। वहाँ पर मत्स्य-वधिकों के द्वारा वध को प्राप्त होकर उसी वाणारसी नगरी में एक श्रेष्ठिकुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वह वहाँ सम्यक्त्व को तथा अनगार धर्म को प्राप्त करके सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में देव होगा, वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा, वहाँ दीक्षा अंगीकार कर प्रभु आज्ञानुसार संयम का पालन कर सिद्धि प्राप्त करेगा अर्थात् कृत कृत्य हो जायेगा, केवलज्ञान प्राप्त करेगा, कर्मों से रहित होगा, कर्मजन्य संताप से विमुक्त होगा और सब दुःखों का अंत करेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निक्षेप - उपसंहार पूर्ववत् समझ लेना चाहिये। इस प्रकार चतुर्थ अध्ययन संपूर्ण हुआ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान करते हुए शकटकुमार के भावी जीवन का दिग्दर्शन कराया है। जो इस प्रकार है -

शकटकुमार की ५७ वर्ष की आयु पूरी होने पर वह रत्नप्रभा नामक पहली नरक में जन्म लेगा। वहाँ की भवस्थिति पूरी कर वह राजगृह नगर में एक चांडाल के यहाँ युगल रूप से उत्पन्न होगा। यहाँ उसका नाम शकट और कन्या का नाम सुदर्शना रखा जायगा। यौवनावस्था प्राप्त होने पर शकटकुमार अपनी बहिंन सुदर्शना के रूप यौवन में आसक्त हो उसके साथ विषय भोगों का सेवन करेगा और कूटग्राही बन कर अपनी पाप प्रवृत्तियों में वृद्धि करेगा। फलस्वरूप मर कर प्रथम नारकी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा। प्रथम अध्ययन में वर्णित मृगापुत्र के समान ही शकट का जीव नरक से निकल कर अन्यान्य गतियों में परिभ्रमण करेगा। अंत में वाराणसी के श्रेष्ठिकुल में उत्पन्न होकर सम्यक्त्व लाभ प्राप्त करेगा और साधु धर्म का सम्यक् पालन कर प्रथम सौधर्म देवलोक में देव रूप से उत्पन्न होगा। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होकर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होगा और सभी दुःखों का अंत करेगा।

निक्षेप अर्थात् जम्बूस्वामी से सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि - हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःख विपाक के चौथे अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) भाव फरमाया है। इस प्रकार मैं कहता हूँ। अर्थात् जैसा भगवान् से मैंने सुना है वैसा तुम्हें कहा है इसमें मेरी अपनी कोई कल्पना नहीं है।

इस प्रस्तुत चौथे अध्ययन में मुख्य रूप से मांसाहार त्याग और ब्रह्मचर्य पालन की प्रेरणा प्रदान की गयी है। मांसाहार सेवन और ब्रह्मचर्य विनाश के कैसे दुष्परिणाम होते हैं, इसका सुंदर चित्रण आगमकार ने शकटकुमार के जीवन वृत्तांत में किया है।

॥ चतुर्थ अध्ययन समाप्त॥

* * * *

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहस्सइदत्ते णामं पंचमं अज्झयणं

बृहस्पतिदत्त नामक पांचवां अध्ययन

उत्थानिका - विपाक सूत्र के चौथे अध्ययन में शकटकुमार के हिंसक और व्यभिचारी जीवन का वर्णन करने के बाद सूत्रकार इस पांचवें अध्ययन में भी एक ऐसे ही मैथुन सेवी व्यक्ति का जीवन परिचय करा रहे हैं जिसका प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते!.......पंचमस्स अज्झयणस्स उक्खेवो। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसंबी णामं णयरी होत्था रिद्धत्थिमिय० बाहिं चंदोयरणे उज्जाणे, सेयभद्दे जक्खे।

तत्थ णं कोसंबीए णयरीए सयाणीए णामं राया होत्था महया०। मियावई देवी। तस्स णं सयाणीयस्स पुत्ते मियादेवीए अत्तए उदायणे णामं कुमारे होत्था अहीण० जुवराया। तस्स णं उदायणस्स कुमारस्स पउमावई णामं देवी होत्था। तस्स णं सयाणीयस्स सोमदत्ते णामं पुरोहिए होत्था रिउव्वेय-यज्जुव्वेय-सामवेय-अथव्वणवेय कुसले। तस्स णं सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ता णामं भारिया होत्था। तस्स णं सोमदत्तस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए बहस्सइदत्ते णामं दारए होत्था अहीण०।।६६।।

भावार्थ - पंचम अध्ययन का उत्क्षेप - प्रस्तावना पूर्व के अनुसार समझ लेना चाहिये। हे जंबू! इस प्रकार निश्चय ही उस काल तथा उस समय में कौशाम्बी नाम की नगरी थी जो ऋद्धि समृद्धि से युक्त थी। उस नगरी के बाहर चन्द्रावतरण नाम का उद्यान था उसमें श्वेत भद्र नामक यक्ष का स्थान था।

उस कौशाम्बी नगरी में शतानीक नामक राजा था जो कि महान् हिमालय आदि पर्वतों के समान महान् था। उसकी मृगावती नाम की रानी थी। उस शतानीक का पुत्र और मृगावती का आत्मज उदयन नामक एक कुमार था जो कि अन्यून एवं निर्दोष पंचेन्द्रिय शरीर वाला तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

युवराज था। उस उदयनकुमार की पद्मावती नाम की देवी थी। उस शतानीक का सोमदत्त नामक पुरोहित था जो कि ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व वेद का ज्ञाता था। उस सोमदत्त का पुत्र और वसुदत्ता का आत्मज बृहस्पतिदत्त नामक बालक था जो अन्यून एवं निर्दोष पंचेन्द्रिय शरीर वाला था।

विवेचन - चतुर्थ अध्ययन की समाप्ति पर पांचवें अध्ययन का प्रारंभ किया जाता है जिसका उत्क्षेप-प्रस्तावना इस प्रकार है -

जंबू स्वामी अपने गुरु आर्य सुधर्मा स्वामी से विनय पूर्वक निवेदन करते हैं कि - हे भगवन्! ज्ञातपुत्र श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाक सूत्र के चौथे अध्ययन में जो भाव फरमाये हैं वे मैंने आपके मुखारविन्द से सुने हैं। अब मुझे पांचवें अध्ययन के भाव सुनने की जिज्ञासा हो रही है अतः श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाक सूत्र के पांचवें अध्ययन के क्या भाव फरमाये हैं सो कृपा कर कहिये।

जम्बू स्वामी के सानुरोध निवेदन पर श्री सुधर्मा स्वामी ने वीरभाषित विपाक सूत्र के पांचवें अध्ययन का अर्थ सुनाना प्रारंभ किया जिसका वर्णन भावार्थ से स्पष्ट है।

अब सूत्रकार कौशाम्बी नगरी के बाहर चन्द्रावतरण उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पदार्पण का वर्णन करते हैं -

पूर्व भव-पृच्छा

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे........समोसरणं। तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे तहेव जाव रायमग्गमोगाढे तहेव पासइ हत्थी आसे पुरिसमज्झे पुरिसं चिंता तहेव पुच्छइ पुव्वभवं भगवं वागरेइ - एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहेवासे सव्वओभद्दे णामं णयरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे। तत्थ णं सव्वओभद्दे णयरे जियसत्तू णामं राया होत्था। तस्स णं जियसत्तुस्स रण्णो महेसरदत्ते णामं पुरोहिए होत्था रिउव्वेय जाव अथव्वणवेयकुसले यावि होत्था॥१००॥

कठिन शब्दार्थ - तहेव - तथैव-उसी भांति, **पुव्वभवं** - पूर्वभव का, **वागरेइ** - वर्णन करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी कौशाम्बी नगरी के बाहर चन्द्रावतरण उद्यान में पधारे। उस काल उस समय भगवान् गौतम स्वामी पूर्व की भांति यावत् राजमार्ग में पधारे। वहाँ हाथियों, घोड़ों और पुरुषों को तथा उन पुरुषों के मध्य में एक पुरुष को देखते हैं। उसको देख कर मन में चिंतन करते हैं और वापिस आकर भगवान् से उसके पूर्वभव के विषय में पूछते हैं। तब भगवान् उसके पूर्वभव का वर्णन करते हैं।

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! उस काल और उस समय में इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारत वर्ष में सर्वतोभद्र नामक नगर था। जो ऋद्ध-भवनादि की बहुलता से युक्त, स्तिमित-आन्तरिक और बाह्य उपद्रवों के भय से रहित तथा समृद्ध-धन धान्यादि की समृद्धि से परिपूर्ण था। उस सर्वतोभद्र नगर में जितशत्रु नामक राजा था। उस जितशत्रु राजा का महेश्वरदत्त नामक पुरोहित था जो कि ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वणवेद में भी कुशल था।

महेश्वरदत्त द्वारा पापाचार

तए णं से महेसरदत्ते पुरोहिए जियसत्तुस्स रण्णो रज्ज-बल-विवद्धणअट्ठयाए कल्लाकल्लिं एगमेगं माहणदारयं एगमेगं खत्तियदारयं एगमेगं वइस्सदारयं एगमेगं सुद्ददारयं गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता तेसिं जीवंतगाणं चेव हिययउंडए गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता जियसत्तुस्स रण्णो संतिहोमं करेइ। तए णं से महेसरदत्ते पुरोहिए अट्ठमीचोद्दसीसु दुवे दुवे माहण-खत्तिय-वइस्स-सुद्दे चउण्हं मासाणं चत्तारि चत्तारि छण्हं मासाणं अट्ठ अट्ठ संवच्छरस्स सोलस सोलस जाहे जाहेवि य णं जियसत्तू राया परबलेणं अभिजुंजइ ताहे ताहेवि य णं से महेसरदत्ते पुरोहिए अट्ठसयं माहणदारगाणं अट्ठसयं खत्तियदारगाणं अट्ठसयं वइस्सदारगाणं अट्ठसयं सुद्ददारगाणं पुरिसेहिं गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता तेसिं जीवंतगाणं चेव हिययउंडीओ गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता जियसत्तुस्स रण्णो संतिहोमं करेइ, तए णं से परबले खिप्पामेव विद्धंसिज्जइ वा पडिसेहिज्जइ वा॥१०१॥

कठिन शब्दार्थ - **रज्ज** - राज्य, **बल** - बल-शक्ति, **विवद्धणअट्ठयाए** - विवर्द्धन के लिए, **कल्लाकल्लिं** - प्रतिदिन, **माहणदारगं** - ब्राह्मण बालक को, **खत्तियदारगं** - क्षत्रिय बालक को, **वइस्स दारगं** - वैश्य बालक को, **सुद्ददारगं** - शुद्र बालक को, **हिययउंडए** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हृदयों के मांस पिण्डों को, **संतिहोम** - शांति होम, **अट्ठमी चोद्दसीसु** - अष्टमी और चतुर्दशी को, **परबलेणं** - परबल-शत्रुसेना के साथ, **अभिजुंजइ (अभिजुज्जइ)** - युद्ध करता था, **अट्ठसयं** - एक सौ आठ, **विद्धंसेइ** - विध्वंश कर देता था, **पडिसेहिज्जइ** - प्रतिषेध कर देता था-भगा देता था।

भावार्थ - महेश्वरदत्त पुरोहित जितशत्रु राजा के राज्य और बल की वृद्धि के लिए प्रतिदिन एक-एक ब्राह्मण बालक, एक-एक क्षत्रिय बालक, एक-एक वैश्य बालक और एक-एक शुद्र बालक को पकड़वा लेता था, पकड़वा कर जीते जी उनके हृदयों के मांस पिण्डों को ग्रहण करवाता था, ग्रहण करवा कर जित्तशत्रु राजा के निमित्त उन से शांति होम किया करता था।

तदनन्तर वह पुरोहित अष्टमी और चतुर्दशी में दो-दो बालकों, चार मास के चार-चार बालकों, छह मास के आठ-आठ बालकों और संवत्सर-वर्ष में सोलह-सोलह बालकों के हृदयों के मांस-पिण्डों से शांति होम किया करता था तथा जब-जब भी जितशत्रु नरेश का किसी अन्य शत्रु के साथ युद्ध होता तब-तब वह १०८ ब्राह्मण बालकों, १०८ क्षत्रिय बालकों, १०८ वैश्य बालकों और १०८ क्षुद्र बालकों को अपने पुरुषों के द्वारा पकड़वा कर उनके जीते जी हृदय के मांस पिण्डों को निकलवा कर जितशत्रु नरेश के निमित्त शांति होम करता। तदनन्तर वह जितशत्रु राजा शत्रुसेना का शीघ्र ही विध्वंश कर देता या शत्रु का प्रतिषेध कर देता था या उसे भगा देता था।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गौतम स्वामी द्वारा कौशाम्बी नगरी के राजमार्ग पर देखे गये एक वध्य पुरुष के पूर्व भव संबंधी प्रश्न के उत्तर में भगवान् ने जो कुछ फरमाया, उसका वर्णन किया गया है।

सर्वतोभद्र नगर के राजा जितशत्रु का राजपुरोहित महेश्वरदत्त जितशत्रु नरेश के राज्य और बल वृद्धि के लिए बालकों की हत्या करता, जीते जी उनके हृदयगत मांस पिण्डों को निकलवा कर उनके द्वारा शांति होम करता था। चारों वर्णों में से प्रतिदिन एक-एक बालक की, अष्टमी और चतुर्दशी में दो-दो, चौथे मास में चार-चार तथा छठे मास में आठ-आठ और संवत्सर में सोलह-सोलह बालकों की बलि देने वाला पुरोहित महेश्वरदत्त मानव नहीं दानव था।

सूत्रोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति अपने निजी स्वार्थ के लिए भयंकर से भयंकर अपराध करने से भी नहीं झिझकता है। इस प्रकार प्रस्तुत सूत्र में जितशत्रु राजा के सम्मान-पात्र महेश्वरदत्त नामक पुरोहित के जघन्यतम पापाचार का वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से महेसरदत्ते पुरोहिए एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता तीसं वाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा पंचमीए पुढवीए उक्कोसेणं सत्तरससागरोवमट्ठिइए णरगे उववण्णे॥१०२॥

भावार्थ - तदनन्तर वह महेश्वरदत्त पुरोहित एतत्कर्मा-इस प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान करने वाला, एतत्प्रधान-इन कर्मों में प्रधान, एतद्विध-इन्हीं कर्मों की विद्या जानने वाला और एतत्समाचार-इन्हीं पाप कर्मों को अपना सर्वोत्तम आचरण बनाने वाला अत्यधिक पाप कर्मों को उपार्जित कर तीन हजार वर्ष की परमायु को भोग कर काल के समय काल करके पांचवीं नरक में उत्कृष्ट १७ सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उत्पन्न हुआ।

से णं ताओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव कोसंबीए णयरीए सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ताए भारियाए पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णिव्वत्तबारसाहस्स इयं एयारूवं णामधेज्जं करेंति। जम्हा णं अम्हं इमे दारए सोमदत्तस्स पुरोहियस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए तम्हा णं होउ अम्हं दारए बहस्सइदत्ते णामेणं॥१०३॥

भावार्थ - तदनन्तर वह महेश्वरदत्त पुरोहित का जीव पांचवीं नरक से निकल कर सीधा इसी कौशाम्बी नगरी में सोमदत्त पुरोहित की वसुदत्ता भार्या के पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। उत्पन्न होने से पश्चात् उस बालक के माता-पिता बालक के जन्म से लेकर बारहवें दिन नामकरण संस्कार करते हुए सोमदत्त का पुत्र और वसुदत्ता का आत्मज होने के कारण उसका वृहस्पतिदत्त नाम रखते हैं।

तए णं से बहस्सइदत्ते दारए पंचधाईपरिग्गहिए जाव परिवड्ढइ। तए णं से बहस्सइदत्ते उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुप्पत्ते विण्णयपरिणयमेत्ते होत्था। से णं उदायणस्स कुमारस्स पियबालवयस्सए यावि होत्था सहजायए सहवड्ढियए सहपंसुकीलियए। तए णं से सयाणीए राया अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते। तए णं से उदायणकुमारे बहूहिं राईसर जाव सत्थवाहप्पभिईहिं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे सयाणीयस्स रण्णो महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं णीहरणं करेइ, करेत्ता बहूइं लोइयाइं मयकिच्चाइं करेइ॥१०४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - सहजायए - सहजातकः-समान काल में उत्पन्न, **सहवड्डियए** - सहवर्द्धितकः-एक साथ वृद्धि को प्राप्त, **सहपंसुकीलियए** - सहपांसुक्रीडितः-साथ ही पांसुक्रीडा-धूलिक्रीडा करते थे।

भावार्थ - तदनन्तर वह वृहस्पतिदत्त बालक पांच धायमाताओं से वृद्धि को प्राप्त करता तथा बाल भाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त होता हुआ विज्ञात परिणतमात्र-जिसका विज्ञान परिपक्व अवस्था को प्राप्त हो चुका था। वह वृहस्पतिदत्त उदयनकुमार का प्रिय बाल मित्र था क्योंकि दोनों का जन्म एक साथ हुआ, दोनों एक साथ ही वृद्धि को प्राप्त हुए तथा साथ ही पांसुक्रीडा-बालक्रीडा किया करते थे।

तदनन्तर किसी अन्य समय महाराज शतानीक काल धर्म को प्राप्त हो गए तब वह उदयनकुमार अनेक राजा ईश्वर यावत् सार्थवाह आदि के साथ रुदन करता हुआ, आक्रंदन करता हुआ, विलाप करता हुआ शतानीक राजा का महान् ऋद्धि तथा सत्कार समुदाय के साथ निस्सरण (अर्थी निकालने की क्रिया) तथा मृतक संबंधी क्रियाओं को करता है।

तए णं से बहवे राईसर जाव सत्थवाहप्पभियओ उदायणं कुमारं महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचंति। तए णं से उदायणे कुमारे राया जाए महया०। तए णं से बहस्सइदत्ते दारए उदायणस्स रण्णो पुरोहियकम्मं करेमाणे सव्वट्ठाणेसु सव्वभूमियासु अंतेउरे य दिण्णवियारे जाए यावि होत्था।

तए णं से बहस्सइदत्ते पुरोहिए उदायणस्स रण्णो अंतेउरंसि वेलासु य अवेलासु य काले य अकाले य राओ य वियाले य पविसमाणे अण्णया कयाइ पउमावईए देवीए सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था पउमावईए देवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥१०५॥

कठिन शब्दार्थ - रायाभिसेएणं - राजा योग्य अभिषेक से, **अभिसिंचंति** - अभिषिक्त करते हैं, **पुरोहियकम्मे** - पुरोहित कर्म, **सव्वट्ठाणेसु** - सर्व स्थानों में, **सव्व भूमियासु** - सभी भूमिकाओं में, **दिण्णवियारे यावि** - दत्त विचार-अप्रतिबद्ध गमनागमन करने वाला, **वेलासु**- वेला-उचित अवसर अर्थात् ठीक समय पर, **अवेलासु** - अवेला-अनवसर-बेमौके, **वियाले** - विकाल-सायंकाल में, **संपलग्गे** - संप्रलग्न-अनुचित संबंध करने वाला।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर बहुत से राजा यावत् सार्थवाह आदि लोगों ने मिल कर बड़े समारोह के साथ उदयनकुमार का राज्याभिषेक किया। तब से उदयनकुमार हिमालय आदि पर्वत के समान महाप्रतापी राजा बन गया। तदनन्तर वह वृहस्पतिदत्त बालक उदयन राजा का पुरोहित कर्म करता हुआ सर्व स्थानों अर्थात् भोजन स्थान आदि सब स्थानों में, सर्वभूमिका-प्रासाद-महल की प्रथम भूमिका-मंजिल से लेकर सातवीं भूमि तक यानी सभी भूमिकाओं में तथा अंतःपुर में इच्छानुसार बेरोकटोक गमनागमन करने लगा।

तदनन्तर उस वृहस्पतिदत्त पुरोहित का उदयन नरेश के अंतःपुर में समय, असमय, काल अकाल तथा रात्रि और संध्याकाल में स्वेच्छा पूर्वक प्रवेश करते हुए किसी समय पद्मावती देवी के साथ अनुचित संबंध भी हो गया। तदनुसार पद्मावती देवी के साथ वह उदार-यथेष्ट मनुष्य संबंधी कामभोगों का सेवन करता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

इमं च णं उदायणे राया ण्हाए जाव विभूसिए जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता बहस्सइदत्तं पुरोहियं पउमावईदेवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ पासित्ता आसुरुत्ते तिवलियं भिउडिं णिडाले साहट्टु बहस्सइदत्तं पुरोहियं पुरिसेहिं गिण्हावेइ जाव एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेइ, एवं खलु गोयमा! बहस्सइदत्ते पुरोहिए पुरापोराणाणं जाव विहरइ॥१०६॥

भावार्थ - इधर किसी समय उदयन राजा स्नान आदि से निवृत्त होकर और समस्त आभूषणों से अलंकृत होकर जहां पद्मावती देवी थी वहाँ पर आया, आकर उसने पद्मावती देवी के साथ कामभोगों को भोगते हुए वृहस्पतिदत्त पुरोहित को देखा, देखकर वह क्रोध से तमतमा उठा और मस्तक पर तीन सल वाले तिउडी चढा कर वृहस्पतिदत्त पुरोहित को पुरुषों से पकड़वा कर 'यह इस प्रकार वध कर डालने योग्य है' - ऐसी राजपुरुषों को आज्ञा देता है।

हे गौतम! इस प्रकार वृहस्पतिदत्त पुरोहित पूर्वकृत दुष्ट कर्मों के फल को प्रत्यक्ष रूप से भोगता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने वृहस्पतिदत्त के पूर्व भवों का वर्णन करते हुए अंत में कहा है कि - 'हे गौतम! यह वृहस्पतिदत्त पुरोहित अपने किये हुए दुष्कर्मों का ही विपाक-फल भुगत रहा है।' तात्पर्य यह है कि यह पूर्व जन्म में महान् हिंसक था और इस जन्म में महान् व्यभिचारी तथा विश्वासघाती था। इन्हीं पापकर्मों का उसे यह दण्ड मिल रहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् के मुख से इस प्रकार का भाव पूर्ण उत्तर सुनने के पश्चात् गौतम स्वामी के मन में जो जिज्ञासा उत्पन्न हुई, अब सूत्रकार उसका वर्णन करते हैं -

भविष्य-पृच्छा

बहस्सइदत्ते णं भंते! दारए इओ कालगए समाणे कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! बहस्सइदत्ते णं दारए पुरोहिए चोसट्ठिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलीभिण्णे कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए०, संसारो तहेव० पुढवी, तओ हत्थिणाउरे णयरे मियत्ताए पच्चायाइस्सइ, से णं तत्थ वाउरिएहिं वहिए समाणे तत्थेव हत्थिणाउरे णयरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए० बोहिं० सोहम्मे कप्पे० महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ॥ णिक्खेवो॥१०७॥

॥ पंचमं अज्झयणं समत्तं॥

भावार्थ - हे भगवन्! वृहस्पतिदत्त पुरोहित यहाँ से काल करके कहां जावेगा? और कहां पर उत्पन्न होगा?

हे गौतम! वृहस्पतिदत्त पुरोहित ६४ वर्ष की परमायु को पाल कर-भोग कर आज ही दिन के तीसरे भाग में शूली से भेदन किये जाने पर कालावसर में काल करके इस रत्नप्रभा नामक पृथ्वी- नरक में उत्पन्न होगा एवं प्रथम मृगापुत्र अध्ययन की भांति संसार भ्रमण करता हुआ यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहाँ से निकल कर हस्तिनापुर नगर में मृग रूप से जन्म लेगा। वहाँ पर शिकारियों के द्वारा मारा जाने पर उसी हस्तिनापुर नगर में श्रेष्ठिकुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वहाँ सम्यक्त्व प्राप्त करेगा और काल करके सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में उत्पन्न होगा। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा तथा वहाँ संयम का पालन कर कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त करेगा। निक्षेप - उपसंहार पूर्व की भांति समझ लेना चाहिये।

विवेचन - 'वृहस्पतिदत्त पुरोहित पूर्व जन्म में कौन था? और उसने ऐसा कौन सा घोर कर्म किया था, जिसका फल उसे इस जन्म में इस प्रकार मिल रहा है?' इस जिज्ञासा का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् से समाधान हो जाने पर गौतम स्वामी को बृहस्पतिदत्त के आगामी भवों के विषय में जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई और भगवान् ने जो कुछ फरमाया उसका वर्णन प्रस्तुत सूत्र में किया गया है। उसकी आगामी भव यात्रा का वृत्तांत इस प्रकार है - हे गौतम! बृहस्पतिदत्त की पूर्ण आयु ६४ वर्ष की है। आज वह दिन के तीसरे भाग में शूली पर चढ़ाया जाएगा। उसमें मृत्यु प्राप्त होने पर वह पहली रत्नप्रभा नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा। वहाँ की भवस्थिति पूर्ण कर मृगापुत्र के समान संसार भ्रमण करेगा अर्थात् नानाविध योनियों में गमनागमन करता हुआ पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहाँ से निकल कर हस्तिनापुर में मृग की योनि में जन्म लेगा। वहाँ पर भी वागुरिकों-शिकारियों से वध को प्राप्त हो कर वह हस्तिनापुर नगर में ही एक प्रतिष्ठित कुल में उत्पन्न होगा। इस जन्म में उसे बोधिलाभ सम्यक्त्व प्राप्ति होगी और तदनन्तर मृगापुत्र की तरह उत्तरोत्तर विकास करता हुआ अंत में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर सभी दुःखों का अंत करेगा यानी मोक्ष के शाश्वत सुखों को प्राप्त करेगा।

इस अध्ययन का निक्षेप-उपसंहार इस प्रकार है - 'हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक सूत्र के पांचवें अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) अर्थ प्रतिपादन किया है। इस प्रकार मैं कहता हूँ अर्थात् मैंने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से जैसा सुना है वैसा तुम्हें सुनाया है। इसमें मेरी कोई कल्पना नहीं है।'

इस पांचवें अध्ययन की हित शिक्षाएं इस प्रकार हैं -

१. महेश्वर दत्त की तरह प्राप्त अधिकारों का दुरुपयोग करते हुए पाप कर्मों का उपार्जन नहीं करना चाहिए। क्योंकि पाप कर्मों का फल भयंकर एवं दुःखदायी होता है।

२. मित्र द्रोही - मित्र से द्रोह करने वाला, कृतघ्न - किये गये उपकार को न मानने वाला और विश्वास-घात करने वाला मर कर नरक में जाता है। महेश्वरदत्त के जीव ने बृहस्पतिदत्त पुरोहित के भव में मित्र पत्नी से अनुचित संबंध रख कर मित्र-द्रोह या विश्वास-घात करके अपने जीवन को निकृष्ट कर्मों से दूषित बनाया तो उसे इस भव और परभव में दुःखी बनना पड़ा। अतः सुज्ञजनों को ऐसे दुष्कर्मों से बचना चाहिए और अहिंसा सत्य आदि सदनुष्ठानों का सम्यक् आचरण कर अपना आत्म-कल्याण करना चाहिये।

॥ पांचवां अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णंदिवद्धणे णामं छट्ठं अज्झयणं

नंदिवर्द्धन नामक छठा अध्ययन

विपाक सूत्र के पांचवें अध्ययन में एक हिंसक एवं मैथुन सेवी व्यक्ति के जीवन का परिचय देते हुए हिंसा एवं मैथुन के दुष्परिणामों का वर्णन करने के बाद सूत्रकार इस छठे अध्ययन में एक ऐसे ही अधमाधम व्यक्ति का जीवन परिचय दे रहे हैं जो राज्यसिंहासन के लोभ में अपने पूज्य पिता को मारने का निंदनीय षड्यंत्र रचता है। इस अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते!......छट्ठस्स उक्खेवो एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं महुरा णामं णयरी, भंडीरे उज्जाणे, सुदंसणे जक्खे, सिरिदामे राया, बंधुसिरी भारिया पुत्ते णंदिवद्धणे णा० कुमारे अहीण जाव जुवराया। तस्स णं सिरिदामस्स सुबंधू णामं अमच्चे होत्था सामदंड०। तस्स णं सुबंधुस्स अमच्चस्स बहुमित्तपुत्ते णामं दारए होत्था अहीण०। तस्स णं सिरिदामस्स रण्णो चित्ते णामं अलंकारिए होत्था, सिरिदामस्स रण्णो चित्तं बहुविहं अलंकारियकम्मं करेमाणे सव्वट्ठाणेसु य सव्वभूमियासु य दिण्णवियारे यावि होत्था।।१०८।।

कठिन शब्दार्थ - अलंकारिए - अलंकारिक-नाई, **अलंकारियकम्मं** - अलंकारिक कर्म-हजामत, **दिण्णवियारे** - दत्तविचार-अप्रतिषिद्ध गमनागमन करने वाला।

भावार्थ - छठे अध्ययन के उत्क्षेप-प्रस्तावना की कल्पना पूर्व की भांति कर लेनी चाहिये। इस प्रकार निश्चय ही हे जम्बू! उस काल तथा उस समय में मथुरा नाम की नगरी थी। वहां भण्डीर नाम का उद्यान था। उसमें सुदर्शन नामक यक्ष का यक्षायतन था। वहां श्रीदाम नामक राजा राज्य करता था। उसकी बंधुश्री नाम की रानी थी। उनका सर्वांग संपूर्ण और परम सुंदर युवराज पद से अलंकृत नन्दीवर्धन नाम का पुत्र था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीदाम राजा का साम, दाम, दण्ड, भेद नीति में निपुण सुबंधु नाम का एक मंत्री था। उस अमात्य-मंत्री का बहुमित्रापुत्र नामक एक बालक था जो कि सर्वांग सम्पन्न और रूपवान् था। उस श्रीदाम नरेश का चित्र नामक एक अलंकारिक-नाई था। वह राजा का अनेकविध आश्चर्यजनक अलंकारिक कर्म-क्षौरकर्म-हजामत करता हुआ राजाज्ञा से सर्व स्थानों में, सर्व भूमिकाओं में तथा अन्तःपुर में प्रतिबंध रहित गमनागमन करने वाला था।

विवेचन - छठे अध्ययन की प्रस्तावना इस प्रकार है - 'हे भगवन्! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक सूत्र के पांचवें अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) भाव फरमाया है तो हे भगवन्! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के छठे अध्ययन का क्या अर्थ प्रतिपादन किया है।'

जंबू स्वामी के इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी ने जो कुछ कहना प्रारंभ किया उसी को सूत्रकार ने 'एवं खलू जंबू..इत्यादि पदों द्वारा अभिव्यक्त किया है जो भावार्थ से स्पष्ट है।

गौतम स्वामी की जिज्ञासा

तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे परिसा णिग्गया रायावि णिग्गओ जाव परिसा पडिगया।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जाव रायमग्गमोगाढे तहेव हत्थी आसे पुरिसे पासइ, तेसिं च णं पुरिसाणं मज्झगयं एगं पुरिसं पासइ जाव णरणारीसंपरिवुडं।

तए णं तं पुरिसं रायपुरिसा चच्चरंसि तत्तंसि अयोमयंसि समजोइभूयंसि सीहासणंसि णिवेसावेंति, तयाणंतरं च णं पुरिसाणं मज्झगयं बहुविहं अयकलसेहिं तत्तेहिं समजोइभूएहिं अप्पेगइया तंबभरिएहिं अप्पेगइया तउयभरिएहिं अप्पेगइया सीसगभरिएहिं अप्पेगइया कलकलभरिएहिं अप्पेगइया खारतेल्लभरिएहिं महया-महया रायाभिसेएणं अभिसिंचति तयाणंतरं च णं तत्तं अयोमयं समजोइभूयं अयोमयसंडासएणं गहाय हारं पिणद्धंति ॥१०९॥

कठिन शब्दार्थ - **अयोमयंसि** - अयोमय-लोहमय, **समजोइभूयंसि** - अग्नि के समान देदीप्यमान-अग्नि जैसा लाल, **णिसावेंति** - बैठा देते हैं, **तत्तेहिं** - तप्त-तपे हुए, **अयकलसेहिं**-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोह कलशों से, **तंबभरिएहिं** - ताम्र से परिपूर्ण, **तउयभरिएहिं** - त्रपु-रांगा से परिपूर्ण, **सीसगभरिएहिं** - सीसक पूर्ण, **कलकलभरिएहिं** - चूर्णक आदि से मिश्रित जल से परिपूर्ण अथवा कलकल शब्द करते हुए गर्म पानी से परिपूर्ण, **खारतेल्लभरिएहिं** - क्षारयुक्त तैल से परिपूर्ण, **संडासएणं** - संडासी से, **पिणद्धंति** - पहनाते हैं।

भावार्थ - उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का मथुरा नगरी के बाहर भंडीर उद्यान में पधारना हुआ। परिषद् (जनता) तथा राजा प्रभु के दर्शनार्थ नगर से निकले यावत् वापिस चले गये।

उस काल तथा उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के प्रधान शिष्य गौतमस्वामी यावत् राजमार्ग में पधारे। वहां उन्होंने हाथियों, घोड़ों और पुरुषों को तथा उन पुरुषों के मध्यगत यावत् नरनारियों से घिरे हुए एक पुरुष को देखा।

तदनन्तर राजपुरुष उस पुरुष को चत्वर अर्थात् जहां अनेक मार्ग मिलते हों ऐसे स्थान पर अग्नि के समान तप्त लोहमय सिंहासन पर बैठा देते हैं। तत्पश्चात् पुरुषों के मध्यगत उस पुरुष को अनेक तपे हुए लोह कलशों से जो कि अग्नि के समान देदीप्यमान है तथा कितनेक ताम्र से परिपूर्ण, त्रपु (रांगा) से पूर्ण, सीसकपूर्ण और चूर्णक आदि से मिश्रित जल से परिपूर्ण अथवा कलकल शब्द करते हुए गर्म पानी से परिपूर्ण, क्षार युक्त तैल से परिपूर्ण तप्तलोह कलशों के द्वारा महान् राज्याभिषेक से अभिषिक्त करते हैं तदनन्तर अग्नि के समान देद्रीप्यमान तप्त लोहमय हार को लोहमय संडासी ग्रहण करके पहनाते हैं।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पधारने से लेकर गौतमस्वामी के नगरी में जाने और वहां के राजमार्ग में हाथी, अश्व आदि तथा नरनारियों से घिरे हुए पुरुष को देखने आदि के विषय में वर्णन किया गया है जो प्रथम अध्ययन के समान पूर्ववत् समझ लेना चाहिये। जो विशेषता है वह इस प्रकार है -

मथुरा नगरी के राजमार्ग में उस पुरुष को श्रीदाम नरेश के अनुचर एक चत्वर में ले जाकर अग्नि के समान लालवर्ण के तपे हुए एक लोहे के सिंहासन पर बैठा देते हैं और अग्नि के समान तपे हुए लोहे के कलशों में पिघला हुआ तांबा, सीसा और चूर्णादि मिश्रित संतप्त जल एवं संतप्त क्षारयुक्त तैल आदि को भरकर उनसे उस पुरुष का अभिषेक करते हैं यानी उस पर गिराते हैं तथा अग्नि के समान तपे हुए हार आदि पहनाते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् का समाधान

तयाणंतरं च णं अद्धहारं जाव पट्टं मउडं चिंता तहेव जाव वागरेइ-एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहेवासे सीहपुरे णामं णयरे होत्था रिद्ध०।

तत्थ णं सीहपुरे णयरे सीहरहे णामं राया होत्था। तस्स णं सीहरहस्स रण्णो दुज्जोहणे णामं चारगपालए होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स इमेयारूवे चारगभंडे होत्था बहवे अयकुंडीओ अप्पेगइयाओ तंबभरियाओ अप्पेगइयाओ तउयभरियाओ अप्पेगइयाओ सीसग-भरियाओ अप्पेगइया कलकलभरियाओ अप्पेगइयाओ खारतेल्लभरियाओ अगणिकायंसि अद्दहियाओ चिट्ठंति॥११०॥

कठिन शब्दार्थ - अद्धहारं - अर्द्धहार को, **पट्टं** - मस्तक पर बांधने का पट्ट-वस्त्र अथवा मस्तक का भूषण विशेष, **मउडं** - मुकुट को, **वागरेइ** - प्रतिपादन करते हैं, **चारगपाले**- चारक पाल अर्थात् कारागाररक्षक-जेलर, **तंबभरियाओ** - ताम्र से भरी हुई, **अद्दहियाओ** - स्थापित की हुई।

भावार्थ - तदनन्तर अर्द्धहार को यावत् मस्तक पर बांधने का पट्ट-वस्त्र अथवा मस्तक का भूषण विशेष और मुकुट को पहनाते हैं। यह देख गौतमस्वामी को विचार उत्पन्न हुआ यावत् गौतमस्वामी उस पुरुष के पूर्वजन्म संबंधी वृत्तांत को भगवान् से पूछते हैं और भगवान् उसके उत्तर में इस प्रकार प्रतिपादन करते हैं -

हे गौतम! उस काल तथा उस समय में इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारत वर्ष में सिंहपुर नामक एक ऋद्धि समृद्धि से युक्त नगर था। वहां सिंहरथ राजा राज्य करता था। उसके दुर्योधन नामक एक चारकपाल (कारागृहरक्षक-जेलर) था जो कि अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद-कठिनाई से प्रसन्न होने वाला था। उस दुर्योधन चारकपाल के इस प्रकार चारक भाण्ड-कारागार संबंधी उपकरण थे। अनेक लोहमय कुंडियाँ थीं जिनमें से कितनीक ताम्र से भरी हुई थीं, कितनीक त्रपु से परिपूर्ण थीं, कई एक सीसक से पूर्ण, कितनीक चूर्णकादि मिश्रित जल से अथवा उबलते हुए उष्ण जल से भरी हुई थीं, कितनीक क्षारयुक्त तैल से परिपूर्ण थीं जो कि आग पर स्थापित की हुई रहती थीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुर्योधन के उपकरण

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे उट्टियाओ अप्पेगइयाओ आसमुत्तभरियाओ अप्पेगइयाओ हत्थिमुत्तभरियाओ अप्पेगइयाओ गोमुत्त-भरियाओ अप्पेगइयाओ महिसमुत्तभरियाओ अप्पेगइयाओ उट्टमुत्तभरियाओ अप्पेगइयाओ अयमुत्तभरियाओ अप्पेगइयाओ एल(य)मुत्तभरियाओ बहु-पडिपुण्णाओ चिट्ठंति।

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे हत्थंदुयाण य पायंदुयाण य हडीण य णियलाण य संकलाण य पुंजा य णिगरा य संणिक्खित्ता चिट्ठंति ॥१११॥

कठिन शब्दार्थ - **उट्टियाओ** - ऊंट के पृष्ठ भाग के समान बड़े-बड़े बर्तन-मटके, **आसमुत्तभरियाओ** - घोड़ों के मूत्र से भरे हुए, **गोमुत्तभरियाओ** - गोमूत्र से भरे हुए, **अजमुत्तभरियाओ** - अजो-बकरों के मूत्र से भरे हुए, **एलमुत्तभरियाओ** - भेड़ों के मूत्र से भरे हुए, **हत्थंदुयाण** - हस्तान्दुक-हाथ बांधने के लिये काष्ठ निर्मित बंधन विशेष, **पायंदुयाण** - पादान्दुक, **हडीण** - हडि-काठ की बेड़ी, **णियलाण** - निगड-पांव में डालने की लोहमय बेड़ी, **संकलाण** - श्रृंखला-सांकल, **पुंजा** - पुंज-शिखर युक्त राशि, **णिगरा** - शिखर रहित राशि, **संणिक्खित्ता** - एकत्रित किये हुए।

भावार्थ - दुर्योधन नामक उस चारकपाल-जेलर के पास अनेक ऊंटों के पृष्ठ भाग के समान बड़े बड़े बर्तन (मटके) थे उनमें से कितनेक अश्वमूत्र से भरे हुए थे, कितनेक हस्तिमूत्र से भरे हुए थे, कितनेक उष्ट्रमूत्र से, कितनेक गोमूत्र से, कितनेक महिषमूत्र से, कितनेक अजमूत्र से और कितनेक भेड़ों के मूत्र से भरे हुए थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के अनेक हस्तान्दुक-हाथ में बांधने का काष्ठ निर्मित बन्धन विशेष, पादान्दुक-पांव में बांधने का काष्ठ निर्मित बंधन विशेष, हडि-काठ की बेड़ी, निगड-लोहे की बेड़ी और श्रृंखला-लोहे की जंजीर के पुंज (शिखरयुक्त राशि) तथा निकर (शिखर रहित ढेर) लगाये हुए रक्खे थे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे वेणुलयाण य वेत्तलयाण य चिंचालयाण य छियाण य कसाण य वायरासीण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति, तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे सिलाण य लउडाण य मोग्गराण य कणंगराण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति।

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे तंता(तंती)ण य वरत्ताण य वागरज्जूण य वालयसुत्तरज्जूण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति। तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे असिपत्ताण य करपत्ताण य खुरपत्ताण य कलंबचीरपत्ताण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति।

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे लोहखीलाण य कडसक्कराण य चम्मपट्टाण य अल्लप(ट्टा)ल्लाण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति।

तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे सूईण य डंभणाण य कोट्टिल्लाण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति। तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स बहवे पच्छा(सत्था)ण य पिप्पलाण य कुहाडाण य णहच्छेयणाण य दब्भतिणाण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति॥११२॥

कठिन शब्दार्थ - वेणुलयाण - वेणुलता-बांस के चाबुक से, **वेत्तलयाण** - वेत्रलता-बेंत के चाबुकों से, **चिंचालयाण** - इमली वृक्ष के चाबुकों से, **छियाण** - चिक्कण चर्म के कोडे से, **कसाण** - चर्म युक्त चाबुक, **वायरासीण** - वल्करश्मि अर्थात् वृक्षों की त्वचा से निर्मित चाबुक, **सिलाण** - शिलाओं, **लउडाण** - लकड़ियों, **मोग्गराण** - मुद्गरों, **कणंगराण**- कनंगरों-जल में चलने वाले जहाज आदि को स्थिर करने वाले शस्त्र विशेषों के, **तंतीण** - तंत्रियों-चमड़े की डोरियों, **वरत्ताण** - एक प्रकार की रस्सियों, **वागरज्जूण** - वल्करज्जुओं-वृक्षों की त्वचा से निर्मित रस्सियों, **वालयसुत्तरज्जूण** - केशों से निर्मित रज्जुओं, सूत की रस्सियों के, **असिपत्ताण**- कृपाणों, **करपत्ताण** - आरों, **खुरपत्ताण** - क्षुरको-उस्तरों, **कलम्बचीरपत्ताण** - कलम्बचीर पत्र नामक शस्त्र विशेषों के, **लोहखीलाण** - लोहे के कीलों, **कडसक्कराण** - बांस की शलाकाओं-सलाइयों, **चम्मपट्टाण** - चर्मपट्टों-चमड़े के पट्टों,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अलपट्टाण - अलपट्टों अर्थात् **बिच्छू की पूंछ** के आकार जैसे शस्त्र विशेषों के, **सूइण** - सुइयों के, **डंभणाण** - दम्भनों अर्थात् अग्नि में तपा कर जिन से शरीर में दाग दिया जाता है-चिह्न किया जाता है, इस प्रकार की लोहमय शलाकाओं के, **कोट्टिल्लाण** - कौटिल्यों-लघु मुद्गर विशेषों के, **सत्थाण** - शस्त्र विशेषों के, **पिप्पलाण** - पिप्पलों-छोटे छोटे छुरों, **कुहाडाण** - कुहारों-कुल्हाडों, **णहछेयणाण** - नखछेदकों, **दब्भाण** - दभ-डाभों अथवा दर्भ के अग्रभाग की भांति तीक्ष्ण हथियारों के।

भावार्थ - इस दुर्योधन नामक उस चारकपाल के पास अनेक बांस के चाबुकों, बेंत के चाबुकों, इमली के चाबुकों, कोमल चर्म के चाबुकों, सामान्य चाबुकों (कोडाओं) और वल्कल रश्मियों-वृक्षों की त्वचा से निर्मित चाबुकों के पुंज-शिखर युक्त ढेर तथा निकर-शिखर रहित ढेर लगाये हुए रक्खे थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के पास अनेक शिलाओं, लकड़ियों, मुद्गरों और कनंगरों के पुंज और निकर रक्खे हुए थे।

उस दुर्योधन के पास अनेकविध चमड़े की रस्सियों, सामान्य रस्सियों, वल्कल रज्जुओं (वृक्षों की त्वचा-छाल से निर्मित रज्जुओं) केश रज्जुओं और सूत्र की रज्जुओं के पुंज और निकर रखे हुए थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के पास असिपत्र-कृपाण, कर पत्र-आरा, क्षुरपत्र (उस्तरा) और कदम्बचीरपत्र (शस्त्र विशेष) के पुंज और निकर रखे हुए थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के पास अनेकविध लोहकील, वंशशलाका, चर्मपट्ट और अलपट्ट के पुंज और निकर रखे हुए थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के पास अनेक सूइयों, दंभनों और लघु मुद्गरों के पुंज और निकर रखे हुए थे।

उस दुर्योधन चारकपाल के पास अनेक प्रकार शस्त्र पिप्पल (लघु छूरे) कुठार, नखछेदक और दर्भ-डाभ के पुंज और निकर रखे हुए थे।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में चारकपाल दुर्योधन के कारागार संबंधी उपकरण-सामग्री का वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुर्योधन के दुष्कृत्य

तए णं से दुज्जोहणे चारगपालए सीहरहस्स रण्णो बहवे चोरे य पारदारिए य गंठिभेए य रायावयारी य अणधारए य बालघायए य विसंभघायए य जूयगरे य संडपट्टे य पुरिसेहिं गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता उत्ताणए पाडेइ, पाडेत्ता लोहदंडेणं मुहं विहाडेइ विहाडेत्ता अप्पेगइए तत्ततंबं पज्जेइ अप्पेगइए तउयं पज्जेइ अप्पेगइए सीसगं पज्जेइ अप्पेगइए कलकलं पज्जेइ अप्पेगइए खारतेल्लं पज्जेइ अप्पेगइयाणं तेणं चेव अभिसेयगं करेइ।

अप्पेगइए उत्ताणए पाडेइ पाडेत्ता आसमुत्तं पज्जेइ अप्पेगइए हत्थिमुत्तं पज्जेइ जाव एलमुत्तं पज्जेइ, अप्पेगइए हेट्ठामुहे पाडेइ, छडछडस्स वम्मावेइ वम्मावेत्ता अप्पेगइयाणं तेणं चेव ओवीलं दलयइ, अप्पेगइए हत्थं-दुयाइं बंधावेइ अप्पेगइए पायंदुए बंधावेइ, अप्पेगइए हडिबंधणं करेइ अप्पेगइए णियडबंधणं करेइ अप्पेगइए संकलबंधणं करेइ, अप्पेगइए संकोडियमोडियए करेइ अप्पेगइए हत्थच्छिण्णए करेइ जाव सत्थोवाडिए करेइ, अप्पेगइए वेणुलयाहि य जाव वायरासीहि य हणावेइ,

अप्पेगइए उत्ताणए कारवेइ कारवेत्ता उरे सिलं दलावेइ, दलावेत्ता तओ लउडं छुहावेइ छुहावेत्ता पुरिसेहिं उक्कंपावेइ, अप्पेगइए तंतीहि य जाव सुत्तरज्जूहि य हत्थेसु य पाएसु य बंधावेइ, अगडंसि उच्चूलवालगं पज्जेइ, अप्पेगइए असिपत्तेहि य जाव कलंबचीरपत्तेहि य पच्छावेइ पच्छावेत्ता खारतेल्लेणं अब्भंगावेइ॥११३॥

कठिन शब्दार्थ - **पारदारिए** - परस्त्री लंपटों को, **गंठिभेए** - गांठ कतरों की, **रायावयारी**- राजा के अपकारियों-शत्रुओं को, **अणधारए** - ऋणधारकों, **बालघायए** - बाल घातियों-बालकों की हत्या करने वालों को, **विसंभघायए** - विश्वासघातकों, **जूयगरे** - जुआरियों को, **संडपट्टे** - धूर्तों को, **उत्ताणए** - ऊर्ध्वमुख-सीधा, **विहाडेइ** - खुलवाता है, **पज्जेइ** - पिलाता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, **हेट्ठामुहे** - अधोमुख, **छडछडस्स** - छड़ छड़ शब्द पूर्वक, **वम्मावेइ** - वमन कराता है, ओवीलं - पीड़ा, **हत्थंदुयाइं** - हस्तान्दुकों से, **संकोडियमोडियए** - संकोचन और मरोटन करता है, **संकलबंधणे**- सांकलों से बांधता है, **सत्थोप्फाडिए** - शस्त्रों से उत्पाटित-विदारित, **अगडंसि** - अवट-कूप में, **अब्भंगावेइ** - मर्दन कराता है।

भावार्थ - तदनन्तर वह दुर्योधन नामक चारकपाल (जेलर) सिंहरथ राजा के अनेक चोर, पारदारिक, ग्रन्थिभेदक, राजापकारी, ऋणधारक, बालघाती, विश्वासघाती, जुआरी और धूर्त पुरुषों को राजपुरुषों के द्वारा पकड़वा कर ऊर्ध्वमुख (सीधा) गिराता है, गिरा कर लोहदंड से मुख खोलता है, मुख खोल कर कितनेक को तप्त तांबा पिलाता है, कितनेक को त्रपु, सीसक, चूर्णादि मिश्रित जल अथवा कलकल करता हुआ उष्ण जल और क्षारयुक्त तैल पिलाता है तथा कितनों का उन्हीं से अभिषेक कराता है।

कितनों को ऊर्ध्वमुख गिरा कर उन्हें अश्वमूत्र, हस्तिमूत्र यावत् भेडों का मूत्र पिलाता है। कितनों को अधोमुख गिरा कर छलछल शब्द पूर्वक वमन कराता है तथा कितनों को उसी के द्वारा पीड़ा देता है। कितनों को हस्तान्दुकों, पादान्दुकों, हडियों तथा निगडों के बंधनों से युक्त कराता है। कितनों के शरीर को सिकोड़ता और मरोड़ता है। कितनों को सांकलों से बांधता है तथा कितनों का हस्तच्छेदन यावत् शस्त्रों से उत्पाटन कराता है अर्थात् शस्त्रों से शरीरावयवों को काटता है। कितनों को वेणुलताओं-बैंत की छड़ियों यावत् वल्करश्मियों-वृक्षत्वचा के चाबुकों से पिटवाता है।

कितनों को ऊर्ध्वमुख करवा कर छाती पर शिला धरवाता है और धरवा कर लक्कड रखवाता है, रखवा कर राजपुरुषों द्वारा उत्कंपन करवाता है। कितनों को चर्म की रस्सियों के द्वारा यावत् सूत्र रज्जुओं से हाथों और पैरों को बंधवाता है, बंधवा कर कूप में उल्टा लटकाता है, लटका कर गोते खिलाता है तथा कितनों का असिपत्रों-तलवारों से यावत् कलंबचीरपत्रों से छेदन कराता है और उस पर क्षारयुक्त तैल की मालिश कराता है।

नरक में उत्पत्ति

अप्पेगइए णिलाडेसु य अवदूसु य कोप्परेसु य जाणूसु य खलुएसु य लोहकीलए य कडसक्काराओ य दवावेइ अलिए भंजावेइ। अप्पेगइए सूईओ य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डंभणाणि य हत्थंगुलियासु य पायंगुलियासु य कोट्टिल्लएहिं आउडावेइ आउडावेत्ता भूमिं कंडूयावेइ। अप्पेगइए सत्थेहि य जाव णहच्छेयणेहि य अंगं पच्छावेइ दब्भेहि य कुसेहि य ओल्लबद्धेहि य वेढावेत्ता वेढावेइ आयवंसि दलयइ दलइत्ता सुक्के समाणे चडचडस्स उप्पाडेइ।

तए णं से दुज्जोहणे चारगपालए एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एगतीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमठिइएसु णेरइत्ताए उववण्णे॥११४॥

कठिन शब्दार्थ - **णिलाडेसु** - मस्तकों में, **अवदूसु** - अवटुयों-कंठमणियों-घंडियों में, **कोप्परेसु**- कूर्परों-कोहनियों में, **जाणूसु** - जानुयों में, **खलुएसु**-गुल्फों-गिट्टों में, **कडसक्काराओ**- बांस की शलाकाओं को, **दवावेइ** - दिलवाता है-ठुकवाता है, **अलए** - बिंच्छु के कांटों को, **भजावेइ**- शरीर में प्रविष्ट कराता है, **आउडावेइ** - प्रविष्ट कराता है, **कंडूयावेइ**-खुदवाता है, **उल्लचम्मेहि**- आर्द्र चर्मों से, **वेढावेइ** - बंधवाता है, **आयवंसि** - आतप-धूप में, **चडचडस्स**- चड़चड़ शब्द पूर्वक।

भावार्थ - कितनों के मस्तकों, अवटुयों (कंठमणियों, घंडियों) जानुयों और गुल्फों में लोहकीलों तथा वंशशलाकाओं को ठुकवाता है तथा वृश्चिककण्टकों-बिच्छू के कांटों को शरीर में प्रविष्ट कराता है। कितनों की हाथों की अंगुलियों में, पैरों की अंगुलियों में मुद्‌गरों के द्वारा सूइयें और दंभनों को प्रविष्ट कराता है तथा भूमि को खुदवाता है। कितनों का शस्त्रों यावत् नख- च्छेदनकों से अंग को छिलवाता है और दर्भों (मूल सहित कुशाओं) कुशाओं-मूल रहित कुशाओं से, आर्द्र चर्मों से बंधवाता है, बंधवा कर धूप में डलवाता है, धूप में डलवा कर सूखने पर चड़चड़ शब्दपूर्वक उनका उत्पाटन कराता है।

तदनन्तर वह दुर्योधन चारकपाल इन्हीं निर्दयतापूर्ण प्रवृत्तियों को अपना कर्म बनाये हुए, इन्हीं में प्रधानता लिये हुए, इन्हीं को अपनी विद्या-विज्ञान बनाये हुए तथा इन्हीं दूषित प्रवृत्तियों को अपना सर्वोत्तम आचरण बनाये हुए अत्यधिक पाप कर्मों का उपार्जन करके ३१ सौ वर्ष की परमायु को भोग कर कालमास में काल करके छठी नरक में उत्कृष्ट २२ सागरोपम की स्थिति वाली नैरयिक के रूप में उत्पन्न हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में दुर्योधन जेलर के पाप पूर्ण कृत्यों का वर्णन कर उससे होने वाले कर्म बंध का फल बतलाया गया है। महाराजा सिंहरथ के राज्य में जो लोग चोरी करते, दूसरों की स्त्रियों का अपहरण करते, लोगों की गांठ कतर कर धन चुराते, राज्य को हानि पहुँचाने का यत्न करते तथा बाल हत्या और विश्वासघात करते उनको दुर्योधन क्रूरता एवं कठोरता पूर्वक दण्ड देता था। दुर्योधन के सम्मुख अपराधी के अपराध और उसके दण्ड का कोई मापदण्ड नहीं था। अपने विवेक शून्य अमर्यादित आचरण से काल करके दुर्योधन छठी नरक में २२ सागरोपम की स्थिति वाला नैरयिक बना और उसे नारकीय भीषण दुःखों को सहन करना पड़ा।

नंदिषेण के रूप में जन्म

से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव महुराए णयरीए सिरिदामस्स रण्णो बंधुसिरीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं बंधुसिरी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं जाव दारगं पयाया। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णिव्वत्ते बारसाहे इमं एयारूवं णामधेज्जं करेंति होउ णं अम्हं दारगे णंदिसेणे णामेणं। तए णं से णंदिसेणे कुमारे पंचधाईपरिवुडे जाव परिवड्ढइ। तए णं से णंदिसेणे कुमारे उम्मुक्कबालभावे जाव विहरइ जोव्व० जुवराया जाए यावि होत्था।

तए णं से णंदिसेणे कुमारे रज्जे य जाव अंतेउरे य मुच्छिए इच्छइ सिरिदामं रायं जीवियाओ ववरोवित्तए सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए। तए णं से णंदिसेणे कुमारे सिरिदामस्स रण्णो बहूणि अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणए विहरइ।।११५।।

कठिन शब्दार्थ - **अंतराणि** - अन्तर-अवसर, **छिद्दाणि** - छिद्र अर्थात् जिस समय पारिवारिक व्यक्ति अल्प हों, **विवराणि** - विवर-जब कोई भी पास न हो।

भावार्थ -तदनन्तर वह दुर्योधन चारकपाल का जीव नरक से निकल कर इसी मथुरा नगरी में श्रीदाम राजा की बंधुश्री देवी की कुक्षि में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। तब लगभग ९ मास परिपूर्ण होने पर बंधुश्री ने बालक को जन्म दिया। तदनन्तर बारहवें दिन माता-पिता ने उत्पन्न हुए बालक का नाम 'नन्दिषेण' रखा। तदनन्तर पांच धायमाताओं के द्वारा सुरक्षित बाल नन्दिषेण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वृद्धि को प्राप्त होने लगा तथा जब वह बाल भाव को त्याग कर युवावस्था को प्राप्त हुआ तब इसके पिता ने इसको यावत् युवराज पद प्रदान कर दिया।

तत्पश्चात् राज्य और अन्तःपुर में अत्यंत आसक्त नन्दिषेण कुमार श्रीदाम राजा को मार कर उसके स्थान में स्वयं मंत्री आदि के साथ राज्यश्री का संवर्धन करने तथा प्रजा का पालन पोषण करने की इच्छा करने लगा। तदनन्तर वह नंदिषेण कुमार श्रीदामराजा के अनेक अन्तर, छिद्र तथा विवर की प्रतीक्षा करता हुआ विचरण करने लगा।

नन्दिषेण का षड्यंत्र

तए णं से णंदिसेणे कुमारे सिरिदामस्स रण्णो अंतरं अलभमाणे अण्णया कयाइ चित्तं अलंकारियं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-तुम्हे णं देवाणुप्पिया! सिरिदामस्स रण्णो सव्वट्ठाणेसु य सव्वभूमियासु य अंतेउरे य दिण्णवियारे सिरिदामस्स रण्णो अभिक्खणं अभिक्खणं अलंकारियं कम्मं करेमाणे विहरसि तं णं तुमं देवाणुप्पिया! सिरिदामस्स रण्णो अलंकारियं कम्मं करेमाणे गीवाए खुरं णिवेसेहि तो णं अहं तुम्हं अद्धरज्जयं करिस्सामि तुमं अम्हेहिं सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्ससि।

तए णं से चित्ते अलंकारिए णंदिसेणस्स कुमारस्स वयणं एयमट्ठं पडिसुणेइ। तए णं तस्स चित्तस्स अलंकारियस्स इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था-जइ णं मम सिरिदामे राया एयमट्ठं आगमेइ तए णं मम ण णज्जइ केणइ असुभेणं कुमारणेणं मारिस्सइत्तिकट्टु भीए तत्थे तसिए उव्विग्गे संजायभए जेणेव सिरिदामे राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिरिदामं रायं रहस्सियगं करयल० एवं वयासी-एवं खलु सामी! णंदिसेणे कुमारे रज्जे य जाव मुच्छिए० इच्छइ तुब्भे जीवियाओ ववरोवित्ता सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए॥११६॥

कठिन शब्दार्थ - **अंतरं** - मारने के अवसर को, **अलभमाणे** - प्राप्त न करता हुआ, **खुरं** - क्षुर-उस्तरे को, **णिवेसेहि** - प्रविष्ट कर देना।

भावार्थ - तदनन्तर श्रीदाम नरेश के मारने का अवसर प्राप्त न होने से नन्दिषेण कुमार ने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किसी अन्य समय चित्र नामक नाई को बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे भद्र! तुम श्रीदाम राजा के सर्व स्थानों, सर्व भूमिकाओं तथा अंतःपुर में स्वेच्छा पूर्वक आ जा सकते हो और श्रीदाम नरेश का बार-बार अलंकारिक कर्म करते रहते हो अतः हे देवानुप्रिय! यदि तुम श्रीदाम नरेश का अलंकारिक कर्म करते हुए उनकी ग्रीवा-गरदन में उस्तरा घोंप दोगे अर्थात् राजा का वध कर दोगे तो मैं तुम्हें आधा राज्य दे दूंगा। तदनंतर तुम हमारे साथ उदार प्रधान कामभोगों को भोगते हुए विचरण करोगे।

तदनन्तर वह चित्र नामक अलंकारिक (नाई) नन्दिषेणकुमार के उक्त अर्थ वाले वचन को स्वीकार करता है परन्तु कुछ समय पश्चात् चित्र नामक अलंकारिक के मन में इस प्रकार के विचार उत्पन्न हुए कि यदि किसी प्रकार से श्रीदाम नरेश को इस बात का पता चल गया तो न मालूम वह मुझे किस कुमौत से मारेगा - इस प्रकार के विचारों से भयभीत, त्रस्त, उद्विग्न एवं संजातभय हुआ वह जहाँ पर श्रीदाम नरेश थे वहाँ आता है और आकर एकांत में राजा को हाथ जोड़ कर यावत् मस्तक पर दसों नखों वाली अंजलि करके विनयपूर्वक इस प्रकार कहा - 'हे स्वामिन्! निश्चय ही नन्दिषेणकुमार राज्य में यावत् मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और अध्युपपन्न हुआ आपको जीवन से व्यपरोपित कर अर्थात् मार कर स्वयं ही राज्यश्री-राज्य लक्ष्मी का संवर्धन कराता हुआ, पालन करता हुआ विहरण करने की इच्छा रखता है।

षड्यंत्र विफल और सजा

तए णं से सिरिदामे राया चित्तस्स अलंकारियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु णंदिसेणं कुमारं पुरिसेहिं सद्धिं गिण्हावेइ, गिण्हावेत्ता एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेइ। तं एवं खलु गोयमा! णंदिसेणे (पुत्ते) जाव विहरइ॥११७॥

भावार्थ - तदनन्तर वह श्रीदाम राजा चित्र अलंकारिक की इस बात को सुन कर एवं अवधारण-निश्चित कर क्रोध से लाल पीला होता हुआ यावत् मस्तक में तिउड़ी चढ़ा कर यानी अत्यंत क्रोधित होता हुआ नन्दिषेण कुमार को पुरुषों के द्वारा पकड़वा लेता है, पकड़वा कर इस (पूर्वोक्त) विधान से वह मारा जाये, ऐसी राजपुरुषों को आज्ञा देता है। इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! नंदिषेण पुत्र इस प्रकार अपने किए हुए अशुभ कर्मों के फल को भोग रहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - नंदिषेण ने स्वयं राज्य सिंहासन पर आरूढ होने के लिये अपने पिता श्रीदाम को मरवाने के लिए किस प्रकार षड्यंत्र रचा और उसमें विफल होने से उस को किस प्रकार दण्ड भुगतना पड़ा, उसका वर्णन सूत्रकार ने प्रस्तुत सूत्र में किया है।

"जिसका पुण्य प्रबल है उसे हानि पहुँचाने वाला संसार में कोई नहीं है" - उपरोक्त वर्णन से इस कथन की पुष्टि हो जाती है। पुण्य के प्रभाव से चित्त नाई स्वयं भी बचा और उसने महाराजा श्रीदाम को भी बचाया। नंदिषेण को अपने दुष्कृत्यों का फल भोगना पड़ा।

इस प्रकार भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी द्वारा मथुरा के राजमार्ग में जिस वध्य व्यक्ति को राजपुरुषों के द्वारा भयंकर दुर्दशा को प्राप्त होते हुए देखा था उस व्यक्ति के पूर्वभव सहित वर्तमान भव का परिचय दिया जो कि अपने परम उपकारी पिता का अकारण घात करके राजसिंहासन पर आरूढ़ होने की नीच चेष्टा कर रहा था अर्थात् जिन अधमाधम प्रवृत्तियों से यह नंदिषेण इस दयनीय दशा का अनुभव कर रहा है उसका संपूर्ण वृत्तांत सुनाते हुए गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान किया।

अब गौतम स्वामी उसके भविष्य के विषय में अपनी जिज्ञासा प्रभु के समक्ष रखते हैं -

भविष्य-पृच्छा

णंदिसेणे कुमारे इओ चुए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! णंदिसेणे कुमारे सट्ठिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए०, संसारो तहेव० तओ हत्थिणाउरे णयरे मच्छत्ताए उववज्जिहिइ। से णं तत्थ मच्छिएहिं वहिए समाणे तत्थेव सेट्ठिकुले....बोहिं.....सोहम्मे कप्पे......महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करेहिइ॥ णिक्खेवो॥११८॥

॥ छट्ठमं अज्झयणं समत्तं॥

भावार्थ - हे भगवन्! नंदिषेणकुमार यहाँ से कालमास में काल करके कहाँ जायेगा? कहाँ पर उत्पन्न होगा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वह नंदिषेणकुमार साठ वर्ष की परम आयु को भोग कर मृत्यु के समय में काल करके इस रत्नप्रभा पृथ्वी-नरक में उत्पन्न होगा तथा शेष संसार भ्रमण पूर्ववत् समझ लेना चाहिये यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहाँ से निकल कर हस्तिनापुर में मत्स्य रूप में उत्पन्न होगा। वहाँ पर मात्स्यिकों - मत्स्यों का वध करने वालों से वध को प्राप्त हो कर वहीं पर श्रेष्ठीकुल में उत्पन्न होगा। वहाँ पर बोधिलाभ अर्थात् सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा तथा सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में उत्पन्न होगा। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा जहाँ संयम पालन कर सिद्ध होगा, बुद्ध होगा, मुक्त होगा, परिनिर्वाण पद को प्राप्त करेगा, सर्व प्रकार के दुःखों का अंत करेगा। निक्षेप-उपसंहार पूर्ववत् जान लेना चाहिये। इस प्रकार छठा अध्ययन संपूर्ण हुआ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गौतम स्वामी की जिज्ञासा का समाधान करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने नंदिषेण के आगामी भवों का वर्णन करते हुए यावत् मोक्ष प्राप्ति का कथन किया है। छठे अध्ययन का निक्षेप (उपसंहार) इस प्रकार है -

श्री सुधर्मा स्वामी, श्री जम्बूस्वामी से फरमाते हैं कि - 'हे जंबू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के छठे अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) अर्थ प्रतिपादन किया है। मैंने जो कुछ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से सुना है उसी के अनुसार तुम्हें कहा है। इसमें मेरी अपनी कोई कल्पना नहीं है।'

इस छठे अध्ययन से निम्न शिक्षाएं ग्रहण की जा सकती है -

१. दुर्योधन जेलर की भांति प्राप्त अधिकारों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिये।

२. नंदिषेण की तरह किसी भी प्रकार के प्रलोभन में आकर अपने कर्त्तव्यों से विमुख नहीं बनना चाहिये।

इस प्रकार आत्मा का पतन करने वाले अधमाधम कृत्यों से बचकर आत्मोत्थान के कार्यों में प्रवृत्त होने का ही मानव का लक्ष्य होना चाहिये तभी वह मोक्ष सुखों को प्राप्त कर सकता है।

॥ षष्ठ अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उंबरदत्ते णामं सत्तमं अज्झयणं

उम्बरदत्त नामक सातवां अध्ययन

षष्ठ अध्ययन में नन्दिषेण का जीवन वृत्तांत देने के बाद सूत्रकार इस सातवें अध्ययन में भी एक ऐसे ही व्यक्ति का जीवन वर्णन कर रहे हैं जो मांसाहारी था और मांसाहार जैसी अधम पाप पूर्ण वृत्तियों का उपदेश करने वाला था। प्रस्तुत अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते!.....सत्तमस्स उक्खेवो एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं पाडलिसंडे णयरे, वणसंडे णामं उज्जाणे, ऊंबरदत्तो जक्खो। तत्थ णं पाडलिसंडे णयरे सिद्धत्थे राया। तत्थ णं पाडलिसंडे णयरे सागरदत्ते सत्थवाहे होत्था अड्ढे० गंगदत्ता भारिया। तस्स णं सागरदत्तस्स पुत्ते गंगदत्ताए भारियाए अत्तए उंबरदत्ते णामं दारए होत्था अहीण जाव पंचिंदियसरीरे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं० समोसरणं जाव परिसा पडिगया॥११६॥

भावार्थ - सप्तम अध्ययन का उत्क्षेप-प्रस्तावना पूर्ववत् समझ लेना चाहिये।

इस प्रकार निश्चय ही हे जम्बू! उस काल और उस समय में पाटलिषंड नाम का एक नगर था। वहाँ वनखण्ड नामक उद्यान था। उस उद्यान में उम्बरदत्त नामक यक्ष का यक्षायतन था। उस नगर में सिद्धार्थ नामक राजा राज्य करते थे। उस पाटलिषंड नगर में सागरदत्त नाम का एक सार्थवाह था जो धनाढ्य यावत् प्रतिष्ठित था। उसकी गंगादत्ता नाम की भार्या थी। उस सागरदत्त सार्थवाह का पुत्र गंगादत्ता भार्या का आत्मज उम्बरदत्त नामक बालक था जो कि अन्यून एवं निर्दोष पंचेन्द्रिय शरीर वाला था।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वनखंड नामक उद्यान में पधारे। परिषद् और राजा उनके दर्शनार्थ नगर से निकले और धर्मोपदेश सुन कर सभी वापस चले गये।

विवेचन - सुधर्मा स्वामी के मुखारविन्द से छठे अध्ययन का वर्णन सुनने के बाद जंबूस्वामी पुनः पूछते हैं कि -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'हे भगवन्! यदि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के छठे अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है तो हे भगवन्! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःख विपाक सूत्र के सातवें अध्ययन का क्या भाव प्रतिपादन किया है?' इस प्रकार सातवें अध्ययन की अर्थ श्रवण की जिज्ञासा को ही सूत्रकार ने **"सत्तमस्स उक्खेवओ"** पदों से अभिव्यक्त किया है।

आर्य जम्बूस्वामी के उक्त प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी ने सातवें अध्ययन का जो वर्णन प्रारम्भ किया है वह मूलार्थ से स्पष्ट है। प्रस्तुत सूत्र में सातवें अध्ययन के प्रधान नायकों का नाम निर्देश किया है। नगर, उद्यान, यक्षायतन, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पदार्पण, उनके दर्शनार्थ परिषद् और राजा का जाना तथा धर्म श्रवण कर परिषद् का लौटना आदि वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिये।

दृश्य पुरुष की दयनीय दशा

तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे तहेव जेणेव पाडलिसंडे णयरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पाडलिसंडं णयरं पुरत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता तत्थ णं पासइ एगं पुरिसं कच्छुल्लं कोढियं दाओयरियं (दोउयरियं) भगंदरियं अरिसिल्लं कासिल्लं सासिल्लं सोगिलं सूयमुहं सूयहत्थं सूयपायं सडियहत्थंगुलियं सडियपायंगुलियं सडिकण्णणासियं रसियाए य पूएण य थिविथिविंतवण-मुहकिमिउत्तुयंतपगलंतपूयरुहिरं लालापगलंतकण्णणासं अभिक्खणं-अभिक्खणं पूयकवले य रुहिरकवले य किमियकवले य वममाणं कट्ठाइं कलुणाइं वीसराइं कूयमाणं मच्छियाचडगरपहकरेणं अण्णिज्जमाणमग्गं फुट्टहडाहडसीसं दंडिखंडवसणं खंडमल्लगखंडघडहत्थगयं गेहे गेहे देहंबलियाए वित्तिं कप्पेमाणं पासइ, तया भगवं गोयमे! उच्चणीय जाव अडइ अहापज्जत्तं० गिण्हइ पाडलिसंडाओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव समणे भगवं० भत्तपाणं आलोएइ भत्तपाणं पडिदंसेइ समणेणं........अब्भणुण्णाए समाणे जाव बिलमिव पण्णगभूए अप्पाणेणं आहारमाहारेइ, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ॥१२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **कच्छुल्लं** - कंडू-खुजली के रोग से युक्त, **कोढियं** - कुष्ठी-कुष्ठ रोग वाला, **दाओयरियं** - जलोदर रोग वाला, **भगंदरियं** - भगंदर का रोगी, **अरिसिल्लं** - अर्शस-बवासीर का रोगी, **कासिल्लं** - कास का रोगी, **सासिल्लं** - श्वास रोग वाला, **सोगिलं** - शोथ युक्त-शोथ-सूजन का रोगी, **सूयमुहं** - शूनमुख-जिसके मुख्य पर सोजा पड़ा हुआ हो, **सूयहत्थं** - सूजे हुए हाथों वाला, **सूयपायं** - सूजे हुए पांव वाला, **सडियहत्थंगुलियं** - सड़ी हुई हाथों की अंगुलियों वाला, **सडियकण्णणासियं** - जिसके कान और नासिका सड़ गये हैं, **रसियाए** - रसिका-व्रणों से निकलते हुए सफेद पानी से, **पूएण** - पीब (पीप) से, **थिविथिविंतं**- थिव थिव शब्द से युक्त, **वणमुहकिमिउत्तुयंतपगलंत पूयरुहिरं** - कृमियों से उत्तुद्यमान अत्यंत पीड़ित तथा गिरते हुए पूय-पीब और रुधिर वाले व्रण मुखों से युक्त, **लालापगलंतकण्णणासं**- जिसके कान और नाक क्लेद तंतुओं-फोड़े के बहाव की तारों से गल गये हैं, **पूयकवले** - पूय-पीब के कवलों-ग्रासों का, **रुहिरकवले** - रुधिर के कवलों का, **वममाणं**- वमन करता हुआ, **कट्ठाइं** - दुःखद, **कलुणाइं** - करुणोत्पादक, **वीसराइं** - विस्वर-दीनता वाले वचन, **कूयमाणं** - बोलता हुआ, **मच्छियाचडगरपहकरेणं** - मक्षिकाओं के विस्तृत समूह से-मक्षिकाओं के आधिक्य से, **अण्णिज्जमाणमग्गं** - अन्वीय मानमार्ग-उस के पीछे और आगे मक्षिकाओं के झुण्ड के झुण्ड लगे हुए थे, **फुट्टहडाहडसीसं** - स्फुटितात्यर्थशीर्ष-जिसके सिर के केश नितान्त बिखरे हुए थे, **दंडिखंडवसणं** - दंडिखंडवसनं- टाकियों वाले वस्त्रों को धारण किये हुए, **खंडमल्लयखंडघडहत्थगयं** - जिसके हाथ में भिक्षा पात्र तथा जल पात्र थे, **देहंबलियाए**- भिक्षावृत्ति से, **वित्तिं** - आजीविका, **उच्चणीयमज्झिमकुलाइं** - ऊंच (धनी) नीच (निर्धन) तथा मध्यम कुलों (घरों) से, **अहापज्जत्तं** - यथा पर्याप्त अर्थात् यथेष्ट आहार, **अब्भणुण्णाए समाणे** - आज्ञा को प्राप्त किये हुए, **अप्पाणेणं** - आत्मा से, **बिलमिव पण्णगभूए** - बिल में जाते हुए पन्नक-सर्प की भांति, **आहारमाहारेइ** - आहार का ग्रहण करते हैं।

भावार्थ - उस काल तथा उस समय भगवान् गौतम स्वामी बेले के पारणे के निमित्त भिक्षा के लिए पाटिलषण्ड नगर में पधारते हैं, उस पाटलिषण्ड नगर में पूर्व दिशा के द्वार से प्रवेश करते हैं। वहाँ एक पुरुष को देखते हैं जो कण्डु रोग वाला, कुष्ठ रोग वाला, जलोदर रोग वाला, भगंदर रोग वाला, अर्श-बवासीर का रोग वाला, उस को कास और श्वास तथा शोथ का रोग भी हो रहा था, उसका मुख सूजा हुआ था, हाथ और पैर फूले हुए थे, हाथ और पैर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की अंगुलिएं सड़ी हुई थीं, नाक और कान भी गले हुए थे, रसिका और पीब (पीप) से थिवथिव शब्द कर रहा था, कृमियों से उत्तुद्यमान अत्यंत पीड़ित तथा गिरते हुए पीब (पीप) और रुधिर वाले व्रण मुखों से युक्त था, उसके कान और नाक क्लेद तंतुओं से गल चुके थे बार-बार पूय कवल, रुधिर कवल तथा कृमि कवल का वमन कर रहा था और जो कष्टोत्पादक, करुणाजनक एवं दीनतापूर्ण शब्द कर रहा था। उसके पीछे मक्षिकाओं के झुण्ड के झुण्ड चले जा रहे थे, सिर के बाल अत्यंत बिखरे हुए थे, टाकियों वाले वस्त्र उसने ओढ रखे थे। भिक्षा का पात्र तथा जल का पात्र हाथ में लिए हुए घर-घर में भिक्षा वृत्ति के द्वारा अपनी आजीविका चला रहा था।

तब भगवान् गौतम स्वामी ऊंच, नीच और मध्यम घरों में भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए यथेष्ट भिक्षा लेकर पाटलिषंड नगर से निकल कर जहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विराजमान थे वहां पर आये, आकर भक्तपान की आलोचना करते हैं तथा भक्त पान को दिखलाते हैं दिखला कर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से आज्ञा प्राप्त कर बिल में प्रवेश करते हुए सर्प की तरह आहार करते हैं और संयम तथा तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में बेले के पारणे के निमित्त पाटलिषंड नगर के पूर्व द्वार से प्रविष्ट हुए गौतम स्वामी ने विभिन्न रोगों से ग्रस्त नितांत दीन हीन दशा से युक्त जिस पुरुष को देखा, उसका वर्णन किया गया है। भगवान् गौतम स्वामी द्वारा देखे हुए उस पुरुष की दयनीय दशा से पूर्व संचित अशुभ कर्मों का फल कितना भयंकर और तीव्र होता है, यह अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है।

'बिलमिव पण्णगभूए अप्पाणेणं आहारमाहारेइ' पदों की व्याख्या टीकाकार इस प्रकार करते हैं -

"आत्मनाऽऽहारमाहारयति, किं भूतः सन्नित्याह-पन्नगभूतः नागकल्पो भगवान् आहारस्य रसोपलम्भार्थमचर्वणात् कथंभूतमाहारं? बिलमिव असंस्पर्शनात् नागो हि बिलमसंस्पृशन्नात्मानं तत्र प्रवेशयति, एवं भगवानपि आहारमसंस्पृशन् रसोपलम्भादनपेक्षः सन् आहारयतीति।"

अर्थात् - जिस तरह सांप बिल में सीधा प्रवेश करता है और अपनी गरदन को इधर उधर का स्पर्श नहीं होने देता तात्पर्य यह है कि रगड़ नहीं लगाता किन्तु सीधा ही रखता है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठीक उसी तरह भगवान् गौतम भी रसलोलुपी न होने से आहार को मुख में रख कर बिना चबाए ही अंदर पेट में उतार लेते थे। सारांश यह है कि भगवान् गौतम भी बिल में प्रवेश करते हुए सर्प की भांति सीधे ही ग्रास को मुख में डाल कर बिना किसी प्रकार के चर्वण से अंदर कर लेते थे।

इस कथन से भगवान् गौतम स्वामी में रसगृद्धि के अभाव को सूचित करने के साथ उनके इन्द्रिय दमन और मनोनिग्रह को भी व्यक्त किया गया है तथा आहार का ग्रहण भी वे धर्म के साधन भूत शरीर को स्थिर रखने के निमित्त ही किया करते थे न कि रसनेन्द्रिय की तृप्ति के लिए, इस बात का भी स्पष्टीकरण उक्त कथन से भलीभांति हो जाता है।

पूर्वभव पृच्छा

तए णं से भगवं गोयमे दोच्चंपि छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ जाव पाडलिसंडं णयरं दाहिणिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पविसइ तं चेव पुरिसं पासइ कच्छुल्लं तहेव जाव संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तए णं से गोयमे तच्चंपि छट्ठक्खमणपारणगंसि तहेव जाव पच्चत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुपविसमाणे तं चेव पुरिसं कच्छुल्लं....पास० चोत्थं पि छट्ट उत्तरेणं इमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे-अहो णं इमे पुरिसे पुरापोराणाणं जाव एवं वयासी-एवं खलु अहं भंते! छट्ठक्खमणपारणगंसि जाव रीयंते जेणेव पाडलिसंडे णयरे तेणेव उवागच्छामि उवागच्छित्ता पाडलिसंडंणयरं पुरत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुपविट्ठे, तत्थ णं एगं पुरिसं पासामि कच्छुल्लं जाव कप्पेमाणं० अहं दोच्चछट्ठक्खमण पारणगंसि दाहिणिल्लेणं दुवारेणं.....तच्चछट्ठक्खमण० पच्चत्थिमेणं तहेव० अहं चोत्थछट्ठ० उत्तरदुवारेणं अणुप्पविसामि तं चेव पुरिसं पासामि कच्छुल्लं जाव वित्तिं कप्पेमा० विह० चिंता मम पुव्वभवपुच्छा० वागरेइ।।१२१।।

भावार्थ - तदनन्तर भगवान् गौतम स्वामी ने दूसरी बार बेले के पारणे के निमित्त प्रथम **प्रहर में यावत् भिक्षार्थ** गमन करते हुए पाटलिषंड नगर के दक्षिण दिशा के द्वार से प्रवेश किया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो वहाँ भी उन्होंने कंडू आदि रोगों से युक्त उसी पुरुष को देखा और वे भिक्षा लेकर वापिस आए। शेष सारा वर्णन पूर्व की भांति समझ लेना चाहिये यावत् तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं।

तदनन्तर भगवान् गौतम स्वामी तीसरी बार बेले के पारणे के निमित्त उक्त नगर में पश्चिम दिशा के द्वार से प्रवेश करते हैं तो वहाँ पर भी उसी पुरुष को देखते हैं। इसी प्रकार चौथी बार बेले के पारणे के निमित्त पाटलिषंड के उत्तरदिशा के द्वार से प्रवेश करते हैं तो वहाँ पर भी उसी पुरुष को देखते हैं देख कर उनके मन में यह संकल्प उत्पन्न हुआ कि अहो! यह पुरुष पूर्वकृत अशुभ कर्मों के कटु विपाक को भोगता हुआ कैसा दुःखपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहा है? यावत् वापिस आकर उन्होंने भगवान् महावीर स्वामी से इस प्रकार निवेदन किया -

हे भगवन्! मैंने बेले के पारणे के निमित्त यावत् पाटलिषंड नगर की ओर प्रस्थान किया और नगर के पूर्वदिशा के द्वार से प्रवेश करते हुए मैंने एक पुरुष को देखा जो कि कण्डू रोग से पीड़ित यावत् भिक्षा से आजीविका कर रहा था। फिर दूसरी बार बेले के पारणे के निमित्त भिक्षा के लिए उक्त नगर के दक्षिण दिशा के द्वार से प्रवेश किया तो वहाँ पर भी उसी पुरुष को देखा एवं तीसरी बार जब पारणे के निमित्त उस नगर के पश्चिम दिशा के द्वार से प्रवेश किया तो वहाँ पर भी उसी पुरुष को देखा और चौथी बार जब मैं बेले का पारणा लेने पाटलिषण्ड में उत्तरदिशा के द्वार से प्रविष्ट हुआ तो वहाँ पर भी कंडू रोग से युक्त यावत् भिक्षावृत्ति करते हुए उसी पुरुष को देखा, उसे देख कर मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि अहो! यह पुरुष पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मों का फल भोग रहा है आदि।

हे भगवन्! यह पुरुष पूर्वभव में कौन था? जो इस प्रकार के भीषण रोगों से आक्रान्त हुआ जीवन बिता रहा है। गौतम स्वामी के इस प्रश्न को सुनकर भगवान् महावीर स्वामी उत्तर देते हुए कहने लगे -

धन्वंतरि वैद्य की हिंसक मनोवृत्ति

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विजयपुरे णामं णयरे होत्था रिद्ध०। तत्थ णं विजयपुरे णयरे कणगरहे णामं राया होत्था। तस्स णं कणगरहस्स रण्णो धण्णंतरी णामं वेज्जे होत्था

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठंगाउव्वेयपाढए, तंजहा-कुमारभिच्चं १ सालागे २ सल्लहत्ते ३ कायतिगिच्छा ४ जंगोले ५ भूयविज्जे ६ रसायणे ७ वाजीकरणे ८ सिवहत्थे सुहहत्थे लहुहत्थे।

तए णं से धण्णंतरी वेज्जे विजयपुरे णयरे कणगरहस्स रण्णो अंतेउरे य अण्णेसिं च बहूणं राईसर जाव सत्थवाहाणं अण्णेसिं च बहूणं दुब्बलाण य गिलाणाण य वाहियाण य रोगियाण य अणाहाण य सणाहाण य समणाण य माहणाण य भिक्खगाण य करोडियाण य कप्पडियाण य आउराण य अप्पेगइयाणं मच्छमंसाइं उवदिसइ अप्पेगइयाणं कच्छभमंसाइं (उवदि०) अप्पेगइयाणं गाहमंसाइं अप्पेगइयाणं मगरमंसाइं अप्पेगइयाणं सुंसुमारमंसाइं अप्पेगइयाणं अयमंसाइं एवं एलय-रोज्झ-सूयर-मिग-ससय-गोमंस-महिसमंसाइं अप्पेगइयाणं तित्तरमंसाइं अप्पेगइयाणं वट्टक-लावक-कवोय-कुक्कुड-मयूरमंसाइं अण्णेसिं च बहूणं जलयरथलयरखहयरमाईणं मंसाइं उवदिसइ अप्पणावि य णं से धण्णंतरी वेज्जे तेहिं बहूहिं मच्छमंसेहि य जाव मयूरमंसेहि य अण्णेहि य बहूहिं जलयरथलयरखहयरमंसेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च ६ आसाएमाणे विसाएमाणे विहरइ॥१२२॥

कठिन शब्दार्थ - **वेज्जे** - वैद्य, **अट्ठंगाउव्वेयपाढए** - अष्टांग आयुर्वेद का अर्थात् आयुर्वेद के आठों अंगों का पाठक-ज्ञाता जानकार, **कुमारभिच्चं** - कौमारभृत्य-आयुर्वेद का एक अंग जिसमें कुमारों के दुग्धजन्य दोषों का उपशमन प्रधान वर्णन हो, **सालागे** - शालाक्य-आयुर्वेद का अंग जिसमें शरीर के नयन, नाक, आदि ऊर्ध्व भागों के रोगों की चिकित्सा का विशेष रूप से प्रतिपादन किया गया हो, **सल्लहत्ते** - शाल्यहत्य-आयुर्वेद का एक अंग जिसमें शल्य-कण्टक गोली आदि निकालने की विधि का वर्णन हो, **कायतिगिच्छा** - कायचिकित्सा-शरीर गत रोगों की प्रतिक्रिया-इलाज तथा उसका प्रतिपादक आयुर्वेद का एक अंग, **जंगोले** - जांगुल-आयुर्वेद का एक विभाग जिसमें विषों की चिकित्सा का विधान है, **भूयविज्जा** - भूत विद्या-आयुर्वेद का वह विभाग जिसमें भूत निग्रह का प्रतिपादन किया गया है **रसायणे** - रसायन-आयु को स्थिर करने वाली और व्याधि विनाशक औषधियों के विधान करने वाला आयुर्वेद का एक अंग, **वाजीकरणे** - वाजीकरण-बलवीर्य वर्द्धक औषधियों का विधान करने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाला आयुर्वेद का एक अंग, **सिवहत्थे** - शिवहस्त-जिसका हाथ शिव-कल्याण उत्पन्न करने वाला हो, **सुहहत्थे** - शुभहस्त-जिसका हाथ शुभ हो अथवा सुख उपजाने वाला हो, **लहुहत्थे**-लघुहस्त-जिसका हाथ कुशलता से युक्त हो, **गिलाणाण** - ग्लानों-ग्लानि प्राप्ति करने वालों, **रोगियाण**- रोगियों, **वाहियाण** - व्याधि विशेष से आक्रान्त रहने वालों, **सणाहाण** - सनाथों, **अणाहाण** - अनाथों, **करोडियाण** - करोटिक-कापालिकों-भिक्षु विशेषों, **कप्पडियाण** - कार्पटिकों-भिखमंगों अथवा कन्धाधारी भिक्षुओं, **आउराण** - आतुरों की, **मच्छमंसाइं** - मत्स्यों के मांसों का, **उवदिसइ** - उपदेश देता है, **तितिर मंसाइं** - तितरों के मांसों का, **सोल्लेहि** - पकाये हुए, **तलिएहि** - तले हुए, **भज्जिएहि** - भूने हुए।

भावार्थ - इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! उस काल और उस समय में इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के भारत वर्ष में विजयपुर नामक एक ऋद्धि समृद्धि से युक्त नगर था। उसमें कनकरथ राजा राज्य करता था। उस कनकरथ नरेश के एक धन्वन्तरि नामक वैद्य था जो अष्टांग आयुर्वेद का ज्ञाता-जानकार था। जैसे कि - १. कौमारभृत्य २. शालाक्य ३. शाल्यहत्य ४. कायचिकित्सा ५. जांगुल ६. भूतविद्या ७. रसायन और ८. वाजीकरण।

तदनन्तर वह धन्वंतरि वैद्य जो कि शिवहस्त, शुभहस्त और लघुहस्त था, विजयपुर नगर में कनकरथ राजा के अंतःपुर में रहने वाली रानी, दास तथा दासी आदि और अन्य बहुत से राजा, ईश्वर यावत् सार्थवाहों और अन्य बहुत से दुर्बल, ग्लान, रोगी, व्याधितजनों सनाथों, अनाथों तथा श्रमणों, ब्राह्मणों, भिक्षुकों, करोटकों, कार्पटिकों एवं आतुरों की चिकित्सा किया करता था उनमें से कितनों को मत्स्य मांसों के भक्षण का उपदेश देता, कितनों को कच्छुओं के मांसों का, कितनों को ग्राहों के मांसों का, कितनों को मगरों के मांसों का, कितनों को सुंसुमारों के मांसों का और कितनों को अज-बकरों के मांसों का उपदेश करता। इसी प्रकार भेड़ों, गवयों-नील गायों, शूकरों, मृगों, शशकों, गौओं और महिषों के मांसों का उपदेश करता। कितनों को तितरों के मांसों का, बटेरों, लावकों (पक्षी विशेषों) कबूतरों, कुक्कड़ों (मुर्गों) और मयूरों के मांसों का उपदेश देता तथा अन्य बहुत से जलचर, स्थलचर और खेचर आदि जीवों के मांस का उपदेश करता और स्वयं भी वह धन्वंतरि वैद्य उन अनेकविध मत्स्य मांसों यावत् मयूर मांसों तथा अन्य बहुत से जलचर, स्थलचर और खेचर जीवों के मांसों से तथा मत्स्य रसों यावत् मयूररसों से पकाये हुए, तले हुए और भूने हुए मांसों के साथ छह प्रकार की सुरा आदि मदिराओं का आस्वादन, विस्वादन आदि करता हुआ समय व्यतीत करता था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में विजयपुर नगर के नरेश कनकरथ के राजवैद्य धन्वन्तरि के आयुर्वेद संबंधी विशदज्ञान और उसकी चिकित्सा प्रणाली का वर्णन करने के बाद उसकी हिंसक मनोवृत्ति का परिचय दिया गया है।

नरक में उपपात

तए णं से धण्णंतरी वेज्जे एयकम्मे० सुबहुं पावं कम्मं समज्जिणित्ता बत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोव० उववण्णे॥१२३॥

भावार्थ - तत्पश्चात् वह धन्वंतरि वैद्य इस पापमय कर्म में निपुण, प्रधान तथा इसी को अपना विज्ञान एवं सर्वोत्तम आचरण बनाये हुए अत्यधिक पाप कर्मों का उपार्जन करके बत्तीस सौ (३२००) वर्ष की परमायु को भोग कर कालमास में काल करके छठी नरक में उत्कृष्ट २२ सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ।

विवेचन - धन्वंतरि वैद्य ने अपने हिंसा प्रधान चिकित्सा व्यवसाय में मत्स्य आदि अनेक जाति के निरपराध मूक प्राणियों के प्राणहरण का उपदेश देकर एवं उनके मांस आदि से अपने शरीर का पोषण कर जिस पाप राशि का संचय किया उसका फल नरकगति के सिवाय और क्या हो सकता है? अतः सूत्रकार ने मृत्यु के बाद उसका छठी नारकी में जाने का उल्लेख किया है। उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि मांसाहार, दुर्गतियों का मूल है।

गंगादत्ता की व्यथा

तए णं सा गंगदत्ता भारिया जाय-णिंदुया यावि होत्था जाया-जाया दारगा विणिहायमावज्जंति। तए णं तीसे गंगदत्ताए सत्थवाहीए अण्णया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीए अयं अज्झत्थिए० समुप्पण्णे-एवं खलु अहं सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं सद्धिं बहूइं वासाइं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरामि, णो चेव णं अहं दारगं वा दारियं वा पयामि॥१२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - वह गंगादत्ता भार्या जात निद्रुता (जिसके बालक जीवित नहीं रहते हों) थी। उसके बालक उत्पन्न होते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। किसी अन्य समय मध्य रात्रि में कुटुम्ब संबंधी जागरिका जागती हुई उस गंगादत्ता सार्थवाही के मन में इस प्रकार संकल्प उत्पन्न हुआ कि-मैं सागरदत्त सार्थवाह के साथ उदार-प्रधान मनुष्य संबंधी कामभोगों को भोगती हुई विचरण कर रही हूं किंतु मैंने आज दिन तक एक भी बालक अथवा बालिका को जन्म नहीं दिया अर्थात् मैंने ऐसे बालक या बालिका को जन्म नहीं दिया जो कि जीवित रह सका हो।

तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ सपुण्णाओ कयत्थाओ कयपु० कयलक्खणाओ सुलद्धे णं तासिं अम्मयाणं माणुस्सए जम्मजीवियफले जासिं मण्णे णियगकुच्छिसंभूयाइं थणदुद्धलुद्धयाइं महुरसमुल्लावगाइं मम्मणपजंपियाइं थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणयाइं मुद्धयाइं पुणो य कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊण उच्छंगणिवेसियाइं देंति समुल्लावए सुमहुरे पुणो-पुणो मंजुलप्पभणिए॥१२५॥

कठिन शब्दार्थ - **कयत्थाओ** - कृतार्थ हैं, **कयलक्खणाओ** - कृतलक्षणा हैं, **जम्मजीवियफले**- जन्म और जीवन का फल, **णियगकुच्छिसंभूयाइं** - अपनी कुक्षि-उदर से उत्पन्न हुई संतानें हैं, **थणदुद्धलुद्धयाइं** - स्तनगत दुध में लुब्ध, **महुरसमुल्लावगाइं** - जिनके संभाषण अत्यंत मधुर हैं, **मम्मणजंपियाइं** - जिनके वचन मन्मन अर्थात् अव्यक्त अर्थात् स्खलित हैं, **थणमूल (थणमूला)** - स्तन के मूल भाग से, **कक्खदेसभागं** - कक्ष (कांख) प्रदेश तक, **अभिसरमाणयाइं** - सरक रही हैं, **मुद्धयाइं** - मुग्ध-नितांत सरल, **कोमलकमलोवमेहि** - कमल के समान कोमल-सुकुमार, **उच्छंगणिवेसियाइं**- उत्संग-गोदी में स्थापित की हुई, **सुमहुरे**- सुमधुर, **मंजुलप्पभणिए** - मंजुलप्रभणित-जिनमें बोलने का प्रारंभ मंजुल-कोमल हैं, **समुल्लावए**- समुल्लापों-वचनों को।

भावार्थ - वे माताएं धन्य हैं, कृतार्थ और कृतपुण्य हैं, उन्होंने ही मनुष्य संबंधी जन्म और जीवन को सफल किया है जिनकी स्तनगत दुग्ध में लुब्ध, मधुर भाषण से युक्त, अव्यक्त अर्थात् स्खलित वचन वाली, स्तनमूल से कक्षप्रदेश तक अभिसरणशील नितान्त सरल, कमल के समान कोमल-सुकुमार हाथों से पकड़ कर अंक-गोदी में स्थापित की जाने वाली और पुनः पुनः सुमधुर कोमल प्रारंभ वाले वचनों को कहने वाली अपने पेट से उत्पन्न हुई संतानें हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहं णं अधण्णा अपुण्णा अकयपुण्णा एत्तो एगमवि ण पत्ता, तं सेयं खलु मम कल्लं जाव जलंते सागरदत्तं सत्थवाहं आपुच्छित्ता सुबहुं पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारं गहाय बहुमित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणमहिलाहिं सद्धिं पाडलिसंडाओ णयराओ पडिणिक्खमित्ता बहिया जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छित्तए तत्थ णं उंबरदत्तस्स जक्खस्स महरिहं पुप्फच्चणं करित्ता जाणुपायवडियाए ओवायइत्तए-जइ णं अहं देवाणुप्पिया! दारयं वा दारियं वा पयामि तो णं अहं तुब्भं जायं च दायं च भायं च अक्खय-णिहिं च अणुवड्ढ इस्सामि त्तिकट्टु ओवाइयं उवाइणित्तए, एवं संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सागरदत्ते सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सागरदत्तं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं सद्धिं जाव ण पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया जाव उवाइणित्तए।।१२६।।

कठिन शब्दार्थ - जायं - याग-देवपूजा, दायं - दान-देय अंश, **भागं** - भाग-लाभ का अंश, **अक्खयणिहिं** - अक्षयनिधि-देवभंडार, **अणुवड्ढइस्सामि** - वृद्धि करूंगी, **ओवाइयं** - उपयाचित-इष्ट वस्तु की, **उवाइणित्तए** - प्रार्थना करने के लिये।

भावार्थ - मैं अधन्या, अपुण्या, अकृतपुण्या हूं क्योंकि मैं इन पूर्वोक्त बाल सुलभ चेष्टाओं में से एक को भी प्राप्त नहीं कर सकी हूं। अतः मेरे लिये यही श्रेय-हितकर है कि मैं कल प्रातःकाल सूर्य के उदय होते ही सागरदत्त सार्थवाह से पूछ कर विविध प्रकार के पुष्प, वस्त्र, गंध, माला और अलंकार लेकर बहुत सी मित्रों, ज्ञातिजनों, निजकों, स्वजनों, संबंधिजनों और परिजनों की महिलाओं के साथ पाटलिषंड नगर से निकल कर बाहर उद्यान में जहां उम्बरदत्त यक्ष का यक्षायतन है वहां जाकर उम्बरदत्त यक्ष की महार्ह-बड़ों के योग्य पुष्पार्चना करके और उसके चरणों में नत मस्तक हो कर इस प्रकार याचना (प्रार्थना) करूं - 'हे देवानुप्रिय! यदि मैं एक भी जीवित रहने वाले बालक अथवा बालिका को जन्म दूं तो मैं तुम्हारे याग (देवपूजा), दान, भाग - लाभ अंश और देव भंडार में वृद्धि करूंगी।'

इस प्रकार उपयाचित-इष्ट वस्तु की प्रार्थना करने के लिये निश्चय किया, निश्चय करके प्रातःकाल सूर्य के उदित होने पर जहां पर सागरदत्त सार्थवाह था वहां पर आई, आकर सागरदत्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सार्थवाह से इस प्रकार कहने लगी-'हे स्वामिन्! मैंने तुम्हारे साथ मनुष्य संबंधी सांसारिक सुखों का उपभोग करते हुए आज तक एक भी जीवित रहने वाले बालक या बालिका को प्राप्त नहीं किया। अतः मैं चाहती हूं कि यदि आप आज्ञा दें तो मैं यावत् इष्ट वस्तु की प्राप्ति के लिये उम्बरदत्त यक्ष की प्रार्थना करूं अर्थात् मनौती मनाऊं।'

सागरदत्त का मनोरथ

तए णं से सागरदत्ते सत्थवाहे गंगदत्त भारियं एवं वयासी-ममंपि णं देवाणुप्पिए! एस चेव मणोरहे कहं णं तुमं दारगं वा दारियं वा पयाएज्जसि? गंगदत्ताए भारियाए एयमट्ठं अणुजाणइ॥१२७॥

भावार्थ - तदनन्तर, वह सागरदत्त गंगादत्ता भार्या से इस प्रकार बोला - 'हे देवानुप्रिये! मेरा भी यही मनोरथ-कामना है कि तुम किसी भी तरह जीवित रहने वाले बालक या बालिका को जन्म दो।' इतना कह कर गंगादत्ता भार्या को इस अर्थ-प्रयोजन के लिये आज्ञा दे देता है अर्थात् उसके उक्त प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गंगादत्ता भार्या के मनौती संबंधी विचारों का वर्णन किया गया है। इस कथा संदर्भ से नारी जीवन के मनोगत विचारों-भावों का परिचय दिया गया है कि संतान के लिये नारियों में कितनी उत्कंठा होती है और वे उसकी प्राप्ति के लिये कितनी आतुरा एवं प्रयत्नशीला बनती है।

गंगादत्ता की मनौती

तए णं सा गंगदत्ता भारिया सागरदत्तसत्थवाहेणं एयमट्ठं अब्भणुण्णाया समाणी सुबहुं पुप्फ जाव महिलाहिं सद्धिं सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता पाडलिसंडं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुबहुं पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारं ठवेइ ठवेत्ता पुक्खरिणिं ओगाहेइ ओगाहेत्ता जलमज्जणं करेइ करेत्ता जलकीडं करेइ करेत्ता ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता उल्लपडसाडिया पुक्खरिणीओ पच्चुत्तरइ पच्चुत्तरित्ता तं पुप्फ० गिण्हइ गिण्हित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता उंबरदत्तस्स जक्खस्स आलोए पणामं करेइ, करेत्ता लोमहत्थं परामुसइ परामुसित्ता उंबरदत्तं जक्खं लोमहत्थएणं पमज्जइ, पमज्जित्ता दगधाराए अब्भुक्खेइ, अब्भुक्खेत्ता पम्हल० गायलट्ठी ओलूहेइ, ओलूहेत्ता सेयाइं वत्थाइं परिहेइ परिहेत्ता महरिहं पुप्फारुहणं वत्थारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणं चुण्णारुहणं करेइ, करेत्ता धूवं डहइ, डहित्ता जाणुपायवडिया एवं वयइ-जइ णं अहं देवाणुप्पिया! दारगं वा दारियं वा पयामि तो णं......जाव उवाइणइ, उवाइणित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया॥१२८॥

कठिन शब्दार्थ - पुक्खरिणीए तीरे - पुष्करिणी के किनारे-तट पर, **जलमज्जणं** - जलमज्जन-जल में गोते लगाना, **जलकीडं** - जलक्रीड़ा, **उल्लपडसाडिया** - आर्द्रपट तथा शाटिका पहने हुए, **लोमहत्थएण** - लोमहस्तक से-मयूरपिच्छनिर्मित प्रमार्जिनी से, **दगधाराए** - जलधारा से, **ओलूहेइ** - पोंछती है, **सेयाइं** - श्वेत, **पुप्फारुहणं** - पुष्पारोहण-पुष्पार्पण, **वत्थारुहणं** - वस्त्रारोहण-वस्त्रार्पण, **मल्लारुहणं** - मालार्पण, **गंधारुहणं**- गंधार्पण; **चुण्णारुहणं**- चूर्ण को अर्पण।

भावार्थ - तब सागरदत्त सार्थवाह से आज्ञा मिल जाने पर वह गंगादत्ता भार्या बहुत से पुष्प, वस्त्र, गंध-सुगंधित द्रव्य, माला और अलंकार लेकर मित्रों, ज्ञातिजनों, निजकजनों, स्वजनों संबंधिजनों एवं परिजनों की महिलाओं के साथ अपने घर से निकलती है, निकल कर पाटलिषंड नगर के मध्यभाग से निकलती है निकल कर जहां पुष्करिणी-बावड़ी का तट था वहां पर आती है, आकर पुष्करिणी के किनारे पर बहुत से पुष्पों, वस्त्रों, गंधों, मालाओं और अलंकारों को रखती है और पुष्करिणी में प्रवेश करके जलमज्जन और जलक्रीड़ा करती है। स्नान किये हुए कौतुक-मस्तक पर तिलक तथा मांगलिक कृत्य करके आर्द्र पट तथा शाटिका पहने हुए वह पुष्करिणी से बाहर आती है बाहर आकर उक्त पुष्प, वस्त्र आदि सामग्री को लेकर उम्बरदत्त के यक्षायतन में पहुंचती है। यक्ष का अवलोकन कर लेने पर प्रणाम करके लोमहस्तक-मयूरपिच्छनिर्मित प्रमार्जनी से उम्बरदत्त यक्ष का प्रमार्जन करती है तत्पश्चात् जलधारा से उस यक्ष प्रतिमा को स्नान कराती है, फिर कषाय रंग वाले गेरू जैसे रंग से रंगे हुए सुगंधित एवं सरोम-कोमल वस्त्र से उसके अंगों को पोंछती है, पोंछ कर श्वेत वस्त्र पहनाती है, पहना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर महार्ह-बड़ों के योग्य पुष्पारोहण, वस्त्रारोहण, गंधारोहण, माल्यारोहण और चूर्णारोहण करती है। तत्पश्चात् धूपन लाती है और जलाकर घुटनों के बल उस यक्ष के चरणों में गिर कर इस प्रकार निवेदन करती है - 'हे देवानुप्रिय! यदि मैं एक भी जीवित रहने वाले पुत्र या पुत्री को जन्म दूं तो यावत् याचना करती है अर्थात् मन्नत मनाती है, मन्नत मना कर जिस दिशा से आई थी उसी दिशा की ओर चली गई।

गंगादत्ता का दोहद

तए णं से धण्णंतरी वेज्जे ताओ णरयाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पाडलिसंडे णयरे गंगदत्ताए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णे। तए णं तीसे गंगदत्ताए भारियाए तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए - धण्णाओ णं ताओ जाव फले जाओ णं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावेत्ता बहूहिं मित्त जाव परिवुडाओ तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ पुप्फ जाव गहाय पाडलिसंडं णयरं मज्झंमज्झेणं पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पुक्खरिणीं ओगाहेंति, ओगाहेत्ता ण्हायाओ जाव पायच्छित्ताओ तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं बहूहिं मित्तणाइ जाव सद्धिं आसाएंति दोहलं विणेंति, एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सागरदत्ते सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सागरदत्तं सत्थवाहं एवं वयासी-धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव दोहलं विणेंति तं इच्छामि णं जाव विणित्तए।।१२९।।

भावार्थ - तदनन्तर वह धन्वंतरि वैद्य का जीव नरक से निकल कर इसी पाटलिषण्ड नगर में गंगादत्ता भार्या की कुक्षि-उदर में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। लगभग तीन मास पूरे होने पर गंगादत्ता भार्या को इस प्रकार का दोहद उत्पन्न हुआ - 'वे माताएं धन्य हैं यावत् उन्होंने ही जीवन के फल को प्राप्त किया है जो विपुल अशन पानादिक तैयार कराती है, करा कर अनेक मित्र ज्ञातिजन आदि की यावत् महिलाओं से घिरी हुई उस विपुल अशनादिक चतुर्विध आहार और सुरादि पदार्थों तथा पुष्पों यावत् अलंकारों को लेकर पाटलिषंड नगर के मध्य भाग में से निकलती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, निकल कर जहां पुष्करिणी है वहां आती है आकर पुष्करिणी में प्रवेश करती है प्रवेश करके स्नान की हुई यावत् मांगलिक कार्य की हुई उस विपुल अशनादिक का अनेक मित्र ज्ञातिजन आदि की महिलाओं के साथ आस्वादन आदि करती है और अपने दोहद को पूर्ण करती है।' इस प्रकार विचार करके प्रातःकाल यावत् देदीप्यमान सूर्य के उदित हो जाने पर जहां सागरदत्त सार्थवाह था वहां पर आती है और आकर सागरदत्त को इस प्रकार कहने लगी-'वे माताएं धन्य हैं यावत् दोहद की पूर्ति करती है इसलिए मैं चाहती हूं यावत् अपने दोहद की पूर्ति करना।'

दोहद पूर्ति

तए णं से सागरदत्ते सत्थवाहे गंगदत्ताए भारियाए एयमट्ठं अणुजाणइ। तए णं सा गंगदत्ता सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं अब्भणुण्णाया समाणी विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ सुबहुं पुप्फ० परिगिण्हावेइ परिगिण्हावेत्ता बहूहिं जाव ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय-मंगल-पायच्छित्ता जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खाययणे जाव धूवं डहेइ० जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ। तए णं ताओ मित्त जाव महिलाओ गंगदत्तं सत्थवाहिं सव्वालंकारविभूसियं करेंति। तए णं सा गंगदत्ता भारिया ताहिं मित्तणाईहिं अण्णाहिं बहूहिं णगरमहिलाहिं सद्धिं तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६......दोहलं विणेइ विणेत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तए णं सा गंगदत्ता सत्थवाही पसत्थ दोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ॥१३०॥

भावार्थ - तब सागरदत्त सार्थवाह इस बात के लिये अर्थात् दोहद की पूर्ति के लिए गंगादत्ता को आज्ञा दे देता है। सागरदत्त सेठ से आज्ञा प्राप्त कर गंगादत्ता भार्या विपुल मात्रा में अशनादिक चतुर्विध आहार की तैयारी करवाती है। तैयार किये हुए आहार आदि, सुरा आदि छह प्रकार के मद्यों तथा बहुत से पुष्प आदि सामग्री लेकर मित्र ज्ञातिजन आदि की महिलाओं तथा अन्य बहुत-सी महिलाओं को साथ लेकर यावत् स्नान एवं अशुभ स्वप्नादि के फल को नाश करने के लिये मस्तक पर तिलक एवं अन्य मांगलिक अनुष्ठान करके उम्बरदत्त यक्ष के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यक्षायतन में आती है। यावत् धूप जलाती है। तदनन्तर जहां पुष्करिणी है वहां जाती है। वहां पर साथ में आने वाली मित्र ज्ञाति आदि की महिलाएं तथा अन्य महिलाएं गंगादत्ता सार्थवाही को विभिन्न अलंकारों से विभूषित करती है तत्पश्चात् उन सभी महिलाओं के साथ उस विपुल अशनादिक तथा सुरा आदि का आस्वादन आदि करती हुई गंगादत्ता अपने दोहद की पूर्ति करती है। इस प्रकार दोहद को पूर्ण कर जिस दिशा से आई थी उसी दिशा में चली गई। तदनन्तर संपूर्ण दोहद यावत् संपन्न दोहद वाली वह गंगादत्ता उस गर्भ को सुखपूर्वक धारण करती हुई समय व्यतीत करने लगी।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में गंगादत्ता के गर्भ में धन्वंतरि वैद्य के जीव का आना, दोहद की उत्पत्ति और उसकी पूर्ति आदि का वर्णन किया गया है। अब सूत्रकार गर्भस्थ जीव के जन्म का वर्णन करते हैं -

उम्बरदत्त नामकरण

तए णं सा गंगदत्ता भारिया णवण्हं मासाणं जाव पयाया ठिइवडिया जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए उंबरदत्तस्स जक्खस्स ओवाइयलद्धए तं होउ णं दारए उंबरदत्ते णामेणं। तए णं से उंबरदत्ते दारए पंचधाईपरिग्गहिए....परिवड्ढइ॥१३१॥

कठिन शब्दार्थ-ठिइवडिया - स्थिति पतिता-पुत्र जन्म संबंधी उत्सव विशेष, **ओवाइयलद्धए**- मन्नत मानने से उपलब्ध हुआ।

भावार्थ - तदनन्तर लगभग नवमास परिपूर्ण होने पर गंगादत्ता ने एक बालक को जन्म दिया। माता पिता ने स्थितिपतिता नामक उत्सव विशेष मनाया और बालक उम्बरदत्त यक्ष की मन्नत मानने से प्राप्त हुआ है इसलिए उन्होंने उसका उम्बरदत्त नाम रखा अर्थात् माता पिता ने उसका उम्बरदत्त नाम स्थापित किया। तत्पश्चात् वह उम्बरदत्त बालक पांच धायमाताओं से सुरक्षित होकर वृद्धि को प्राप्त करने लगा।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में बालक उम्बरदत्त के जन्म एवं नामकरण का उल्लेख किया गया है।

शंका - सागरदत्त सार्थवाह और गंगादत्ता ने अपने बालक का नाम उम्बरदत्त इसलिये रखा कि वह उम्बरदत्त यक्ष के अनुग्रह से अर्थात् उसकी मनौती करने से प्राप्त हुआ था। यहां यह शंका होती है कर्मसिद्धांत से जो नारी किसी भी जीवित संतान को जन्म नहीं दे सकती थी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

फिर वह एक यक्ष की पूजा करने या मनौती मानने मात्र से किसी जीवित संतति को कैसे जन्म दे सकती है? क्या ऐसा मानने से कर्मसिद्धांत बाधित नहीं होता है?

समाधान - आगमानुसार जीव को जो कुछ भी प्राप्त होता है वह अपने पूर्वोपार्जित कर्मों के कारण ही होता है। कर्महीन प्राणी (पुण्यहीन) लाख प्रयत्न करने पर भी मन इच्छित वस्तु को प्राप्त नहीं कर सकता है जबकि कर्म के सहयोगी होने, शुभ कर्मों के उदय आने पर वह वस्तु उसे अनायास ही प्राप्त हो जाती है। अतः गंगादत्ता सेठानी को जो जीवित पुत्र की प्राप्ति हुई है वह उसके किसी पूर्व संचित पुण्य कर्म का ही परिणाम है फिर भले ही वह कर्म अनेकानेक संतानों के विनष्ट हो जाने के बाद उदय में आया हो। अर्थात् गंगादत्ता को जो जीवित पुत्र की उपलब्धि हुई वह उसके किसी पूर्व संचित पुण्यविशेष का ही फल समझना चाहिये। ऐसा मानने पर कर्म सिद्धांत में कोई बाधा नहीं आती है।

जो लोग पुत्रादि की प्राप्ति के लिये देवों की पूजा करते हैं, मन्नत मानते हैं और पूर्वोपार्जित किसी पुण्यकर्म के सहयोगी होने के कारण पुत्रादि की प्राप्ति हो जाने पर उसे देव प्रदत्त ही मान लेते हैं अर्थात् पुत्रादि की प्राप्ति में देव को उपादान कारण मान बैठते हैं वे नितान्त भूल करते हैं क्योंकि यदि पूर्वोपार्जित कर्म विद्यमान है तो उसमें देव सहायक बन सकता है किंतु यदि कर्म सहयोगी नहीं है तो एक बार नहीं अनेकों बार देवपूजा की जावे या देव की एक नहीं लाखों मनौतियाँ मान ली जाएं तो भी देव कुछ नहीं कर सकता। सारांश यह है कि किसी भी कार्य की सिद्धि में देव निमित्त कारण भले ही हो जाय परंतु वह उपादान कारण तो तीन काल में भी नहीं बन सकता। अतः देव को उपादान कारण समझने का विश्वास आगम सम्मत नहीं होने से हेय एवं त्याज्य है।

शंका - किसी भी कार्य की सिद्धि में देव उपादान कारण नहीं बन सकता किंतु निमित्त कारण तो बन सकता है फिर देव पूजन का निषेध क्यों किया जाता है?

समाधान - संसार में दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं - १. संसारमूलक और २. मोक्षमूलक। संसारमूलक प्रवृत्ति सांसारिक जीवन की पोषिका होती है जबकि मोक्षमूलक प्रवृत्ति आत्मा को उसके वास्तविक रूप में लाने अर्थात् आत्मा को परमात्मा बनाने का कारण बनती है।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। वह आध्यात्मिकता की प्राप्ति के लिए सर्वतोमुखी प्रेरणा करता है। आध्यात्मिक जीवन का अंतिम लक्ष्य परम साध्य निर्वाण पद को उपलब्ध करना होता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। सांसारिक जीवन उसके लिये बंधन रूप होता है इसीलिये वह उसे अपनी प्रगति में बाधक समझता है। आध्यात्मिकता के पथ का पथिक साधक व्यक्ति आत्मा को परमात्मा बनाने में सहायक अर्थात् मोक्षमूलक प्रवृत्तियों को ही अपनाता है और सांसारिकता की पोषक प्रवृत्तियों में उसे कोई लगाव नहीं होता इसीलिये वह उससे दूर रहता है। देवपूजा सांसारिकता का पोषण करती है या करने में सहायक होती है इसीलिये जैन धर्म में देवपूजा का निषेध पाया जाता है।

उम्बरदत्त रोगग्रस्त

तए णं से सागरदत्ते सत्थवाहे जहा विजयमित्ते जाव काल० गंगदत्ता वि.....उंबरदत्ते णिच्छूढे जहा उज्झियए।

तए णं तस्स उंबरदत्तस्स दारगस्स अण्णया कयाइ सरीरगंसि जमगसमगमेव सोलसरोगायंका पाउब्भूया, तंजहा-सासे कासे जाव कोढे। तए णं से उंबरदत्ते दारए सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे० जाव विहरइ।

एवं खलु गोयमा! उंबरदत्ते दारए पुरापोराणाणं जाव पच्चणुभवमाणे विहरइ॥१३२॥

भावार्थ - तदनन्तर वह सागरदत्त सार्थवाह जिस प्रकार विजयमित्र का वर्णन किया है उसी प्रकार काल धर्म से संयुक्त हुआ अर्थात् मर गया। गंगादत्ता भी काल धर्म को प्राप्त हुई। उम्बरदत्त भी घर से बाहिर निकाल दिया गया। जैसे उज्झितक कुमार का दूसरे अध्ययन में वर्णन किया गया है उसी प्रकार यहाँ भी समझ लेना चाहिये।

तदनन्तर किसी समय उस उम्बरदत्त के शरीर में एक ही समय में सोलह प्रकार के रोगातंक-भयंकर रोग उत्पन्न हो गये। जैसे कि - १. श्वास २. खांसी यावत् कुष्ठ रोग। इन सोलह प्रकार के रोगांतकों से अभिभूत-व्याप्त हुआ उम्बरदत्त यावत् हस्त आदि के सड़ जाने से दुःखपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहा है।

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! उम्बरदत्त बालक पूर्वकृत पुरातन यावत् कर्मों को भोगता हुआ समय बीता रहा है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में उम्बरदत्त के माता-पिता का कालधर्म को प्राप्त होना, उसको

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

घर से निकालना एवं पूर्वकृत अशुभ कर्मों के उदय से शरीर में भयंकर रोगों का उत्पन्न होना और उम्बरदत्त के दुःखमय जीवन का वर्णन किया गया है। अब सूत्रकार उम्बरदत्त के भविष्य के जीवन विषयक गौतम स्वामी की पृच्छा का वर्णन करते हैं -

भविष्य-पृच्छा

तए णं से उंबरदत्ते कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! उंबरदत्ते दारए बावत्तरिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइएसु णेरइयत्ताए उववज्जिहिइ, संसारो तहेव जाव पुढवी, तओ हत्थिणाउरे णयरे कुक्कुडत्ताए पच्चायाहिइ गोट्ठिवहिए तत्थेव हत्थिणाउरे णयरे सेट्ठिकुलंसि उववज्जिहिइ बोहिं.....सोहम्मे कप्पे.....महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ॥णिक्खेवो॥१३३॥

॥ सत्तमं अज्झयणं समत्तं॥

भावार्थ - तदनंतर वह उम्बरदत्त बालक यहाँ से कालमास में काल करके कहां जायेगा? कहाँ उत्पन्न होगा?

हे गौतम! उम्बरदत्त बालक ७२ वर्षों की परम आयु पाल कर कालमास में काल करके इसी रत्नप्रभा पृथ्वी-नरक में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा। वह पहले की भांति संसार परिभ्रमण करता हुआ यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहाँ से निकल कर हस्तिनापुर नगर में कुर्कुट के रूप में उत्पन्न होगा। वहाँ जातमात्र अर्थात् उत्पन्न हुआ ही गौष्ठिक-दुराचारी मंडल के द्वारा वध को प्राप्त होता हुआ वही हस्तिनापुर में एक श्रेष्ठिकुल में उत्पन्न होगा वहाँ सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा और वहाँ से मर कर सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में उत्पन्न होगा। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा वहाँ अनगार धर्म को प्राप्त कर यथाविधि संयम की आराधना करता हुआ कर्मों का क्षय करके सिद्ध पद-मोक्ष को प्राप्त करेगा, केवलज्ञान द्वारा समस्त पदार्थों को जानेगा, समस्त कर्मों से रहित हो जावेगा, सकल कर्मजन्य संताप से विमुक्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होगा, सब दुःखों का अंत करेगा। निक्षेप-उपसंहार की कल्पना पूर्ववत् कर लेनी चाहिए। सप्तम अध्ययन समाप्त हुआ।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में उम्बरदत्त के भविष्य का कथन किया है। उम्बरदत्त अपने कृत कर्मों को क्षय कर अंत में मोक्ष पद को प्राप्त करेगा।

जंबू स्वामी की जिज्ञासा पर भगवान् सुधर्मा स्वामी ने सातवें अध्ययन का उपरोक्त वर्णन सुनाते हुए उपसंहार में कहा कि - 'हे जम्बू! इस प्रकार यावत् मोक्ष संप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है। जैसा मैंने भगवान् से सुना है वैसा ही तुम्हें सुना दिया है। इसमें मेरी कोई कल्पना नहीं है।' इन्हीं भावों को सूत्रकार ने **'णिक्खेवो'** पद से व्यक्त किया है।

इस अध्ययन की प्रमुख शिक्षा यही है कि जीव अपने कृत कर्मों के अनुसार सुख दुःख पाता है अतः कर्म बांधने के पूर्व विचार करें। प्रत्येक प्राणी को कार्य करते समय अपने भावी हित और अहित का अवश्य विचार कर लेना चाहिये।

यदि धन्वंतरि वैद्य रोगियों को मांसाहार का उपदेश देने से पूर्व तथा स्वयं मांसाहार एवं मदिरापान करने से पहले विचार कर इस दुष्कर्म से बच जाता तो उसे दुर्गतियों में नाना प्रकार के दुःखों को नहीं भोगना पड़ता। अंत में धर्म की शरण ही उसे इन दुःखों से मुक्त बनने में सहयोगी बनी और वह मोक्ष पद का अधिकारी बना।

॥ सप्तम अध्ययन समाप्त॥

❖ ❖ ❖ ❖

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोरियदत्ते णामं अट्ठमं अज्झयणं

शौरिकदत्त नामक आठवां अध्ययन

सातवें अध्ययन में उम्बरदत्त का वर्णन करने के बाद आगमकार प्रस्तुत आठवें अध्ययन में शौरिकदत्त नामक एक ऐसे व्यक्ति के जीवन का वर्णन करते हैं जो अपनी अज्ञानावस्था के कारण एक रसोइए के भव में अनेक मूक प्राणियों की हिंसा करके और मांसाहार एवं मदिरापान जैसी निंदक प्रवृत्तियों को अपना कर पापकर्म का बंध करता है तथा उसके फलस्वरूप दुर्गतियों के अनेक दुःखों को भोगता है। इस अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते!....अट्ठमस्स उक्खेवो एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं सोरियपुरं णयरं सोरियवडिंसगं उज्जाणं सोरियो जक्खो सोरियदत्ते राया। तस्स णं सोरियपुरस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं एगे मच्छंधपाडए होत्था। तत्थ णं समुद्दत्ते णामं मच्छंधे परिवसइ-अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे। तस्स णं समुद्दत्तस्स समुद्दत्ता णामं भारिया होत्था अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरा। तस्स णं समुद्दत्तस्स मच्छंधस्स पुत्ते समुद्दत्ताए भारिआ अत्तए सोरियदत्ते णामं दारए होत्था अहीण०॥१३४॥

कठिन शब्दार्थ - मच्छंधपाडए - मत्स्य बंधपाटक-मच्छीमारों का मोहल्ला, **मच्छंधे** - मस्त्य बंध-मच्छीमार।

भावार्थ - आठवें अध्ययन का उत्क्षेप-प्रस्तावना पूर्ववत् समझ लेनी चाहिये। हे जम्बू! उस काल और उस समय में शौरिकपुर नाम का एक नगर था वहाँ शौरिकावतंसक नाम का उद्यान था, उसमें शौरिक नामक यक्ष का यक्षायतन था। वहाँ शोरिकदत्त नामक राजा राज्य करता था। शौरिकपुर नगर के बाहर ईशान कोण में एक मत्स्यबंधो-मच्छीमारों का पाटक-मोहल्ला था। वहाँ समुद्रदत्त नामक एक मच्छीमार रहता था जो कि अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद-बड़ी कठिनाई से प्रसन्न होने वाला था। उस समुद्रदत्त के समुद्रदत्ता नामक भार्या थी जो कि अन्यून एवं निर्दोष पांच इन्द्रियों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से युक्त शरीर वाली थी। उस समुद्रदत्त मत्स्यबंध का पुत्र एवं समुद्रदत्ता भार्या का आत्मज शौरिकदत्त नामक एक बालक था जो कि सर्वांग संपूर्ण एवं सुंदर था।

विवेचन - आर्य सुधर्मा स्वामी के प्रधान शिष्य श्री जम्बू स्वामी ने दुःखविपाक के सातवें अध्ययन का भाव सुन कर विनम्रता पूर्वक इस प्रकार निवेदन किया कि - हे भगवन्! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें अध्ययन का जो भाव फरमाया वो मैंने आपके श्रीमुख से सुना। अब मुझे आठवें अध्ययन का भाव जानने की उत्कंठा जगी है अतः आप कृपा कर दुःखविपाक सूत्र का आठवां अध्ययन फरमाने की कृपा करें। इन्हीं भावों को सूत्रकार ने **'अट्ठमस्स उक्खेवो'** पद से व्यक्त किया है।

जंबू स्वामी के निवेदन पर आर्य सुधर्मा स्वामी ने आठवें अध्ययन का प्रारंभ करते हुए जो भाव फरमाये, वे भावार्थ से स्पष्ट है। अब सूत्रकार भगवान् महावीर स्वामी के शौरिकपुर नगर में पधारने और भगवान् गौतम स्वामी द्वारा देखे गये करुणाजनक दृश्य आदि का वर्णन करते हैं-

पूर्वभव-पृच्छा

तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं० जेट्ठे सीसे जाव सोरियपुरे णयरे उच्चणीयमज्झिमाइं कुलाइं० अहापज्जत्तं समुदाणं गहाय सोरियपुराओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता तस्स मच्छंध पाडगस्स अदूरसामंतेणं वीईवयमाणे महइ-महालियाए मणुस्सपरिसाए मज्झगयं पासइ एगं पुरिसं सुक्कं भुक्खं णिम्मंसं अट्ठिचम्मावणद्धं किडिकिडियाभूयं णीलसाडगणियत्थं मच्छकंटएणं गलए अणुलग्गेणं कट्ठाइं कलुणाइं वीसराइं उक्कूवमाणं अभिक्खणं अभिक्खणं पूयकवले य रुहिरकवले य किमिकवले य वम्ममाणं पासइ, पासित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए ५ पुरा-पोराणाणं जाव विहरइ, एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता जेणेव समणे भगवं.....जाव पुव्वभवपुच्छा जाव वागरणं-एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे णंदिपुरे णामं णयरे होत्था, मित्ते राया। तस्स णं मित्तस्स रण्णो सिरीए णामं महाणसिए होत्था, अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे।।१३५।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **अहापज्जत्तं** - यथेष्ट, **समुदाणं** - समुदान-गृह समुदाय से प्राप्त भिक्षा, **अट्ठिचम्मावणद्धं** - अस्थि चर्मावनद्धं-अतिकृश होने के कारण जिसका चर्म-चमड़ा हड्डियों से संलग्न है-चिपटा हुआ है, **किडिकिडियाभूयं** - किटिकिटिकाभूतं-जो किटिकिटिका शब्द कर रहा है, **णीलसाडगणियत्थं** - नील शाटक निवसित-नीलशाटक धोती धारण किये हुए, **मच्छकंटएणं** - मत्स्य कंटक के, **गलए** - गल-कण्ठ में, **अणुलग्गएणं** - लगे होने के कारण, **कट्ठाइं** - कष्टात्मक, **कलुणाइं** - करुणाजनक, **वीसराइं** - विस्वर-दीनता पूर्ण वचन, **उक्कूवमाणं** - बोलते हुए को, **पूयकवले** - पीब के कवलों-कुल्लों का, **रुहिरकवले** - रुधिर कवलों, **किमिकवले** - कृमिकवलों-कीड़ों के कुल्लों का, **वममाणं** - वमन करते हुए को, **महाणसिए** - महानसिक-रसोइया।

भावार्थ - उस काल और उस समय शौरिकावतंसक नामक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पदार्पण हुआ यावत् परिषद् और राजा वापिस चले गये। उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ शिष्य गौतम स्वामी यावत् शौरिकपुर नगर में उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में भ्रमण करते हुए यथेष्ट आहार लेकर नगर से बाहर निकलते हैं तथा मत्स्यबंधमाटक-मच्छीमारों के मुहल्ले के पास से निकलते हुए उन्होंने अत्यधिक विशाल नरसमुदाय के मध्य एक सूखे हुए, बुभूक्षित, निर्मांस और अस्तिचर्मावनद्ध-जिसका चर्म शरीर की हड्डियों से चिपटा हुआ, उठते बैठते समय जिसकी हड्डियाँ किटिकिटिका शब्द कर रही हैं, नीली शाटक वाले एवं गले में मत्स्यकंटक लग जाने के कारण कष्टात्मक, करुणाजनक और दीनतापूर्ण वचन बोलते हुए एक पुरुष को देखा जो कि पूयकवलों, रुधिरकवलों और कृमि कवलों का वमन कर रहा था। उसको देख कर गौतम स्वामी के मन में इस प्रकार के विचार उत्पन्न हुए - 'अहो! यह पुरुष पूर्वकृत यावत् कर्मों से नरकतुल्य वेदना का उपभोग करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।' इस प्रकार विचार कर अनगार गौतम स्वामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास यावत् उसके पूर्व भव की पृच्छा करते हैं और प्रभु इस प्रकार पूर्व भव का प्रतिपादन करते हैं - 'हे गौतम! उस काल और उस समय इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारत वर्ष में नंदिपुर नाम का एक नगर था। वहाँ के राजा का नाम मित्र था। उस मित्र राजा का एक श्रीयक (श्रीद) नाम का रसोइया था जो कि अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद (बड़ी कठिनाई से प्रसन्न होने वाला) था।'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - शौरिकपुर नगर में गोचरी के लिए गये गौतम स्वामी ने बहुत से मनुष्यों के बीच एक ऐसे मनुष्य को देखा जो बिल्कुल सूखा हुआ, बुभुक्षित तथा भूखा होने के कारण उसके शरीर पर मांस नहीं रहा था केवल अस्थिपंजर-सा दिखाई देता था। हिलने चलने से उसके हाड़ किटिकिटिका शब्द करते, उसके शरीर पर नीले रंग की एक धोती थी, गले में मच्छी का कांटा लग जाने से वह अत्यंत कठिनाई से बोलता, उसका स्वर बड़ा ही करुणाजनक तथा दीनता पूर्ण था। वह मुख से पूय, रुधिर और कृमियों के कवलों-कुल्लों का वमन कर रहा था। उसे देख कर भगवान् गौतम स्वामी सोचने लगे - 'अहो! कितनी भयावह अवस्था है इस व्यक्ति की। न मालूम इसने पूर्वभव में ऐसे कौन से दुष्कर्म किये हैं जिनके विपाक स्वरूप यह इस प्रकार की नारकीय यातना को भोग रहा है।' इत्यादि विचारों में डूबे वे भगवान् के चरणों में पहुँचे। आहार को दिखा तथा आलोचना आदि से निवृत्त होकर देखे गये उस पुरुष की दयनीय अवस्था का श्रमण भगवान् महावीर के समक्ष कथन किया और पूछा कि - 'भगवन्! वह दुःखी जीव कौन है? उसने पूर्वभव में ऐसे कौनसे अशुभ कर्म किये हैं जिनका कि वह यहाँ पर इस प्रकार का फल भोग रहा है?' गौतम स्वामी की उक्त जिज्ञासा का समाधान करने के लिए प्रभु ने उसके पूर्वभव का कथन किया।

श्रीयक की हिंसक वृत्ति

तस्स णं सिरीयस्स महाणसियस्स बहवे मच्छिया य वागुरिया य साउणिया य दिण्णभइभत्तवेयणा कल्लाकल्लिं बहवे सण्हमच्छा जाव पडागाइपडागे य अए य जाव महिसे य तित्तिरे य जाव मऊरे य जीवियाओ ववरोवेंति ववरोवेत्ता सिरियस्स महाणसियस्स उवणेंति, अण्णे य से बहवे तित्तिरा य जाव मऊरा य पंजरंसि संणिरुद्धा चिट्ठंति, अण्णे य बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा ते बहवे तित्तिरे य जाव मऊरे य जीवियाओ चेव णिपंखेंति णिपंखेंत्ता सिरियस्स महाणसियस्स उवणेंति॥१३६॥

कठिन शब्दार्थ - मच्छिया - मात्सिक-मच्छीमार, **वागुरिया** - वागुरिक-जाल में फंसाने का काम करने वाले व्याध, **साउणिया** - शाकुनिक-पक्षीघातक, **दिण्णभइभत्तवेयणा** - जिन्हें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेतन रूप से भृति-रुपया पैसा, भक्त-धान्य और घृतादि दिया जाता हो ऐसे नौकर पुरुष, **कल्लाकल्लिं** - प्रतिदिन, **सण्हमच्छा** - श्लक्ष्ण मत्स्यों-कोमल चर्म वाले मत्स्यों अथवा सूक्ष्म मत्स्यों, **पडागाइपडागे** - पताकातिपताको-मत्स्य विशेषों, **उवणेंति** - अर्पण करते हैं।

भावार्थ - उस श्रीयक रसोइए के बहुत से मात्स्यिक, वागुरिक और शाकुनिक नौकर पुरुष थे जिन्हें वेतन रूप से रुपया, पैसा और धान्यादि दिया जाता था। वे नौकर पुरुष प्रतिदिन श्लक्ष्ण मत्स्यों यावत् पताकातिपताक मत्स्यों तथा अजों यावत् महिषों, तित्तिरों यावत् मयूरों आदि प्राणियों को मार कर श्रीयक रसोइये को लाकर देते थे।

उसके वहाँ पिंजरों में अनेक तित्तिर यावत् मयूर आदि पक्षी बंद किये हुए रहते थे। श्रीयक रसोइए के अन्य अनेक रुपया, पैसा और धान्यादि के रूप में वेतन लेकर काम करने वाले पुरुष जीते हुए तित्तिर यावत् मयूर आदि पक्षियों को पक्ष-परों से रहित करके श्रीयक रसोइये को लाकर देते थे।

तए णं से सिरीए महाणसिए बहूणं जलयर-थलयर-खहयराणं मंसाइं कप्पणिकप्पियाइं करेइ, तंजहा-सण्हखंडियाणि य वट्टखंडियाणि य दीहखंडियाणि य रहस्सखंडियाणि य हिमपक्काणि य जम्मपक्काणि घम्म-पक्काणि वेगपक्काणि मारुयपक्काणि य कालाणि य हेरंगाणि य महिट्ठाणि य आमलरसियाणि य मुद्दियारसियाणि य कविट्ठरसियाणि य दालिमरसियाणि य मच्छरसियाणि य तलियाणि य भज्जियाणि य सोल्लियाणि य उवक्खडावेइ उवक्खडावेत्ता अण्णे य बहवे मच्छरसए य एणेज्जरसए य तित्तिररसए य जाव मयूररसे य अण्णं च विउलं हरियसागं उवक्खडावेइ, उवक्खडावेत्ता मित्तस्स रण्णो भोयणमंडवंसि भोयणवेलाए उवणेइ अप्पणावि य णं से सिरीए महाणसिए तेसिं च बहूहिं जलयर-थलयर-खहयरमंसेहिं च रसिएहि य हरियसागेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च ६ आसाएमाणे० विहरइ॥१३७॥

कठिन शब्दार्थ - **कप्पणिकप्पियाइं करेंति** - कल्पनी-छुरी से कर्तित करता है अर्थात् उन्हें काट कर खण्ड-खण्ड बनाता है, **सण्हखंडियाणि** - सूक्ष्म खण्ड, **रहस्सखंडियाणि** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ह्रस्व छोटे-छोटे खण्ड, **हिमपक्काणि** - हिम-बर्फ से पकाए गए हैं, **जम्म** - जम्म से अर्थात् स्वतः ही, **घम्म** - घर्म-गर्मी, **मारुय** - मारुत-वायु से, **पक्काणि** - पकाये गये हैं, **कालाणि**- काले किये गये हैं, **हेरंगाणि** - हिंगुल-सिंगरफ के समान लाल वर्ण वाले किये गये हैं, **महिट्ठाणि** - जो तर्क संस्कारित हैं, **आमलगरसियाणि** - आमलक-आंवले के रस से भावित, **मुद्दिया रसियाणि** - मृद्वीका-द्राक्षा रस से संस्कारित, **कविट्ठरसियाणि** - कपित्थ-कैथ रस से भावित, **दालिमरसियाणि** - अनार रस से भावित, **मच्छरसियाणि** - मत्स्य रस से संस्कारित, **तलियाणि** - तैलादि में तले हुए, **भज्जियाणि** - अंगार आदि पर भूने हुए, **सोल्लियाणि** - शूलाप्रोत अर्थात् शूल में पिरो कर पकाए गए, **हरियसागं** - हरे साग, **एणेज्जरसए** - एणो-मृगों के मांसों के रस, **भोयणमंडवंसि** - भोजन मंडप में, **भोयणवेलाए** - भोजन के समय।

भावार्थ - तदनन्तर वह श्रीयक रसोइया अनेक जलचर और स्थलचर आदि जीवों के मांसों को लेकर छुरी से उनके सूक्ष्म खण्ड, वृत्त खण्ड, दीर्घ खण्ड और ह्रस्व खण्ड इस प्रकार के अनेक विध खण्ड किया करता था। उन खण्डों में कई एक को हिम (बर्फ) में पकाता था, कई एक को अलग रख देता जिससे वे खण्ड स्वतः ही पक जाते थे, कई एक को धूप से एवं कई एक को हवा के द्वारा पकाता था। कई एक को कृष्ण वर्ण वाले एवं कई एक को हिंगुल के वर्ण वाले किया करता था। वह उन खण्डों को तक्र संस्कारित, आमलक रस भावित, मृद्वीका (दाख) कपित्थ (कैथ) और दाडिम (अनार) के रसों से तथा मत्स्य रसों से भावित किया करता था। तत्पश्चात् उन मांस खण्डों में से कई एक को तैल में तलता, कई एक को अग्नि में भूनता तथा कई एक को शूला में पिरो कर पकाता था। इसी प्रकार मत्स्य मांसों के रसों को, मृगमांसों के रसों को, तित्तिर मांसों के रसों को यावत् मयूर मांसों के रसों को तथा बहुत से हरे शाकों को तैयार करता था, तैयार करके महाराज मित्र के भोजन मंडप (भोजनालय) में ले जाकर महाराज मित्र को अर्पण (प्रस्तुत) किया करता था तथा स्वयं वह श्रीयक रसोइया उन पूर्वोक्त श्लक्ष्ण मत्स्य आदि समस्त जीवों के मांसों, रसों, हरितशाकों (जो कि शूलपक्व हैं, तले हुए हैं, भूने हुए हैं) के साथ छह प्रकार की सुरा आदि मदिराओं का आस्वादन आदि करता हुआ समय व्यतीत कर रहा था।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में श्रीद (श्रीयक) रसोइए की हिंसक वृत्तियों-हिंसा परायण व्यापार का वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीयक की नरक में उत्पत्ति

तए णं से सिरीए महाणसिए एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता तेत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उववण्णे॥१३८॥

भावार्थ - तदनन्तर इन्हीं कर्मों को करने वाला, इन्हीं कर्मों में प्रधानता रखने वाला, इन्हीं को विद्या-विज्ञान रखने वाला और इन्हीं पापकर्मों को अपना सर्वोत्तम आचरण मानने वाला वह श्रीयक रसोइया अत्यधिक पापकर्मों का उपार्जन कर ३३ सौ वर्ष की परमायु को पाल कर कालमास में काल करके छठी नरक में उत्पन्न हुआ।

विवेचन - श्रीयक रसोइए ने अपनी क्रूरतम पाप प्रवृत्तियों से इतने तीव्र पाप कर्मों का बंध किया कि उसे दीर्घकाल तक नरक आदि दुर्गतियों के दुःखों को भोगना पड़ेगा। यहाँ ३३०० वर्षों की आयु पूर्ण कर वह छठी नरक में उत्पन्न हुआ। जहाँ उसे २२ सागरोपम तक अनेकानेक प्राणियों का नाश करने, मांसाहार तथा मदिरापान आदि दुष्प्रवृत्तियों के कारण दीर्घकाल तक दुःखों को भोगना पड़ेगा।

श्रीयक रसोइए का जीवन वृत्तांत देकर सूत्रकार ने सुखाभिलाषी प्राणियों को प्राणीवध, मांसाहार, मदिरापान का त्याग करने की प्रेरणा प्रदान की है। जो इन दुष्प्रवृत्तियों में लगेगा वह श्रीयक की तरह नरकों में दुःख पाएगा और दीर्घकाल तक संसार में परिभ्रमण करेगा।

शौरिकदत्त का जन्म

तए णं सा समुद्ददत्ता भारिया णिंदू यावि होत्था जाया जाया दारगा विणिहायमावज्जंति जहा गंगदत्ताए चिंता आपुच्छणा ओवाइयं दोहला जाव दारगं पयाया जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए सोरियस्स जक्खस्स ओवाइयलद्धे तम्हा णं होउ अम्हं दारए सोरियदत्ते णामेणं। तए णं से सोरियदत्ते दारए पंचधाई जाव उम्मुक्कबालभावे विण्णयपरिणयमित्ते जोव्वण-गमणुप्पत्ते यावि होत्था॥१३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस समय समुद्रदत्ता भार्या जात निद्रुता - मृतवत्सा थी, उसके बालक जन्म लेते ही मर जाया करते थे। जैसे गंगादत्ता को विचार उत्पन्न हुए वैसे ही समुद्रदत्ता के भी हुए। पति से पूछ कर, मन्नत मान कर तथा दोहद की पूर्ति कर समुद्रदत्ता एक बालक को जन्म देती है। शौरिक यक्ष की मन्नत मानने से बालक का जन्म होने के कारण माता-पिता ने उसका शौरिकदत्त नाम रखा। तत्पश्चात् पांच धायमाताओं से परिगृहीत वह शौरिक बालक यावत् बाल भाव को त्याग कर, विज्ञान की परिणत-परिपक्व अवस्था को प्राप्त हुआ और युवावस्था को प्राप्त हुआ।

विवेचन - दुःखविपाक के सातवें अध्ययन में वर्णित गंगादत्ता के वर्णन के समान ही समुद्रदत्ता का भी वर्णन समझ लेना चाहिये। अंतर इतना है कि गंगादत्ता ने उम्बरदत्त यक्ष की आराधना की तो समुद्रदत्ता ने शौरिक यक्ष की मनौति मानी। कुटुम्ब जागरणा, यक्ष आराधन का विचार, पति की आज्ञा लेकर यक्ष की मन्नत मानना, गर्भ स्थिति होने पर दोहद उत्पन्न होना उसकी पूर्ति करना, पुत्र जन्म, नामकरण और युवावस्था प्राप्त करने तक का सारा वृत्तांत गंगादत्ता के समान ही है।

शौरिकदत्त की हिंसक प्रवृत्ति

तए णं से समुद्ददत्ते अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते। तए णं से सोरियदत्ते दारए बहूहिं मित्तणाइ० रोयमाणे० समुद्ददत्तस्स णीहरणं करेइ लोइयाइं मयकिच्चाइं करेइ, अण्णया कयाइ सयमेव मच्छंधमहत्तरगत्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तए णं से सोरियदत्ते दारए मच्छंधे जाए अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे॥१४०॥

कठिन शब्दार्थ - **मच्छंधमहत्तरगत्तं** - मत्स्य बंधो-मच्छीमारों के महत्तरकत्व-प्रधानत्व की।

भावार्थ - तदनन्तर किसी अन्य समय समुद्रदत्त काल धर्म को प्राप्त हुआ तब रुदन, आक्रन्दन और विलाप करते हुए शौरिकदत्त बालक ने अनेक मित्रों, ज्ञातिजनों, स्वजनों संबंधिजनों एवं परिजनों के साथ समुद्रदत्त का निस्सरण किया-अरथी निकाली और दाहकर्म एवं अन्य लौकिक मृतक क्रियाएं कीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किसी अन्य समय वह शौरिकदत्त स्वयं ही मच्छीमारों के नेतृत्व को प्राप्त करके विचरण करने लगा। तदनन्तर वह शौरिक बालक मत्स्यबंध-मच्छीमार हो गया जो कि अधर्मी यावत् दुष्प्रत्यानंद-अति कठिनाई से प्रसन्न होने वाला था।

तए णं तस्स सोरियदत्तमच्छंधस्स बहवे पुरिसा दिण्णभइ० एगट्ठियाहिं जउणामहाणइं ओगाहेंति ओगाहेंत्ता बहूहिं दहगलणेहि य दहमलणेहि य दहमद्दणेहि य दहमहणेहि य दहवहणेहि य दहपवहणेहि य मच्छंधुलेहि य पयंचुलेहि य पंचपुलेहि य जंभाहि य तिसराहि य भिसराहि य घिसराहि य विसराहि य हिल्लिरीहि य लल्लिरीहि य झिल्लिरीहि य जालेहि य गलेहि य कूडपासेहि य वक्कबंधेहि य सुत्तबंधेहि य वालबंधेहि य बहवे सण्हमच्छे य जाव पडागाइपडागे य गिण्हंति० एगट्ठियाओ (णावा) भरेंति० कूलं गाहेंति० मच्छखलए करेंति० आयवंसि दलयंति, अण्णे य से बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्त-वेयणा आयवतत्तएहिं सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणावि य णं से सोरियदत्ते बहूहिं सण्हमच्छेहि य जाव पडा० सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च ६ आसाएमाणे० विहरइ॥१४१॥

कठिन शब्दार्थ - एगट्ठियाहिं - छोटी नौकाओं के द्वारा, **जउणं महाणइं** - यमुना नामक महानदी का, **दहगलणेहि** - ह्रदगलन-ह्रद-झील या सरोवर का जल निकाल देने से, **दहमलणेहि**- ह्रदमलन-ह्रदगत जल के मर्दन करने से, **दहमद्दणेहि** - ह्रदमर्दन अर्थात् थूहर का दूध डाल कर जल को विकृत करने से, **दहमहणेहि** - ह्रदमथन-ह्रदगत जल को तरुशाखाओं द्वारा विलोडित करने से, **दहवहणेहि** - ह्रदवहन-ह्रद में से नाली आदि के द्वारा जल के बाहिर निकालने से, **दहपवहणेहि** - ह्रद प्रवहण-ह्रदजल को विशेष रूपेण प्रवाहित करने से, **पयंचुलेहि**- मत्स्य बंधन विशेषों से, **पंचपुलेहि** - मच्छों को पकड़ने के जाल विशेषों से, **जंभाहि** - बंधन विशषों से, **तिसराहि** - त्रिसरा-मत्स्य बंधन विशेषों से, **भिसराहि** - भिसरा-मत्स्यों को पकड़ने के बंधन विशेषों से, **घिसराहि** - घिसरा-मत्स्यों को पकड़ने के जाल विशेषों से, **विसराहि** - द्विसरा-मत्स्यों को पकड़ने के जाल विशेषों से, **हिल्लीरीहि** - हिल्लरी-मत्स्यों को पकड़ने के जाल विशेषों से, **झिल्लिरीहि** - झिल्लरी-मत्स्य बंधन विशेषों से, **लल्लिरिहि** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लल्लिरि-मत्स्यों को पकडने के साधन विशेषों से, **जालेहि** - सामान्य जालों से, **गलेहि** - वडिशों-मत्स्यों को पकडने की कुंडियों से, **कूडपासेहि** - कूट पाशों से-मत्स्यों को पकड़ने के पाश रूप बंधन विशेषों से, **वक्कबंधेहि** - वल्क-त्वचा आदि के बंधनों से, **सुत्तबंधेहि** - सूत्र के बंधनों से, **वालबंधेहि** - बालों-केशों के बंधनों से, **कूलं** - किनारे पर, **गाहेंति** - लाते हैं, **मच्छखलए** - मत्स्यों के ढेर, **आयवंसि** - धूप में।

भावार्थ - तदनन्तर उस शौरिक मत्स्य बंध-मच्छीमार के रुपया पैसा और भोजनादि रूप वेतन लेकर काम करने वाले अनेक वेतनभोगी पुरुष रखे हुए थे जो कि छोटी नौकाओं के द्वारा यमुना नदी में घूमते और बहुत से ह्रदगलन, ह्रदमलन, ह्रदमर्दन, ह्रदमंथन, ह्रदवहन तथा ह्रदप्रवहन से एवं प्रपंचुल, प्रपंपुल, जृम्भा, त्रिसरा, भिसरा, घिसरा, द्विसरा, हिल्लरि झिल्लरि, लल्लिरि, जाल, गल, कूटपाश, वल्कबंध, सूत्रबंध और वालबन्ध, इन साधनों के द्वारा अनेक जाति के सूक्ष्म अथवा कोमल मत्स्यों यावत् पताकातिपताक नामक मत्स्यों को पकड़ते हैं और पकड़ कर उनसे नौकाएं भरते हैं, भर कर नदी के किनारे पर उनको लाते हैं, लाकर बाहर एक स्थल पर ढेर लगा देते हैं तत्पश्चात् उनको वहाँ धूप में सूखने के लिए रख देते हैं।

और उसके बहुत से रुपया, पैसा और धान्यादि ले कर काम करने वाले वेतन भोगी पुरुष धूप से सूखे हुए उन मत्स्यों के मांसों को शूलाप्रोत कर पकाते, तलते, भूनते तथा उन्हें राज मार्ग पर बिक्री के लिए रख कर उनके द्वारा आजीविका करते हुए समय व्यतीत कर रहे थे। इसके अलावा शौरिकदत्त स्वयं भी उन शूलाप्रोत किये हुए, भूने हुए और तले हुए मत्स्य मांसों के साथ विविध प्रकार की सुराओं का सेवन करता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में सूत्रकार ने शौरिकदत्त के हिंसक जीवन एवं हिंसक वृत्ति का परिचय दिया है।

शौरिकदत्त की महावेदना

तए णं तस्स सोरियदत्तस्स मच्छंधस्स अण्णया कयाइ ते मच्छसोल्ले तलिए य भज्जिए य आहारेमाणस्स मच्छकंटए गलए लग्गे यावि होत्था। तए णं से सोरियदत्तमच्छंधे महयाए वेयणाए अभिभूए समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया! सोरियपुरे णयरे सिंघाडग

जाव पहेसु महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा उग्घोसेमाणा एवं वयह-एवं खलु देवाणुप्पिया! सोरियदत्तस्स मच्छकंटए गले लग्गे तं जो णं इच्छइ वेज्जो वा ६ सोरियमच्छियस्स मच्छकंटयं गलाओ णीहरित्तए तस्स णं सोरियदत्ते विउलं अत्थसंपयाणं दलयइ।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव उग्घोसेंति॥१४२॥

भावार्थ - तदनन्तर किसी अन्य समय शूला द्वारा पकाए गए, तले गए और भूने गए मत्स्य मांसों का आहार करते हुए उस शौरिक मत्स्यबंध के गले में मच्छी का कांटा लग गया, जिसके कारण वह महती वेदना का अनुभव करने लगा। तब नितान्त दुःखी हुए शौरिकदत्त ने अपने अनुचरों (कौटुम्बिक पुरुषों) को बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रियो! शौरिकपुर नगर के त्रिकोण यावत् सामान्य मार्गों पर जाकर ऊंचे शब्द से इस प्रकार उद्घोषणा करो कि - हे देवानुप्रियो! शौरिकदत्त के गले में मत्स्य का कांटा लग गया है। यदि कोई वैद्य या वैद्यपुत्र आदि उस मत्स्य कंटक को निकाल देगा तो शौरिकदत्त उसे विपुल आर्थिक सम्पत्ति-धन देगा।

तब कौटुम्बिक पुरुषों ने उसकी आज्ञानुसार सारे नगर में उद्घोषणा कर दी।

कृत कर्मों का फल

तए णं ते बहवे वेज्जा य ६ इमेयारूवं उग्घोसणं उग्घोसिज्जमाणं णिसामेंति णिसामेत्ता जेणेव सोरियदत्तस्स गेहे जेणेव सोरियमच्छंधे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता बहूहिं उप्पत्तियाहि० परिणममाणा वमणेहि य छड्डणेहि य ओवीलणेहि य कवलग्गाहेहि य सल्लुद्धरणेहि य विसल्लकरणेहि य इच्छंति सोरियमच्छं० मच्छकंटयं गलाओ णीहरित्तए णो चेव णं संचाएंति णीहरित्तए वा विसोहित्तए वा, तए णं ते बहवे वेज्जा य ६ जाहे णो संचाएंति सोरिय० मच्छकंटगं गलाओ णीहरित्तए ताहे संता जाव जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तए णं से सोरियदत्ते मच्छंधे वेज्ज० पडियारणिव्विण्णे तेणं दुक्खेणं महया अभिभूए सुक्के जाव विहरइ। एवं खलु गोयमा! सोरियदत्ते पुरापोराणाणं जाव विहरइ॥१४३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - उप्पत्तियाहि - औत्पातिकी आदि बुद्धि विशेष, **वमणेहि** - वमनों से, **छड्डणेहि** - छर्दनों से, **ओवीलणेहि** - अवपीडन-दबाने से, **कवलग्गाहेहि** - कवल ग्राहों से, **सल्लुद्धरणेहि** - शल्योद्धरणों से, **विसल्लकरणेहि** - विशल्य करणों से, **णीहरित्तए** - निकालने की, **वेज्जपडियारणिव्विण्णे** - वैद्यों के प्रतिकार-इलाज से निराश हुआ, **अभिभूए** - अभिभूत-युक्त हुआ।

भावार्थ - तदनन्तर बहुत से वैद्य और वैद्यपुत्र आदि उस उद्घोषणा को सुन कर शौरिकदत्त मच्छीमार के घर पर आये, आकर बहुत सी औत्पातिकी आदि बुद्धियों से परिणमन को प्राप्त करते हुए अर्थात् सम्यकृतया निदान आदि को समझते हुए उन वैद्यों ने वमन, छर्दन, अवपीडन, कवलग्राह, शल्योद्धरण और विशल्यकरण आदि उपचारों से शौरिकदत्त के गले के कांटे को निकालने तथा पूय, रुधिर आदि को बंद करने का उन्होंने अथक प्रयत्न किया किंतु वे समर्थ नहीं हो सके। तब वे श्रान्त, तान्त और परितान्त हुए अर्थात् हतोत्साहित होकर जिस दिशा से आये उसी दिशा को लौट गये।

तदनन्तर वह शौरिक मत्स्यबंध वैद्यों के प्रतिकार-इलाज से निराश हुआ उस महती वेदना को भोगता हुआ सूख कर यावत् दुःखमय जीवन व्यतीत करने लगा।

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! शौरिक पूर्वकृत पापकर्मों का फल भोगता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

विवेचन - शौरिकदत्त मत्स्यादि जीवों के मांस का विक्रेता भी था और स्वयं भोक्ता भी था अतः उसने तीव्रतर क्रूरकर्मों का बंध किया। कुछ कर्म ऐसे होते हैं जो जन्मान्तर में फल देते हैं तो कुछ कर्म इसी जन्म में फल दे डालते हैं। शौरिकदत्त के पूर्वोक्त जीवन वृत्तांत से फलित होता है कि वह अपने कृत कर्मों का फल इस जन्म में भी भुगत रहा है।

एक दिन मांस भक्षण करते हुए शौरिकदत्त के गले में मच्छी का कोई विषैला कांटा फंस गया। कांटे के गले में लगते ही उसे असह्य वेदना हुई, वह तड़फ उठा। अनेक उपचार करने पर भी जब कांटा नहीं निकल सका तो उसने नगर में घोषणा करवाई कि जो कोई वैद्य या वैद्यपुत्र चिकित्सक या चिकित्सक पुत्र आदि शौरिकदत्त के गले में लगे हुए मच्छी के कांटे को बाहर निकाल कर उसे अच्छा कर देगा तो वह उसको बहुत-सा धन देकर प्रसन्न करेगा। घोषणा को सुन कर अनेक मेधावी वैद्य, चिकित्सक आदि आये और उन्होंने काफी प्रयत्न किये किंतु वे अपने उपचारों में सफल नहीं हो सके। अर्थात् "हम इस कांटे को निकालने में सर्वथा असमर्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं"-इस निराशाजनक उत्तर को सुन कर शौरिकदत्त को बड़ा भारी कष्ट हुआ और उसी कष्ट से सूख कर वह अस्थिपंजर-सा हो गया तथा प्रतिक्षण-प्रतिपल वेदना को भुगतता हुआ वह समय व्यतीत करने लगा।

भगवान् महावीर स्वामी ने अपने शिष्य गौतमस्वामी को कहा कि हे गौतम! यह वही शौरिकदत्त मच्छीमार है जिसको तुमने शौरिकपुर नगर में मनुष्यों के जमघट में देखा है। यह सब कुछ उसके कर्मों का ही प्रत्यक्ष फल है।

अब सूत्रकार शौरिकदत्त के आगामी भवों का वर्णन करते हुए कहते हैं -

भविष्य-पृच्छा

सोरिए णं भंते! मच्छंधे इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! सत्तरि-वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए०, संसारो तहेव० पुढवी० हत्थिणाउरे णयरे मच्छत्ताए उववज्जिहिइ, से णं तओ मच्छिएहिं जीवियाओ ववरोविए तत्थेव सेट्ठिकुलंसि उववज्जिहिइ बोही सोहम्मे कप्पे..........महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ० ॥णिक्खेवो॥१४४॥

॥ अट्ठमं अज्झयणं समत्तं॥

भावार्थ - हे भगवन्! शौरिकदत्त मत्स्यमार यहां से कालमास में अर्थात् मृत्यु का समय आ जाने पर काल करके कहां जायेगा? कहां उत्पन्न होगा?

हे गौतम! सत्तर वर्षों की परमायु का पालन करके कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा नामक प्रथम नरक में उत्पन्न होगा। संसार भ्रमण पूर्ववत् (प्रथम अध्ययन की तरह) समझ लेना चाहिये यावत् पृथ्वीकाय में लाखों बार उत्पन्न होगा। वहां से हस्तिनापुर नगर में मत्स्य रूप में उत्पन्न होगा। वहां पर मच्छीमारों के द्वारा वध को प्राप्त हो वहीं हस्तिनापुर में एक श्रेष्ठिकुल में जन्म लेगा, सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा तथा काल कर सौधर्म नामक प्रथम देवलोक में उत्पन्न होगा। वहां से महाविदेह क्षेत्र में जन्मेगा, वहां चारित्र ग्रहण कर सिद्ध पद को प्राप्त करेगा यावत् सभी दुःखों का अंत करेगा। निक्षेप-उपसंहार पूर्व की भांति समझ लेना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - मानव की यह कितनी विचित्र दशा है कि वह पुण्य का फल-सुख को चाहता है किंतु पुण्य का कार्य नहीं करना चाहता और इसके विपरीत पाप के फल-दुःख को नहीं चाहता है फिर भी पापाचरण का त्याग नहीं करता, फलस्वरूप पाप का फल भोगते हुए वह छटपटाता है। शौरिकदत्त भी उन्हीं व्यक्तियों में से था जो पाप करते हुए तो विचार नहीं करता किंतु पाप का फल भोगते हुए रोता चिल्लाता हुआ दुःखी होता है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के मुखारविंद से शौरिकदत्त का अतीत और वर्तमान जीवन वृत्तांत सुन कर गौतमस्वामी ने उसके भविष्य-जीवन के प्रति अपनी जिज्ञासा प्रकट की तो प्रभु ने भावी जीवन विषयक जो कुछ फरमाया वह भावार्थ से स्पष्ट है। सम्यक्त्व की प्राप्ति और सम्यक्त्व सहित चारित्र का सम्यक् पालन ही कर्म बंधनों को काट कर मोक्ष प्राप्ति कराने वाला है। शौरिकदत्त भी इसी मार्ग को अपना कर अंत में जन्म, जरा और मरण के दुःखों से मुक्ति पायेगा।

अध्ययन की समाप्ति पर आर्य सुधर्मा स्वामी ने जो कुछ फरमाया। उसे सूत्रकार ने **"णिक्खेवो"** - निक्षेप पद में गर्भित किया है जिसका भाव इस प्रकार है -

हे जम्बू! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने इस दुःखविपाक सूत्र के आठवें अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) अर्थ प्रतिपादन किया है। हे जम्बू! जैसा मैंने भगवान् के मुखारविंद से सुना है, वैसा ही तुम्हें सुनाया है। इसमें मेरी कोई कल्पना नहीं है।

शौरिकदत्त के इस अध्ययन से हमें यही शिक्षा ग्रहण करनी है कि हिंसा बुरी है, दुःखों की जननी है, पाप कर्म का बंधन कराने वाली है अतः सुखाभिलाषी व्यक्ति को हिंसा एवं हिंसक व्यापार से बचना चाहिये।

॥ अष्टम अध्ययन संपूर्ण॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवदत्ता णामं णवमं अज्झयणं

देवदत्ता नामक नववां अध्ययन

आठवें अध्ययन में शौरिकदत्त का जीवन वर्णन करने के बाद अब आगमकार इस नौवें अध्ययन में एक ऐसी स्त्री का जीवन वृत्तांत दे रहे हैं जो ब्रह्मचर्य से विमुख बन कर विषयासक्त जीवन जीती है और विषयान्ध बन कर अपनी सास के जीवन का भी अंत कर देती है। साथ ही एक ऐसे पुरुष का भी जीवन वृत्तांत दिया है जो एक स्त्री में आसक्त बन कर ४९९ स्त्रियों को आग में जला देता है। मैथुन सेवन के पाप का दुष्परिणाम बताने वाले इस नौवें अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते!.....उक्खेवो णवमस्स० एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं रोहीडए णामं णयरे होत्था रिद्ध०। पुढविवडिंसए उज्जाणे, धरणो जक्खो, वेसमणदत्ते राया, सिरी देवी, पूसणंदी कुमारे जुवराया। तत्थ णं रोहीडए णयरे दत्ते णामं गाहावई परिवसइ अड्ढे० कण्हसिरी भारिया। तस्स णं दत्तस्स धूया कण्हसिरीए अत्तया देवदत्ता णामं दारिया होत्था अहीण० जाव उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा॥१४५॥

भावार्थ - नवम अध्ययन के उत्क्षेप-प्रस्तावना की कल्पना पूर्वानुसार समझ लेनी चाहिये। हे जम्बू! उस काल और उस समय में रोहीतक नाम का एक नगर था जो ऋद्ध-भवनादि के आधिक्य से युक्त, स्तिमित-स्वचक्र और परचक्र के उपद्रवों से रहित एवं समृद्ध-धन धान्यादि से परिपूर्ण था। पृथ्वीवतंसक नामक उद्यान था उसमें धरण नामक यक्ष का आयतन-स्थान था। वैश्रमण दत्त नामक वहां का राजा था। उसकी श्रीदेवी नाम की रानी थी। उनके पुष्यनन्दी कुमार नामक युवराज था। उस नगर में एक दत्त नामक गाथापति रहता था जो धनी यावत् प्रतिष्ठा प्राप्त था। उसकी कृष्णश्री नाम की भार्या थी जो अन्यून एवं निर्दोष पांच इन्द्रियों से युक्त शरीर वाली थी यावत् उत्कृष्ट-उत्तम शरीर वाली थी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - आठवें अध्ययन का भाव सुनने के बाद नववें अध्ययन के भाव सुनने की अभिलाषा से आर्य जम्बू स्वामी ने सुधर्मास्वामी से निवेदन किया - हे भगवन्! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक सूत्र के आठवें अध्ययन के जो भाव फरमाये हैं वे मैने आपके श्रीमुख से सुने अब मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक सूत्र के नववें अध्ययन में क्या भाव फरमाये हैं सो कृपा कर कहिये?

जंबूस्वामी की जिज्ञासा का समाधान करने के लिये आर्य सुधर्मास्वामी ने उपरोक्तानुसार नववें अध्ययन का प्रारंभ किया है।

पूर्वभव पृच्छा

तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समए० जेट्ठे अंतेवासी छट्ठक्खमण.....तहेव जाव रायमग्गमोगाढे हत्थी आसे पुरिसे पासइ, तेसिं पुरिसाणं मज्झगयं पासइ एगं इत्थियं अवओडयबंधणं उक्खित्तकण्णणासं जाव सूले भिज्जमाणं पासइ, पासित्ता इमे अज्झत्थिए....तहेव णिग्गए जाव एवं वयासी-एस णं भंते! इत्थिया पुव्वभवे का आसी?॥१४६॥

कठिन शब्दार्थ - उक्खित्तकण्णणासं - जिसके कान और नाक दोनों ही कटे हुए हैं, **सूले** - शूली पर, **भिज्जमाणं** - भेदी जाने वाली-भिद्यमान (भेदन) किये जाने वाली।

भावार्थ - उस काल और उस समय में पृथ्वीवतंसक नामक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पदार्पण हुआ यावत् उनकी धर्मदेशना सुन कर परिषद् और राजा वापिस चले गये। उस काल और उस समय भगवान् के प्रधान शिष्य गौतमस्वामी बेले के पारणे के लिये भिक्षार्थ गये यावत् राजमार्ग में पधारे वहां हाथियों, घोड़ों और पुरुषों को देखते हैं। उनके मध्य में एक स्त्री को देखते हैं जो कि अवकोटक बंधन से बंधी हुई, जिसके नाक और कान दोनों ही कटे हुए यावत् सूली पर भेदी जाने वाली है। उस स्त्री को देख कर उनके मन में यह संकल्प उत्पन्न हुआ यावत् पूर्व की भांति नगर से निकले और भगवान् के पास आकर इस प्रकार निवेदन किया - 'हे भगवन्! यह स्त्री पूर्वभव में कौन थी?'

विवेचन - राजमार्ग में गौतमस्वामी ने नरक संबंधी वेदनाओं को स्मरण कराने वाले जिस दृश्य को देखा तो उस स्त्री की करुण दशा से द्रवित हो श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के समक्ष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसके पूर्वभव को जानने की जिज्ञासा प्रकट की। अब सूत्रकार भगवान् महावीर स्वामी द्वारा फरमाये हुए समाधान का वर्णन करते हुए कहते हैं -

भगवान् का समाधान

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे सुपइट्ठे णामं णयरे होत्था रिद्ध०, महासेणे राया। तस्स णं महासेणस्स रण्णो धारिणीपामोक्खाणं देवीसहस्सं ओरोहे यावि होत्था। तस्स णं महासेणस्स रण्णो पुत्ते धारिणीए देवीए अत्तए सीहसेणे णामं कुमारे होत्था अहीण० जुवराया।

तए णं तस्स सीहसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो अण्णया कयाइ पंच पासायवडिंसयसयाइं करेंति अब्भुग्गय०। तए णं तस्स सीहसेणस्स कुमारस्स अण्णया कयाइ सामापामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकण्णगसयाणं एगदिवसे पाणिं गिण्हाविंसु पंचसयओ दाओ। तए णं से सीहसेणे कुमारे सामापामोक्खाहिं पंचसयाहिं देवीहिं सद्धिं उप्पिं जाव विहरइ।

तए णं से महासेणे राया अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते णीहरणं.... राया जाए महया०॥१४७॥

कठिन शब्दार्थ - पंचपासायवडिंसयसयाइं - पांच सौ प्रासादावतंसक-श्रेष्ठ महल, **पंचण्हं रायवरकण्णगसयाणं** - पांच सौ श्रेष्ठ राज कन्याओं का, **दाओ** - प्रीतिदान-दहेज।

भावार्थ - हे गौतम! उस काल और उस समय इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारत वर्ष में सुप्रतिष्ठ नाम का एक ऋद्ध, स्तिमित तथा समृद्ध नगर था। वहां पर महासेन राजा राज्य करता था। उस महासेन के अंतःपुर में धारिणी प्रमुख एक हजार देवियाँ-रानियाँ थीं। उस महासेन का पुत्र और महारानी धारिणी देवी का आत्मज सिंहसेन नामक राजकुमार था जो कि अन्यून एवं निर्दोष पांच इन्द्रियों से युक्त शरीर वाला तथा युवराज पद से अलंकृत था।

तदनन्तर उस सिंहसेन कुमार के माता पिता ने किसी समय अत्यंत विशाल पांच सौ प्रासादावतंसक-श्रेष्ठ महल बनवाए। तत्पश्चात् किसी अन्य समय उन्होंने सिंहसेन राजकुमार का श्यामा प्रमुख पांच सौ श्रेष्ठ राजकन्याओं के साथ एक ही दिन में विवाह कर दिया और पांच

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सौ प्रीतिदान-दहेज दिया। तदनन्तर वह सिंहसेन कुमार उन श्यामा प्रमुख पांच सौ राजकन्याओं के साथ प्रासाद के ऊपर यावत् सानंद समय व्यतीत करता है।

तत्पश्चात् किसी अन्य समय महासेन राजा कालधर्म को प्राप्त हो गये। राजा का निष्कासन आदि कार्य पूर्ववत् किया। तत्पश्चात् राज सिंहासन पर आरूढ़ हो कर वह सिंहसेन स्वयं राजा बन गया जो कि महाहिमवान्-हिमालय आदि पर्वतों के समान महान् था।

श्यामादेवी का आर्त्तध्यान

तए णं से सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे अवसेसाओ देवीओ णो आढाइ णो परिजाणइ अणाढायमाणे अपरिजाणमाणे विहरइ।

तए णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमाईसयाइं इमीसे कहाए लद्धट्ठाइं समाणाइं एवं खलु सामी सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिए ४ अम्हं धूयाओ णो आढाइ णो परिजाणइ अणाढायमाणे अपरिजाणमाणे विहरइ, तं सेयं खलु अम्हं सामं देविं अग्गिपओगेण वा विसप्पओगेण वा सत्थप्पओगेण वा जीवियाओ ववरोवित्तए, एवं संपेहेंति संपेहेत्ता सामाए देवीए अंतराणि य छिद्दाणि य विरहाणि य पडिजागरमाणीओ पडिजागरमाणीओ विहरंति।

तए णं सा सामा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी एवं वयासी-एवं खलु मम पंचण्हं सवत्तीसयाणं पंचमाइसयाइं इमीसे कहाए लद्धट्ठाइं समाणाइं अण्णमण्णं एवं वयासी-एवं खलु सीहसेणे......जाव पडिजागरमाणीओ विहरंति, तं ण णज्जइ णं मम केणइ कुमारेणं मारिस्संतितित्तिकट्टु भीया जाव जेणेव कोवघरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता ओहय जाव झियाइ॥१४८॥

कठिन शब्दार्थ - **अणाढायमाणे** - आदर नहीं करता हुआ, **अपरिजाणमाणे** - ध्यान न रखता हुआ, **सेयं** - योग्य है, **अग्गिप्पओगेण** - अग्नि के प्रयोग से, **विसप्पओगेण** - विष के प्रयोग से, **सत्थप्पओगेण** - शस्त्र के प्रयोग से, **पंचमाईसयाइं** - पांच सौ माताएं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोवघरे - कोपगृह-जहां क्रुद्ध हो कर बैठा जाए, ऐसा एकान्त स्थान, **ओहय** - उत्साह से रहित मन वाली होकर, **झियाइ** - विचार करती है।

भावार्थ - तदनन्तर वह सिंहसेन राजा श्यामादेवी में मूर्च्छित-उसी के ध्यान में पागल बना हुआ, गृद्ध-उसकी आकांक्षा वाला, ग्रथित-उसी के स्नेह जाल में बंधा हुआ और अध्युपपन्न-उसी में आसक्त हुआ अन्य देवियों का न तो आदर करता है और न ही उनका ध्यान ही रखता है अपितु उनका अनादर और विस्मरण करता हुआ समय व्यतीत कर रहा है।

तत्पश्चात् उन एक कम पांच सौ (४९९) देवियों-रानियों की एक कम पांच सौ माताओं ने जब यह जाना कि - सिंहसेन राजा श्यामादेवी में मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और अध्युपपन्न हो हमारी पुत्रियों का न तो आदर करता है और न ही उनका ध्यान रखता है अतः हमारे लिये यही योग्य है कि हम श्यामा देवी को अग्नि प्रयोग, विषप्रयोग अथवा शस्त्र प्रयोग से जीवन रहित कर डालें। इस तरह विचार करके वे श्यामादेवी के अन्तर, छिद्र तथा विरह की प्रतीक्षा करती हुई समय व्यतीत करने लगी।

तदनन्तर श्यामादेवी इस वृत्तांत को जान कर इस प्रकार विचार करने लगी कि मेरी एक कम पांच सौ सपत्नियों की एक कम पांच सौ माताएं - "महाराज सिंहसेन श्यामा में अत्यंत आसक्त हो कर हमारी पुत्रियों का आदर नहीं करता" यह जान कर एकत्रित हुई और "अग्नि, विष या शस्त्र प्रयोग से श्यामा के जीवन का अंत कर देना ही हमारे लिए श्रेष्ठ है" ऐसा विचार कर वे उस अवसर की खोज में लगी हुई है। यदि ऐसा ही है तो न जाने वे मुझे किस कुमौत से मारे? ऐसा विचार कर भीता (भयोत्पादक बात को सुन कर भयभीत हुई) त्रस्ता (मेरे प्राण लूट लिये जायेंगे यह सोच कर त्रास को प्राप्त हुई) उद्विग्ना (भय के मारे उसका हृदय कांपने लगा) संजातभया (हृदय के साथ साथ शरीर भी कांपने लगा) होकर श्यामादेवी जहां कोप भवन था वहां आई और आकर मानसिक संकल्पों के विफल रहने से उत्साह रहित मन वाली होकर यावत् विचार करने लगी।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में महाराजा सिंहसेन का श्यामा महारानी के प्रति अधिक राग तथा अन्य रानियों के प्रति उपेक्षा भाव, इस कारण उनकी माताओं का श्यामा के प्राण लेने का विचार तथा श्यामा का भयभीत होकर कोप गृह में जाकर आर्त्तध्यान मग्न होना आदि का वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आर्त्तध्यान का कारण

तए णं से सीहसेणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव कोवघरए जेणेव सामा देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सामं देविं ओहय० जाव पासइ, पासित्ता एवं वयासी-किं णं तुमं देवाणुप्पिए! ओहय० जाव झियासि? तए णं सा सामा देवी सीहसेणेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणी उप्फेणउप्फेणियं सीहसेणं रायं एवं वयासी-एवं खलु सामी! मम एगूणगाणं पंचसवत्तीसयाणं एगूणपंचमाइसयाणं इमीसे कहाए लद्धट्ठाणं समाणा० अण्णमण्णे सद्दावेंति सद्दावेत्ता एवं वयासी-एवं खलु सीहसेणे राया सामाए देवीए उवरि मुच्छिए ४ अम्हं धूयाओ णो आढाइ....जाव अंतराणि य छिद्दाणि० पडिजागरमाणीओ विहरंति तं ण णज्जइ० भीया जाव झियामि॥१४६॥

कठिन शब्दार्थ - **उप्फेण उप्फेणियं** - दूध के उफान के समान क्रुद्ध हुई अर्थात् क्रोध युक्त प्रबल वचनों से।

भावार्थ - तदनन्तर वह सिंहसेन राजा इस वृत्तांत से अवगत हो जहां कोपगृह में श्यामादेवी थी वहां आता है आकर श्यामादेवी को निराश मन से आर्त्तध्यान करती हुई देख कर इस प्रकार बोला - 'हे देवानुप्रिये! तुम इस प्रकार क्यों निराश और चिंतित हो रही हो?' महाराजा सिंहसेन के इस कथन को सुन कर श्यामादेवी क्रोध युक्त प्रबल वचनों से इस प्रकार बोली - 'हे स्वामिन्! मेरी एक कम पांच सौ सपत्नियों की एक कम पांच सौ माताएं इस वृत्तांत को जान कर एक दूसरे को बुलाती है बुलाकर इस प्रकार कहती है कि सिंहसेन राजा श्यामादेवी में मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और अध्युपपन्न हुआ हमारी पुत्रियों का आदर नहीं करता, ध्यान नहीं रखता प्रत्युत उनका अनादर करते हुए, ध्यान नहीं रखते हुए समय बिता रहा है। इसलिये अब हमारे लिये यही उचित है कि हम श्यामादेवी को अग्नि, विष या शस्त्र प्रयोग से जीवन से रहित कर दें। इस प्रकार विचार कर वे मेरे अंतर, छिद्र और विरह की प्रतीक्षा करती हुई विहरण कर रही है। इसलिये न मालूम वे मुझे किस कुमौत से मारें इस कारण भयभीत हुई मैं यहां आकर आर्त्तध्यान कर रही हूं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिंहसेन का प्रयास

तए णं से सीहसेणे राया सामं देविं एवं वयासी-मा णं तुमं देवाणुप्पिए! ओहय० जाव झियाहि, अहं णं तहा जत्तिहामि जहा णं तव णत्थि कत्तोवि सरीरस्स आबाहे वा पबाहे वा भविस्सइ त्तिकट्टु ताहिं इट्ठाहिं ६ समासासेइ, समासासेत्ता तओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सुपइट्ठस्स णयरस्स बहिया एगं महं कूडागारसालं करेह अणेगक्खंभसयसंणिविट्ठं पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं करेह, करेत्ता ममं एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव पडिसुणेंति पडिसुणेत्ता सुपइट्ठणयरस्स बहिया पच्चत्थिमे दिसीभाए एगं महं कूडागारसालं जाव करेंति अणेगक्खंभसय-संणिविट्ठं पासाईयं ४ जेणेव सीहसेणे राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति॥१५०॥

कठिन शब्दार्थ - **जत्तिहामि** - यत्न करूंगा, **आबाहे** - आबाधा-ईषत् पीड़ा, **पबाहे** - प्रबाधा-विशेष पीड़ा, **समासासेइ** - सम्यक्त्या आश्वासन देता है-शांत करता है, **कूडागारसालं**- कूटाकारशाला-षड्यंत्र करने के लिये बनाया जाने वाला घर, **अणेगखंभसयसंणिविट्ठं** - सैंकड़ों स्तंभ-खंभे हों जिसके।

भावार्थ - तदनन्तर वह सिंहसेन राजा श्यामा देवी से इस प्रकार बोला-हे देवानुप्रिय! तुम इस प्रकार निराश होकर आर्त्तध्यान मत करो। मैं ऐसा उपाय करूँगा जिससे तुम्हारे शरीर को कहीं से भी किसी प्रकार की बाधा तथा प्रबाधा नहीं होगी-इस प्रकार श्यामादेवी को इष्ट आदि वचनों द्वारा सांत्वना देकर सिंहसेन राजा वहाँ से चले गये और जाकर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा - हे देवानुप्रियो! तुम लोग यहाँ से जाकर सुप्रतिष्ठित नगर के बाहर एक बहुत बड़ी कूटाकारशाला बनवाओ जो कि सैंकड़ों स्तंभों से युक्त प्रासादीय (मन को हर्षित करने वाली) दर्शनीय (बार-बार देख लेने पर भी जिससे आंखें न थकें) अभिरूप (जिसे एक बार देख लेने पर भी पुनः दर्शन की लालसा बनी रहे) तथा प्रतिरूप (जिसे जब भी देखा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाय तब ही वहाँ नवीनता ही प्रतीत हो) हो, इस आज्ञा का प्रत्यर्पण करो अर्थात् कूटाकार शाला बनवा कर मुझे सूचित करो। तदनन्तर वे कौटुम्बिक पुरुष दोनों हाथ जोड़ यावत् मस्तक पर दस नखों वाली अंजलि रख कर स्वीकार करते हैं, स्वीकार करके सुप्रतिष्ठित नगर के बाहर पश्चिम दिशा में एक विशाल कूटाकारशाला तैयार कराते हैं जो कि सैकड़ों खंभों वाली प्रासादीय, दर्शनीय, अभिरूप तथा प्रतिरूप थी, तैयार करा कर जहाँ पर सिंहसेन राजा था वहाँ पर आकर उस आज्ञा का प्रत्यर्पण करते हैं। अर्थात् आपकी आज्ञानुसार कूटाकारशाला तैयार करा दी गई है, ऐसा निवेदन करते हैं।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में महारानी श्यामा का चिंतातुर होना तथा उसकी चिन्ता को दूर करने के लिए महाराजा सिंहसेन द्वारा अपने अनुचरों को नगर के बाहर एक विशाल कूटाकारशाला के निर्माण का आदेश देना और उसके आदेशानुसार कूटाकारशाला का तैयार हो जाना आदि का वर्णन किया गया है। अब सूत्रकार उस कूटाकारशाला से क्या काम लिया जाता है? इस का वर्णन करते हैं -

सिंहसेन का दुष्कृत्य

तए णं से सीहसेणे राया अण्णया कयाइ एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमाइसयाइं आमंतेइ। तए णं तासिं एगूणपंचदेवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सीहसेणेणं रण्णा आमंतियाइं समाणाइं सव्वालंकारविभूसियाइं जहाविभवेणं जेणेव सुपइट्ठे णयरे जेणेव सीहसेणे राया तेणेव उवागच्छंति। तए णं से सीहसेणे राया एगूणपंचण्हं देवीसयाणं एगूणगाणं पंचण्हं माइसयाणं कूडागारसालं आवासं दलयइ। तए णं से सीहसेणे राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! विउलं असणं० उवणेह सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं च कूडागारसालं साहरह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव साहरेंति।

तए णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सव्वालंकार विभूसियाइं तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ आसाएमाणा० गंधव्वेहि य णाडएहि य उवगीयमाणाइं उवगीयमाणाइं विहरंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से सीहसेणे राया अद्धरत्तकालसमयंसि बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं संपरिवुडे जेणेव कूडागारसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता कूडागारसालाए दुवाराइं पिहेइ पिहेत्ता कूडागारसालाए सव्वओ समंता अगणिकायं दलयइ। तए णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणगाइं पंचमाइसयाइं सीहरण्णा आलीवियाइं समाणाइं रोयमाणाइं कंदमाणाइं विलवमाणाइं अत्ताणाइं असरणाइं कालधम्मुणा संजुत्ताइं॥१५१॥

कठिन शब्दार्थ - साहरह - ले जाओ, **णाडएहि** - नाटकों द्वारा, **उवगीयमाणाइं** - उपगीयमान-गान की गई, **अद्धरत्तकालसमयंसि** - अर्द्ध रात्रि के समय, **दुवाराइं** - द्वारों को, **पिहेइ** - बंद कराता है, **आलीवियाइं समाणाइं** - आदीप्त की गई-जलाई गई, **अत्ताणाइं** - अत्राण-जिसकी कोई रक्षा करने वाला नहीं हो, **असरणाइं** - अशरण-जिसे कोई शरण देने वाला न हो।

भावार्थ - तदनन्तर वह सिंहसेन किसी अन्य समय पर एक कम पांच सौ देवियों की एक कम पांच सौ माताओं को आमंत्रित करता है। सिंहसेन राजा द्वारा आमंत्रित की हुई वे एक कम पांच सौ देवियों की एक कम पांच सौ माताएं यथाविभव-अपने अपने वैभव के अनुसार सर्वप्रकार के वस्त्राभूषणों से अलंकृत हो, सुप्रतिष्ठ नगर में सिंहसेन राजा के पास आती है। तदनंतर वह सिंहसेन राजा उन एक कम पांच सौ माताओं को कूटाकार शाला में रहने के लिए स्थान देता है। तत्पश्चात् अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहता है कि हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और कूटाकारशाला में विपुल मात्रा में अशनादिक तथा अनेकविध पुष्पों, वस्त्रों, सुगंधित पदार्थों मालाओं और अलंकारों को पहुँचाओ। कौटुम्बिक पुरुष सिंहसेन महाराजा की आज्ञानुसार सारी सामग्री कूटाकारशाला में पहुँचा देते हैं।

तदनन्तर उन एक कम पांच सौ देवियों की एक कम पांच सौ माताओं ने सर्व प्रकार के अलंकारों से अलंकृत हो विपुल अशनादिक तथा सुरा आदि सामग्री का आस्वादन आदि किया और नाटक - नर्तक गंधर्व आदि से उपगीयमान हो आनंदपूर्वक समय व्यतीत करती हैं।

तत्पश्चात् अर्द्ध रात्रि के समय सिंहसेन राजा अनेक पुरुषों से घिरा हुआ जहाँ कूटाकार शाला थी वहाँ पर आया, आकर उसने कूटाकारशाला के सभी दरवाजे बंद करवा दिये और कूटाकारशाला के चारों ओर अग्नि लगवा दी। तदनन्तर वे एक कम पांच सौ देवियों की एक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कम पांच सौ माताएं सिंहसेन राजा के द्वारा जलाई गईं रुदन, आक्रन्दन और विलाप करती हुई त्राण और शरण से रहित हुई कालधर्म को प्राप्त हो गईं।

विवेचन - विषयांध और विषयलोलुप जीव कितना अनर्थ करने पर उतारु हो जाता है - यह सिंहसेन के कथानक से स्पष्ट है। महाराजा सिंहसेन ने महारानी श्यामा के वशीभूत हो कितना बीभत्स आचरण किया, उसका स्मरण करते ही हृदय कांप उठता है। एक कम पांच सौ (४६६) महिलाओं को जीते जी अग्नि में जला देना और इस पर भी मन में पश्चात्ताप नहीं होना, प्रत्युत हर्ष से फूले नहीं समाना, दानवता की पराकाष्ठा है। इस प्रकार सिंहसेन ने घोर पाप कर्मों का उपार्जन किया, जिसका फल उसे भुगतना ही पड़ेगा क्योंकि कर्म के न्यायालय में किसी प्रकार का अंधेर नहीं है।

देवदत्ता के रूप में जन्म

तए णं से सीहसेणे राया एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता चोत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमट्ठिइएसु णेरइयत्ताए उववण्णे, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव रोहीडए णयरे दत्तस्स सत्थवाहस्स कण्हसिरीए भारियाए कुच्छिंसि दारियत्ताए उववण्णे।

तए णं सा कण्हसिरी णवण्हं मासाणं जाव दारियं पयाया सुकुमाल० सुरूवं। तए णं तीसे दारियाए अम्मापियरो णिव्वत्तबारसाहियाए विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति उवक्खडावेत्ता जाव मित्त णाइ० णामधेज्जं करेंति....तं होउ णं दारिया देवदत्ता णामेणं। तए णं सा देवदत्ता दारिया पंचधाईपरिग्गहिया जाव परिवड्ढइ। तए णं सा देवदत्ता दारिया उम्मुक्कबालभावा जोव्वणेण य रूवेण य लावण्णेण य जाव अईव० उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाया यावि होत्था।।१५२।।

भावार्थ - तदनन्तर वह सिंहसेन राजा एतत्कर्मा (यही जिसका कर्म हो) एतत्प्रधान (यही जिसके जीवन की साधना हो) एतद्विध (यही जिसकी विद्या विज्ञान हो) एतत्समुदाचार (यही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिसका समुदाचार-आचरण हो) होता हुआ अत्यधिक पाप कर्म को उपार्जित करके चौतीस सौ (३४००) वर्ष की परमायु पाल कर कालमास में काल करके छठी नरक पृथ्वी में उत्कृष्ट बाईस (२२) सागरोपम स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुआ। तत्पश्चात् सिंहसेन का जीव छठी नरक से निकल कर रोहीतक नगर में दत्त सार्थवाह की कृष्णश्री भार्या के उदर में पुत्री रूप से उत्पन्न हुआ।

तदनन्तर उस कृष्णश्री ने लगभग नौ मास पूर्ण होने पर बालिका को जन्म दिया जो कि सुकुमाल अत्यंत कोमल हाथ पैर वाली यावत् सुरूपा-परम सुंदरी थी। तत्पश्चात् उस कन्या के माता-पिता ने जन्म से ले कर बारहवें दिन विपुल अशनादिक तैयार कराया यावत् मित्र ज्ञाति आदि को निमंत्रित करके, भोजन आदि करा कर कन्या का नामकरण संस्कार करते हुए कहा कि हमारी इस कन्या का नाम देवदत्ता रखा जाता है। तब वह देवदत्ता पांच धायमाताओं से परिगृहीत यावत् वृद्धि को प्राप्त होने लगी। तदनन्तर वह देवदत्ता बालिका बाल्यावस्था से मुक्त होकर यावत् यौवन रूप और लावण्य से अत्यंत उत्तम एवं उत्कृष्ट शरीर वाली हो गई।

विवेचन - सिंहसेन द्वारा किये गये निर्दयता एवं क्रूरता पूर्ण कृत्य तथा उन कर्मों के प्रभाव से छठी नरक में जाना, तत्पश्चात् रोहीतक नगर के दत्त सेठ की सेठानी कृष्णश्री के उदर से लड़की के रूप में उत्पन्न होने आदि का वर्णन प्रस्तुत सूत्र में किया गया है।

देवदत्ता का रूप-लावण्य

तए णं सा देवदत्ता दारिया अण्णया कयाइ ण्हाया जाव विभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता उप्पिं आगासतलगंसि कणगतिंदूसेणं कीलमाणी विहरइ। इमं च णं वेसमणदत्ते राया ण्हाए जाव पायच्छित्ते विभूसिए आसं दुरुहित्ता बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं संपरिवुडे आसवाहणियाए णिज्जायमाणे दत्तस्स गाहावइस्स गिहस्स अदूरसामंतेणं वीईवयइ। तए णं से वेसमणे राया जाव वीईवयमाणे देवदत्तं दारियं उप्पिं आगासतलगंसि कणगतिंदूसेणं कीलमाणिं पासइ, देवदत्ताए दारियाए जोव्वणेण य रूवेण य लावण्णेण य जाव विम्हिए कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी-कस्स णं देवाणुप्पिया! एसा दारिया किं वा णामधेज्जेणं? तए णं ते कोडुंबियपुरिसा वेसमणरायं करयल० एवं वयासी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एस णं सामी! दत्तस्स सत्थवाहस्स धूया कण्हसिरीए भारियाए अत्तया देवदत्ता णामं दारिया जोव्वणेण य रूवेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा।।१५३।।

कठिन शब्दार्थ - खुज्जाहिं - कुब्जाओं से, **आगासतलगंसि** - झरोखे में, **कणगतिंदूसएणं**- सुवर्ण की गेंद से, **कीलमाणी** - खेलती हुई, **आसवाहणियाए** - अश्ववाहनिका-अश्वक्रीड़ा के लिए, **णिज्जायमाणे** - जाता हुआ, **जायविम्हए** - विस्मय को प्राप्त हो।

भावार्थ - तदनन्तर वह देवदत्ता बालिका किसी दिन स्नान करके यावत् समस्त आभूषणों से विभूषित हुई बहुत-सी कुब्जा आदि दासियों के साथ अपने मकान के ऊपर झरोखे में सोने की गेंद के साथ खेल रही थी और इधर स्नानादि से निवृत्त यावत् विभूषित वेश्रमण राजा घोड़े पर सवार हो कर अनेकों सेवकों के साथ अश्वक्रीड़ा के लिए राजमहल से निकल कर दत्त गाथापति के घर के नजदीक से गुजरता है तब वह वैश्रमण राजा यावत् जाते हुए देवदत्ता बालिका को उपर के झरोखे में सोने की गेंद के साथ खेलते हुए देखा, देख कर कन्या के रूप, यौवन और लावण्य से विस्मित होकर राजपुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा - 'हे देवानुप्रियो! यह बालिका किसकी है और इसका क्या नाम है?' तब राजपुरुष हाथ जोड़ कर यावत् इस प्रकार कहने लगे - 'स्वामिन्! यह कन्या सेठ दत्त की पुत्री और कृष्णश्री सेठानी की आत्मजा है। इसका नाम देवदत्ता है। जो कि रूप, यौवन और लावण्य से उत्तम शरीर वाली है।'

देवदत्ता की याचना

तए णं से वेसमणे राया आसवाहणियाओ पडिणियत्ते समाणे अब्भिंतरठाणिज्जे पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! दत्तस्स धूयं कण्हसिरीए भारियाए अत्तयं देवदत्तं दारियं पूसणंदिस्स जुवरण्णो भारियत्ताए वरेह, जइवि सा सयंरज्जसुक्का। तए णं ते अब्भिंतरठाणिज्जा पुरिसा वेसमणेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता ण्हाया जाव सुद्धप्पावेसाइं.....संपरिवुडा जेणेव दत्तस्स गिहे तेणेव उवागच्छित्था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से दत्ते सत्थवाहे ते पुरिसे एज्जमाणे पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ० आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता सत्तट्ठ पयाइं पच्चुग्गए आसणेणं उवणिमंतेइ, उवणिमंतेत्ता ते पुरिसे आसत्थे वीसत्थे सुहासणवरगए एवं वयासी-संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किं आगमणप्पओयणं? तए णं ते रायपुरिसा दत्तं सत्थवाहं एवं वयासी-अम्हे णं देवाणुप्पिया! तव धूयं कण्हसिरीए अत्तयं देवदत्तं दारियं पूसणंदिस्स जुवरण्णो भारियत्ताए वरेमो। तं जइ णं जाणासि देवाणुप्पिया! जुत्तं वा पत्तं वा सलाहणिज्जं वा सरिसो वा संजोगो दिज्जउ णं देवदत्ता दारिया पूसणंदिस्स जुवरण्णो, भण देवाणुप्पिया! किं दलयामो सुक्कं?

तए णं से दत्ते ते अब्भिंतरठाणिज्जे पुरिसे एवं वयासी-एवं चेव णं देवाणुप्पिया! मम सुक्कं जं णं वेसमणे राया मम दारिया णिमित्तेणं अणुगिण्हइ, ते अब्भिंतर ठाणिज्जपुरिसे विउलेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ० पडिविसज्जेइ। तए णं ते ठाणिज्जपुरिसा जेणेव वेसमणे राया तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता वेसमणस्स रण्णो एयमट्ठं णिवेदेंति॥१५४॥

कठिन शब्दार्थ - **आसवाहणियाओ** - अश्व वाहनिका-अश्वक्रीड़ा से, **अब्भितरट्ठाणिज्जे**- अभ्यन्तर स्थानीय-निजी नौकर, खास आदमी अथवा नजदीक के सगे संबंधी, **सयरज्जसुक्का** - स्वकीय राज्यलभ्या है अर्थात् यदि राज्य के बदले भी प्राप्त की जा सके तो भी ले लेनी योग्य है, **सुद्धप्पावेसाइं** - शुद्ध तथा राजसभा आदि में प्रवेश करने योग्य, **वत्थाइं पवरपरिहिया** - प्रधान-उत्तम वस्त्रों को धारण किये हुए, **सत्तट्ठपयाइं** - सात आठ पैर-कदम, **अब्भुग्गए** - आगे जाता है, **उवणिमंतेति** - निमंत्रित करता है, **आसत्थे** - आस्वस्थ-गतिजन्य श्रम के न रहने से स्वास्थ्य-शांति को प्राप्त हुए, **विसत्थे** - विस्वस्थ-मानसिक क्षोभ के अभाव के कारण विशेष रूप से स्वास्थ्य को प्राप्त हुए, **सुहासणवरगए** - सुखपूर्वक उत्तम आसनों पर बैठे हुए, **संदिसंतु णं** - आप फरमावें, **किमागमणप्पओयणं** - आपके आगमन का क्या प्रयोजन है? **जुवरण्णो** - युवराज के लिए, **भारियत्ताए** - भार्या रूप से, **वरेमो** - मांगते हैं, **जुत्तं** - युक्त-हमारी प्रार्थना उचित, **पत्तं** - प्राप्त-अवसर प्राप्त, **सलाहणिज्जं** - श्लाघनीय, **संजोगो** - वरवधू संयोग, **सुक्को** - शुल्क-उपहार, **ठाणपुरिसे** - स्थानीय पुरुषों का, **मल्लालंकारेणं** - माला तथा अलंकार से।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर महाराजा वैश्रमण अश्ववाहनिका-अश्व क्रीड़ा से वापिस आकर अपने अभ्यंतर स्थानीय-अंतरंग पुरुषों को बुलाते हैं बुलाकर उन्हें इस प्रकार कहते हैं कि - हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और जाकर यहाँ के प्रतिष्ठित सेठ दत्त की पुत्री और कृष्णश्री की आत्मजा देवदत्ता नाम की कन्या को युवराज पुष्यनंदी के लिए भार्या रूप से मांग करो। यद्यपि वह स्वकीय राज्य लभ्या है अर्थात् वह यदि राज्य देकर भी प्राप्त की जा सके तो भी ले लेने योग्य है।

महाराजा वैश्रमण की इस आज्ञा को शिराधार्य करके वे अभ्यंतर स्थानीय पुरुष स्नानादि कर, शुद्ध तथा राजसभा आदि में प्रवेश करने योग्य उत्तम वस्त्र पहन कर जहाँ दत्त गाथापति का घर था वहाँ आते हैं। दत्त सेठ भी उन्हें आते देख कर प्रसन्नता पूर्वक आसन से उठ कर सात आठ कदम आगे जाता है और उनका स्वागत कर आसन पर बैठने की प्रार्थना करता है। तदनन्तर आस्वस्थ-गतिजनित श्रम के दूर होने से स्वस्थ तथा विस्वस्थ-मानसिक क्षोभ के न रहने के कारण विशेष रूप से स्वास्थ्य को प्राप्त करते हुए एवं सुख पूर्वक उत्तम आसनों पर बैठे हुए उन अंतरंग पुरुषों से सेठ दत्त इस प्रकार कहता है - 'हे देवानुप्रियो! आपका यहाँ आने का क्या प्रयोजन है? मैं आपके आगमन का हेतु जानना चाहता हूँ।' तब वे राजपुरुष दत्त सेठ से इस प्रकार कहने लगे - 'हे महानुभाव! हम आप की पुत्री और कृष्णश्री की आत्मजा देवदत्ता बालिका को युवराज पुष्यनन्दी के लिये भार्या रूप से मांगने के लिये आये हैं। यदि हमारी यह मांग आपको संगत, अवसर प्राप्त, श्लाघनीय और इन दोनों का संबंध अनुरूप जान पड़ता हो तो देवदत्ता को युवराज पुष्यनंदी के लिए दे दो और कहो कि आपको क्या शुल्क-उपहार दिलवाया जाय?'

तदनन्तर वह दत्त उन अभ्यन्तर स्थानीय पुरुषों से इस प्रकार बोला - हे देवानुप्रियो! यही मेरे लिए शुल्क-उपहार है कि महाराजा वैश्रमण मुझे इस बालिका के निमित्त अनुगृहीत कर रहे हैं। इस प्रकार कहने के बाद उन स्थानीय पुरुषों का दत्त सेठ पुष्प, वस्त्र, गंध, माला और अलंकारादि से यथोचित सत्कार करता है और उन्हें सम्मान पूर्वक विसर्जित करता है। तत्पश्चात् वे स्थानीय पुरुष वैश्रमण राजा के पास आये और आकर उनको उक्त सारा वृत्तांत कह सुनाया।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में वैश्रमण नरेश के द्वारा दत्त पुत्री देवदत्ता की याचना और दत्त की उसके लिए स्वीकृति देना आदि का वर्णन किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवदत्ता का राजा को अर्पण

तए णं से दत्ते गाहावई अण्णया कयाइ सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ, उवक्खडावेत्ता मित्तणाइ० आमंतेइ ण्हाए जाव पायच्छित्ते सुहासणवरगए तेणं मित्त० सद्धिं संपरिवुडे तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणे० विहरइ जिमियभुत्तुत्तराग०-आयंते चोक्खे परमसूइभूए तं मित्त-णाइ-णियग० विउलगंध-पुप्फ जाव अलंकारेणं सक्कारेइ० देवदत्तं दारियं ण्हायं जाव पायच्छित्ता विभूसियसरीरं पुरिससहस्सवाहिणीयं सीयं दुरुहेइ दुरुहित्ता सुबहुमित्त जाव सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव णाइयरवेणं रोहीडयं णयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव वेसमणरण्णो गिहे जेणेव वेसमणे राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेइ, वद्धावेत्ता वेसमणस्स रण्णो देवदत्तं दारियं उवणेइ॥१५५॥

कठिन शब्दार्थ - **सोभणंसि** - शुभ, **तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि** - तिथि, करण, दिन, नक्षत्र और मुहुर्त में, **जिमियभुत्तुत्तरागए** - भोजन के अनन्तर वह उचित स्थान पर आया, **पुरिससहस्सवाहिणिं** - पुरुष सहस्रवाहिनी-हजार पुरुषों से उठाई जाने वाली, **णाइयरवेणं**-नादित ध्वनि से, **वद्धावेइ** - बधाई देता है, **उवणेइ** - अर्पण कर देता है।

भावार्थ - तब दत्त गाथापति किसी अन्य समय शुभ तिथि, करण, दिवस, नक्षत्र और मुहूर्त्त में विपुल अशनादिक सामग्री तैयार करा कर मित्र ज्ञाति स्वजन और संबंधी आदि को आमंत्रित कर स्नान यावत् दुष्ट स्वप्नादि के फल को नाश करने के लिये मस्तक पर तिलक और अन्य मांगलिक कार्य करके सुखप्रद आसन पर स्थित हो उस विपुल अशनादिक का मित्र, ज्ञाति, स्वजन संबंधी एवं परिजनों के साथ आस्वादन, विस्वादन आदि करने के अनन्तर उचित स्थान पर बैठकर आचान्त-आचमन किये हुए, चोक्ष-मुखगत लेपादि को दूर किये हुए अतः परम शुचिभूत हुआ मित्र ज्ञातिजन आदि का विपुल पुष्प, वस्त्र, गंध, माला और अलंकार से सत्कार करता है, सम्मान करता है। तदनन्तर स्नान करा कर यावत् शारीरिक विभूषा से विभूषित की गई देवदत्ता बालिका को एक हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली शिविका में बिठा कर अनेक मित्रों, ज्ञातिजनों आदि से घिरा हुआ सर्व ऋद्धि यावत् वादिन्त्रों के शब्दों के साथ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रोहीतक नगर के मध्य में से होता हुआ वह दत्त सेठ जहां पर वैश्रमण राजा का महल था जहां वैश्रमण राजा विराजमान था वहां पर आता है और आकर दोनों हाथ जोड़ कर यावत् बधाई देता है और देवदत्ता दारिका को वैश्रमण राजा को अर्पण कर देता है।

देवदत्ता का विवाह

तए णं से वेसमणे राया देवदत्तं दारियं उवणीयं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ० विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ, उवक्खडावेत्ता मित्त-णाइ० आमंतेइ जाव सक्कारेइ० पूसणंदिकुमारं देवदत्तं च दारियं पट्टयं दुरुहेइ, दुरुहित्ता सेयापीएहिं कलसेहिं मज्जावेइ, मज्जावेत्ता वरणेवत्थाइं करेइ, करेत्ता अग्गिहोमं करेइ, करेत्ता पूसणंदिकुमारं देवदत्ताए दारियाए पाणिं गिण्हावेइ। तए णं से वेसमणे राया पूसणंदिकुमारस्स देवदत्तं दारियं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं पाणिग्गहणं करेइ, करेत्ता देवदत्ताए दारियाए अम्मापियरो मित्त जाव परियणं च विउलेणं असणं० वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेइ संमाणेइ जाव पडिविसज्जेइ॥१५६॥

भावार्थ - तदनन्तर वैश्रमण राजा अर्पण की गई देवदत्ता कन्या को देख कर बड़े प्रसन्न हुए और विपुल अशनादिक को तैयार करा कर मित्रों, ज्ञातिजनों, निजकों, संबंधियों और परिजनों को आमंत्रित कर उन्हें भोजनादि करा कर उन का वस्त्र, गंध, माला और अलंकार आदि से सत्कार-सम्मान करते हैं। तदनन्तर पुष्यनंदी कुमार और देवदत्ता कन्या को फलक पर बिठा कर श्वेत और पीले (चांदी और सोने के) कलशों से उनका अभिषेक कराते हैं तत्पश्चात् उन्हें सुंदर वेशभूषा से सुसज्जित कर अग्निहोम-हवन कराते हैं, हवन करा कर पुष्यनंदी कुमार और देवदत्ता का पाणिग्रहण (विवाह) कराते हैं। तदनंतर वह वैश्रमण राजा पुष्यनंदी कुमार को तथा देवदत्ता को सर्व ऋद्धि यावत् वादित्रादि के शब्द से महान् ऋद्धि-वस्त्रालंकार सम्पत्ति और सत्कार सम्मान के साथ दोनों का विवाह संस्कार कराते हैं। विवाह संस्कार हो जाने के बाद देवदत्ता के माता पिता और उनके अन्य मित्र यावत् परिजनों का भी विपुल अशनादिक तथा वस्त्र, गंध, माला और अलंकार आदि से सत्कार करते हैं सम्मान करते हैं, सत्कार सम्मान करने के बाद उन सब को विदा करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

• **विवेचन** - प्रस्तुत सूत्र में वैश्रमण राजा द्वारा समारोह पूर्वक संपन्न कराये गये युवराज पुष्यनंदी और देवदत्ता के विवाह का विस्तृत वर्णन किया गया है।

पुष्यनंदी द्वारा मातृसेवा

तए णं से पूसणंदी कुमारे देवदत्ताए सद्धिं उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसइबद्धणाडएहिं उवगिज्जमाणे जाव विहरइ। तए णं से वेसमणे राया अण्णया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते णीहरणं जाव राया जाए।

तए णं से पूसणंदी राया सिरीए देवीए मायाभत्तए यावि होत्था, कल्लाकल्लिं जेणेव सिरी देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सिरीए देवीए पायवडणं करेइ करेत्ता सयपागसहस्स-पागेहिं तेल्लेहिं अब्भंगावेइ अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए (चम्मसुहाए) रोमसुहाए चउव्विहाए संवाहणाए संवाहावेइ संवाहावेत्ता सुरभिणा गंधवट्टएणं उव्वट्टावेइ उव्वट्टावेत्ता तिहिं उदएहिं मज्जावेइ तंजहा - उसिणोदएणं सीओदएणं गंधोदएणं, मज्जावेत्ता विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं भोयावेइ भोयावेत्ता सिरीए देवीए ण्हायाए जाव पायच्छित्ताए जिमियभुत्तुत्तरागयाए तए णं पच्छा ण्हाइ वा भुंजइ वा उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥१५७॥

कठिन शब्दार्थ- **पासायवरगए** - उत्तम महल में ठहरा हुआ, **फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं**- बज रहे हैं मृदंग जिनमें ऐसे, **बत्तीसइबद्धणाडएहिं** - बत्तीस प्रकार के नाटकों द्वारा, **सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं** - शतपाक और सहस्रपाक-सौ और हजार औषधियों के मिश्रण से बनाये हुए तैलों से, **अब्भंगावेइ** - मालिश करता है, **अट्ठिसुहाए** - अस्थि को सुख देने वाले, **तयासुहाए** - त्वचा को सुखप्रद, **संवाहणाए** - संवाहना-अंग मर्दन से।

भावार्थ - तदनन्तर राजकुमार पुष्यनंदी देवदत्ता भार्या के साथ उत्तम प्रासाद में विविध प्रकार के वाद्य और जिनमें मृदंग बज रहे हैं ऐसे बत्तीस प्रकार के नाटकों द्वारा उपगीयमान (प्रशंसित) होते हुए यावत् समय व्यतीत करने लगे। कुछ समय पश्चात् राजा वैश्रमण कालधर्म को प्राप्त हो गये। उनका निस्सरण यावत् मृतक कर्म करके युवराज पुष्यनंदी राजा बन गया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजा बनने के बाद पुष्यनन्दी अपनी माता श्रीदेवी की निरन्तर भक्ति-सेवा करने लगा। वह प्रतिदिन माता के पास जाकर उनके चरण वंदन करता है तदनन्तर शतपाक और सहस्रपाक तैलों की मालिश से अस्थि, मांस, त्वचा और रोमों को सुखकारी, ऐसी चार प्रकार की संवाहना-अंगमर्दन से-सुखशांति पहुंचाता है। तदनन्तर सुगंधित गंधवर्तक-बटने से उद्वर्तन करता है। तीन प्रकार के जलों (उष्ण, शीत और सुगंधित) से स्नान कराता है तत्पश्चात् विपुल अशनादिक का भोजन कराता है। इस प्रकार श्रीदेवी के भोजनादि से निवृत्त हो जाने और सुखासन पर विराजने के बाद वह स्नान करता है, भोजन करता है और मनुष्य संबंधी उदार-प्रधान भोगों का उपभोग करते हुए समय व्यतीत करता है।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में पिता के स्वर्गवास के बाद राजा पुष्यनंदी द्वारा अपने आचरण से मातृसेवा का जो आदर्श उपस्थित किया गया है वह प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

श्रीदेवी की अकाल मृत्यु

तए णं तीसे देवदत्ताए देवीए अण्णया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीए इमेयारूवे अज्झत्थिए ५ समुप्पण्णे-एवं खलु पूसणंदी राया सिरीए देवीए माइभत्ते जाव विहरइ तं एएणं वक्खेवेणं णो संचाएमि अहं पूसणंदिणा रण्णा सद्धिं उरालाइंमाणुस्सगाइं भोगभोगाइ भुंजमाणी विहरित्तए तं सेयं खलु मम सिरिदेविं अग्गिपओगेण वा सत्थपओगेण विसपओगेण मंतप्पओगेण वा जीवियाओ ववरोवित्तए ववरोवित्ता पूसणंदिणा रण्णा सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणीए विहरित्तए, एवं संपेहेइ संपेहित्ता सिरीए देवीए अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणी विहरइ।

तए णं सा सिरी देवी अण्णया कयाइ मज्जाइया विरहियसयणिज्जंसि सुहपसुत्ता जाया यावि होत्था। इमं च णं देवदत्ता देवी जेणेव सिरी देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिरीदेवीं मज्जाइयं विरहियसयणिज्जंसि सुहपसुत्तं पासइ, पासित्ता दिसालोयं करेइ, करेत्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता लोहदंडं परामुसइ परामुसित्ता लोहदंडं तावेइ, तावेत्ता तत्तं समजोइभूयं फुल्लकिंसुयसमाणं संडासएणं गहाय जेणेव सिरी देवी तेणेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिरीए देवीए अवाणंसि पक्खिवइ। तए णं सा सिरी देवी महया महया सद्देणं आरसित्ता काल- धम्मुणा संजुत्ता॥१५८॥

कठिन शब्दार्थ - **वक्खेवेणं** - व्यक्षेप-बाधा से, **विरहियसयणिज्जंसि** - एकान्त में अपनी शय्या पर, **सुहपसुत्ता** - सुखपूर्वक सोई हुई, **दिसालोयं** - दिशा का अवलोकन, **लोहदंडं** - लोहे के दण्डे को, **तवावेइ** - तपाती है, **तत्तं** - तप्त-तपा हुआ, **समजोइभूयं** - अग्नि के समान देदीप्यमान, **फुल्लकिंसुयसमाणं** - खिले हुए किंशुक-केसू के फूल के समान, **संडासएणं** - संडासी से, **अवाणंसि** - अपान-गुह्य स्थान में, **आरसित्ता** - आक्रन्दन कर।

भावार्थ - तदनन्तर किसी समय मध्य रात्रि में कौटुम्बिक जागरणा-कुटुम्ब संबंधी चिंता के कारण जागती हुई देवदत्ता के मन में इस प्रकार संकल्प उत्पन्न हुआ कि पुष्यनंदी राजा माता श्रीदेवी का इस प्रकार भक्त बना हुआ यावत् विचरण करता है कि मैं इस बाधा से महाराज पुष्यनंदी के साथ उदार मनुष्य संबंधी कामभोगों का उपभोग करने में समर्थ नहीं हूं। इसलिये मुझे अब यही करना योग्य है कि अग्नि प्रयोग, शस्त्रप्रयोग अथवा विष प्रयोग से श्रीदेवी को जीवन से रहित कर पुष्यनंदी राजा के साथ उदार-प्रधान मनुष्य संबंधी विषयभोगों का सेवन करती हुई विचरूं, ऐसा विचार कर वह श्रीदेवी को मारने के लिये अन्तर, छिद्र और विरह की अर्थात् उचित अवसर की प्रतीक्षा में रहने लगी।

तदनन्तर किसी समय श्रीदेवी स्नान किये हुए एकान्त शयनीय स्थान में सुखपूर्वक सोई हुई थी। इधर देवदत्ता देवी जहां श्रीदेवी थी वहां पर आती है और आकर माता श्रीदेवी को स्नान कराई हुई एकान्त में अपनी शय्या पर सुख से सोई देखती है देख कर दिशा का अवलोकन करती है अर्थात् चारों ओर देखती है। तदनन्तर जहां भक्तगृह-रसोई थी वहां आई आकर एक लोहे के दंड को अग्नि में तपाया, जब वह तप्त अग्नि जैसा और केसू के फूल के समान लाल हो गया, उसे संडासी से पकड़ कर जहां पर श्रीदेवी थी वहां पर आई और उस तपे हुए लोहदण्ड को श्रीदेवी के गुह्य स्थान में प्रविष्ट कर दिया फलस्वरूप श्रीदेवी अति महान् शब्द से आक्रन्दन कर, चिल्ला चिल्ला कर काल कर गई।

राजा को सूचना

तए णं तीसे सिरीए देवीए दासचेडीओ आरसियसद्दं सोच्चा णिसम्म जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता देवदत्तं देविं तओ अवक्कममाणिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पासंति पासित्ता जेणेव सिरी देवी तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सिरिं देविं णिप्पाणं णिच्चेट्ठं जीवियविप्पजढं पासंति, पासित्ता हा हा! अहो अकज्जमितिकट्टु रोयमाणीओ कंदमाणीओ विलवमाणीओ जेणेव पूसणंदी राया तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता पूसणंदिं रायं एवं वयासी-एवं खलु सामी! सिरी देवी देवदत्ताए देवीए अकाले चेव जीवियाओ ववरोविया॥१५६॥

कठिन शब्दार्थ - आरसियसद्दं - आरसित शब्द-आक्रन्दनमय शब्द, **णिप्पाणं** - निष्प्राण, **णिच्चेट्ठं** - निश्चेष्ट-चेष्टा रहित, **जीवविप्पजढं** - जीवन रहित, **अकज्जमिति** - बड़ा अनर्थ हुआ इस प्रकार, **रोयमाणीओ** - रुदन करती हुई।

भावार्थ - तदनन्तर उस भयानक चित्कार शब्द को सुन कर श्रीदेवी की दास दासियाँ वहां दौड़ी आई, आते ही उन्होंने वहां से देवदत्ता को जाते हुए देखा और जब वे श्रीदेवी के पास गई तो उन्होंने श्रीदेवी को प्राण रहित, चेष्टारहित और जीवन रहित पाया। इस प्रकार श्रीदेवी को मृत देखकर हा! हा! अहो! बड़ा अनर्थ हुआ। इस प्रकार कह कर रुदन, आक्रन्दन तथा विलाप करती हुई जहां पर पुष्यनंदी राजा था वहां पर आती है और आकर इस प्रकार कहने लगी-'हे स्वामिन्! श्रीदेवी को देवदत्ता देवी ने अकाल में ही जीवन से रहित कर दिया, मार दिया।'

विवेचन - विषयलोलुपी मानव को कर्त्तव्याकर्त्तव्य या उचितानुचित का कुछ भी भान नहीं रहता। उसका एक मात्र ध्येय विषय वासना की पूर्ति ही होता है। इसके लिये उसे भले ही बड़े से बड़ा अनर्थ भी क्यों नहीं करना पड़े।

विषय वासना की भूखी विवेकशून्या देवदत्ता ने भी मात्र अपने पति की चाह में जिसका कि विषयपूर्ति के अतिरिक्त कोई भी उद्देश्य नहीं था, उसकी तीर्थ समान पूज्या माता का जिस निर्दयता से प्राणान्त किया उसका वर्णन सूत्रकार ने प्रस्तुत सूत्र में किया है। यह सब कुछ मानवता का पतन करने वाली आत्मघातिनी कामवासना का ही दूषित परिणाम है।

दास दासियों द्वारा राजमाता श्रीदेवी की अकाल मृत्यु का समाचार ज्ञात होने पर महाराज पुष्यनंदी पर क्या असर पड़ा और उन्होंने क्या किया उसका वर्णन इस सूत्र में करते हैं -

पुष्यनंदी का कोप

तए णं से पूसणंदी राया तासिं दासचेडीणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म महया माइसोएणं अप्फुण्णे समाणे परसुणियत्ते विव चंपगवरपायवे धसत्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धरणीयलंसि सव्वंगेहिं संणिवडिए। तए णं से पूसणंदी राया मुहुत्तंतरेण आसत्थे वीसत्थे समाणे बहूहिं राईसर जाव सत्थवाहेहिं मित्त जाव परियणेण य सद्धिं रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे सिरीए देवीए महया इड्डीए णीहरणं करेइ, करेत्ता आसुरुत्ते० देवदत्तं देविं पुरिसेहिं गिण्हावेइ एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेइ। तं एवं खलु गोयमा! देवदत्ता देवी पुरापुराणाणं....विहरइ॥१६०॥

कठिन शब्दार्थ - **दासचेडीणं** - दास और चेटियों-दासियों के, **माइसोएणं** - मातृशोक से, **अप्फुण्णे समाणे**- आक्रान्त हुआ, **परसुणियत्ते** - परशु-कुल्हाडे से काटे हुए, **चंपगवरपायवे**- चम्पकवरपादप-श्रेष्ठ चंपक वृक्ष की, **विव** - तरह, **धसत्ति** - धस (गिरने की ध्वनि क अनुकरण) ऐसे शब्द से अर्थात् धड़ाम से, **धरणीयलंसि** - पृथ्वी तल पर, **सव्वंगेहिं** - सव अंगों से, **सण्णिवडिए**- गिर पड़ा, **मुहुत्तंतरेण** - एक मुहूर्त के बाद, **विहाणेणं** - विधान से, **वज्झं** - वध्या-हंतव्या।

भावार्थ - तदनन्तर वह पुष्यनंदी राजा उन दासदासियों से इस वृत्तांत को सुन कर, उस पर विचार कर महान् मातृशोक से आक्रान्त हुआ। परशु-कुल्हाडे से काटे गये चंपक वृक्ष के समान धड़ाम से पृथ्वीतल पर सर्व अंगों से गिर पड़ा। तदनन्तर मुहूर्त के बाद वह पुष्यनंदी राजा आश्वस्त हो अनेक राजा, ईश्वर यावत् सार्थवाह के साथ और मित्रों आदि यावत् परिजनों के साथ रुदन, आक्रन्दन और विलाप करता हुआ महान् ऋद्धि तथा सत्कार समुदाय से श्रीदेवी की अरथी निकालता है। तत्पश्चात् क्रोधातिरेक से लाल पीला हो वह देवदत्ता देवी को राजपुरुषों से पकड़वाता है और पकड़वा कर इस विधान से यह वध्या-मारी जाएं ऐसी आज्ञा देता है। इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! देवदत्ता देवी पूर्वकृत पाप कर्मों का फल भोगती हुई विचरण कर रही है।

विवेचन - दासदासियों के द्वारा राजमाता श्रीदेवी की मृत्यु का वृत्तांत सुनने तथा अपनी प्रियतमा देवदत्ता द्वारा उसका क्रूरता पूर्ण वध किये जाने के समाचार से रोहीतक नरेश पुष्यनंदी के हृदय पर गहरा आघात हुआ, वे कुठार से कटी गई चम्पक वृक्ष की शाखा के समान धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़े। मूर्च्छा दूर होने पर राजोचित ठाठ से राजमाता का निस्सरण यावत् मृतक कर्म किया। तत्पश्चात् क्रोधावेश में देवदत्ता को पकड़वा कर उसका अमुक प्रकार से वध करने की आज्ञा प्रदान की।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंतिम तीर्थंकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी को फरमाया - 'हे गौतम! आज तुमने जिस भीषण दृश्य को देखा है और जिस स्त्री की मेरे पास चर्चा की है यह वही देवदत्ता है। देवदत्ता के लिये पुष्यनंदी राजा ने इस प्रकार दण्ड देने तथा वध करने की आज्ञा प्रदान की है। अतः हे गौतम! यह पूर्वकृत कर्मों का ही कटु फल है।'

अब सूत्रकार देवदत्ता के भावी जीवन का कथन करते हैं -

भविष्य-पृच्छा

देवदत्ता णं भंते! देवी इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छि(मि)हिइ कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! असीइं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववण्णा संसारो वणस्सइ..... तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता गंगपुरे णयरे हंसत्ताए पच्चायाहिइ, से णं तत्थ साउणिएहिं वहिए समाणे तत्थेव गंगपुरे णयरे सेट्ठिकु० बोहिं.......सोहम्मे.........महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ०॥णिक्खेवो॥१६१॥

॥ णवमं अज्झयणं समत्तं॥

कठिन शब्दार्थ - हंसत्ताए - हंस रूप से, **साउणिएहिं -** शाकुनिकों-शिकारियों के द्वारा।

भावार्थ - हे भगवन्! देवदत्ता देवी यहां से कालमास में काल करके कहां जाएगी? कहां पर उत्पन्न होगी?

हे गौतम! देवदत्ता देवी अस्सी (८०) वर्षों की परम आयु पाल कर कालमास में काल करके रत्नप्रभा नामक नरक में उत्पन्न होगी। पूर्ववत् शेष संसार परिभ्रमण करती हुई यावत् वनस्पतिगत नीम आदि कटु वृक्षों में तथा कटु दुग्ध वाले अर्क आदि पौधों में लाखों बार उत्पन्न होगी। वहां से अंतर रहित निकल कर गंगापुर नगर में हंस रूप से उत्पन्न होगी। वह हंस शाकुनिकों द्वारा वध किये जाने पर उसी गंगापुर नगर में श्रेष्ठिकुल में पुत्र रूप से जन्म लेगा, वहां सम्यक्त्व को प्राप्त कर सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होगा वहां से महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होगा जहां चारित्र ग्रहण कर सिद्धि प्राप्त करेगा। केवलज्ञान द्वारा समस्त पदार्थों को जानेगा, सम्पूर्ण कर्मों से रहित हो जाएगा, सकल कर्मजन्य संताप से रहित हो जाएगा तथा सब दुःखों का अंत करेगा। निक्षेप-उपसंहार पूर्ववत् समझ लेना चाहिये।

विवेचन - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी द्वारा कथित देवदत्ता के पूर्वजन्म संबंधी वृत्तांत सुन लेने के बाद गौतमस्वामी को उसके आगामी भवों की जिज्ञासा हुई। गौतमस्वामी की जिज्ञासा का समाधान करते हुए प्रभु ने उसके भविष्य का कथन किया जो भावार्थ से स्पष्ट है। सम्यक्त्व प्राप्ति के पश्चात् ही जीवन उत्थान के मार्ग पर अग्रसर होता है और उत्तरोत्तर सम्यक् पुरुषार्थ करता हुआ कर्मबंधनों को काट कर मोक्ष के अव्याबाध सुखों को प्राप्त करता है। यही देवदत्ता के कथानक का सार है।

"**णिक्खेवो**"-निक्षेप शब्द से इस अध्ययन का उपसंहार इस प्रकार समझना चाहिये - "हे जम्बू! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक सूत्र के नौवें अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है जो मैंने तुम्हें सुनाया है। जैसा मैंने सुना है वैसा ही तुम्हें कहा है, इसमें मेरी कोई निजी कल्पना नहीं है।"

प्रस्तुत अध्ययन में विषयासक्ति की भयंकरता का दिग्दर्शन कराया गया है। कामासक्त व्यक्ति का पतन किस प्रकार होता है और वह किस हद तक अनर्थ कर देता है। अपने द्वारा बांधे हुए दुष्कर्मों का फल उसे रोते रोते किस प्रकार भुगतना पड़ता है। यह देवदत्ता के कथानक से स्पष्ट होता है। अतः मोक्षाभिलाषी प्राणी को विषय वासनाओं से दूर रहते हुए अपने जीवन को संयमित और मर्यादित बनाना चाहिये तभी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकेगा।

॥ नवम अध्ययन समाप्त ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंजू णामं दसमं अज्झयणं

अंजू नामक दसवां अध्ययन

आगमकार दुःखविपाक सूत्र के नौवें अध्ययन में देवदत्ता के कथानक से विषय भोगों के दुष्परिणामों का दिग्दर्शन कराने के बाद अंजू नामक इस दसवें अध्ययन में भी विषय वासना के जंजाल में फंस कर देवदुर्लभ मानव भव का दुरुपयोग करने वाली अंजूश्री नामक एक नारी के जीवन का वर्णन करते हैं, जिसका प्रथम सूत्र इस प्रकार हैं -

उत्क्षेप-प्रस्तावना

जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं दसमस्स उक्खेवो एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वद्धमाणपुरे णामं णयरे होत्था, विजयवद्धमाणे उज्जाणे, माणिभद्दे जक्खे, विजयमित्ते राया, तत्थ णं धणदेवे णामं सत्थवाहे होत्था अड्ढे०, पियंगू णामं भारिया, अंजू दारिया जाव सरीरा, समोसरणं परिसा जाव पडिगया।।१६२।।

भावार्थ - दशवें अध्ययन के उत्क्षेप-प्रस्तावना की कल्पना पूर्व की भांति कर लेनी चाहिये। हे जंबू! उस काल उस समय में वर्द्धमानपुर नामक एक नगर था। वहां विजय वर्द्धमान नामक उद्यान था। उसमें माणिभद्र यक्ष का यक्षायतन था। विजयमित्र वहां के राजा थे। वहां पर धनदेव नामक एक सार्थवाह रहता था जो कि बहुत धनवान एवं प्रतिष्ठित था। उसके प्रियंगू नामक भार्या थी तथा उसकी अञ्जू नाम की एक बालिका थी जो उत्कृष्ट-उत्तम शरीर वाली थी। उस काल उस समय में विजय वर्द्धमान नामक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पदार्पण हुआ यावत् परिषद् धर्मदेशना सुन कर वापिस चली गई।

विवेचन - विपाक सूत्र के नौवें अध्ययन में दत्त सेठ की पुत्री और कृष्णश्री की आत्मजा देवदत्ता का आद्योपान्त वृत्तांत सुनने के बाद जंबूस्वामी ने आर्य सुधर्मास्वामी से नम्रतापूर्वक निवेदन किया - हे भगवन्! दुःखविपाक सूत्र के नववें अध्ययन का भाव आपके श्रीमुख से सुनने के बाद अब मेरी दसवें अध्ययन का भाव सुनने की इच्छा है सो कृपा कर फरमाइये कि श्रमण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के दशवें अध्ययन का क्या अर्थ प्रतिपादन किया है। जंबूस्वामी की इस जिज्ञासा का समाधान करने के लिये आर्य सुधर्मा स्वामी ने उपरोक्तानुसार दशवें अध्ययन का प्रारंभ किया है।

पूर्वभव-पृच्छा

तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे जाव अडमाणे जाव विजयमित्तस्स रण्णो गिहस्स असोगवणियाए अदूरसामंतेणं वीईवयमाणे पासइ एगं इत्थियं सुक्कं भुक्खं णिम्मंसं किडिकिडियाभूयं अट्ठिचम्मावणद्धं णीलसाडगणियत्थं कट्ठाइं कलुणाइं वीसराइं कूवमाणिं पासइ० चिंता तहेव जाव एवं वयासी-सा णं भंते! इत्थिया पुव्वभवे का आसी? वागरणं॥१६३॥

कठिन शब्दार्थ - **सुक्कं** - सूखी हुई, **भुक्खं** - बुभुक्षित, **णिम्मंसं** - मांस रहित, **किडिकिडियाभूयं** - किटिकिटि शब्द से युक्त अर्थात् जिसके शरीर की हड्डियां किटिकिटि शब्द कर रही है, **अट्ठिचम्मावणद्धं** - अस्थिचर्मावनद्ध-जिसका चर्म अस्थियों से चिपटा हुआ है, **णीलसाडगणियत्थं** - जो नीली साड़ी पहने हुए हैं ऐसी, **कट्ठाइं** - कष्टात्मक-कष्टप्रद, **कलुणाइं**- करुणोत्पादक, **वीसराइं** - दीनतापूर्वक वचन, **कूवमाणिं** - बोलती हुई, **वागरणं** - प्रतिपादन करना।

भावार्थ - उस काल उस समय में भगवान् के ज्येष्ठ शिष्य गौतमस्वामी यावत् भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए विजयमित्र राजा के घर की अशोकवनिका के समीप जाते हुए एक सूखी हुई बुभुक्षित, निर्मांस, किटिकिटि शब्द करती हुई अस्थिचर्मावनद्ध नीली साड़ी पहने हुए, कष्टमय, करुणाजनक तथा दीनतापूर्ण वचन बोलती हुई एक स्त्री को देखते हैं, देख कर विचार करते हैं। शेष पूर्वानुसार यावत् भगवान् से आकर इस प्रकार बोले - 'हे भगवन्! यह स्त्री पूर्वभव में कौन थी?' इसके उत्तर में भगवान् महावीर स्वामी प्रतिपादन करते हैं।

भगवान् का समाधान

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे इंदपुरे णामं णयरे होत्था। तत्थ णं इंददत्ते राया पुढवीसिरी णामं गणिया होत्था

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वण्णओ। तए णं सा पुढवीसिरी गणिया इंदुपुरे णयरे बहवे राईसर जाव प्पभियओ बहूहिं चुण्णप्पओगेहि य जाव आभिओगेत्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ। तए णं सा पुढवीसिरी गणिया एयकम्मा एयप्पहाणा एयविज्जा एयसमायारा सुबहुं समज्जिणित्ता पणतीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए उक्कोसेणं० णेरइयत्ताए उववण्णा॥१६४॥

भावार्थ - हे गौतम! इस प्रकार निश्चय ही उस काल और उस समय इसी जंबूद्वीप नामक द्वीप के अंतर्गत भारतवर्ष में इन्द्रपुर नाम का एक नगर था। वहां इन्द्रदत्त राजा राज्य करता था। नगर में पृथ्वीश्री नाम की एक गणिका-वेश्या थी जिसका वर्णन पूर्वानुसार समझ लेना चाहिये। वह पृथ्वीश्री गणिका इन्द्रपुर नगर में अनेक ईश्वर, तलवर यावत् सार्थवाह आदि लोगों को चूर्ण आदि के प्रयोगों से वश में करके मनुष्य संबंधी उदार-मनोज्ञ कामभोगों को भोगती हुई समय व्यतीत कर रही थी। तदनन्तर वह पृथ्वीश्री गणिका एतत्कर्मा, एतत्प्रधान, एतद्विध, एतत्समाचार बनी हुई अत्यधिक पाप कर्मों का उपार्जन कर पैंतीस सौ (३५००) वर्ष की परम आयु भोग कर कालमास में काल करके छठी नरक में २२ सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुई।

विवेचन - वशीकरण के लिये अमुक प्रकार के द्रव्यों का मंत्रोच्चारणपूर्वक या बिना मंत्र के जो सम्मेलन किया जाता है उसे चूर्ण कहते हैं। यह चूर्ण जिस व्यक्ति पर प्रक्षेप किया जाता है या खिलाया जाता है वह प्रक्षेप करने वाले या खिलाने वाले के वश में हो जाता है। पृथ्वीश्री नामक वेश्या ने काममूलक विषयवासना की पूर्ति के लिये गुप्त या प्रकट रूप से जिन पाप कर्मों को एकत्रित किया उसके फलस्वरूप वह छठी नरक में उत्पन्न हुई और अपने कृत कर्मों का फल भोगा।

अंजूश्री का सुखोपभोग

सा णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव व वद्धमाणपुरे णयरे धणदेवस्स सत्थवाहस्स पियंगुभारियाए कुच्छिंसि दारियत्ताए उववण्णा। तए णं सा पियंगुभारिया णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं दारियं पयाया, णामं अंजुसिरी, सेसं जहा देवदत्ताए। तए णं से विजए राया आसवाह० जहा वेसमणदत्ते तहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंजुं पासइ णवरं अप्पणो अट्ठाए वरेइ जहा तेयली जाव अंजूए भारियाए सद्धिं उप्पिं जाव विहरइ॥१६५॥

भावार्थ - वह वहां से निकल कर इसी वर्द्धमान नगर में धनदेव सार्थवाह की प्रियंगू भार्या के उदर में कन्या रूप से उत्पन्न हुई। तदनन्तर उस प्रियंगू भार्या ने नौ मास लगभग परिपूर्ण होने पर एक बालिका को जन्म दिया जिसका नाम 'अंजूश्री' रखा गया। उसका शेष वर्णन देवदत्ता की तरह समझ लेना चाहिये। तदनन्तर विजयमित्र राजा अश्वक्रीडा के निमित्त जाते हुए वैश्रमणदत्ता की तरह अंजूश्री को देखते हैं उसमें इतनी विशेषता है कि वह उसे अपने लिये मांगते हैं। जिस प्रकार तेतलि यावत् अंजूश्री नामक बालिका के साथ उन्नत प्रासाद में यावत् सानंद समय व्यतीत करते हैं।

विवेचन - अंजूश्री का जीवन वृत्तांत भी देवदत्ता के समान ही है। ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र के चौदहवें अध्ययन में वर्णित तेतलिपुत्र के समान विजयमित्र राजा अंजूश्री की अपनी भार्या के रूप में याचना करते हैं और अंजूश्री के साथ पाणिग्रहण करके विजयमित्र मानव संबंधी उदार विषय भोगों को भोगते हुए समय व्यतीत करने लगे।

अंजूश्री की महावेदना

तए णं तीसे अंजूए देवीए अण्णया कयाइ जोणिसूले पाउब्भूए यावि होत्था। तए णं से विजए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं देवाणुप्पिया! वद्धमाणपुरे णयरे सिंघाडग जाव एवं वयह-एवं खलु देवाणुप्पिया! विजय० अंजूए देवीए जोणिसूले पाउब्भूए जो णं इच्छइ वेज्जो वा ६.....जाव उग्घोसेंति।

तए णं ते बहवे वेज्जा० ६ इमं एयारूवं सोच्चा णिसम्म जेणेव विजए राया तेणेव उवागच्छंति० उप्पत्तियाहिं० परिणामेमाणा इच्छंति अंजूए देवीए जोणिसूलं उवसामित्तए णो संचाएंति उवसामित्तए। तए णं ते बहवे वेज्जा य ६ जाहे णो संचाएंति अंजू० जोणिसूलं उवसामित्तए ताहे संता तंता परितंता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तए णं सा अंजूदेवी ताए वेयणाए अभिभूया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाणी सुक्का भूक्खा णिम्मंसा कट्ठाइं कलुणाइं वीसराइं विलवइ। एवं खलु गोयमा! अंजूदेवी पुरापोराणाणं जाव विहरइ॥१६६॥

कठिन शब्दार्थ - जोणिसूले - योनि शूल-योनि में होने वाली असह्य वेदना, **परिणामेमाणा**- परिणाम को प्राप्त कर, **उवसामित्ताए** - उपशांत करने में, **अभिभूया** - अभिभूत-युक्त, **कट्ठाइं** - कष्ट हेतुक, **विलवइ** - विलाप करती है।

भावार्थ - तदनन्तर उस अंजूदेवी के किसी अन्य समय में योनिशूल नामक रोग उत्पन्न हुआ। तब विजयमित्र राजा ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहा - हे देवानुप्रियो! तुम वर्धमानपुर नगर में जा कर वहां के त्रिपथ यावत् सामान्य मार्गों में इस प्रकार उद्घोषणा करो कि अंजूश्री देवी की योनि में तीव्र वेदना उत्पन्न हो गई है अतः जो कोई वैद्य या वैद्यपुत्र आदि उसे उपशांत कर देगा तो राजा विजयमित्र उसे विपुल धन प्रदान करेंगे।

तदनन्तर राजाज्ञा से अनुचरों द्वारा की गई इस उद्घोषणा को सुन कर नगर के बहुत वैद्य, वैद्यपुत्र आदि विजयमित्र राजा के पास आते हैं और आकर अंजूदेवी के पास उपस्थित होते हैं तथा औत्पातिकी आदि बुद्धियों के द्वारा परिणाम को प्राप्त कर विविध प्रकार के प्रयोगों से अंजूदेवी के योनिशूल को उपशांत करने का प्रयत्न करते हैं किंतु वे अंजूदेवी के रोग को उपशांत करने में सफल नहीं हो सके। तदनन्तर जब वे अनुभवी वैद्य आदि अंजूश्री के योनिशूल को उपशांत करने में समर्थ नहीं हो सके तब वे खिन्न, श्रान्त और हतोत्साहित हो जिधर से आये थे उसी दिशा में वापिस चले गये। तत्पश्चात् अंजूश्री देवी उस योनिशूल की वेदना से दुःखी होकर सूखने लगी, भूखी रहने लगी और मांस रहित हो कर कष्ट, करुणा युक्त और दीनतापूर्ण वचनों से विलाप करती हुई समय व्यतीत करने लगी।

इस प्रकार निश्चय ही हे गौतम! अंजूश्री अपने पूर्व संचित पाप कर्मों के अशुभ फल को भोग रही है।

विवेचन - अंजूदेवी के जब तक शुभ कर्मों का उदय रहा तब तक वह विजयमित्र राजा के साथ सुखोपभोग करती रही किंतु जब अशुभ कर्मों के उदय से योनिशूल रोग उत्पन्न हुआ तो वह उस तीव्र वेदना को सहन नहीं कर पाई। राजा विजयमित्र एवं वैद्यपुत्रों आदि के रोग शांत करने के सारे उपाय जब निष्फल हुए तो अंजूश्री असह्य वेदना से रात दिन विलाप करती हुई जीवन यापन करती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार वर्णन करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी गौतमस्वामी को फरमाते हैं कि हे गौतम! तुमने विजयमित्र राजा की अशोकवाटिका के समीप आन्तरिक वेदना से दुःखी होकर विलाप करती हुई जिस स्त्री को देखा था यह वही अंजूश्री है जो अपने पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मों के कारण दुःखमय विपाक का अनुभव कर रही है।

अंजूश्री के जीवन वृत्तांत को सुन कर और उसके शरीरगत रोग को असाध्य जान कर मृत्यु के पश्चात् वह कहां जाएगी? इस जिज्ञासा से पुनः गौतमस्वामी प्रभु से पृच्छा करते हैं -

भविष्य-पृच्छा

अंजू णं भंते! देवी इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ? कहिं उववज्जिहिइ?

गोयमा! अंजू णं देवी णउइं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिइ, एवं संसारो जहा पढमे तहा णेयव्वं जाव वणस्सइ०, सा णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता सव्वओभद्दे णयरे मयूरत्ताए पच्चायाहिइ॥१६७॥

भावार्थ - हे भगवन्! अंजूदेवी यहां से कालमास में काल करके कहां जावेगी? कहां उत्पन्न होगी?

हे गौतम! अंजूदेवी नब्बे (९०) वर्ष की परम आयु को भोग कर कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा पृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगी। उसका शेष संसार परिभ्रमण प्रथम अध्ययन में वर्णित मृगापुत्र के समान समझ लेना चाहिये यावत् वनस्पतिगत नीम आदि कटुवृक्षों तथा कटु दूध वाले अर्क आदि पौधों में लाखों बार उत्पन्न होगी। तदनन्तर वहां से व्यवधान रहित निकल कर सर्वतोभद्र नगर में मोर के रूप में उत्पन्न होगी।

से णं तत्थ साउणिएहिं वहिए समाणे तत्थेव सव्वओभद्दे णयरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ। से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तहारूवाणं थेराणं० केवलं बोहिं बुज्झिहिइ पव्वज्जा सोहम्मे०। से णं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं० कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ? गोयमा! महाविदेहे जहा पढमे जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिज्झिहिइ जाव अंतं काहिइ। एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। सेवं भंते! सेवं भंते!॥१६८॥

॥ दसमं अज्झयणं समत्तं॥

॥ पढमो सुयक्खंधो समत्तो॥

भावार्थ - वहां वह मोर शाकुनिकों-पक्षी घातक शिकारियों के द्वारा वध किये जाने पर उसी सर्वतोभद्र नगर के एक श्रेष्ठिकुल में पुत्र रूप से उत्पन्न होगा। वहां बालभाव को त्याग कर यौवनावस्था को प्राप्त हुए तथा विज्ञान की परिपक्व अवस्था को प्राप्त किये हुए तथारूप स्थविरों के समीप बोधिलाभ-सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा। तदनन्तर दीक्षा ग्रहण करके सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होगा।

हे भगवन्! देवलोक की आयु पूर्ण कर कहां जायेगा? कहां उत्पन्न होगा?

हे गौतम! महाविदेह क्षेत्र में जाएगा और वहां उत्तम कुल में उत्पन्न होगा जैसे कि प्रथम अध्ययन में वर्णन किया गया है तदनुसार सिद्ध पद को प्राप्त करेगा यावत् सर्व दुःखों का अंत करेगा।

इस प्रकार निश्चय ही हे जम्बू! श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के दसवें अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है।

॥ दशवां अध्ययन सम्पूर्ण॥

॥ दुःखविपाक नामक प्रथम श्रुतस्कंध समाप्त॥

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में अंजूदेवी के भविष्य के भवों का कथन किया गया है। **"एवं संसारो जहा पढमो, जहा णेयव्वं"** पाठ से आगमकार ने मृगापुत्र नामक प्रथम अध्ययन को सूचित किया है अर्थात् जिस प्रकार विपाक सूत्र के प्रथम अध्ययन में मृगापुत्र के संसार परिभ्रमण का प्रतिपादन किया गया है उसी प्रकार अंजूश्री के विषय में भी समझ लेना चाहिये। अंजूश्री का जीव वनस्पतिकाय में कटु वृक्षों तथा कटु दूध वाले अर्क आदि पौधों में लाखों बार जन्म मरण करने के बाद सर्वतोभद्र में मोर के रूप में उत्पन्न होगा। यहां पर भी अशुभ कर्मों के उदय के कारण शाकुनिकों के हाथों मृत्यु को प्राप्त कर उसी नगर में एक धनी परिवार में उत्पन्न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होगा जहां तथारूप के संयमी संतों के संपर्क में आकर सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा। दीक्षित होकर सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होगा। वहां से च्यव कर महाविदेह के एक कुलीन घर में जन्म लेगा और संयम की सम्यक् आराधना करके सकल कर्मों को क्षय करके सिद्धि गति को प्राप्त होगा।

अंत में आर्य सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते हैं - "हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दुःखविपाक के अंजू नामक दसवें अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है। जैसा मैंने भगवान् से सुना, वैसा ही तुमको कहा है। इसमें मेरी निजी कोई कल्पना नहीं है।"

आर्य सुधर्मा स्वामी के इस कथन को सुन कर जम्बूस्वामी ने विनयपूर्वक कहा - "**सेवं भंते! सेवं भंते!**" - हे भगवन्! आपने जो कुछ फरमाया वह सत्य है, यथार्थ है।

'**सिज्झिहिइ** जाव **अंतं काहिइ**' में 'जाव' पद से **बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ**' इन पदों का ग्रहण हुआ है जिनके अर्थ इस प्रकार है -

१. **सिज्झिहिइ** - सब तरह से कृतकृत्य हो जाने के कारण सिद्धपद को प्राप्त करेगा।

२. **बुज्झिहिइ** - केवलज्ञान के आलोक से लोकालोक का ज्ञाता होगा।

३. **मुच्चिहिइ** - सभी प्रकार के ज्ञानावरणीय आदि कर्मों से मुक्त हो जायेगा।

४. **परिणिव्वाहिइ** - समस्त कर्मजन्य विकारों से रहित हो जायेगा।

५. **सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ** - मानसिक, वाचिक और कायिक सभी प्रकार के दुःखों का अंत कर देगा।

विपाकश्रुत के प्रथम श्रुतस्कंध में हिंसा, असत्य, चोरी, मैथुन आदि द्वारा उपार्जित अशुभ कर्मों के दुःखरूप विपाक-फल को प्राप्त करने वाले मृगापुत्र आदि दस जीवों का इन दस अध्ययनों में वर्णन किया गया है - १. मृगापुत्र २. उज्झितक ३. अभग्नसेन ४. शकट ५. वृहस्पति ६. नन्दिवर्धन ७. उम्बरदत्त ८. शौरिकदत्त ६. देवदत्ता और १०. अंजू। अंजूश्री नामक दसवें अध्ययन की समाप्ति के साथ ही विपाकश्रुत का यह दश अध्ययनात्मक प्रथम श्रुतस्कंध समाप्त हुआ।

॥ दशम अध्ययन समाप्त ॥

॥ विपाकश्रुत का दुःखविपाक नामक प्रथम श्रुतस्कंध समाप्त ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बीओ सुयक्खंधो-द्वितीय श्रुतस्कंध

सुबाहु णामं पढमं अज्झयणं

सुबाहु नामक प्रथम अध्ययन

उत्थानिका - विपाक श्रुत के दो विभाग हैं - १. दुःखविपाक और २. सुखविपाक। जिसमें हिंसा आदि द्वारा उपार्जित अशुभ कर्मों के दुःखरूप विपाक-फल वर्णित हों उसे दुःखविपाक कहते हैं और जिसमें अहिंसा आदि द्वारा उपार्जित शुभ कर्मों के विपाक-फल का वर्णन किया गया है उसे सुखविपाक कहते हैं।

सुख और दुःख दोनों परस्पर विरोधी-विपक्षी हैं। सुख की प्राप्ति का कारण शुभ कर्म है तो दुःख प्राप्ति का कारण अशुभ कर्म है। सुख की प्राप्ति सुखजनक कृत्यों को अपनाने से होती है। जब तक सुख के साधनों को अपनाया नहीं जाता तब तक सुख की प्राप्ति नहीं होती। सुख प्राप्ति के लिये दुःख के साधनों का त्याग करना उतना ही आवश्यक है जितना कि सुख के साधनों को अपनाना। दुःख के साधनों का त्याग कर, सुख के कारणों को अपना कर ही जीव सुखी बन सकता है।

संसार का प्रत्येक प्राणी सुखाभिलाषी है। सुख उसे प्रिय है और दुःख उसे अप्रिय। अतः उसके सारे प्रयत्न सुख प्राप्ति के लिये ही होते हैं। महापुरुषों ने सुख प्राप्ति के जो उपाय बताये हैं उनको अपना कर ही जीव सच्चे सुखों को प्राप्त कर सकता है।

विपाक सूत्र में इसी दृष्टि से दुःखविपाक और सुखविपाक ऐसे दो विभाग करके सूत्रकार ने दुःख और सुख के साधनों का एक विशिष्ट पद्धति से निर्देश किया है। दुःखविपाक के दश अध्ययनों में दुःख और उसके साधनों का निर्देश करके साधकों को उसके त्याग की प्रेरणा दी गयी है जबकि सुखविपाक में सुख और उसके साधनों का निर्देश कर साधकों को उन्हें अपनाने की प्रेरणा की गयी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत सूत्र के सुखविपाक नामक इस द्वितीय श्रुतस्कंध के प्रथम अध्ययन में सुबाहुकुमार का वर्णन किया गया है जिन्होंने सुमुख गाथापति के भव में सुदत्त अनगार को सुपात्रदान देकर संसार परिमित किया है। इस अध्ययन का प्रथम सूत्र इस प्रकार है -

गौतम स्वामी की जिज्ञासा

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सुहम्मे समोसढे जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी-जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, सुहविवागाणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?

तए णं से सुहम्मे अणगारे जंबुं अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा -

(गा०) सुबाहु भद्दणंदी य सुजाए य सुवासवे।
तहेव जिणदासे य धणवई य महब्बले॥१॥
भद्दणंदी महच्चंदे वरदत्ते तहेव य॥१६६॥

भावार्थ - उस काल उस समय राजगृह नगर के गुणशील नामक चैत्य (उद्यान) में सुधर्मा स्वामी पधारे। जंबूस्वामी यावत् पर्युपासना करते हुए सुधर्मा स्वामी से इस प्रकार कहते हैं - 'हे भगवन्! श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त महावीर स्वामी ने दुःखविपाक का यह अर्थ प्रतिपादन किया है तो यावत् मोक्ष संप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक का क्या अर्थ प्रतिपादन किया है?'

इसके उत्तर में सुधर्मा स्वामी जम्बू अनगार से इस प्रकार बोले - 'हे जम्बू! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक के दस अध्ययन प्रतिपादित किये हैं जो इस प्रकार हैं - १. सुबाहु २. भद्रनन्दी ३. सुजात ४. सुवासव ५. जिनदास ६. धनपति ७. महाबल ८. भद्रनंदी ९. महाचन्द्र और १०. वरदत्त।'

विवेचन - आर्य सुधर्मा स्वामी के मुखारविंद से विपाकश्रुत के दुःखविपाक के दश अध्ययनों का वर्णन सुनने के बाद आर्य जंबू अनगार को सुखविपाक मूलक अध्ययनों को सुनने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की जिज्ञासा उत्पन्न हुई। अतः सुधर्मा अनगार के चरणों में उपस्थित होकर विनयपूर्वक इस प्रकार निवेदन किया -

हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाक श्रुत के अंतर्गत दुःखविपाक के दश अध्ययनों का जो वर्णन किया है वह मैंने आपके मुखारविंद से श्रवण कर लिया है अब कृपा कर विपाक सूत्र के द्वितीय श्रुतस्कंध सुखविपाक में प्रभु ने क्या भाव फरमाये हैं सो फरमाने की कृपा करें। जंबूस्वामी की जिज्ञासा को देख, आर्य सुधर्मा स्वामी ने फरमाया कि - हे जम्बू! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने विपाकश्रुत के द्वितीय श्रुतस्कन्ध सुखविपाक में दस अध्ययन फरमाये हैं जो इस प्रकार हैं - १. सुबाहु २. भद्रनंदी ३. सुजात ४. सुवासव ५. जिनदास ६. धनपति ७. महाबल ८. भद्रनंदी ६. महाचन्द्र और १०. वरदत्त। प्रथम अध्ययन का प्रारंभ इस प्रकार है -

नगर आदि का वर्णन

जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स सुहविवागाणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?

तए णं से सुहम्मे अणगारे जंबुं अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिसीसे णामं णयरे होत्था रिद्ध०। तस्स णं हत्थिसीसस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं पुप्फकरंडए णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउय०। तत्थ णं कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था-दिव्वे। तत्थ णं हत्थिसीसे णयरे अदीणसत्तू णामं राया होत्था महया०। तस्स णं अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणी पामोक्खं देवी सहस्सं ओरोहे यावि होत्था॥१७०॥

भावार्थ - हे भगवन्! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने यदि सुखविपाक के सुबाहुकुमार आदि दश अध्ययन प्रतिपादित किये हैं तो हे भगवन्! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक के प्रथम अध्ययन में क्या अर्थ प्रतिपादित किया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तदनन्तर सुधर्मा स्वामी, जम्बू अनगार से इस प्रकार बोले - 'हे जम्बू! उस काल और उस समय हस्तिशीर्ष नामक एक ऋद्ध – भवन आदि के आधिक्य से युक्त, स्तिमित – स्वचक्र और परचक्र के भय से रहित तथा समृद्ध – धन धान्यादि से परिपूर्ण नगर था। उस नगर के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा के मध्य ईशान कोण में पुष्पकरण्डक नाम का उद्यान था जो कि सर्व ऋतुओं में होने वाले फल, पुष्पादि से युक्त था। वहां कृतवनमालप्रिय यक्ष का यक्षायतन था जो कि दिव्य अर्थात् प्रधान एवं परम सुंदर था। उस हस्तिशीर्ष नगर में अदीनशत्रु नाम का राजा था जो कि हिमालय आदि पर्वतों के समान महान् था। उस अदीनशत्रु राजा की धारिणी प्रमुख अर्थात् धारिणी है प्रधान जिनमें ऐसी हजार रानियाँ अन्तःपुर में थीं।

विवेचन - मूल पाठ में आये हुए '**रिद्ध०**' यहां के बिंदु से सूत्रकार को निम्न पाठ अभिष्ट है-"**त्थिमियसमिद्धे पमुइय जणजाणवए आइण्णजणमणुस्से हलसयसहस्स संकिट्ठ विकिट्ठ लट्ठपण्णत्तसेउसीसे कुक्कुडसंडेयगामपउरे उच्छुजवसालिकलिए गोमहिसगवेलगप्पभूए आयारवंतचेइय-जुवइ-विविह-सण्णिविट्ठबहुले उक्कोडिय-गायगंठिभेय-भडतक्कर-खंडरक्खरहिए खेमे णिरुवहवे सुभिक्खे वीसत्थसुहावासे अणेगकोडिकुटुंबियाइण्ण णिव्वुयसुहे णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंवय-कहगपवग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंब-वीणिय अणेगतालायराणुचरिये आरामुज्जाणअगड-तलाग-दीहिय-वाप्पिणिगुणोववेए णंदणवण-सण्णिभप्पगासे उव्विद्धविउल-गंभीर-खायफलिहे चक्कगयमुसुंढि-ओरोहसयग्घि-जमल-कवाड-घण-दुप्पवेसे धणुकुडिलवंक-पागारपरिक्खित्ते कविसीसग-वट्ट-रइयसंठिय विरायमाणे अट्टालय-चरिय-दार-गोपुर-तोरण-उण्णय-सुविभत्तरायमग्गे छेयायरिय-रइय-दढ-फलिहइंदकीले विवणिवणिच्छेत्त-सिप्पियाइण्णा-णिव्वुयसुहे सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर चउम्मुह महापहेसु पणियावण-विविह-वत्थुपरिमंडिए सुरम्मे णरवइ-पविइण्ण-महिवइपहे अणेगवर-तुरग-मत्त-कुंजर-रह-पहकर सीय-संदमाणीया-इण्णजाणजुग्गे विमउल-णव-णलिणि-सोभियजले पंडुरवर-भवण-सण्णिमहिये उत्ताण-णयण-पेच्छणिज्जे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।**"

इन पदों का भावार्थ इस प्रकार है -

वह नगर ऋद्ध – भवनादि के आधिक्य से युक्त, स्तिमित – स्वचक्र और परचक्र के भय **से विमुक्त तथा समृद्ध** – धन धान्यादि से परिपूर्ण था। उसमें रहने वाले लोग तथा जानपद-**बाहर से** आए हुए लोग, बहुत प्रसन्न रहते थे। वह मनुष्य समुदाय से आकीर्ण-व्याप्त था,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तात्पर्य यह है कि वहां जनसंख्या अधिक थी। उसकी सीमाओं पर दूर तक लाखों हलों द्वारा क्षेत्र-खेत अच्छी तरह बोये जाते थे तथा वे मनोज्ञ, किसानों के अभिलषित फल के देने में समर्थ और बीज बोने के योग्य बनाये जाते थे। उसमें कुक्कुटों, मुर्गों और सांडों के बहुत से समूह रहते थे। वह इक्षु-गन्ना, यव-जौ और शालि-धान से युक्त था। उनमें बहुतसी गौएं, भैंसे और भेडें रहती थीं। उसमें बहुत से चैत्यालय और वेश्याओं के मुहल्ले थे। वह उत्कोच-रिश्वत लेने वालों, ग्रंथिभेदकों-गांठ कतरने वालों, भटों-बलात्कार करने वालों, तस्करों-चोरों और खण्डरक्षकों-कोतवालों अथवा कर-महसूल लेने वालों से रहित था। वह नगर क्षेमरूप था अर्थात् वहां किसी का अनिष्ट नहीं होता था। वह नगर निरुपद्रव-राजादि कृत उपद्रवों से रहित था। उसमें भिक्षुओं को भिक्षा की कोई कमी नहीं थी। वह नगर विश्वस्त-निर्भय अथवा धैर्यवान लोगों के लिये सुखरूप आवास वाला था अर्थात् उस नगर में लोग निर्भय और सुखी रहते थे। वह नगर अनेक प्रकार के कुटुम्बियों और संतुष्ट लोगों से भरा हुआ होने के कारण सुखरूप था। नाटक करने वाले, नृत्य करने वाले, रस्से पर खेल करने वाले अथवा राजा की स्तुति करने वाले चारण, मल्ल-पहलवान, मौष्टिक-मुष्टि युद्ध करने वाले, विदूषक, कथा कहने वाले और तैरने वाले, रासे गाने वाले अथवा "आपकी जय हो" इस प्रकार कहने वाले, ज्योतिषी, बांसों पर खेल करने वाले, चित्र दिखा कर भिक्षा मांगने वाले, तूण नामक वाद्य बजाने वाले, वीणा बजाने वाले, ताली बजा कर नाचने वाले आदि उस नगर में रहते थे। आराम-बाग, उद्यान-जिसमें वृक्षों की बहुलता हो और जो उत्सव आदि के समय बहुत लोगों के उपयोग में लाया जाता हो, कूप-कूआं, तालाब, बावड़ी, उपजाऊ खेत इन सबकी रमणीयता आदि गुणों से वह नगर युक्त था। नंदनवन (एक वन जो मेरु पर्वत पर स्थित है) के समान वह नगर शोभायमान था। उस विशाल नगर के चारों ओर एक गहरी खाई थी जो कि ऊपर से चौड़ी और नीचे से संकुचित थी, चक्र-गोलाकार शस्त्र विशेष, गदा-शस्त्र विशेष, भुशुण्डी-शस्त्र विशेष, अवरोध-मध्य का कोट, शतघ्नी-सैकड़ों प्राणियों का नाश करने वाला शस्त्र विशेष (तोप) तथा छिद्र रहित कपाट, इन सबके कारण वह नगर शत्रुओं के लिए दुष्प्रवेश था। वक्र धनुष से भी अधिक वक्र प्राकार-कोट से वह नगर परिवेष्टित था। वह नगर अनेक सुंदर कंगूरों से मनोहर था। ऊंची अटारियों, कोट के भीतर आठ हाथ के मार्गों, ऊंचे-ऊंचे कोट के द्वारों, गोपुरों-नगर के द्वारों, तोरणों – घर या नगर के बाहिरी फाटकों और चौड़ी-चौड़ी सड़कों से वह नगर युक्त था। उस नगर का अर्गल-वह लकड़ी जिससे किवाड़ बंद करके पीछे से आड़ी लगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देते हैं, इन्द्रकील (नगर के दरवाजों का एक अवयव जिसके आधार से दरवाजे के दोनों किवाड़ बंद रह सके) दृढ था और निपुण शिल्पियों द्वारा उनका निर्माण किया गया था, वहां बहुत से शिल्पी निवास किया करते थे, जिससे वहां के लोगों की प्रयोजन सिद्धि हो जाती थी इसीलिए वह नगर लोगों के लिए सुखप्रद था। श्रृंगाटकों-त्रिकोण मार्गों, त्रिकों-जहां तीन रास्तें मिलते हों, ऐसे स्थानों, चतुष्कों-चतुष्पथों, चत्वरों-जहां चार से भी अधिक रास्ते मिलते हों ऐसे स्थानों और नाना प्रकार के बर्तन आदि के बाजारों से वह नगर सुशोभित था। वह अति रमणीय था। वहां का राजा इतना प्रभावशाली था कि उसने अन्य राजाओं के तेज को फीका कर दिया था। अनेक अच्छे अच्छे घोड़ों, मस्त हाथियों, रथों, गुमटी वाली पालकियों, पुरुष की लम्बाई जितनी लम्बाई वाली पालकियों, गाड़ियों और युग्यों अर्थात् गोल्ल देश की एक प्रकार की पालकियों से वह नगर युक्त था। उस नगर के जलाशय नवीन कमल और कमलिनियों से सुशोभित थे। वह नगर श्वेत और उत्तम महलों से युक्त था। वह नगर इतना स्वच्छ था कि अनिमेष-बिना झपके दृष्टि से देखने को दर्शकों का मन चाहता था। वह प्रासादीय-चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय-उसे देखते देखते आंखें नहीं थकती थी, अभिरूप-उसे एक बार देख लेने पर भी पुनः देखने की लालसा बनी रहती थी, प्रतिरूप-उसे जब भी देखा जाय तब भी वहां नवीनता ही प्रतीत होती थी, ऐसा वह सुंदर नगर था।

- सव्वोउय० - यहां का बिंदु **'सव्वोउयपुप्फफल समिद्धे रम्मे णंदणवणप्पगासे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे'** इस पाठ का परिचायक है। वह उद्यान सर्वर्तुकपुष्पफलसमृद्ध (सब ऋतुओं में होने वाले पुष्पों और फलों से परिपूर्ण एवं समृद्ध) रम्य (रमणीक) नंदनवन प्रकाश (मेरु पर्वत पर स्थित नंदनवन की तरह शोभा को प्राप्त करने वाला) प्रासादीय, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप था।

- **'महया०'** यहां के बिंदु से निम्न पदों का ग्रहण हुआ है -

हिमवंत-महंत-मलयमंदरमहिंदसारे अच्चंत-विसुद्धदीहराय-कुलवंससुप्पसूए णिरंतरं रायलक्खण-विराइअंगमंगे बहुजणबहुमाणे पूजिए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए मुइए मुद्धाहिसित्ते माउपिउसुजाए दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिंदे जणवयपिया जणवयपाले जणवयपुरोहिए सेउकरे केउकरे णरपवरे पुरिसवरे पुरिससीहे पुरिसवग्घे पुरिसासीविसे पुरिस पुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्ण विउल भवण सयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणबहुजायरूवरयए आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डियभत्तपउरभत्तपाणे बहुदासदासी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोमहिसगवेलगप्पभूए पडिपुण्णजंतकोसकोट्ठागारा-उधागारे बलवं दुब्बलपच्चामित्ते ओहयकंटयं णिहयकंटयं मलियकंटयं उद्धियकंटयं अकंटयं ओहयसत्तुं णिहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धियसत्तुं णिज्जियसत्तुं पराइअसत्तुं ववगयदुब्भिक्खं मारिभयविप्पमुक्कं खेमं सिवं सुभिक्खं पसंतडिंब-डमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ''

इन पदों का भावार्थ इस प्रकार है -

वह राजा महाहिमवान् अर्थात् हिमालय के समान महान् था तात्पर्य यह है कि जैसे समस्त पर्वतों में हिमालय पर्वत महान् माना जाता है उसी प्रकार शेष राजाओं की अपेक्षा वह राजा महान् था तथा मलय-पर्वत विशेष, मंदर-मेरु पर्वत, महेन्द्र-पर्वत विशेष अथवा इन्द्र, इनके समान वह प्रधान था। वह राजा अत्यंत विशुद्ध-निर्दोष तथा दीर्घ-चिरकालीन जो राजाओं का कुलरूप वंश था, उसमें उत्पन्न हुआ था। उसका प्रत्येक अंग राजलक्षणों-स्वस्तिक आदि चिह्नों से निरन्तर-बिना अंतर के शोभायमान रहता था। वह बहुतजनों का माननीय था, पूजनीय था, सर्वगुण युक्त था। क्षत्रिय अर्थात् विपत्ति में पड़े हुए प्राणियों की रक्षा करने वाला था। मुदित अर्थात् प्रसन्न था अथवा निर्दोष मातृपक्ष वाला था। उसके बाप दादाओं ने उसका राज्याभिषेक किया था। वह माता पिता का विनय करने वाला सत्पुत्र था, दयालु था, राज्य व्यवस्था के लिए नियम बनाने वाला था, अपने बनाये हुए नियमों को पालने वाला, क्षेम करने वाला और स्वयं क्षेम रूप था। मनुष्यों में इन्द्र के समान था। प्रजा के लिये पिता के समान था क्योंकि वह प्रजा का पालक था। प्रजा में शांति करने वाला होने से वह पुरोहित के समान था। सन्मार्ग दिखाने वाला था, अद्भुत कार्य करने वाला था, श्रेष्ठ मनुष्यों वाला था, मनुष्यों में उत्तम था, पुरुषों में सिंह के समान था। शत्रुओं के लिये भयंकर होने के कारण वह पुरुषों में व्याघ्र के समान था। शत्रुओं पर अपने क्रोध को सफल करने के कारण वह पुरुषों में आशीविष के समान था। पुरुषों में पुंडरिक कमल के समान था। पुरुषों में गंधहस्ती के समान था। सब तरह से सम्पन्न, दीप्त यानी आत्म गौरव वाला और विनय आदि गुणों से प्रसिद्ध था। उसके भवन, शयन, आसन, यान और वाहन विशाल और बहुत थे। उसके पास बहुत धन, बहुत सोना चांदी आदि सम्पत्ति थी। वह आमदनी के उपायों में सदा लगा रहता था। वह गरीबों को बहुत अन्न पानी दिया करता था। उसके दास, दासी, गाय, बैल, भैंस, भेड़ आदि पशु बहुत थे। बहुत से खजाने, कोठार और आयुधशालाएं थीं। उसके पर्याप्त सेना थी। उसके शत्रु निर्बल थे। उसने अपने कण्टकों को अर्थात् द्वेषी गोत्रजों को दबा दिया था। अपने कण्टकों का विनाश कर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिया था। उसने कण्टकों का मान भंग कर दिया था, उसने कंटकों को देश निकाला दे दिया था अतः वह कण्टकों से रहित था। उसने शत्रुओं को दबा दिया था, उसने शत्रुओं का नाश कर दिया था, शत्रुओं का गर्व मिटा दिया था, शत्रुओं को देश निकाला दे दिया था, शत्रुओं को जीत लिया था, शत्रुओं को पराजित कर दिया था। वहां नगर में कभी दुष्काल नहीं पड़ता था, महामारी आदि का भय न था, सब तरह कुशल था। शिव अर्थात् निरुपद्रव था। वहां सदा सुभिक्ष-सुकाल रहता था। राजकुमार आदि द्वारा होने वाले उपद्रवों को राजा ने शांत कर दिया था। इस प्रकार के राज्य पर वह राजा शासन करता था।

अर्थात् अदीनशत्रु राजा, राजा के सब गुणों से युक्त था। वह प्रजा का पुत्रवत् पालन करता था। इसी कारण उसकी सारी प्रजा खुश थी और उसे मन से चाहती थी। वह न्याय नीतिपूर्वक राज्य करता था।

उस अदीनशत्रु राजा के धारिणी प्रमुख एक हजार रानियों का अन्तःपुर था। उनमें धारिणी पटरानी थी। उस अदीनशत्रु राजा की धारिणी रानी कैसी थी, उसका वर्णन किया जाता है।

धारिणी रानी का वर्णन

तस्स णं अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणी णामं देवी सुकुमाल-पाणिपाया अहीणपडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरा लक्खण-वंजण-गुणोववेया माणुम्माण-प्पमाण-पडिपुण्णसुजाय-सव्वंगसुंदरंगी ससिसोमाकार-कंतपियदंसणा सुरूवा करयल-परिमिय-पसत्थ-तिवलिय-वलियमज्झा कुंडलुल्लिहिय-गंडलेहा कोमुइरयणियरविमल पडिपुण्ण-सोमवयणा सिंगारागार-चारुवेसा, संगय-गय-हसिय-भणिय-विहिय-विलास-सललिय-संलाव-णिउणजुत्तोवयार कुसला पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा।

अदीणसत्तुएणं रण्णा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्दफरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणी विहरइ॥१७१॥

कठिन शब्दार्थ - **सुकुमालपाणिपाया** - सुकोमल हाथ पैर वाली, **अहीणपडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरा** - अन्यून-प्रतिपूर्ण पांचों इन्द्रियों से युक्त शरीर, **लक्खणवंजणगुणोववेया** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिक चक्र आदि लक्षण और तिल आदि व्यंजनों से युक्त, **माणुम्माणप्पमाण-पडिपुण्ण सुजाय-सव्वंग सुंदरंगी-** मान❖, उन्मान❖ और प्रमाण◎ से युक्त शरीर होने के कारण सर्वाङ्ग सुंदरी, **ससिसोमाकार कंत- पियदंसणा** - उसका मुख चन्द्रमा जैसा सौम्य और मनोहर होने से देखने वालों को बड़ा ही प्यारा लगता था, **करयलपरिमिय पसत्थ-तिवलिय-वलिय मज्झा** - त्रिवलियुक्त कमर का मध्य भाग इतना पतला कि वह मुट्ठी में आ जाता था," **कुंडलुल्लिहियगंडलेहा-कुंडलुल्लिहियपीणगंडलेहा** - उसके मुख पर की गई श्रृंगार की रचना कानों के कुण्डलों से चमकदार हो गई थी, **कोमुइरयणियर विमल पडिपुण्ण सोमवयणा** - कौमुदी अर्थात् कार्तिक में उदय होने वाले पूर्ण चन्द्रमा के समान उसका मुख निर्मल और सौम्य था, **सिंगारागारचारुवेसा** - उसका वेश मानो श्रृंगार रस का स्थान था, **संगय-गय-हसिय-भणिय-विहिय-विलास-सललिय संलाव-णिउणजुत्तोवयार कुसला** - उसका चलना हंसना, बोलना, विहित यानी चेष्टा और विलास यानी नेत्र चेष्टा, ये सब उचित थे, प्रसन्नापूर्वक परस्पर भाषण करने में कुशल तथा लोकव्यवहार में चतुर, **अणुरत्ता** - अनुरक्त, **अविरत्ता** - अविरक्त, **पच्चणुब्भवमाणी** - भोगती हुई।

भावार्थ - उस अदीनशत्रु राजा की धारिणी रानी के हाथ पैर बड़े ही कोमल थे। उसका शरीर परिपूर्ण पांचों इन्द्रियों से युक्त था। उसका शरीर स्वस्तिक, चक्र आदि लक्षण और तिल आदि व्यंजनों से युक्त था। उसका शरीर मान, उन्मान और प्रमाण से युक्त था अतः वह सर्वाङ्ग सुंदरी थी। धारिणी का मुख चन्द्रमा जैसा सौम्य और मनोहर होने से देखने वालों को बड़ा ही प्यारा लगता था। वह सुरूपा थी। उसका त्रिवलियुक्त कमर का मध्य भाग इतना पतला था कि वह मुट्ठी में आ जाता था। उसके मुख पर की गई श्रृंगार की रचना कानों के कुण्डलों से चमकदार हो गई थी। कौमुदी अर्थात् कार्तिक में उदय होने वाले पूर्ण चन्द्रमा के समान उसका मुख निर्मल और सौम्य था। उसका वेश मानों श्रृंगार रस का स्थान था। उसका चलना, हंसना, बोलना विहित यानी चेष्टा और विलास यानी नेत्र चेष्टा, ये सब उचित थे। प्रसन्नता पूर्वक भाषण करने में कुशल तथा लोक व्यवहार में चतुर थी। उसे देखते ही चित्त

❖ **मान** - एक पुरुष प्रमाण जल का कुंड भर कर उसमें उसी पुरुष को बैठाने से यदि एक द्रोण प्रमाण यानी ३२ सेर पानी कुण्ड से बाहर निकल जाय वह 'मान' युक्त कहलाता है।

❖ **उन्मान** - मनुष्य को तराजू में बैठाने से उसका वजन अर्द्धभार प्रमाण हो उसे 'उन्मान' प्राप्त कहते हैं।

◎ **प्रमाण** - अपने अंगुलों से जो १०८ अंगुल हो वह 'प्रमाण' प्राप्त कहलाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रसन्न हो जाता था, वह दर्शनीय थी, वह अभिरूप यानी मनोहर और प्रतिरूप अर्थात् देखने वालों को उसका नवीन नवीन रूप मालूम होता था।

वह अदीनशत्रु राजा में अनुरक्त थी, अविरक्त थी। वह इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध इन पांच प्रकार के मनुष्य संबंधी कामभोगों को भोगती हुई विचरती थी।

विवेचन - अदीनशत्रु राजा के धारिणी नाम की पटरानी थी जो रानी के समस्त लक्षणों से युक्त थी। अदीनशत्रु राजा में वह अनुरक्त थी। वह उसके साथ मनुष्य संबंधी कामभोग भोगती हुई रहती थी।

धारिणी का स्वप्न-दर्शन

तए णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दुमियघट्ठमट्ठे विचितउल्लोयचिल्लियतले, मणिरयणपणासियंधयारे, बहुसमसुविभत्तदेसभाए पंचवण्णसरससुरभिमुक्क-पुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूवमघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामे सुगंधिवरगंधिए गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ विब्बोयणे दुहओ उण्णए मज्झेणयगंभीरे गंगा-पुलिणवालुय-उद्दालसालिसए उवचियखोमियदुगुल्ल-पट्टपडिच्छायणे सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आइणग-रुयबूर-णवणीय-तूलफासे सुगंधवरकुसुम-चुण्ण-सयणोवयारकलिए अद्धरत्त कालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी अयमेयारूवं ओरालं कल्लाणं सिवं धण्णं मंगलं सस्सिरियं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा॥१७२॥

कठिन शब्दार्थ - **तंसि तारिसगंसि** - वैसे अर्थात् पुण्यात्माओं के रहने योग्य, **वासघरंसि**- महल में, **सचित्तकम्मे** - चित्रों से युक्त, **दुमियघट्ठमट्ठे** - घिस घिस कर सुंदर किया गया, **विचित्तउल्लोयचिल्लियतले** - ऊपर का भाग विविध चित्रों से युक्त तथा नीचे का भाग देदीप्यमान, **मणिरयणपणासियंधयारे** - मणियों और रत्नों के प्रकाश से जहां का अंधकार नष्ट हो गया था, **बहुसमसुविभत्तदेसभाए** - एकदम समतल ऊंचा नीचा नहीं, **पंचवण्णसरस-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुरभिमुक्कपुप्फ-पुंजोवयारकलिए - पांच रंग के सरस सुगंधित फूलों से सजा हुआ, **कालागुरुपवरकुंदरुक्कतुरुक्क-धूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे** - अगर, चीड़, लोबान आदि उत्तम उत्तम सुगंध वाले द्रव्यों से बनी हुई धूप की लहलहाती हुई सुगंध से रमणीय, **गंधवट्टिभूए** - सुगंध की अधिकता होने से वह गंध की गुटिका के समान, **सयणिज्जंसि**- शय्या, **सालिंगणवट्टिए** - शरीर के बराबर तकिया से युक्त, **विब्बोयणे** - तकिया लगाया हुआ, **उण्णए** - उन्नत-ऊंची, **णयगंभीरे** - नीची, **गंगापुलिणवालुय-उद्दालसालिसए** - जैसे गंगा नदी के तट की रेत पर चलने से पैर नीचे चला जाता है वैसे ही उस शय्या पर पैर रखने से नीचे धस जाता था, **उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे** - कसीदा किये हुए सूती और अलसीमय वस्त्र का चादर बिछा हुआ, **सुविरइयरयत्ताणे** - धूलि आदि से रक्षा करने के लिए एक वस्त्र अन्य समय में उस पर ढका हुआ था, **रत्तंसुय संवुए** - उस पर मच्छरदानी लगी हुई थी, **आइणगरूयबूरणवणीयतूलफासे** - विशिष्ट चर्म, रुई, बूर यानी एक प्रकार की वनस्पति विशेष, नवनीत (मक्खन) और तूल-आक की रुई के समान अतिशय कोमल, **सुगंधवरकुसुमचुण्ण सयणोवयारकलिए** - सुगंधि युक्त उत्तमोत्तम फूलों से, सुगंधित चूर्ण से तथा शय्या को शोभित करने वाले अन्य उत्तम पदार्थों से युक्त, **सुत्तजागरा** - सुप्त जागृत अवस्था में, **ओहीरमाणी** - न गाढ निद्रा में सोती हुई और न पूर्ण जागती हुई-अर्द्ध निंद्रित अवस्था में, **सस्सिरियं** - सश्रीक-सुंदर, **महासुविणं** - महान् स्वप्न, **पडिबुद्धा** - जागृत हुई।

भावार्थ - तदनन्तर किसी समय वह धारिणी महारानी वैसे अर्थात् पुण्यात्माओं के रहने योग्य महल में थी। वह महल भीतर चित्रों से युक्त और बाहर घिस घिस करके सुंदर किया गया था ऊपर का भाग विविध प्रकार के चित्रों से युक्त तथा नीचे का भाग देदीप्यमान था। मणियों और रत्नों के प्रकाश से वहां का अंधकार नष्ट हो गया था। वह एकदम समतल था, ऊंचा नीचा नहीं था। पांच रंग के सरस सुगंधित फूलों से सजा हुआ था। अगर, चीड़, लोबान इत्यादि उत्तम उत्तम सुगंध वाले द्रव्यों से बनी हुई धूप की लहलहाती हुई सुगंध से रमणीय था। अच्छी और उत्तम गंध से सुगंधित था। सुगंध की अधिकता होने से वह गंध की गुटिका के समान मालूम पड़ता था। इस प्रकार के पुण्यात्माओं के रहने योग्य महल में एक शय्या थी। वह शय्या कैसी थी सो वर्णन किया जाता है -

वह शय्या शरीर के बराबर तकिया से युक्त थी। उस शय्या के दोनों तरफ यानी पैरों के नीचे और शिर के नीचे तकिया लगा हुआ था। वह शय्या दोनों ओर से ऊंची थी और बीच में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नीची थी। जैसे गंगा नदी के तट की रेत पर चलने से पैर नीचे चला जाता है उसी प्रकार उस शय्या पर पैर रखने से पैर नीचे धस जाता था क्योंकि वह बहुत कोमल थी। कसीदा किये हुए सूती और अलसीमय वस्त्र का चादर उस पर बिछा हुआ था। धूलि आदि से रक्षा करने के लिए एक वस्त्र अन्य समय में उस पर ढका रहता था। उस पर मच्छरदानी लगी हुई थी। वह अतिशय रमणीय थी। विशिष्ट चर्म, रुई, बूर यानी एक प्रकार की वनस्पति विशेष, नवनीत अर्थात् मक्खन और तूल यानी आक की रुई के समान अतिशय कोमल थी। सुगंधित युक्त उत्तमोत्तम फूलों से, सुगंधित चूर्ण से तथा शय्या को शोभित करने वाली अन्य उत्तम पदार्थों से युक्त थी। ऐसी शय्या पर अर्द्ध रात्रि के समय सुप्त जागृत अवस्था में अर्थात् न गाढ निद्रा में सोती हुई और न पूर्ण जागती हुई यानी अर्द्ध निद्रित अवस्था में वह धारिणी रानी इस प्रकार के उदार, कल्याणकारी, सुखकारी, धन्यकारी, मंगलकारी, सश्रीक अर्थात् सुंदर एक महान् स्वप्न देख कर जागृत हुई।

हार-रयय-खीर-सागर ससंक-किरणदगरय-रययमहासेल-पंडुर तरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवर-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-तिक्खदाढा विडंबियमुहं परिकम्मियजच्च-कमल-कोमल-माइय-सोभंतलट्ठउट्ठं रत्तुप्पलपत्तमउय-सुकुमालतालुजीहं मूसागयपवर-कणग-ताविय-आवत्तायंत वट्टतडिविमल-सरिसणयणं विसालपीवरोरुं पडिपुण्ण विमलखंधं मिउविसय सुहुमलक्खणपसत्थ विच्छिण्ण केसरसडोवसोहियं ऊसिय-सुणिम्मिय-सुजाय-अप्फोडिय-लंगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं जंभायंतं णहयलाओ ओवयमाणं णिययवयणमइवयंतं सीहं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धा॥१७३॥

कठिन शब्दार्थ - **हार-रयय-खीरसागर-ससंक-किरण-दगरय-रयय-महासेल-पंडुर तरोरुरमणिज्ज पेच्छणिज्जं** - हार, चांदी, क्षीर समुद्र, चन्द्रमा की किरण, जल प्रवाह और रजत महाशैल यानी वैताढ्य पर्वत के समान बहुत श्वेत रमणीय अतएव दर्शनीय, **थिरलट्ठपउट्ठ वट्टपीवर-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-तिक्खदाढा-विडंबियमुहं** - स्थिर, मनोहर कलाई युक्त तथा गोल स्थूल मिली हुई उत्तम तेज दाढों युक्त विस्तृत मुख वाले, **परिकम्मियजच्च कमल**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोमलमाइय सोभंतलट्ठ उट्ठं - संस्कार किये गये उत्तम जाति के कमल के समान कोमल यथा प्रमाण और अत्यंत मनोज्ञ होठों वाले, **रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमाल तालुजीहं** - लाल कमल की तरह कोमल तालु और जिह्वा वाले, **मूसागय पवर कणगताविय आवत्तायंत वट्टतडिविमल सरिसणयणं** - मूस में रख कर तपाये हुए सोने के समान निर्मल और चमकती हुई बिजली के समान तेज और गोल आंखों वाले, **विसालपीवरोरुं** - मोटी और मजबूत जांघ वाले, **पडिपुण्णविमलखंधं** - पूर्ण और मोटे कंधे वाले, **मिउ-विसय-सुहुमलक्खण-पसत्थ विच्छिण्ण केसरसडोवसोहियं** - कोमल, स्वच्छ, सूक्ष्म और फैले हुए गर्दन के सुंदर बालों की छटा से शोभित, **ऊसिय सुणिम्मिय सुजाय अप्फोडियलंगूलं** - धरती पर फटकार कर ऊंची करके फिर नीचे को झुकी है पूंछ जिसकी ऐसे, **सोमं** - सौम्य, **सोमाकारं** - सौम्याकार, **लीलायंत**- क्रीड़ा करते हुए, **जंभायंतं** - जंभाई लेते हुए, **णहयलाओ** - आकाश से, **ओवयमाणं** - उतर कर, **णियगवयणं** - अपने मुख से, **अइवयंतं** - प्रवेश करते हुए।

भावार्थ - हार, रजत, क्षीर समुद्र, चन्द्रमा की किरण, जल प्रवाह और रजत महाशैल (वैताढ्य पर्वत) के समान बहुत श्वेत, रमणीय अतएव दर्शनीय, स्थिर और मनोहर कलाई युक्त तथा गोल स्थूल मिली हुई उत्तम तेज दाढों युक्त विस्तृत मुख वाले, संस्कार किये गये उत्तमजाति के कमल के समान कोमल यथा प्रमाण और अत्यंत मनोज्ञ होठों वाले, लाल कमल की तरह कोमल तालु और जिह्वा वाले, मूस में रख कर तपाये हुए सोने के समान निर्मल और चमकती हुई बिजली के समान तेज और गोल आंखों वाले, मोटी और मजबूत जांघ वाले, पूर्ण और मोटे कंधे वाले, कोमल स्वच्छ सूक्ष्म और फैले हुए गर्दन के सुंदर बालों की छटा से शोभित धरती पर फटकार कर ऊंची करके फिर नीचे को झुकी है पूंछ जिसकी ऐसे सौम्य सौम्याकार क्रीड़ा करते हुए, जंभाई लेते हुए आकाश से उतर कर अपने मुख में प्रवेश करते हुए सिंह को स्वप्न में देख कर वह धारिणी रानी जागृत हुई।

विवेचन - एक समय वह धारिणी रानी पुण्यात्माओं के शयन करने योग्य शय्या पर सुखपूर्वक सोई हुई थी। अर्द्ध रात्रि के समय जब कि अर्द्ध निद्रित अवस्था में थी। स्वप्न में धारिणी रानी ने देखा कि सभी शुभ लक्षणों से युक्त सिंह क्रीड़ा करता हुआ और जंभाई लेता हुआ आकाशमार्ग से उतर कर उसके मुख में प्रवेश कर गया है। इस शुभ स्वप्न को देख कर वह जागृत हुई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न निवेदन

तएणं सा धारिणी देवी अयमेयारूवं उरालं जाव सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठ जाव हियया धाराहयकलंबपुप्फगं विव समूससियरोमकूवा तं सुविणं ओगिण्हइ ओगिण्हित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ सयणिज्जाओ अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव अदीणसत्तुस्स रण्णो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ॥१७४॥

कठिन शब्दार्थ - हट्ठतुट्ठ - हर्षित और संतुष्ट, **धाराहयकलंबपुप्फगं विव** - जिस प्रकार मेघ की धारा से कदम्बवृक्ष का फूल खिल जाता है उसी प्रकार, **समूससियरोमकूवा** - रोमाञ्चित होती हुई, **अतुरियं** - शीघ्रता रहित, **अचवलं** - चपलता रहित, **असंभंताए** - सम्भ्रान्तता रहित, **अविलंबियाए** - विलम्ब रहित, **रायहंससरिसीए** - राजहंस के समान।

भावार्थ - तदनन्तर (इसके पश्चात्) वह धारिणी रानी इस प्रकार के उदार यावत् सश्रीक महा स्वप्न को देख कर जागृत हुई। जागृत होने पर उसका हृदय हर्षित और संतुष्ट हुआ। जिस प्रकार मेघ की धारा से कदम्ब वृक्ष का फूल खिल जाता है उसी प्रकार रोमाञ्चित होती हुई धारिणी रानी उस स्वप्न का अवग्रह यानी स्मरण करने लगी, स्मरण करके अपनी शय्या से उठी, शय्या से उठ कर शीघ्रता रहित, चपलता रहित, संभ्रान्तता रहित, विलंब रहित, राजहंस की तरह मंद मंद गति से गमन करती हुई वह धारिणी रानी जहाँ पर अदीनशत्रु राजा की शय्या थी वहीं पर गई।

विवेचन - सिंह के स्वप्न को देख कर महासती धारिणी अत्यंत हर्षित हुई। वह स्वप्न राजा को सुनाने के लिए रानी अपने शयनागार से निकल कर राजा के पास पहुँची।

तेणेव उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं उरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धण्णाहिं मंगलाहिं सस्सिरियाहिं मियमहुरमंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेइ, पडिबोहित्ता अदीणसत्तुणा रण्णा अब्भणुण्णाया समाणी णाणामणिरयण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि णिसीयइ, णिसीइत्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया अदीणसत्तुं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणी संलवमाणी एवं वयासी-॥१७५॥

कठिन शब्दार्थ - **मियमहुरमंजुलाहिं** - मृदु, मधुर और मंजुल, **गिराहिं** - शब्दों से, **संलवमाणी** - संभाषण करती हुई, **अब्भणुण्णाया समाणी** - आज्ञा देने पर, **णाणामणिरयण-भत्तिचित्तंसि** - अनेक प्रकार के मणि और रत्नों से चित्रित, **आसत्था** - आश्वस्त-चलने के श्रम से रहित, **वीसत्था** - विश्वस्त-क्षोभ रहित, **सुहासणवरगया** - सुख पूर्वक आसन पर बैठी हुई।

भावार्थ - वहाँ पहुँच कर उन इष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ, अभिराम, उदार, कल्याणकारी, शिवकारी, धन्यकारी, मंगलकारी, सश्रीक, मृदु, मधुर और मंजुल शब्दों से सम्भाषण करती हुई धारिणी रानी ने अदीनशत्रु राजा को जगाया, जगा कर अदीनशत्रु राजा के द्वारा आज्ञा देने पर अनेक प्रकार के मणि और रत्नों में चित्रित भद्रासन पर बैठ गई, बैठ कर आश्वस्त और विश्वस्त होकर यानी चलने के श्रम और क्षोभ को मिटा कर सुख पूर्वक आसन पर बैठी हुई वह धारिणी रानी उन इष्टकारी, कांतकारी यावत् मधुर शब्दों के द्वारा संभाषण करती हुई अदीनशत्रु राजा से इस प्रकार कहने लगी -

एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए तं चेव जाव णिययवयणमइवयंतं सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा। तण्णं देवाणुप्पिया! एयस्स उरालस्स जाव महासुविणस्स के मण्णे कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ॥१७६॥

कठिन शब्दार्थ - **मण्णे** - मुझे, **के** - क्या, **फलवित्तिविसेसे** - फल विशेष, **भविस्सइ**- होगा।

भावार्थ - इस प्रकार निश्चय ही हे देवानुप्रिय! आज मैं उस प्रकार की अर्थात् पुण्यात्माओं के शयन करने योग्य यावत् शरीर के प्रमाण वाली और दोनों तरफ तकिया से युक्त शय्या पर सोती हुई थी। ऐसे समय में स्वप्न में अपने मुख में प्रवेश करते हुए सिंह को देख कर जागृत हुई तो हे देवानुप्रिय! इस उदार यावत् महास्वप्न का मुझे क्या कल्याणकारी फल विशेष होगा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - धारिणी रानी ने अदीनशत्रु राजा से कहा - हे देवानुप्रिय! सुख शय्या पर सोती हुई मैंने स्वप्न में अपने मुंह में प्रवेश करते हुए एक सिंह को देखा है। हे स्वामिन! इस महास्वप्न का मुझे क्या फल प्राप्त होगा?

तएणं से अदीणसत्तू राया धारिणीए देवीए अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए धाराहय-नीव-सुरभिकुसुम-चंचुमालइय-तणु-ऊससियरोमकूवे तं सुविणं ओगिण्हइ ओगिण्हित्ता ईहं पविसइ, ईहं पविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविण्णाणेणं तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ। तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करित्ता धारिणीं देवीं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव मंगल्लाहिं मिउमहुरसस्सिरीयाहिं गिराहिं संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी-॥१७७॥

कठिन शब्दार्थ - **धाराहय-नीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयतणुऊससिय रोमकूवे** - जैसे मेघ के जल की धारा के गिरने से सुगंधित कदम्ब वृक्ष खिल जाता है वैसे ही राजा का शरीर भी पुलकित हो गया और रोंगटे खड़े हो गये, **ईहं** - ईहा-ज्ञान की, **साभाविएणं** - स्वाभाविक, **मइपुव्वएणं** - मति पूर्वक, **बुद्धिविण्णाणेणं** - बुद्धि विज्ञान से, **अत्थोग्गहणं करेइ** - अर्थ को जाना।

भावार्थ - उस समय धारिणी रानी के पास से उपरोक्त विषय को सुन कर और हृदय में धारण करके अदीनशत्रु राजा का हृदय हर्षित और संतुष्ट हुआ। जैसे मेघ के जल की धारा के गिरने से सुगंधित कदम्ब वृक्ष खिल जाता है उसी प्रकार राजा का शरीर भी पुलकित हो गया और रोंगटे खड़े हो गये। इस प्रकार राजा को उस स्वप्न का अवग्रह हुआ। अवग्रह होने पर ईहा ज्ञान की प्रवृत्ति हुई। ईहा की प्रवृत्ति होने पर अपने स्वाभाविक मति पूर्वक अर्थात् मतिज्ञान से उत्पन्न होने वाले बुद्धि विज्ञान से उस स्वप्न के अर्थ को जाना। उस स्वप्न के अर्थ को ग्रहण करके-उन इष्टकारी, कांतकारी, मंगलकारी यावत् मृदु, मधुर और सश्रीक शब्दों से संभाषण करता हुआ अदीनशत्रु राजा धारिणी रानी से इस प्रकार कहने लगा।

विवेचन - धारिणी रानी के द्वारा कहे हुए स्वप्न को सुन कर राजा अति हर्षित हुआ। अपने मन में स्वप्न के अर्थ का विचार कर राजा रानी से इस प्रकार बोला -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजा द्वारा स्वप्न फल कथन

उराले णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे, कल्लाणे णं तुमे जाव सस्सिरीए णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे आरोग्गतुट्ठि-दीहाउ-कल्लाण-मंगल्लकारए णं तुमे देवी सुविणे दिट्ठे। अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भोगलाभो देवाणुप्पिए! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए! रज्जलाभो देवाणुप्पिए! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए! णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसय कुलतिलगं कुलकित्तिकरं कुलणंदीकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं देवकुमारसमप्पभं दारगं पयाहिसि। से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णाय-परिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिण्णविउल-बल-वाहणे रज्जवई राया भविस्सइ। तं उराले णं तुमे जाव सुविणे दिट्ठे आरोग्ग-तुट्ठि जाव मंगल्लकारए णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे त्ति कट्टु धारिणिं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं दुच्चं वि तच्चं वि अणुबूहइ।।१७८।।

कठिन शब्दार्थ - सस्सिरीए - सश्रीक यानी लक्ष्मी सहित, **आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाण-मंगल्लकारए** - आरोग्य, संतोष, दीर्घ आयु, कल्याण और मंगल करने वाला, **दिट्ठे** - देखा है, **रज्जलाभो** - राज्य लाभ, **बहुपडिपुण्णाणं** - पूरे, **अद्धट्ठमाणराइंदियाणं** - साढे सात दिन, **विइक्कंताणं** - बीत जाने पर, **कुलवडिंसयं** - कुल के मुकुट, **कुलणंदिकरं** - कुल की समृद्धि करने वाले, **कुलपायवं** - कुल को आश्रय देने में वृक्ष के समान, **कुल विवद्धणकरं** - कुल की वृद्धि करने वाले, **ससिसोमाकारं** - चन्द्रमा के समान सौम्य आकृति वाला, **देवकुमारसमप्पभं** - देवकुमार के समान प्रभा वाले, **वित्थिण्णविउल-बल-वाहणे** - विस्तीर्ण और विपुल सेना तथा वाहन यानी हाथी, घोड़े आदि सवारी वाला, **वग्गूहिं** - वचनों से, **अणुबूहइ** - कहा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे देवि! तुमने उदार स्वप्न देखा है, दे देवि! तुमने कल्याणकारी यावत् सश्रीक यानी लक्ष्मी सहित स्वप्न देखा है। हे देवि! तुमने आरोग्य, संतोष, दीर्घ आयु, कल्याण और मंगल करने वाला स्वप्न देखा है। हे देवानुप्रिये! इससे तुझे अर्थलाभ होगा, भोगलाभ होगा, पुत्रलाभ होगा, राज्य लाभ होगा। इस प्रकार निश्चय ही हे देवानुप्रिये! पूरे नौ मास और साढे सात दिन बीत जाने पर हमारे कुल की ध्वजा के समान, कुलदीपक, कुल में पर्वत के समान, कुल के मुकुट, कुलतिलक, कुल की कीर्ति बढ़ाने वाले, कुल की समृद्धि करने वाले, कुल के आधार, कुल को आश्रय देने में वृक्ष के समान, कुल की वृद्धि करने वाले, सुकुमार अर्थात् कोमल हाथ पैर वाले, किसी भी प्रकार की हीनता रहित सम्पूर्ण पांचों इन्द्रियों से पूर्ण शरीर वाले यावत् चन्द्रमा के समान सौम्य आकृति वाले कांत, देखने में प्रिय, सुरूप, देवकुमार के समान प्रभा वाले बालक को तुम जन्म दोगी। वह बालक बाल्यावस्था का त्याग करने पर बहत्तर कलाओं का विशेष जानकार होगा। यौवन अवस्था को प्राप्त होने पर वह शूरवीर और पराक्रमी होगा। विस्तीर्ण और विपुल सेना तथा वाहन यानी हाथी घोड़े आदि सवारी वाला राज्यपति राजा यानी राजराजेश्वर होगा। इसलिए हे देवि! तुमने उदार स्वप्न देखा है, तुमने आरोग्य संतोष यावत् मंगल करने वाला स्वप्न देखा है। इस प्रकार उन इष्टकारी यावत् प्रियकारी वचनों से राजा ने दो तीन बार धारिणी रानी को कहा।

विवेचन - राजा अदीनशत्रु ने धारिणी रानी से कहा - हे देवानुप्रिये! तुमने बड़ा अच्छा शुभ स्वप्न देखा है। तुम एक ऐसे पुत्र को जन्म दोगी जो कि शूरवीर महान् पराक्रमी राज राजेश्वर होगा।

एक दिशा में फैलने वाली प्रसिद्धि 'कीर्ति' कहलाती है। अर्थात् दान से होने वाली प्रसिद्धि कीर्ति कहलाती है। समस्त दिशाओं में फैलने वाली प्रसिद्धि 'यश' कहलाता है अथवा संग्राम से होने वाली प्रसिद्धि यश कहलाता है।

तएणं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतियं एयमट्ठ सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! से जहेयं तुज्झे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वयह त्ति कट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ पडिच्छित्ता अदीणसत्तुएणं रण्णा अब्भणुण्णाया समाणी णाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्टित्ता अतुरियमचवलगइए जेणेव सय-सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ॥१७९॥

कठिन शब्दार्थ - करयलपरिग्गहियं - हाथ जोड़ कर, **सिरसावत्तं** - मस्तक का आवर्तन करती हुई, **एवमेयं** - यह इसी प्रकार है, **तहमेयं** - यह तथ्य है, **अवितहमेयं** - यह अवितथ यानी सत्य है, **असंदिद्धमेयं** - यह निःसंदेह है, **इच्छियमेयं** - यह इच्छित-इष्ट है, **पडिच्छियमेयं**- यह प्रतीच्छित-अभीष्ट है, **पडिच्छइ** - ग्रहण किया, **अतुरियमचवलगइए** - शीघ्रता और चपलता रहित-मंद मंद गति से।

भावार्थ - तब वह धारिणी रानी अदीनशत्रु राजा से इस अर्थ को सुन कर और हृदय में धारण करके हृष्ट तुष्ट यावत् प्रसन्नचित वाली होकर हाथ जोड़ कर दस नखों से अर्थात् दोनों हाथों की दसों अंगुलियों से मस्तक का आर्वतन करती हुई मस्तक पर अंजलि करके इस प्रकार कहने लगी कि-हे देवानुप्रिय! यह इसी प्रकार है, यह तथ्य है, यह अवितथ यानी सत्य है, यह निःसंदेह है यानी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। हे देवानुप्रिय! यह इच्छित-इष्ट है, प्रतीच्छित-अभीष्ट है, इच्छित-प्रतीच्छित यानी इष्ट-अभीष्ट है। हे स्वामिन्! जैसा आप कहते हैं वैसा ही होगा। इस प्रकार रानी ने उस स्वप्न के अर्थ को सम्यक् प्रकार से ग्रहण किया, ग्रहण करके अदीनशत्रु राजा के द्वारा आज्ञा मिलने पर रानी नानामणियों और रत्नों से विचित्र भद्रासन से उठी, उठ कर शीघ्रता और चपलता रहित-मंद मंद गति से जहाँ अपनी शय्या थी वहाँ आ गई।

तेणेव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि णिसीयइ, णिसीइत्ता एवं वयासी-मा मे से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सुविणे अण्णेहिं पावसुविणेहिं पडिहम्मिस्सइ त्ति कट्टु देवगुरुजण-संबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं कहाहिं सुविण जागरियं पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ॥१८०॥

कठिन शब्दार्थ - पावसुविणेहिं - पाप स्वप्नों के द्वारा, **पडिहम्मिस्सइ** - नष्ट हो जाय, **देवगुरुजणसंबद्धाहिं** - देव गुरु जन संबंधी, **पसत्थाहिं** - प्रशस्त, **मंगल्लाहिं** - मांगलिक, **धम्मियाहिं कहाहिं** - धार्मिक कथाओं से, **सुविण जागरियं** - अपने स्वप्न के फल को बनाये रखने के लिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - वहाँ आकर रानी सेज (शय्या) पर बैठ कर इस प्रकार विचार करने लगी कि मेरा वह उत्तम, प्रधान और मंगलकारी स्वप्न किसी दूसरे पाप स्वप्नों के द्वारा नष्ट न हो जाय ऐसा विचार करके वह रानी देव गुरु जन संबंधी प्रशस्त और मांगलिक धार्मिक कथाओं से अपने स्वप्न के फल को बनाये रखने के लिए जागती रही।

विवेचन - पहले शुभ स्वप्न आया हो और यदि पीछे अशुभ स्वप्न आ जाय तो पहले देखे हुए शुभ स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है। इसलिए शुभ स्वप्न देखने के पश्चात् फिर नींद नहीं लेनी चाहिये। ऐसा विचार कर धारिणी रानी ने फिर नींद नहीं ली किन्तु शेष रात्रि धर्म ध्यान में व्यतीत की।

राजा का आदेश

तए णं से अदीणसत्तू राया पच्चूसकालसमयंसि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! बाहिरियं उवट्ठाणसालं अज्ज सविसेसं परमरम्मं गंधोदयसित्तसुइय-सम्मज्जिओवलित्तं पंचवण्णसरस-सुरभि-मुक्कपुप्फ-पुंजोवयारकलियं कालागुरुपवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूव-डज्झंत-मघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह य कारवेह य एवमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

तए णं ते कोडुंबिय पुरिसा अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ तुट्ठा जाव पच्चप्पिणंति। तए णं से अदीणसत्तू राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमल-कोमलुम्मीलियम्मि अहापंडुरे पभाए रत्तासोगपगास-किंसुय-सुयमुह-गुंजद्धराग-बंधुजीवग-पारावय-चलण-णयण-परहुय-सुरत्तलोयण-जासुयणकुसुम-जलियजवण-तवणिज्ज-कलसहिंगुलयणिगर-रूवाइरेगरेहंत-सस्सिरीए दिवागरे अहकमेण उदिए तस्स दिणकर-करपरंपरावयारपारद्धम्मि अंधयारे बालातवकुंकुमेण खइयव्व जीवलोए लोयणविसआणुआसविगसंतविसददंसियम्मि लोए कमलागर-संडबोहए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते सयणिज्जाओ उट्ठेइ, उट्ठित्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ॥१८१॥

कठिन शब्दार्थ - पच्चूसकालसमयंसि - प्रातःकाल होने पर, **उवट्ठाणसालं** - उपस्थानशाला-सभा स्थान को, **गंधोदयसित्तसुइयसम्मज्जिओवलित्तं** - सुगंधित जल से सींच कर पवित्र और साफ करो, **पंचवण्णसरस-सुरभि-मुक्कपुप्फ-पुंजोवयारकलियं** - पांच वर्ण के सरस, सुगंधित फूलों से युक्त करो, **कालागुरुपवरकुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूव-डज्झंत-मघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामं** - कृष्णागर, चीड़, लोबान आदि की मघ-मघायमान गंध से शोभित, **फुल्लुप्पलकमल-कोमलुम्मीलियम्मि** - कोमल उत्पल और कमलों को विकसित करने वाले, **अहापंडुरे** - श्वेत, **रत्तासोगपगास** - लाल अशोक का प्रकाश, **किंसुय** - केसूडे का फूल, **सुयमुह** - तोते की चोंच, **गुंजद्धराग** - चिरमटी का आधा लाल हिस्सा, **बंधुजीवग** - दुपहरिया का फूल अथवा सावन में पैदा होने वाला ममोलिया नामक लाल जीव, **पारावयचलणणयण** - कबूतर के पैर और नेत्र, **परहुयसुरत्तलोयण** - कोयल के लाल नेत्र, **जासुयणकुसुम-जासुमिणकुसुम** - जवा कुसुम, **जलियजलण** - जलती हुई अग्नि, **तवणिज्जकलस** - सोने का कलश, **हिंगुलयणिगर** - हिंगलू का समूह, **रूवाइरेगरेहंत सस्सिरीए**- रूप यानी प्रभा से भी अधिक प्रभा और शोभा वाले, **दिणकरकर-परंपरावयारपारद्धम्मि अंधयारे**- सूर्य की किरणों के गिरने से अंधकार का विनाश प्रारंभ होने पर, **बालातवकुंकुमेण**- बाल सूर्य के प्रकाश रूपी कुंकुम से, **खइयव्वजीवलोए** - जीव लोक के रंगे जाने पर, **लोयण विसआणुआसविगसंत-विसददंसियम्मि** - देखे जा सकने वाले विषय यानी पदार्थों का स्पष्ट प्रतिभास होने पर, **कमलागरसंडबोहए** - कमलों को विकसित करते हुए, **सहस्स रस्सिम्मि** - हजार किरणों वाले।

भावार्थ - तदनन्तर प्रातःकाल होने पर अदीनशत्रु राजा ने अपने सेवकों को बुलाकर कहा कि - हे देवानुप्रियो! आज शीघ्र ही बाहर की उपस्थान शाला (सभा स्थान) को विशेष रूप से परम रमणीय-कचरा आदि निकाल कर साफ करो और सुगंधित जल से सींच कर पवित्र करो, पांच वर्ण के सरस, सुगंधित फूलों से युक्त करो, कृष्णागर, चीड़, लोबान आदि की मघमघायमान गंध से शोभित अतएव गंध की गोली के समान अनेक प्रकार की उत्तम उत्तम सुगंधों से सुगंधित करो और कराओ। इस प्रकार मेरी इस आज्ञा को पूरी करके मुझे सूचित करो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अदीनशत्रु राजा के द्वारा ऐसी आज्ञा पाने पर हर्षित और तुष्ट हुए उन सेवकों ने यावत् आज्ञानुसार कार्य करके राजा को सूचित किया। तत्पश्चात् रात्रि के व्यतीत हो जाने पर कोमल उत्पल और कमलों को विकसित करने वाले श्वेत प्रभात के होने पर लाल अशोक का प्रकाश, केसूडे (पलाश) का फूल, तोते की चोंच, चिरमटी का आधा लाल हिस्सा, बंधुजीवक, कबूतर के पैर और नेत्र, कोयल के लाल नेत्र, जवा कुसुम, जलती हुई अग्नि, सोने का कलश, हिंगलू का समूह इन सब के रूप (प्रभा) से भी अधिक प्रभा और शोभा वाले सूर्य के यथाक्रम से उदित होने पर, सूर्य की किरणों के गिरने से अंधकार का विनाश प्रारंभ होने पर, बाल सूर्य के प्रकाश रूपी कुंकुम से जीव लोक के रंगे जाने पर, लोक में देखे जा सकने वाले विषय यानी पदार्थों का स्पष्ट प्रतिभास होने पर कमलों के विकसित करते हुए और तेज से चमकते हुए हजार किरणों वाले दिनकर-सूर्य के उदय होने पर राजा अदीनशत्रु शय्या से उठा, उठ कर जहां व्यायामशाला थी, वहां पर गया।

उवागच्छित्ता अट्टणसालं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता अणेगवायाम-जोग-वग्गण-वामद्दण-मल्लजुद्धकरणेहिं संते परिस्संते सयपागेहिं सहस्सपागेहिं सुगंधवरतेल्लमाइएहिं पीणणिज्जेहिं दीवणिज्जेहिं दप्पणिज्जेहिं मदणिज्जेहिं विंहणिज्जेहिं सव्विंदिय-गाय-पल्हायणिज्जेहिं अब्भंगएहिं अब्भंगिए समाणे तेलचम्मंसि पडिपुण्ण-पाणिपाय-सुकुमाल-कोमलतलेहिं पुरिसेहिं छेएहिं दक्खेहिं पट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं णिउणेहिं णिउणसिप्पोवगएहिं जियपरिस्समेहिं अब्भंगणपरिमद्दण उव्वट्टणकरणगुण णिम्माएहिं अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए संबाहणाए संबाहिए समाणे अवगयपरिस्समे णरिंदे अट्टणसालाओ पडिणिक्खमइ॥१८२॥

कठिन शब्दार्थ - अट्टणसालं - व्यायामशाला में, **अणेगवायाम-जोग-वग्गण-वामद्दण-मल्लजुद्धकरणेहिं** - व्यायाम के अनेक प्रयोग वल्गन (उछलना) व्यामर्दन (परस्पर बाहु आदि को मोड़ना) परस्पर मल्ल युद्ध आदि के करने से, **संते** - श्रांत-थक जाने पर, **परिस्संते** - परिश्रांत-विशेष थक जाने पर, **पीणणिज्जेहिं** - शरीर की सब धातुओं को समान करने वाले, **दीवणिज्जेहिं** - जठराग्नि को दीप्त करने वाले, **दप्पणिज्जेहिं** - बल को बढ़ाने वाले,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मदणिज्जेहिं - काम को बढ़ाने वाले, **विंहणिज्जेहिं** - मांस को बढ़ाने वाले, **सव्विंदियगाय-पल्हायणिज्जेहिं** - पांचों इन्द्रियों और शरीर को सुख पहुंचाने वाले, **अब्भंगएहिं** - अब्भ्यंगन-तैल आदि के लेप से, **पडिपुण्णपाणिपाय सुकुमाल कोमल तलेहिं** - अविकल हाथ पैर वाले और कोमल तलवे वाले, **छेएहिं** - अंवसर को जानने वाले बहत्तर कलाओं को जानने वाले, **णिउणसिप्पोवगएहिं** - मर्दन कार्य में सुनिपुण, **जियपरिस्समेहिं** - परिश्रम से नहीं थंकने वाले, **अब्भंगणपरिमद्दण-उव्वट्टण-करणगुणणिम्माएहिं** -- लेप, मालिश और उबटन के अभ्यासी पुरुषों द्वारा, **संवाहणाए** - संबाधना यानी अंगचम्पी द्वारा।

भावार्थ - वहां जाकर राजा ने व्यायाम शाला में प्रवेश किया, प्रवेश करके व्यायाम के अनेक प्रयोग वल्गन, व्यामर्दन, परस्पर मल्लयुद्ध आदि के करने से श्रान्त और परिश्रान्त हो जाने पर शतपाक, सहस्रपाक वाले श्रेष्ठ सुगंधित तेल आदि से शरीर की सब धातुओं को समान करने वाले, जठराग्नि को दीप्त करने वाले, बल को बढ़ाने वाले, काम को बढ़ाने वाले, मांस को बढ़ाने वाले, पाँचों इन्द्रियों और शरीर को सुख पहुंचाने वाले, तेल आदि के लेप से अविकल हाथ पैर वाले और कोमल तलवे वाले, अवसर को जानने वाले एवं बहत्तर कलाओं को जानने वाले दक्ष, वचन चतुर अथवा आगे आगे चलने वाले कुशल बुद्धिमान् निपुण, मर्दन के कार्य में सुनिपुण, परिश्रम से न थकने वाले लेप, मालिश और उबटन के अभ्यासी पुरुषों द्वारा मालिश करवा कर और तेल चर्म यानी शरीर से मैल उतारने के झामे से शरीर को रगड़ाया। हड्डियों को सुख देने वाली, मांस को सुख देने वाली, त्वचा को सुख देने वाली और रोम को सुख देने वाली, इन चार प्रकार की संबाधना यानी अंगचम्पी द्वारा अंगचम्पित करवा कर थकान दूर होने पर वह राजा व्यायाम शाला से निकला।

पडिणिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता समंतजालाभिरामे विचित्तमणिरयण-कोट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहणिसण्णे, सुहोदगेहिं पुप्फोदगेहिं गंधोदगेहिं सुद्धोदगेहि य पुणो पुणो कल्लाणगपवर-मज्जणविहीए मज्जिए तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हल-सुकुमालगंधकासाइयलूहियंगे अहयसुमहग्घ-दूसरयणसुसंवुए सरससुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुइमालावण्णगविलेवणे आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियहारद्धहार-तिसरय-पालंबपलंबमाण-कडिसुत्तसुकयसोहे पिणद्धगेवेज्जे अंगुलिज्जग-ललियंग-ललियकयाभरणे णाणामणि-कडग-तुडिय-थंभियभुए अहियरूव-सस्सिरीए कुंडलुज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकय-रइयवच्छे पालंबपलंबमाण-सुकयपडउत्तरिज्जे मुद्दिया पिंगलंगुलीए णाणामणिकणगरयण-विमल-महरिहणिउणोविय मिसिमिसंत-विरइय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-लट्ठ-संठिय-पसत्थ आविद्धवीरवलए, किं बहुणा, कप्परुक्खए चेव सुअलंकिय-विभूसिए णरिंदे सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं उभओ चउचामरवालवीइयंगे मंगलजयसद्दकयालोए अणेगगण-णायग-दंडणायग-राईसर-तलवर-माडंबिय कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-पीढमद्द-णगर-णिगम-सेट्ठि-सेणावइ सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपरिवुडे धवल-महामेह-णिग्गए विव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससिव्व पियदंसणे णरवई मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे॥१८३॥

कठिन शब्दार्थ - मज्जणघरे - स्नानघर, **समंतजालाभिरामे (समत्तजालाभिरामे)** - चारों ओर से जालियों से सुंदर, **विचित्तमणिरयणकोट्टिमतले** - जिसका तल भाग विचित्र मणि और रत्नों से जड़ा हुआ है, **ण्हाणमंडवंसि** - स्नान मंडप में, **कल्लाणगपवरमज्जणविहीए** - स्वास्थ्य कर स्नान विधि से, **पम्हल-सुकुमालगंधकासाईयलूहियंगे** - रुएंदार सुंदर सुगंधित सुकोमल वस्त्र से शरीर को पोंछा, **अहयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुए** - बहुमूल्य नवीन वस्त्र पहना, **सरससुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते**- सरस सुगंधि से युक्त गोशीर्ष चंदन का शरीर पर लेप किया, **कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाण कडिसुत्तसुकयसोहे** - गले में हार, अर्द्धहार, तीन लडा हार पहना, कमर में लम्बा और लटकते हुए झुमके वाला कंदौरा पहना, **अंगुलिज्जगललियंगललियकयाभरणे** - अंगुलियों में अंगुठियां और बहुत से सुंदर सुंदर आभूषण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धारण किये, **मउडदित्तसिरए** - मस्तक पर मुकुट धारण किया, **हारोत्थयसुकयरइयवच्छे** - हारों के वक्षस्थल के ढक जाने से सुंदर मालूम होने लगा, **पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे**- लटकता हुआ लम्बा सा बढिया दुपट्टा धारण किया, **मुद्दियापिंगलंगुलीए** - अंगुलियां अंगुठियों से पीली हो गई, **णाणामणिकणगरयण विमलमहरिहणिउणोविय-मिसिमिसंत विरइय सुसिलिट्ठ विसिट्ठलट्ठ-संठिय-पसत्थ-आविद्धवीरवलए** - चतुर कारीगरों द्वारा बनाये गये नाना तरह के विमल, विशिष्ट, मनोहर, देदीप्यमान, अच्छे जोड़ वाले बहुमूल्य मणि रत्नों से युक्त सोने के वीरवलय यानी विजयसूचक कड़े पहने, **सकोरंटमल्लदामेणं** - कोरण्टक वृक्ष के फूलों की मालाओं से बने हुए, **चउचामरवालवीइयंगे** - जिसके शरीर पर चार चामर ढुलाये जा रहे हैं, **मंगलजयसद्दकयालोए** - जिसे देख कर लोग जय-जय शब्द कर रहे हैं, **अणेग-गणनायग-दंडणायग-राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च चेड-पीढमद्द-णगर-णिगम-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूयसंधिवाल** - अनेक गणनायक, दण्डनायक, मांडलिक राजा, युवराज, तलवर, माडंबिक, कौटुम्बिक, मंत्री, महामंत्री, गणितज्ञ, दौवारिक (दरबान) अमात्य, सेवक, पीठमर्दक (समान उम्र वाले मित्र), नगरनिवासी, निगम (राजकर्मचारी) सेठ, सेनापति, सार्थवाह, दूत और संधिपाल (संधि की रक्षा करने वाले), **गहगण-दिप्पंत-रिक्खतारागणाण** - ग्रहगण से दीप्त आकाश में स्थित तारागणों के, **धवल-महामेहणिग्गए**-उज्ज्वल और बड़े बड़े बादलों में से निकले हुए, **ससिव्व** - चन्द्रमा के समान।

भावार्थ - व्यायामशाला से निकल कर जहां पर स्नानघर था वहां आया। आकर स्नानघर में प्रवेश किया, स्नानघर में प्रवेश करके चारों तरफ से एवं सब तरफ से जालियों से सुंदर जिसका तल भाग विचित्र मणि और रत्नों से जड़ा हुआ है ऐसे सुंदर स्नान मंडप में नानाप्रकार की मणियों से रत्नों से जड़ी हुई स्नान करने की चौकी पर सुखपूर्वक आराम से बैठा। तत्पश्चात् वहां पर राजा ने सुखोदक-शरीर को सुख उपजाने वाला जल अथवा शुभ उदक यानी पवित्र स्थानों से लाया हुआ जल, पुष्पोदक-फूलों की गंध से युक्त जल, गंधोदक-चंदन आदि सुगंधित पदार्थों की गंध से युक्त जल और शुद्धोदक-स्वाभाविक शुद्ध जल से स्वास्थ्यकर स्नान विधि से अनेक प्रकार के सैकड़ों कौतुकपूर्वक बार बार स्नान किया। स्वास्थ्य कर विधि से स्नान कर चुकने के बाद रुएंदार सुंदर सुगंधित सुकोमल वस्त्र से शरीर को पोंछा और बहुमूल्य नवीन वस्त्र पहना, सरस सुगंधि से युक्त गोशीर्ष चंदन का शरीर पर लेप किया, पवित्र फूलमाला धारण की और केसर आदि का लेप किया, मणियों और सोने के गहने पहने। गले में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हार यानी अठारह लड़ा हार, अर्द्धहार यानी नवलड़ा हार और तीन लड़ा हार पहना। कमर में लम्बा और लटकते हुए झूमके वाला कन्दोरा पहना, गले में आभूषण पहने, अंगुलियों में अंगुठियां पहनीं और बहुत से सुंदर सुंदर आभूषण धारण किये। अनेक प्रकार की मणियां और कंकण आदि आभूषणों से हाथ और भुजाओं को अलंकृत किया, आभूषणों को धारण करने से उसका रूप अधिक शोभायमान होने लगा। कानों में कुंडल धारण करने से मुंह चमकने लगा। मस्तक पर मुकुट धारण किया, हारों से वक्षस्थल के ढक जाने से सुंदर मालूम होने लगा। एक लटकता हुआ लम्बा-सा बढिया दुपट्टा धारण किया, अंगुलियां अंगुठियों से पीली हो गई। चतुर कारीगरों द्वारा बनाये गये नाना प्रकार के विमल, विशिष्ट, मनोहर, देदीप्यमान, अच्छे जोड़ वाले बहुमूल्य मणिरत्नों से युक्त सोने के वीरवलय यानी विजयसूचक कड़े धारण किये। अधिक क्या कहा जाय? कल्पवृक्ष के समान आभूषणों से अलंकृत और वस्त्रों से विभूषित कोरण्टक वृक्ष के फूलों का मालाओं से बने हुए छत्र को धारण करने वाला दोनों तरफ चार चामर जिसके शरीर पर ढुलाये जा रहे हैं ऐसा और जिसे देखकर लोग जय जय शब्द कर रहे हैं ऐसा मनुष्यों में इन्द्र के समान अनेक गणनायक, दण्डनायक, माण्डलिक राजा और युवराज, तलवर यानी राजा द्वारा उपाधि प्राप्त कोटवाल, माडम्बिक यानी मुकुटबंध राजा, कौटुम्बिक यानी कुछ कुटुम्बों के स्वामी मन्त्री, महामंत्री, गणितज्ञ यानी गणित शास्त्र के जानकार, दौवारिक यानी दरबान, अमात्य यानी राज्य के अधिष्ठाता, सेवक, पीठमर्दक यानी समान उम्र वाले मित्र, नगर निवासी प्रजानन, राजकर्मचारी, सेठ, सेनापति, सार्थवाह, दूत और संधिपाल-संधि की रक्षा करने वाले, इन पुरुषों के साथ घिरा हुआ प्रियदर्शन वाला वह राजा ग्रहगण से दीप्त आकाश में स्थित तारागणों के बीच में उज्ज्वल और बड़े बड़े बादलों में से निकले हुए चन्द्रमा के समान वह राजा स्नानघर से निकला, निकल कर जहां पर बाहरी उपस्थानशाला यानी सभा है वहां पर आया, आकर पूर्व दिशा की तरफ मुंह करके सिंहासन पर बैठा।

विवेचन - व्यायामशाला में प्रवेश कर राजा ने व्यायाम की। व्यायाम से थक जाने पर सुगंधित तेल से मालिश करवाई फिर अङ्गमर्दन करवाया। थकान दूर होने के पश्चात् राजा ने उत्तम रीति से बने हुए सुंदर स्नानघर में प्रवेश किया। अनेक प्रकार के सुगंधों से सुगंधित जल से स्नान किया फिर नवीन वस्त्र पहने और राजा के योग्य आभूषण धारण किये फिर स्नान घर से निकल कर मंत्री, महामंत्री, प्रजानन तथा सेवकों आदि से घिरा हुआ राजा बाहरी सभा भवन में आया। वहां आकर पूर्व दिशा की तरफ मुंह करके सिंहासन पर बैठ गया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से अदीणसत्तू राया अप्पणो अदूरसामंते उत्तरपुरच्छिमे दिसिभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थमंगलोवयारकयसंतिकम्माइं रयावेइ, रयावित्ता णाणामणिरयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जरूवं महग्घवर-पट्टणुग्गयं सण्हबहुभत्तिसयचित्तठाणं ईहामिय-उसभ-तुरय-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरुसरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं सुखचियवर-कणगपवर- पेरंतदेसभागं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ॥१८४॥

कठिन शब्दार्थ - अदूरसामंते - पास ही, **सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं** - सफेद वस्त्र से ढके हुए, **सिद्धत्थमंगलोवयारकयसंतिकम्माइं** - जिन पर सरसों आदि मांगलिक उपचार द्वारा विघ्नों का उपशम करने के लिये शांति कर्म किया गया है, **भद्दासणाइं** - भद्रासन, **रयावेइ** - रखवाये, **महग्घवरपट्टणुग्गयं** - बहुमूल्य और उत्तम बना हुआ, **सण्हबहुभत्तिसयचित्तठाणं** - सूक्ष्म और अनेक प्रकार के सैकड़ों चित्रों के स्थान, **ईहामिय-उसभ-तुरय-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय भत्तिचित्तं** - ईहा मृग (भेडिया) बैल, घोड़ा, मनुष्य, मगर, पक्षी, व्याल (सर्प), किन्नर, रुरु (एक प्रकार का मृग) सिंह अथवा एक प्रकार का शिकारी पशु, चमरी गाय, हाथी, वनलता, पद्मलता आदि अनेक प्रकार के चित्रों से चित्रित, **सुखचियवरकणगपवर-पेरंतदेसभागं** - उत्तम सोने के तार से मण्डित कोणों वाला, **जवणियं** - यवनिका-पर्दा, **अंछावेइ** - डाल दिया।

भावार्थ - तदनन्तर उस अदीनशत्रु राजा ने अपने पास ही उत्तर पूर्व के मध्य के दिशा भाग में अर्थात् ईशान कोण में सफेद वस्त्र से ढके हुए और जिन पर सरसों आदि मांगलिक उपचार द्वारा विघ्नों का उपशम करने के लिए शांति कर्म किया गया है ऐसे आठ भद्रासन रखवाये। रखवा कर नानामणि और रत्नों से शोभित अधिक दर्शनीय, बहुमूल्य और उत्तम बना हुआ, सूक्ष्म और अनेक प्रकार के सैकड़ों चित्रों का स्थान ईहामृग यानी भेडिया, बैल, घोड़ा मनुष्य, मगर, पक्षी, सर्प, किन्नर, रुरु, सिंह अथवा एक प्रकार का शिकारी पशु, चमरी गाय, हाथी, वनलता पद्मलता आदि अनेक प्रकार के चित्रों से चित्रित उत्तम सोने के तार से मण्डित कोनों वाला आन्तरिक पर्दा डाल दिया।

विवेचन - राजा के सिंहासन के पास आठ सुन्दर भद्रासन लगाये गये और अनेक चित्रों से युक्त एक आंतरिक पर्दा डाल दिया गया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न पाठकों को बुलावा

अंछावित्ता अच्छरगमउय-मसूरग-उच्छइयं धवलवत्थपच्चुत्थुयं विसिट्ठं अंगसुहफासयं सुमउयं धारिणीए देवीए भद्दासणं रयावेइ रयावित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अट्ठंगमहानिमित्त सुत्तत्थपाढए विविह-सत्थकुसले सुमिणपाढह सद्दावेह, सद्दावित्ता एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह ॥१८५॥

कठिन शब्दार्थ - अच्छरगमउयमसूरगउच्छइयं - उस भद्रासन पर सुकोमल गलीचा बिछाया गया, **धवलवत्थपच्चत्थुयं** - सफेद वस्त्र बिछाया गया, **अंगसुहफासयं** - शरीर को आराम पहुंचाने वाला, **विविहसत्थकुसले** - विविध शास्त्रों में कुशल, **अट्ठंगमहानिमित्त सुत्तत्थपाढए** - अष्टाङ्ग महानिमित्त-ज्योतिष शास्त्र के अर्थ को जानने वाले, **सुमिणपाढह** - स्वप्न पाठकों को।

भावार्थ - पर्दा डलवा कर महारानी धारिणी के लिए एक विशिष्ट भद्रासन रखवाया। उस भद्रासन पर सुकोमल गलीचा बिछाया गया और उस पर एक सफेद वस्त्र बिछाया गया। वह अत्यंत सुकोमल था। सुकोमल होने से शरीर को आराम पहुंचाने वाला था। भद्रासन रखवा कर राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही विविध शास्त्रों में कुशल अष्टाङ्ग महानिमित्त यानी ज्योतिष शास्त्र के अर्थ को जानने वाले स्वप्नपाठकों को बुलाओ और बुलाकर यह मेरी आज्ञा मुझे वापिस सौंपों अर्थात् मेरी आज्ञानुसार कार्य करके मुझे सूचित करो।

विवेचन - राजा ने धारिणी रानी के बैठने के लिए सुन्दर भद्रासन रखवाया और फिर अष्टाङ्ग महानिमित्त कुशल स्वप्न पाठकों को बुलाने के लिए नौकरों को आज्ञा दी।

तए णं ते कोडुंबिय पुरिसा अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ तुट्ठ जाव हियया करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता हत्थिसीसस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णयरस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव सुमिणपाढगाणं गिहाणि तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सुमिणपाढए सद्दावेंति॥१८६॥

भावार्थ - इसके पश्चात् अदीनशत्रु राजा के द्वारा इस प्रकार कहा जाने पर वे कौटुम्बिक पुरुष हर्षित यावत् संतुष्ट हृदय वाले हुए। वे लोग दोनों हाथ जोड़ कर दस नखों को यानी दसों अंगुलियों को इकट्ठा करके सिर पर आवर्त्तन करते हुए मस्तक पर अंजलि करके बोले कि-'हे देव! आपकी आज्ञा प्रमाण है, ऐसा ही होगा।' इस प्रकार कह कर विनयपूर्वक राजा के वचनों को सुना एवं स्वीकार किया। स्वीकार करके अदीनशत्रु राजा के पास से निकले और हस्तिशीर्ष नगर के बीचोबीच होकर जहाँ पर स्वप्न पाठकों के घर थे वहाँ पर पहुँचे, पहुँच कर स्वप्न पाठकों को बुलाया।

विवेचन - राजा की आज्ञा पाकर सेवक हस्तिशीर्ष नगर के बीचोबीच होकर स्वप्न शास्त्रियों के घर पहुँचे वहाँ जाकर उन्हें बुलाया।

तए णं ते सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रण्णो कोडुंबिय पुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा हरियालिय-सिद्धत्थयकयमुद्धाणा सएहिं सएहिं गिहेहिंतो पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता हत्थिसीसस्स णयरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव अदीणसत्तुस्स रण्णो भवणवडिंसग दुवारे तेणेव उवागच्छंति-उवागच्छित्ता एगयओ मिलयंति, एगयओ मिलित्ता अदीणसत्तुस्स रण्णो भवणवडिंसग दुवारेणं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसला जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अदीणसत्तु रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। अदीणसत्तुणा रण्णा अच्चिया वंदिया पूइया माणिया सक्कारिया सम्माणिया समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु णिसीयंति॥१८७॥

कठिन शब्दार्थ - कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता - बलिकर्म यावत् प्रायश्चित्त करके यानी ललाट पर मांगलिक तिलक और मस्तक पर दही-चावल आदि छिटक कर यावत् स्नान संबंधी सारे कार्य करके, **अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा** - थोड़े किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत करके, **हरियालियसिद्धत्थयकयमुद्दाणा** - मस्तक पर दूब और सरसों आदि रखकर, **भवणवडिंसगदुवारे** - महल का मुख्य द्वार, **पुव्वण्णत्थेसु** - पहले से रखे हुए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनन्तर अदीनशत्रु राजा के सेवकों द्वारा बुलाए हुए वे स्वप्न पाठक हर्षित और संतुष्ट हुए फिर स्नान किया। स्नान के बाद बलिकर्म यावत् प्रायश्चित्त करके यानी ललाट पर मांगलिक तिलक और मस्तक पर दही चावल आदि छिटक कर यावत् स्नान संबंधी सारे कार्य करके थोड़े किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत करके मस्तक पर दूब और सरसों आदि रख कर अपने अपने घरों से निकले, निकल कर हस्तिशीर्ष नगर के बीचोबीच होकर जहाँ पर अदीनशत्रु राजा के महल का मुख्य दरवाजा था वहाँ पर आये। वहाँ आकर सब एक जगह मिले अर्थात् एक जगह इकट्ठे हुए, इकट्ठे होकर अदीनशत्रु राजा के महल के मुख्य द्वार से प्रवेश किया, प्रवेश करके जहाँ पर बाहरी उपस्थानशाला-सभा थी एवं जहाँ पर अदीनशत्रु राजा था वहाँ पर आये आकर जय विजय शब्दों से, अदीनशत्रु राजा को जय विजय रूप आशीर्वाद के शब्दों से बधाया। अदीनशत्रु राजा ने उन सब की अर्चना की, वंदना की, पूजा की, मान किया, सत्कार किया और सम्मान किया। तत्पश्चात् वे पहले से रखे हुए भद्रासनों पर पृथक्-पृथक् बैठ गये।

विवेचन - अदीनशत्रु राजा के सेवकों द्वारा बुलाये हुए स्वप्न पाठक स्नान करके तथा उत्तम वस्त्राभूषणों से शरीर को अलंकृत करके राज सभा में आये। राजा ने उन सब का आदर सत्कार किया। तत्पश्चात् वे वहाँ पर पहले से रखे हुए भद्रासनों पर बैठ गये।

जहाँ पर स्नान संबंधी सारा पाठ न लिख कर पाठ संकोच कर दिया जाता है वहाँ पर "**कयबलिकम्मा**" शब्द आता है किन्तु जहाँ पर स्नान संबंधी सारा पाठ आता है वहाँ पर "**कयबलिकम्मा**" शब्द नहीं आता है जैसे कि जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में भरत चक्रवर्ती के स्नान का पूरा वर्णन आता है और इसी तरह उववाई सूत्र में कोणिक राजा के स्नान का पूरा वर्णन आता है। इन दोनों जगह "**कयबलिकम्मा**" पाठ नहीं है। इससे यह सारांश निकलता है कि जहाँ पर स्नान संबंधी पाठ का संकोच कर दिया जाता है वहीं पर '**कयबलिकम्मा**' शब्द आता है। '**कयबलिकम्मा**' शब्द का गृह देवता का पूजन करना ऐसा अर्थ करना संगत नहीं है क्योंकि रायपसेणी (राजप्रश्नीय) सूत्र में जहाँ अरणि से अग्नि निकालने के लिए कठियारे का दृष्टान्त दिया गया है वहाँ जंगल में जब वे कठियारे स्नान करने के लिए बावड़ी में गये हैं वहाँ भी '**कयबलिकम्मा**' पाठ आया है। यदि '**कयबलिकम्मा**' का अर्थ 'गृह देवता का पूजन करना' किया जाय तो यह अर्थ कैसे संगत होगा? क्योंकि वहाँ जंगल में बावड़ी में गृह देवता कहां थे? इसलिए '**कयबलिकम्मा**' शब्द का 'गृह देवता का पूजन करना' ऐसा अर्थ करना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठीक नहीं है। जहाँ स्नान के विस्तार को संकोच कर रखा गया है वहाँ **'कयबलिकम्मा'** शब्द दिया गया है। अतः प्रस्तुत सूत्र में भी इसका यही अर्थ है कि - 'स्नान संबंधी सारे कार्य तिलक छापे आदि किये।'

नोटः- विशेष जानकारी के लिए संघ द्वारा प्रकाशित **''श्री लोंकाशाह मत-समर्थन''** का 'तुगिया के श्रावक' प्रकरण (पृ० ३५-३९) देखें।

तए णं से अदीणसत्तू राया जवणियंतरियं धारिणीं देवीं ठवेइ, ठवित्ता पुप्फफल पडिपुण्णहत्थे परेणं विणएणं ते सुमिणपाढए एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि जाव महासुविणं पासित्ताणं पडिबुद्धा। तं एयस्स णं देवाणुप्पिया! उरालस्स जाव सस्सिरीयस्स महासुमिणस्स के मण्णे कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?॥१८८॥

कठिन शब्दार्थ - जवणियंतरियं - पर्दे के भीतर, **पुप्फफलपडिपुण्णहत्थे** - हाथ में फूल और फल लेकर, **परेणं** - उत्कृष्ट।

भावार्थ - इसके पश्चात् उस अदीनशत्रु राजा ने धारिणी रानी को पर्दे के भीतर बैठाया, बैठा कर हाथ में फूल और फल लेकर उत्कृष्ट विनय से उन स्वप्न पाठकों से इस प्रकार कहा कि - ''हे देवानुप्रियो! आज पुण्यशाली पुरुषों के शयन करने योग्य शय्या पर सोती हुई धारिणी रानी सिंह का महास्वप्न देख कर जागृत हुई है तो हे देवानुप्रियो! इस उदार यावत् सश्रीक महास्वप्न का मुझे क्या मंगलमय फल होगा?''

स्वप्न पाठकों द्वारा फलादेश

तए णं ते सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रण्णो एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया तं सुमिणं सम्मं ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता अण्णमण्णेणं सद्धिं संचालेंति, संचालित्ता तस्स सुमिणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा अदीणसत्तुस्स रण्णो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा, उच्चारेमाणा एवं वयासी, एवं खलु अम्हं सामी! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा बावत्तरिं सव्वसुमिणा दिट्ठा। तत्थ णं सामी! अरहंतमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा अरहंतंसि वा चक्कवट्टिंसि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा गब्भवक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति तंजहा -

गय उसभ सीह अभिसेय दाम ससि दिणयरं झयं कुंभं।

पउमसरसागर विमाण भवण रयणुच्चय सिहिं च॥

वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अण्णयरे सत्त महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति। बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं, अण्णयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति। मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अण्णयरं एगं महासुमिणं पासित्ताणं पडिबुज्झंति। इमे य णं सामी! धारिणीए देवीए एगे महासुमिणे दिट्ठे। तं उराले णं सामी धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउ-कल्लाणमंगलकारए णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, अत्थलाभो सामी! सोक्खलाभो सामी! भोगलाभो सामी! पुत्तलाभो रज्जलाभो सामी! एवं खलु सामी! धारिणी देवी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं जाव दारगं पयाहिसि।

से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिण्ण विउलबलवाहणे रज्जवई राया भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा। तं उराले णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे जाव आरोग्गतुट्ठि जाव दिट्ठे त्ति कट्टु भुज्जो भुज्जो अणुबूहेंति॥१८९॥

कठिन शब्दार्थ - **लद्धट्ठा** - मालूम हो गया, **गहियट्ठा** - गृहीत हो गया, **पुच्छियट्ठा** - आपस में पूछताछ करने से निश्चित हो गया, **विणिच्छियट्ठा** - विनिश्चित हो गया, **अभिगयट्ठा**- पूर्ण निश्चित हो गया, **सुमिणसत्थाइं** - स्वप्नशास्त्र के, **उच्चारेमाणा** - उच्चारण करते हुए, **गब्भं वक्कममाणंसि** - गर्भ में आता है, **गय** - हाथी, **उसभ** - बैल, **दाम** - फूलों की माला, **झयं** - ध्वजा, **पउमसर** - पद्मसरोवर, **रयणुच्चय** - रत्नों की राशि, **सिहिं** - अग्नि की शिखा, **पडिबुज्झंति** - जागृत होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इसके पश्चात् वे स्वप्न पाठक अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुन कर और हृदय में धारण करके हर्षित एवं संतुष्ट हुए। तत्पश्चात् उन्होंने उस स्वप्न का सम्यक् प्रकार से अवग्रह किया, अवग्रह करके ईहा यानी विशेष विचार किया, विचार करके एक दूसरे के साथ यानी परस्पर चर्चा करने लगे। चर्चा करके जब उस स्वप्न का फल मालूम हो गया, गृहीत हो गया आपस में पूछताछ करने से निश्चित हो गया, विनिश्चित हो गया और पूर्ण निश्चित हो गया तब वे अदीनशत्रु राजा के सामने स्वप्न शास्त्र के वाक्यों का उच्चारण करते हुए इस प्रकार बोले - हे स्वामिन्! हमने स्वप्नशास्त्र में बयालीस साधारण स्वप्न और तीस महास्वप्न इस प्रकार सब बहत्तर स्वप्न देखे हैं। हे राजन्! इनमें से जब अर्हंत यानी तीर्थंकर अथवा चक्रवर्ती अपनी माता के गर्भ में आते हैं तब तीर्थंकर की माता अथवा चक्रवर्ती की माता इन तीस महास्वप्नों में से ये चौदह महास्वप्न देख कर जागृत होती है।

यथा - १. हाथी २. बैल ३. सिंह ४. अभिषेक ५. फूलों की माला ६. चन्द्रमा ७. सूर्य ८. ध्वजा ९. कलश १०. पद्म सरोवर ११. समुद्र १२. वैमानिक देवों का विमान या भवनपति देवों का भवन १३. रत्नों की राशि १४. अग्नि की शिखा।

जब वासुदेव गर्भ में आता है तब वासुदेव की माता इन चौदह महास्वप्नों में से कोई सात महास्वप्न देख कर जागृत होती है। जब बलदेव गर्भ में आता है तब बलदेव की माता इन चौदह महास्वप्नों में से कोई चार महास्वप्न देख कर जागृत होती है। जब मांडलिक राजा गर्भ में आता है तब मांडलिक राजा की माता इन चौदह महास्वप्नों में से कोई एक महास्वप्न देख कर जागृत होती है। हे स्वामिन्! धारिणी रानी ने इन महास्वप्नों में से एक महास्वप्न देखा है। हे स्वामिन्! धारिणी रानी ने उदार स्वप्न देखा है। हे स्वामिन्! धारिणी रानी ने आरोग्य, संतोष, दीर्घायु, कल्याण यावत् मंगल करने वाला स्वप्न देखा है। इससे हे स्वामिन्! अर्थ लाभ होगा, सुख लाभ होगा, भोग लाभ होगा, पुत्र लाभ होगा, राज्य लाभ होगा। इस प्रकार हे स्वामिन्! पूरे नव मास बीत जाने पर धारिणी रानी एक पुत्र को जन्म देगी।

वह बालक बाल्यावस्था का त्याग कर कलाओं का ज्ञाता होगा। यौवन अवस्था को प्राप्त करके शूर, वीर, पराक्रमवान्, सेना और वाहन आदि को बढाने वाला, राज्य का स्वामी राजा होगा अथवा भावितात्मा अनगार होगा। इसलिए हे स्वामिन्! धारिणी देवी ने उदार स्वप्न देखा है यावत् आरोग्यकारक एवं तुष्टि का एक स्वप्न देखा है। इस प्रकार उन स्वप्न पाठकों ने बारबार राजा से कहा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - राजा के प्रश्न को सुन कर स्वप्न पाठकों ने उस पर विचार किया, फिर उन्होंने कहा कि हे राजन्! स्वप्न शास्त्र में कुल बहत्तर स्वप्न कहे गये हैं। उनमें बयालीस साधारण स्वप्न हैं और तीस महास्वप्न हैं। इनमें से गर्भाधान के समय तीर्थंकर और चक्रवर्ती की माता चौदह, वासुदेव की माता सात, बलदेव की माता चार और माण्डलिक राजा की माता एक महास्वप्न देख कर जागृत होती है। धारिणी रानी ने एक महास्वप्न देखा है। इसलिये पूरे नौ मास बीत जाने पर वह एक पुत्र को जन्म देगी। आगे जाकर वह या तो मांडलिक राजा होगा अथवा भावितात्मा अनगार होगा। इस प्रकार स्वप्न पाठकों ने राजा से कहा।

चौदह स्वप्नों में बारहवें स्वप्न में 'विमान अथवा भवन' ऐसा विकल्प बतलाया गया है। इसका कारण यह है कि देवलोक से च्यव कर आने वाले तीर्थंकर की माता स्वप्न में विमान देखती है जबकि रत्नप्रभा आदि तीन पृथ्वियों में से किसी पृथ्वी से आकर जन्मने वाले तीर्थंकर की माता स्वप्न में भवन देखती है।

स्वप्न पाठकों को प्रीतिदान

तएणं अदीणसत्तू राया तेसिं सुमिणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए करयल जाव एवं वयासी - एवमेयं देवाणुप्पिया! जाव जण्णं तुब्भे वयह ति कट्टु तं सुमिणं सम्मं पडिच्छइ पडिच्छित्ता ते सुमिणपाढए विउलेण असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारित्ता सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ, दलइत्ता पडिविसज्जेइ॥१९०॥

भावार्थ - इसके पश्चात् अदीनशत्रु राजा उन स्वप्नपाठकों से इस अर्थ को सुन कर और हृदय में धारण करके हर्षित यावत् संतुष्ट हुआ यावत् हाथ जोड़कर इस प्रकार कहा कि हे देवानुप्रियो! यह ऐसा ही है जैसा कि आप लोगों ने कहा है। ऐसा कह कर राजा ने उस स्वप्न के अर्थ को अच्छी तरह से धारण किया और विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम से तथा वस्त्र, सुगंधित माला और अलंकारों से उन स्वप्न पाठकों का सत्कार किया, सम्मान किया सत्कार करके सम्मान करके आजीविका के योग्य बहुत-सा प्रीतिपूर्वक दान दिया। दान देकर उन्हें अपने अपने घर विदा किये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - स्वप्नपाठकों से उपरोक्त अर्थ को सुनकर अदीनशत्रु राजा बहुत खुश हुआ। वस्त्र, फूलमाला, आभरण आदि से उनका सत्कार सम्मान करके तथा बहुत-सा धन देकर उन्हें विदा किया।

तएणं से अदीणसत्तू राया सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता जेणेव धारिणी देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धारिणी देवीं एवं वयासी, एवं खलु देवाणुप्पिए! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा जाव एगं महासुमिणं जाव भुज्जो भुज्जो अणुबूहइ॥१६१॥

भावार्थ - इसके पश्चात् वह अदीनशत्रु राजा सिंहासन से उठा, उठ कर जहां धारिणी रानी थी वहां पर आया, आकर धारिणी रानी को इस प्रकार कहने लगा कि हे देवानुप्रिये! स्वप्न शास्त्र में बयालीस स्वप्न और तीस महास्वप्न हैं यावत् तुमने एक महास्वप्न देखा है अतः तुम्हारे एक पुत्र का जन्म होगा। इस प्रकार राजा बार-बार कहने लगा।

विवेचन - स्वप्नपाठकों को विदा करके राजा रानी के पास आया। उसने स्वप्नपाठकों द्वारा कहा हुआ स्वप्न का अर्थ रानी को कह सुनाया और कहा कि तुम्हारी कुक्षि से एक प्रतापी पुत्र का जन्म होगा।

गर्भ की सुरक्षा

तएणं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुस्स रण्णो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया तं सुमिणं सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता जेणेव सए वासघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयं भवणमणुप्पविट्ठा। तएणं सा धारिणी देवी ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकार-विभूसिया। तं गब्भं णाइसीएहिं णाइउण्हेहिं णाइतित्तेहिं णाइकडुएहिं णाइकसाएहिं णाइअंबिलेहिं णाइमहुरेहिं उउभूयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुण्णदोहला सम्माणियदोहला अविमाणियदोहला वोच्छिण्णदोहला ववणीयदोहला ववगयरोगमोहभयपरित्तासा तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ॥१६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **णाइसीएहिं** - न अधिक शीत, **णाइउण्हेहिं** - न अधिक उष्ण, **णाइतित्तेहिं**- न अधिक तिक्त-तीखा, **णाइकडुएहिं** - न अधिक कडुवा, **णाइकसाएहिं** - न अधिक कषैला, **णाइअंबिलेहिं** - न अधिक खट्टा, **णाइमहुरेहिं** - न अधिक मधुर, **उउभूयमाणसुहेहिं** - ऋतु के अनुसार भोगे जाने वाले, **भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं** - भोजन, आच्छादन यानी वस्त्र आदि और सुगंधित माला आदि पदार्थों का, **पत्थं** - पथ्यकारी, **गब्भपोसणं**- गर्भ को पुष्ट करने वाले, **पइरिक्कसुहाए** - एकान्त सुखकारी, **मणाणुकूलाए** - मन के अनुकूल, **विहारभूमीए** - विहार भूमि में, **विवित्तमउएहिं** - शुद्ध और कोमल, **सयणासणेहि** - शय्या और आसनों पर, **पसत्थदोहला** - शुभ दोहला उत्पन्न हुआ, **संपुण्णदोहला** - दोहला पूर्ण किया गया, **सम्माणियदोहला** - दोहला संमानित किया गया, **अविमाणियदोहला** - दोहला अच्छी तरह पूर्ण किया गया, **वोच्छिण्णदोहला** - दोहले संबंधी इच्छा पूर्ण हुई, **ववणीयदोहला** - दोहले की इच्छा दूर हुई, **ववगयरोगमोहभयपरित्तासा** - रोग, मोह, भय और परित्रास से रहित, **सुहंसुहेणं**- सुखपूर्वक, **परिवहइ** - धारण करने लगी।

भावार्थ - इसके पश्चात् वह धारिणी रानी अदीनशत्रु राजा से यह अर्थ सुन कर हृदय में धारण कर अत्यंत हर्षित और तुष्ट हुई। रानी ने उस स्वप्न के अर्थ को अच्छी तरह से धारण किया, धारण करके जहां पर अपना निवासगृह था वहां आई, आकर उसने अपने महल में प्रवेश किया। तदनन्तर धारिणी रानी ने स्नान किया और स्नान करने के पश्चात् तिलक आदि बलिकर्म किये यावत् अलङ्कार आदि पहन कर अपने शरीर को विभूषित किया। तत्पश्चात् न अधिक शीत, न अधिक उष्ण, न अधिक तिक्त-तीखा, न अधिक कडुआ, न अधिक कषैला, न अधिक खट्टा, न अधिक मधुर किंतु ऋतु के अनुसार भोगे जाने वाले भोजन, आच्छादन अर्थात् वस्त्र आदि और सुगंधित माला आदि पदार्थों का जो उस गर्भ के लिये हित, मित और पथ्यकारी थे तथा उस गर्भ को पुष्ट करने वाले थे, उनका देश और काल के अनुसार आहार आदि का उपभोग करती हुई एकान्त सुखकारी, मन के अनुकूल, विहार भूमि में शुद्ध और कोमल शय्या और आसनों पर शयन और स्थिति करती हुई समय बिताने लगी।

यथा समय रानी को शुभ दोहला उत्पन्न हुआ तब वह दोहला पूर्ण किया गया, सम्मानित किया गया, अच्छी तरह पूर्ण किया गया तब रानी की दोहले संबंधी इच्छा पूर्ण हुई, दोहले की इच्छा दूर हुई। रोग, मोह, भय और परित्रास से रहित होकर रानी उस गर्भ को सुखपूर्वक धारण करने लगी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - राजा के मुख से उपरोक्त अर्थ को सुन कर रानी बहुत प्रसन्न हुई। गर्भ की रक्षा के लिए अधिक शीत, अधिक उष्ण, अधिक कडुआ, अधिक कषायला, अधिक खट्टा, अधिक तीखा आदि पदार्थों का त्याग करके गर्भ के लिए हितकारी, पथ्यकारी और परिमित आहार करती थी। गर्भ के प्रभाव से रानी को श्रेष्ठ दोहला उत्पन्न हुआ। उस दोहले को पूर्ण करके रानी सुखपूर्वक समय बीताने लगी।

सुबाहुकुमार का जन्म

तएणं सा धारिणी देवी णवण्हं मासाणं पडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीइक्कंताणं सुकुमाल पाणिपायं अहीणपडिपुण्ण-पंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारगं पयाया।

तएणं तीसे धारिणीए देवीए अंगपडियारियाओ धारिणीं देवीं पसूयं जाणित्ता जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयलपडिग्गहियं जाव अदीणसत्तू रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति, वद्धावित्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं जाव दारगं पयाया। तं एयण्णं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए पियं णिवेदेमो। पियं भे भवउ।

तएणं अदीणसत्तू राया अंगपडियारियाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव धाराहयाणीव जाव रोमकूवे तासिं अंगपडियारियाणं मउडवज्जं जहा मालियं ओमोयं दलयइ, दलित्ता सेत्त रययामयं विमलसलिलपुण्णं भिंगारं च गिण्हइ, गिण्हित्ता मत्थए धोवइ, धोवित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ, दलित्ता सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ॥१६३॥

कठिन शब्दार्थ - **लक्खणवंजणगुणोववेयं** - स्वस्तिक आदि लक्षण और तिले मष आदि व्यंजन लक्षणों से युक्त, **अंगपडियारियाओ** - अंग परिचारिकाएं-दासियां, **पसूयं** - प्रसूता जान कर, **पियट्ठयाए** - प्रीति के लिये, **धाराहयाणीव जाव रोमकूवे** - जैसे कदम्ब वृक्ष के फूल पर जल धारा पड़ने पर रोम उठ आते हों ऐसा रोमांचित, **मालियं**- पहने हुए, ओमोयं - आभूषण, **मउडवज्जं** - मुकुट को छोड़ कर, **विमलसलिलपुण्णं** - निर्मल जल से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भरे हुए, **सेत्तं** - श्वेत, **रययामयं** - चांदी की, **भिंगारं** - झारी को, **जीवियारिहं** - आजीविका के योग्य।

भावार्थ - तदनन्तर उस धारिणी रानी ने पूरे नौ मास और साढे सात दिन रात व्यतीत होने पर सुकोमल हाथ पैर वाले सुडौल पूर्ण पांच इन्द्रियों से युक्त शरीर वाले, स्वस्तिक आदि लक्षण और तिल मष आदि व्यंजन इन शुभ लक्षणों से युक्त यावत् चन्द्रमा की तरह सौम्य, कांत, देखने में प्रिय और सुरूप बालक को जन्म दिया।

इसके पश्चात् उस धारिणी रानी की अंगपरिचारिकाएं यानी दासियां धारिणी रानी को प्रसूता जान कर जहां पर अदीनशत्रु राजा था वहां आईं, आकर दोनों हाथ जोड़ कर जय विजय शब्दों द्वारा यानी 'जय हो विजय हो' ऐसा कह कर अदीनशत्रु राजा को बधाई दी, बधाई देकर इस प्रकार कहने लगी - हे देवानुप्रिय! पूरे सवा नौ मास बीतने पर धारिणी रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया है। इसलिए हे देवानुप्रिय! आपकी प्रीति के लिए यह प्रिय अर्थात् शुभसंदेश आपको निवेदन किया है जो आपके लिए प्रिय हो।

तदनन्तर अदीनशत्रु राजा, अंगपरिचारिकाओं से इस अर्थ को यानी इस शुभ संदेश को सुन कर और हृदय में धारण करके अत्यंत हर्षित और संतुष्ट हुआ यावत् ऐसा रोमांचित हो गया जैसे कदम्ब वृक्ष के फूल पर जलधारा पड़ने से रोम उठ आये हों। वह जो आभूषण पहने हुए था, उनमें से मुकुट को छोड़कर शेष सारे आभूषण उस अंगपरिचारिका-दासी को दे दिये। देकर निर्मल जल से भरी हुई सफेद चांदी की झारी को उठाया, उठा कर उस दासी के मस्तक को धोया × धोकर आजीविका के योग्य विपुल प्रीतिदान देकर सत्कार-सम्मान किया, सत्कार सन्मान करके उसको विदा किया।

विवेचन - सवा नौ मास पूर्ण होने पर धारिणी रानी ने सर्वांग पूर्ण एक सुंदर बालक को जन्म दिया। उस समय दासियों ने राजा के पास जाकर पुत्र जन्म की बधाई दी। इस शुभ समाचार को सुनकर राजा को बड़ी खुशी हुई। उस समय वह जो आभूषण पहने हुआ था उनमें से एक मुकुट के सिवाय सारे आभूषण दासियों को इनाम में दे दिये। अपने हाथ से उनका मस्तक धोकर उनका दासपना दूर कर दिया फिर उनकी जीविका के लिए बहुत-सा प्रीतिदान देकर उनका सत्कार सम्मान करके उन्हें विदा किया।

× स्वामी के द्वारा मस्तक धोने पर दासपना दूर हो जाता है, ऐसा लोक व्यवहार है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जन्मोत्सव

तएणं से अदीणसत्तू राया कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी- खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिसीसं णयरं आसिय जाव परिगयं करेह करित्ता चारगपरिसोहणं करेह, करित्ता माणुम्माणवद्धणं करेह, करित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह जाव पच्चप्पिणंति।

तएणं से अदीणसत्तू राया अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी - 'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! हत्थिसीसे णयरे अब्भिंतर बाहिरिए उस्सुक्कं उक्करं अभडप्पवेसं अडंडिमं कुडंडिमं अधरिमं अधारणिज्जं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं गणियावरणाडइज्जकलियं अणेगतालायराणुचरियं पमुइयपक्कीलियाभिरामं जहारिहं ठिइवडियं दसदिवसियं करेह, करित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। ते वि करेंति, करित्ता तहेव पच्चप्पिणंति॥१९४॥

कठिन शब्दार्थ - **चारगपरिसोहणं करेह** - कैदियों को कैदखाने से छोड़ दो, **माणुम्माणवद्धणं करेह** - नापने और तोलने के परिमाण में वृद्धि करो, **सेणिप्पसेणीओ** - श्रेणि और प्रश्रेणि अर्थात् जातियों और उपजातियों को, **उस्सुक्कं** - चुंगी, **उक्करं** - कर, **अभडप्पवेसं** - राजा का कोई पुरुष जनता को संताप न दे, **अडंडिमं** - दण्ड न दे, **कुडंडिमं**- कुदण्ड न दे, **अधरिमं** - कर्जा मांगने वाले कोई किसी के घर पर तगादा न करे, **अधारणिज्जं**- धरना न दे, **अणुद्धुयमुइंगं** - निरन्तर मृदङ्ग बाजा बजाया जाय, **अमिलायमल्लदामं** - ताजी फूलमालाओं से, **गणियावरणाडइज्जकलियं** - उत्तम गणिकाओं का नृत्य कराओ, **अणेगतालायराणुचरियं** - बहुत से ताल बजा कर नाटक करने वालों से, **पमुइयपक्कीलियाभिरामं** - प्रमोद और क्रीड़ा करने वालों से नगर सुशोभित करो, **ठिइवडियं**- कुल की मर्यादा के अनुसार।

भावार्थ - तदनन्तर उस अदीनशत्रु राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों (सेवकों) को बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रियो! हस्तिशीर्ष नगर को शीघ्र साफ करो यावत् छिड़काव करो। कैदियों को कैदखाने से छोड़ दो। मापने और तोलने के परिमाण में वृद्धि करो। यह सब कार्य करके यह मेरी आज्ञा मुझे वापिस सौंपो अर्थात् मुझे सूचित करो। सेवकों ने राजा की आज्ञानुसार कार्य करके उसे सूचित किया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसके पश्चात् अदीनशत्रु राजा ने अठारह श्रेणि और प्रश्रेणि यानी जातियों और उपजातियों को बुलाया, बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और हस्तिशीर्ष नगर के अंदर और बाहर ऐसा प्रबंध करो कि दस दिन तक कोई भी चुंगी न ले, कर-महसूल न ले। राजा का कोई पुरुष जनता को संताप न दे, कोई किसी को दण्ड न दे, कोई किसी को कुदण्ड न दे, कर्जा मांगने वाला कोई किसी के घर पर तगादा न करे, कर्जदार के घर पर धरना न दे, मृदङ्ग बाजा निरन्तर बजाया जाय। नगर को ताजी फूलमालाओं से शोभित करो। उत्तम गणिकाओं का नाच कराओ। बहुत से ताल बजा कर नाटक करने वालों से नाटक कराओ। प्रमोद और क्रीड़ा करने वालों से नगर सुशोभित करो। इसके सिवाय कुल की मर्यादा के अनुसार यथायोग्य पुत्र जन्म संबंधी कार्य करो। यह सारा कार्य करके मेरी यह आज्ञा मुझे वापिस सौंपो अर्थात् मुझे सूचित करो। उन सब लोगों ने भी उसी प्रकार कार्य किया और करके राजा को वापिस सूचित किया।

विवेचन - दासियों के द्वारा पुत्र जन्म के शुभ समाचार को प्राप्त कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने नगर को साफ सुथरा कर शोभायमान करने और प्रजाजनों को आमोद प्रमोद करने की आज्ञा दी। कर्जदार के घर तगादा करना तथा धरना देने की मनाई की और दस दिन के लिए राज्य का कर भी माफ कर दिया।

अनेक संस्कार

तएणं से अदीणसत्तू राया बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे, सइएहि य सहस्सिएहि य सयसहस्सिएहि य जाएहिं दाएहिं भागेहिं दलयमाणे दलयमाणे पडिच्छेमाणे पडिच्छेमाणे एवं च णं विहरइ।

तएणं तस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जायकम्मं करेंति, करित्ता बिइए दिवसे जागरियं करेंति, करित्ता तइए दिवसे चंदसूरदंसणियं करेंति, करित्ता एवामेव णिव्वत्ते सुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावित्ता मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधी-परिजणं बलं च बहवे गणणायग दंडणायग जाव आमंतेइ। तओ पच्छा ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय जाव सव्वालंकार विभूसिया महइमहालयंसि भोयणमंडवंसि तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं मित्तणाइगणणायग जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आसाएमाणा विसाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरेंति॥१९५॥

कठिन शब्दार्थ - जाएहिं - याचकों-भिखारियों के लिए, **दाएहिं** - दानों के लिए, **भागेहि-भोगेहिं** - परस्पर विभाग करने के लिए अथवा आहार के लिए, **सइएहिं** - सैकड़ों, **सहस्सिएहिं** - हजारों, **सयसहस्सिएहिं** - लाखों, **दलयमाणे** - दान देता हुआ, **पडिच्छेमाणे**- बारम्बार दान देता हुआ, **जायकम्मं** - जातकर्म-जन्म के समय की क्रियाएं, **जागरियं** - रात्रि जागरण, **चंदसूरदंसणियं** - चन्द्र सूर्य का दर्शन, **सुइजायकम्मकरणे** - जन्म संबंधी कार्यों से, **णिव्वत्ते** - निवृत्त होने पर, **उवक्खडावेंति** - बनवाया, **मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परिजणं**- मित्र, ज्ञाति (जाति), स्वजन संबंधी और परिजनों को, **कयकोउय - अशुभ** की निवृत्ति के लिये कौतुकादि, मांगलिक चिह्न आदि किये, **आसाएमाणा** - आस्वादन करते हुए, **विसाएमाणा**- विशेष रूप से आस्वादन करते हुए, **परिभाएमाणा** - परस्पर बांट कर देते हुए, **परिभुंजेमाणा**- उपभोग करते हुए।

भावार्थ - इसके पश्चात् वह अदीनशत्रु राजा बाहर की उपस्थान शाला-सभा में पूर्व की ओर मुंह करके सुंदर सिंहासन पर बैठा। भिखारियों के लिये, अभयदान आदि दानों के लिए और परस्पर विभाग करने के लिए अथवा आहार के लिए सैकड़ों, हजारों और लाखों द्रव्यों का दान देता हुआ तथा बारम्बार दान देता हुआ इस प्रकार विचरने लगा।

तदनन्तर उसके माता पिता ने पहले दिन में जातकर्म-जन्म के समय की क्रियाएं की। दूसरे दिन रात्रि जागरण किया। तीसरे दिन चन्द्र सूर्य का दर्शन करवाये। इस प्रकार जन्म संबंधी कार्यों से निवृत्त होने पर और बारहवां दिवस आने पर बहुत-सा अशन, पान, खादिम और स्वादिम, यह चारों प्रकार का आहार बनवाया, बनवा कर मित्र, जाति, स्वजन संबंधी और परिजनों को और सेना को तथा बहुत से गणनायक यावत् दण्डनायक-कोटवाल आदि को आमंत्रण दिया। इसके पश्चात् उन्होंने स्नान किया, बलिकर्म यानी स्नान संबंधी कार्य किये यावत् अशुभ की निवृत्ति के लिये कौतुक आदि किये यावत् वे सर्व अलंकारों से विभूषित हुए। फिर महान् भोजन मण्डप में मित्र, ज्ञाति, गणनायक यावत् दण्डनायक आदि के साथ उस अशन, पान, खादिम और स्वादिम पदार्थों का आस्वादन करते हुए, विशेष रूप से आस्वादन करते हुए, परस्पर बांट कर देते हुए और उपभोग करते हुए विचरने लगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - पहले दिन जन्म संबंधी क्रियाएं, दूसरे दिन रात्रि जागरण, तीसरे दिन चन्द्र सूर्य के दर्शन कराये गये। बारहवें दिन राजा और रानी ने बहुत-सा आहारादि तैयार करवाया और मित्रों को तथा कुटुम्ब परिवार के समस्त लोगों को आमंत्रण देकर जिमाया।

मूलपाठ में आये हुए **'असणं पाणं'** आदि शब्दों के अर्थ इस प्रकार होता है -

१. **अशन**-जिससे भूख की निवृत्ति हो वह अशन कहलाता है जैसे दाल, भात, रोटी आदि।

२. **पान** - जिससे प्यास बुझे वह पान कहलाता है जैसे जल, धोवन आदि।

३. **खादिम** - जिससे भूख और प्यास दोनों की ही निवृत्ति हो वह खादिम (खाद्य) कहलाता है। जैसे - फल, मेवा आदि।

४. **स्वादिम** - जो वस्तु मुख के स्वाद के लिये खाई जाय वह स्वादिम (स्वाद्य) कहलाती है जैसे - लोंग, सुपारी, इलायची, चूर्ण आदि।

नामकरण संस्कार

जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसूइब्भूया तं मित्तणाइणियगसयणसंबंधि-परियण-गणणायग जाव विउलेणं पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता एवं वयासी-अम्हं इमस्स दारगस्स णामेणं सुबाहुकुमारे। तस्स दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं गोण्णं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं करेंति सुबाहुत्ति॥१९६॥

कठिन शब्दार्थ - **जिमियभुत्तुत्तरागया** - भोजन कर लेने के पश्चात्, **आयंता** - शुद्ध जल से कुरले किये, **चोक्खा** - हाथ के लेप और कण आदि को धोकर साफ किये, **परमसुइब्भूया**- परम शुचिभूत यानी परम पवित्र हो कर, **गोण्णं** - गुण युक्त, **गुणणिप्फण्णं** - गुण निष्पन्न।

भावार्थ - भोजन कर लेने के पश्चात् राजा और रानी आकर यथास्थान बैठ गये फिर शुद्ध जल से कुल्ले किये, हाथ के लेप और कण आदि को धोकर साफ किये और परम शुचि भूत यानी परम पवित्र होकर मित्र, ज्ञाति, स्वजन संबंधी, परिजन और गण नायक यावत् दण्डनायक आदि का विपुल फूल, वस्त्र, सुगंधित माला और अलंकारों से सत्कार किया, सम्मान किया, सत्कार सम्मान करके इस प्रकार कहने लगे कि हमारे इस पुत्र का नाम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'सुबाहुकुमार' हो। इस प्रकार माता पिता ने उस बालक का गुण युक्त गुणनिष्पन्न सुबाहुकुमार ऐसा नाम किया।

सुबाहुकुमार का लालन पालन

तएणं से सुबाहुकुमारे पंचधाई परिग्गहिए, तं जहा - खीरधाईए मंडणधाईए मज्जणधाईए कीलावणधाईए अंकधाईए अण्णाहिं च बहुहिं खुज्जाहिं चिलाइयाहिं वामणि-वडभि-बब्बरि-बउसि-जोणिय पल्हविणिया-इसिणिया धोरुगिणि-लासिय-लउसिय-दमिलि-सिंहलि-आरबि-उलिंदि-पक्कणि-बहलि-मरुंडि-सबरि-पारसीहिं णाणादेसीहिं विदेसपरिमंडियाहिं इंगिय-चिंतिय-पत्थिय-वियाणियाहिं सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं णिउणकुसलाहिं विणीयाहिं चेडिया-चक्कवाल-वरिसहर-कंचुइज्ज-महयरगवंदपरिक्खित्ते हत्थाओ हत्थं साहरिज्जमाणे अंकाओ अंकं परिभुज्जमाणे परिगिज्जमाणे चालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे रम्मंसि मणिकोट्टिमतलंसि परिमिज्जमाणे परिमिज्जमाणे णिव्वाय-णिव्वाघायंसि गिरिकंदरमल्लीणेव चंपगपायवे सुहं सुहेणं वड्ढइ॥१९७॥

कठिन शब्दार्थ - खीरधाईए- दूध पिलाने वाली धाय, **मंडणधाईए** - श्रृंगार कराने वाली धाय, **मज्जणधाईए** - स्नान कराने वाली धाय, **कीलावणधाईए** - क्रीड़ा कराने वाली धाय, **अंकधाईए** - गोद में लेकर क्रीड़ा कराने वाली धाय, **खुज्जाहिं** - टेडे शरीर वाली, **चिलाइयाहिं** - चिलात देश में उत्पन्न हुई, **वामणि** - बावना शरीर वाली, **वडभि** - बड़े पेट वाली, **बब्बरि** - बर्बर देश में उत्पन्न हुई, **बउसि** - बकुश देश की, **जोणिय** - योनिक देश की, **पल्हविणिया** - पल्हव देश की, **इसिणिया** - इसिनिक देश की, **धोरुगिणि** - धोरुकिन देश की, **लासिय** - लासक देश की, **लउसिय** - लकुसिक देश की, **दमिलि** - द्राविड़ देश की, **सिंहलि** - सिंहली देश की, आरबि - अरब देश की, उलिंदि - पुलिंद देश की, **पक्कणि** - पक्कन देश की, **बहलि** - बहल देश की, **मरुंडि** - मुरुंड देश की, **सबरि** - शबर देश की, **पारसीहिं** - पारस देश की, **णाणादेसीहिं** - नानादेशों की, **विदेसपरिमंडियाहि-** देश विदेशों के परिमण्डन को जानने वाली, **इंगियचिंतियपत्थिय वियाणियाहिं** - इङ्गित यानी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेष्टा से अभिप्राय को जानने वाली, चिंतित-मन में सोचे हुए को इशारे से जानने वाले और वचन से न कहने पर भी आवश्यकता को समझने वाली, **सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं** - अपने अपने देश का वेश पहनने वाली, **चेडियाचक्कवाल वरिसहर कंचुइज्ज महयरगवंदपरिक्खित्ते**- दासियों के समूह और रणवास में रहने वाले कंचुकी तथा अन्तःपुर की रक्षा करने वालों से घिरा हुआ, **साहरिज्जमाणे**- ग्रहण किया जाता हुआ, **परिभुज्जमाणे** - लिया जाता हुआ, **परिगिज्जमाणे** - गीत सुनाया जाता हुआ, **चालिज्जमाणे** - हिलाया जाता हुआ, **उवलालिज्जमाणे** - झुलाया जाता हुआ, **मणिकोट्टिमतलंसि** - जिसके तले में मणियां कूटी गई हैं, **परिमिज्जमाणे** - आनंद करता हुआ, **णिव्वायणिव्वाघायंसि** - कष्ट पहुँचाने वाली गर्म हवा के झोंकों रहित और बाधा रहित, **गिरिकंदरमल्लीणेव** - पर्वत की गुफा में रहने वाले, **चंपगपायवे** - चम्पक वृक्ष के समान, **वड्ढइ** - बढने लगा।

भावार्थ - तदनन्तर उस सुबाहुकुमार को पांच धायों ने ग्रहण किया जैसे कि - १. दूध पिलाने वाली धाय २. श्रृंगार कराने वाली धाय ३. स्नान कराने वाली धाय ४. क्रीड़ा कराने वाली धाय और ५. गोद में लेकर क्रीड़ा कराने वाली धाय। इसी प्रकार अन्य और भी बहुत-सी दासियाँ उसकी सेवा में रखी गई। जैसे कि - टेढे शरीर वाली, चिलात देश में उत्पन्न हुई, बावना शरीर वाली, बड़े पेट वाली, बर्बर देश में उत्पन्न हुई, बकुश देश की, योनिक देश की, पल्हन देश की, इसिनीक देश की, धोरुकिन देश की, लासक देश की, पक्कन देश की, बहल देश की, मरुंड देश की, शबर देश की, पारस देश की इत्यादि बहुत से देशों की, बहुत से देश विदेशों के परिमण्डन को जानने वाली, इंगित यानी चेष्टा से अभिप्राय को जानने वाली, मन में सोचे हुए को इशारे से जानने वाली और वचन से न कहने पर भी आवश्यकता को समझने वाली अपने-अपने देश का वेश पहनने वाली बहुत ही चतुर विनीत दासियों के समूह और रणवास में रहने वाली कंचुकी तथा अन्तःपुर की रक्षा करने वालों से घिरा हुआ एक के हाथों से दूसरों के हाथों में ग्रहण किया जाता हुआ, एक की गोद से दूसरे की गोद में लिया जाता हुआ, दासियों द्वारा गीत सुनाया जाता हुआ, हिलाया जाता हुआ, झुलाया जाता हुआ, जिसके तले में मणियां कूटी गई हैं ऐसे रमणीय महल में अनेक प्रकार से आनंद करता हुआ वह सुबाहुकुमार कष्ट पहुंचाने वाली गर्म हवा के झोंकों रहित और बाधा रहित पर्वत की गुफा में रहने वाले चम्पक वृक्ष के समान सुख पूर्वक बढ़ने लगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन - राजा और रानी ने अपने पुत्र का 'सुबाहुकुमार' ऐसा गुण निष्पन्न नाम रखा। पांच धायमाताओं तथा अनेक देश की दासियों द्वारा लालन पालन किया जाता हुआ वह सुबाहुकुमार पर्वत की गुफा में रहे हुए चम्पकवृक्ष को समान सुखपूर्वक बढ़ने लगा।

पुत्र के लिए माता-पिता के कौतुक

तए णं तस्स सुबाहुस्स दारगस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं ठिइवडियं वा चंदसूरदंसावणियं वा जागरियं वा णामकरणं वा परंगामणं वा पयचंकमणं वा जेमामणं वा पिंडबद्धणं वा पज्जंपावणं वा कण्णवेहणं वा संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं वा उवणयणं वा अण्णाणि य बहूणि गब्भाधाणजम्मणमाइयाइं कोउयाइं करेंति॥१६८॥

कठिन शब्दार्थ - ठिइवडियं - स्थिति पतित अर्थात् अपने कुल की मर्यादा के अनुसार पुत्र जन्मोत्सव आदि, **परंगामणं** - घुटनों से चलना, **पयचंकमणं** - पैरों से चलना, **जेमामणं**- भोजन कराना, **पिंडवद्धणं** - ग्रास का बढ़ाना, **पज्जंपावणं** - उच्चारण करवाना, **कण्णवेहणं**- कानों का छिदाना, **संवच्छर पडिलेहणं** - वर्षगांठ मनाना, **चोलोयणगं** - चोटी रखाना, **उवणयणं**- उपनयन यानी कला ग्रहण करवाना, **गब्भाधाणजम्मणमाइयाइं** - गर्भाधान और जन्म आदि के, **कोउयाइं** - कौतुक।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार बालक के माता-पिता अनुक्रम से स्थिति पतित अर्थात् अपने कुल की मर्यादा के अनुसार पुत्रजन्मोत्सव आदि यावत् चन्द्रसूर्य दर्शन, रात्रि जागरण, नामकरण, घुटनों से चलना, पैरों से चलना, भोजन कराना, ग्रास का बढ़ाना, उच्चारण करवाना, कानों का छिदाना, वर्षगांठ मनाना, चोटी रखाना, उपनयन यानी कला ग्रहण करवाना और अन्य बहुत से गर्भाधान और जन्म आदि के कौतुक करने लगे।

सुबाहुकुमार का कला शिक्षण

तएणं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो साइरेगअट्ठवासजायगं चेव गब्भट्ठमे वासे सोहणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेंति। तए णं से कलायरिए सुबाहुकुमारं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सेहावेइ सिक्खावेइ तंजहा - लेहं गणियं रूवं णट्टं गीयं वाइयं सरगयं पोक्खरगयं समतालं जूयं जणवायं पासयं अट्ठावयं पोरेवच्चं दगमट्टियं अण्णविहिं पाणविहिं वत्थविहिं विलेवणविहिं सयणविहिं अज्जं पहेलियं मागहियं गाहं गीइयं सिलोयं हिरण्णजुत्तिं सुवण्णजुत्तिं चुण्णजुत्तिं आभरणविहिं तरुणीपडिकम्मं इत्थिलक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं गोणलक्खणं कुक्कुडलक्खणं छत्तलक्खणं डंडलक्खणं असिलक्खणं मणिलक्खणं कागणिलक्खणं वत्थुविज्जं खंधारमाणं णगरमाणं वूहं परिवूहं चारं परिचारं चक्कवूहं गरुलवूहं सगडवूहं जुद्धं णिजुद्धं जुद्धाइजुद्धं अट्ठिजुद्धं मुट्ठिजुद्धं बाहुजुद्धं लयाजुद्धं ईसत्थं छरुप्पवायं धणुव्वेयं हिरण्णपागं सुवण्णपागं सुत्तखेडं वट्टखेडं णालियाखेडं पत्तच्छेज्जं कडच्छेज्जं सज्जीवं णिज्जीवं सउणरुयमिइ॥१९९॥

कठिन शब्दार्थ - **साइरेग अट्ठवासजायगं** - आठ वर्ष से कुछ अधिक समय होने पर, **सोहणंसि**- शुभ, **तिहिकरणमुहुत्तंसि** - तिथि, करण और मुहूर्त में, **कलायरियस्स** - कलाचार्य को, **उवणेंति** - सौंप दिया, **लेहाइयाओ** - लेखन संबंधी, **गणियप्पहाणाओ** - गणित प्रधान, **सउणरुयपज्जवसाणाओ** - पक्षी आदि से बोलने के शकुन ज्ञान तक, **सुत्तओ** - सूत्र रूप से, **करणओ** - करण रूप से, **सेहावई** - सिखाई, **सिक्खावेइ** - अभ्यास कराया, **सरगयं** - स्वर उच्चारण की कला, **जूयं** - जुआ खेलने की कला, **जणवायं** - जनवाद नामक विशेष जूआ खेलने की कला, **पोरेवच्चं** - ग्राम, नगर आदि की रक्षा करने की कला, **अज्जं** - आर्या आदि छंद रचना का ज्ञान, **गाहं** - गाथा बनाने संबंधी ज्ञान, **हिरण्णजुत्तिं** - चांदी बनाने की विधि का ज्ञान, **तरुणी पडिकम्मं** - स्त्रियों का श्रृंगार संबंधी ज्ञान, **कागणिलक्खणं** - काकिणी आदि रत्नों के लक्षण का ज्ञान, **वत्थुबिज्जं** - वास्तु यानी घर आदि बनाने की विधि का ज्ञान, **खंधारमाणं** - अक्षोहिणी आदि सेना की रचना करने की कला का ज्ञान, **वूहं** - व्यूह रचना करने का ज्ञान, **परिवूहं** - शत्रु सेना के व्यूह को भेदने की कला का ज्ञान, **चारं** - सेना के संचार करने की कला का ज्ञान, **परिचारं** - विरोधी सेना के विरुद्ध सेना संचालित करने का ज्ञान, **चक्कवूहं** - चक्र के आकार की व्यूह रचना करने का ज्ञान, **जुद्धाइजुद्धं** - धावा मार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर घोर युद्ध करने का ज्ञान, **लयाजुद्धं** - लतायुद्ध करने का ज्ञान, **ईसत्थं** - थोड़ी वस्तु को अधिक और अधिक को थोड़ी दिखाने की कला, **छरुप्पवायं** - खुरपे सरीखे शस्त्र का ज्ञान, **धणुव्वेयं** - धनुर्विधा का ज्ञान, **हिरण्णपागं** - चांदी शुद्ध करने का ज्ञान, **सुत्तखेडं** - सूत्र छेदन करने की कला, **णालियाखेडं** - कमल की नाली को भेदने की कला, **कडच्छेज्जं** - चटाई के समान वस्तुओं को छेदने का ज्ञान, **सज्जीवं** - मरे हुए को जिंदे के समान दिखलाने की कला का ज्ञान, **णिज्जीवं** - जीवित को मरे हुए के समान दिखलाने की कला का ज्ञान।

भावार्थ - इसके पश्चात् गर्भ के समय को मिला कर आठ वर्ष से कुछ अधिक समय हो गया तब सुबाहुकुमार के माता-पिता ने शुभ तिथि, शुभ करण और शुभ मुहूर्त्त में उस सुबाहुकुमार को कलाचार्य को सौंप दिया। तदनन्तर उस कलाचार्य ने सुबाहुकुमार को लेखन संबंधी और गणितप्रधान यानी गणित से लेकर पक्षी आदि के बोलने के शकुन ज्ञान तक बहत्तर कलाएँ सूत्र रूप से अर्थात् मूल रूप से और अर्थ रूप से तथा करण रूप से यानी प्रयोग रूप से सिखाई और अभ्यास कराया। वे बहत्तर कलाएं इस प्रकार हैं - १. अक्षर लिखने की कला २. गणितकला ३. रूपकला यानी चित्रकारी ४. नाटक करने की कला ५. गायन की कला ६. बाजे बजाने की कला ७. स्वर उच्चारण की कला ८. मृदंग, मुरज आदि बजाने की कला ९. ताल के बराबर बजाने की कला १०. जुआ खेलने की कला ११. जनवाद नामक विशेष जुआ खेलने की कला १२. पासा डालने की कला १३. शतरंज चौपड़ आदि खेलने की कला १४. ग्राम, नगर आदि की रक्षा करने की कला १५. जल और मिट्टी के संयोग से बने पदार्थों का ज्ञान १६. अन्न पकाने की कला १७. जल को स्वच्छ एवं निर्मल करने की कला १८. वस्त्र की उत्पत्ति संबंधी आदि सारा ज्ञान १९. शरीर पर किये जाने वाले विलेपन संबंधी सारा ज्ञान २०. शयन संबंधी ज्ञान २१. आर्या आदि छंद रचना का ज्ञान २२. पहेली आदि गूढ़ आशय वाले छंद बनाने का ज्ञान २३. मागध रस युक्त काव्य बनाने का ज्ञान अथवा मागधी भाषा की कविता बनाने संबंधी ज्ञान २४. प्राकृत, अर्द्धमागधी आदि भाषाओं की गाथा बनाने संबंधी ज्ञान २५. गीत बनाने का ज्ञान २६. श्लोक बनाने का ज्ञान २७. चांदी बनाने की विधि का ज्ञान २८. सोना बनाने की विधि का ज्ञान २९. चूर्ण बनाने और वस्तुओं का यथोचित संयोग करने की विधि ३०. आभूषण बनाने और धारण करने संबंधी ज्ञान ३१. स्त्रियों का श्रृंगार संबंधी ज्ञान ३२. सामुद्रिक शास्त्र में बताये गये स्त्री के लक्षण संबंधी ज्ञान ३३. पुरुष के लक्षण संबंधी ज्ञान ३४. घोड़े के लक्षणों का ज्ञान ३५. हाथी के लक्षणों का ज्ञान ३६. गाय बैल के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लक्षणों का ज्ञान ३७. मुर्गों के लक्षणों का ज्ञान ३८. छत्र संबंधी ज्ञान ३६. बांस आदि के डंडे का ज्ञान ४०. तलवार के लक्षण एवं तलवार संबंधी ज्ञान ४१. मणियों के लक्षण का ज्ञान ४२. काकिणी आदि रत्नों के लक्षण का ज्ञान ४३. वास्तु यानी घर आदि बनाने की विधि का ज्ञान ४४. अक्षौहिणी आदि सेना की रचने करने की कला का ज्ञान ४५. नगर आदि बसाने के परिमाण का ज्ञान ४६. व्यूह रचना करने का ज्ञान ४७. शत्रुसेना के व्यूह को भेदने की कला का ज्ञान ४८. सेना के संचार करने की कला का ज्ञान ४६. विरोधी सेना के विरुद्ध सेना संचालित करने का ज्ञान ५०. चक्र के आकार की व्यूह रचना करने का ज्ञान ५१. गरुड़ के आकार की व्यूह रचना करने का ज्ञान ५२. गाड़ी के आकार की व्यूह रचना करने का ज्ञान ५३. युद्ध करने का ज्ञान ५४. विशेष युद्ध करने का ज्ञान ५५. धावा मार कर घोर युद्ध करने का ज्ञान ५६. अस्थि से युद्ध करने का ज्ञान ५७. मुष्टि से युद्ध करने का ज्ञान ५८. बाहु युद्ध करने का ज्ञान ५६. लता युद्ध करने का ज्ञान ६०. थोड़ी वस्तु को अधिक और अधिक को थोड़ी दिखाने की कला ६१. खुरपे सरीखे शस्त्र चलाने का ज्ञान ६२. धनुर्विधा का ज्ञान ६३. चांदी शुद्ध करने का ज्ञान ६४. सोना शुद्ध करने का ज्ञान ६५. सूत्र छेदन करने की कला ६६. गांठ खोलने की कला ६७. कमल की नाली को भेदने की कला ६८. पत्तों को छेदने की कला ६६. चटाई के समान वस्तुओं को छेदने का ज्ञान ७०. मरे हुए को जिन्दे के समान दिखलाने की कला का ज्ञान ७१. जीवित को मरे हुए के समान दिखलाने की कला का ज्ञान ७२. पक्षियों के शब्द सुन कर शुभाशुभ फल जानने का ज्ञान।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में पुरुष की ७२ कलाओं का वर्णन किया गया है।

कलाचार्य का सम्मान

तए णं से कलायरिए सुबाहुं कुमारं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुय-पज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सिहावेइ सिक्खावेइ सिहावित्ता सिक्खावित्ता अम्मापिऊणं उवणेइ। तएणं सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो तं कलायरियं महुरेहिं वयणेहिं विउलेणं वत्थ-गंध-मल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयंति, दलइत्ता पडिविसज्जेंति॥२००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इसके पश्चात् उस कलाचार्य ने लिपि और गणित से लगा कर पक्षियों के शब्द से शुभाशुभ जानने तक बहत्तर कलाओं को सूत्र, अर्थ और करण यानी प्रयोग करके सुबाहु कुमार को सिखाया और कार्य रूप में अभ्यास कराया। सिखा कर और अभ्यास करा कर उसके माता-पिता को वापिस सौंप दिया। तदनन्तर सुबाहुकुमार के माता-पिता ने मधुर वचनों से और विपुल यानी बहुत वस्त्र, गंध, फूलमाला और कपड़ों से उन कलाचार्य का सत्कार सम्मान किया तथा इतना अधिक प्रीतिदान दिया कि जो उनके समस्त जीवन के लिए पर्याप्त था। इस प्रकार दान देकर उन्हें विदा किया।

विवेचन - कलाचार्य ने सुबाहुकुमार को ७२ कलाएं सिखा कर तथा उनका अच्छी तरह अभ्यास करा कर उसके माता पिता को सौंप दिया। उसके माता-पिता ने वस्त्र आभूषण आदि से कलाचार्य का सत्कार सम्मान किया और इतना धन दिया कि जो उनके समस्त जीवन के लिए पर्याप्त था। इस प्रकार उन्हें सम्मान पूर्वक विदा कर दिया।

माता-पिता द्वारा महलों का निर्माण

तएणं से सुबाहुकुमारे बावत्तरिकलापंडिए णवंगसुत्त पडिबोहिए अट्ठारस विहिप्पगारदेसी भासा विसारए गीयरई गंधव्वणट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहुप्पमद्दी अलं भोगसमत्थे साहसिए वियालचारी जाए यावि होत्था। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुंकुमारं बावत्तरिकला पंडियं जाव वियालचारी जायं पासंति, पासित्ता पंचसयपासायवडिंसए करेंति अब्भुग्गयमूसिय पहसिय विव मणिकणगरयणभत्तिचित्ते वाउद्धूय-विजयवेजयंती-पडागा छत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे जालंतररयण पंजरुम्मिल्लियव्व मणिकणगथूभियाए वियसियसयपत्तपुंडरीए तिलयरयणद्धय-चंदच्चिए णाणामणिमयदामालंकिए अंतो बहिं च सण्हे तवणिज्जरुइलवालुया-पत्थरे सुहफासे सस्सिरीयरूवे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

तेसिणं पासायवडिंसगाणं बहुमज्झदेसभागे एगं च णं महं भवणं करेंति अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं अब्भुग्गयसुकयवयरवेइयातोरणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वररइयसालभंजियासुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठिय-पसत्थ-वेरुलियखंभं णाणा-मणिकणगरयणखचितउज्जलं बहुसमसुविभत्तणिचिय रमणिज्जभूमिभागं ईहामियउसभतुरगणरमगरविहगवालग किण्णररुरुसरभ चमरकुंजरवणलयपउमलय-भत्तिचित्तं खंभुग्गय-वयरवेइया-परिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुयलजुत्तं विव अच्चिसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं कंचणमणिरयणथूभियागं णाणाविह-पंचवण्ण-घंटापडागपरिमंडियग्गसिहरं धवलमरीचिकवयं विणिम्मुयंतं लाउल्लोइयमहियं गोसीस सरस रत्त चंदरदद्दुर दिण्णपंचंगुलितलं उवचियचंदण कलसं चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तो सत्त विउलवट्टवग्घारिय-मल्लदामकलावं पंचवण्ण-सरससुरभिमुक्कपुप्फ- पुंजोवयारकलियं कालागरुपवर कुंदुरुक्कतुरुक्क-धूव-मघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं॥२०१॥

कठिन शब्दार्थ - णवंगसुत्तपडिबोहिए - सोये हुए नौ अंग (दो कान, दो नाक के छिद्र, दो आंखें, एक स्पर्शनइन्द्रिय, एक जिह्वा और एक मन) जागृत हो गये, **अट्ठारसविहिप्पगार देसीभासाविसारए** - अठारह देश की भाषाओं में प्रवीण, **वियालचारी** - अकाल में विचरण करने वाला, **पंचसयपासायवडिंसए** - पांच सौ उत्तम महल, **अब्भुग्गयमूसियपहंसिय विव** - बहुत ऊंचे महल स्वच्छ प्रभा से ऐसे मालूम होते थे मानो हंसते थे, **वाउद्धूयविजयवेजयंती पडागाछत्ताइच्छत्तकलिए** - विजय की सूचना करने वाली वायु से हिलती हुई पताकाओं के ऊपर की पताकाओं से तथा छत्रों के ऊपर छत्रों से युक्त, **तुंगे** - ऊंचे, **जालंतररयण पंजरुम्मिलियव्व**- जालियों के मध्य भाग में लगे हुए रत्न चमकते थे, **तिलयरयणद्धयचंदच्चिए**- तिलक, रत्न और सीढियों से युक्त, **णाणामणिमयदामालंकिए**- नानामणिमय मालाओं से शोभायमान, **सण्हे** - चिकने, **तवणिज्जरुइलवालुयापत्थरे** - तपे हुए सोने की सुंदर रेत जहां बिछी हुई थी, **सुहफासे** - सुखकारी स्पर्श, **सस्सिरीयरूवे** - सुंदर रूप वाले, **अणेगखंभसय-सण्णिविट्ठं** - सैंकड़ों खंभे लगे हुए, **लीलट्ठियसालभंजियाणं** - लीला करती हुई पुतलियाँ, **अब्भुग्गयसुकयवयरवेइयातोरणं** - उनमें वज्रवेष्टित सुंदर तोरण लगे हुए थे, **वररइयसालभंजिय**

सुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थवेरुलियखंभं - तोरणों एवं विशेष आकार वाले सुंदर और स्वच्छ जड़े हुए वैडूर्यमणि के खंभों पर सुंदर सुंदर पुतलियां बनाई गई थी, **णाणामणिकणगरयणखचितउज्जलं** - अनेक मणि सुवर्ण रत्नों से प्रकाशित, **बहुसमसुविभित्तणिचियरमणिज्ज भूमिभागं** - वहाँ की भूमि अच्छी तरह रची हुई समतल और अतिशय रमणीय थी, **खंभुग्गयवयरवेइयापरिगयाभिरामं** - खंभों के ऊपर हीरों की बनी हुई वेदिकाओं से मनोहर, **विज्जाहरजमलजुयलजुत्तं** - विद्याधर और विद्याधरियों के जोड़ों के चित्र, **भिसमाणं** - दीप्त, **भिब्भिसमाणं** - अतिशय दीप्त, **चक्खुल्लोयणलेसं** - जिसे देखते ही आंखें उसमें गड़ जाती थी, **णाणाविहपंचवण्णघंटापडागपरिमंडियग्ग सिहरं** - उसका शिखर अनेक तरह के पांच वर्ण वाले घंटा और पताकाओं से मण्डित था, **धवलमरीचिकवयं**- सफेद किरण रूप कवच, **लाउल्लोइयमहियं** - लिंपा पुता हुआ, **गोसीससरसरत्त-चंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलियतलं** - घिसे हुए ताजे गोशीर्ष चंदन और रक्त चंदन के पांच अंगुलियों सहित हाथों के छापे लगे हुए, **चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं** - तोरण और प्रतिद्वारों पर चंदन लिप्त घट स्थापित किये गये थे, **आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं** - नीचे से ऊपर तक लम्बी चौड़ी फूलों की मालाएं लटकी हुई थीं, **पंचवण्णसरससुरभि-मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं** - पांच वर्णों के ताजे फूलों के ढेर लगे हुए थे।

भावार्थ - इसके पश्चात् वह सुबाहुकुमार बहत्तर कलाओं में निपुण हो गया। उसके सोये हुए नौ अंग जागृत हो गये अर्थात् विशिष्ट ज्ञान वाले हुए। वह अठारह देश की भाषाओं में प्रवीण हो गया। गीतों का प्रेमी और गायन तथा नृत्य करने में प्रवीण हो गया। घोड़े, हाथी और रथ द्वारा युद्ध करने वाला हुआ। बाहु युद्ध करने वाला, भुजाओं को मर्दन करने, पर्याप्त भोग भोगने में समर्थ हुआ। वह अपने साहस के कारण अकाल में ही विचरण करने वाला हो गया। तदनन्तर उस सुबाहुकुमार के माता पिता ने सुबाहुकुमार को बहत्तर कलाओं में प्रवीण यावत् विकालचारी हुआ देखा, देख कर पांच सौ उत्तम महल बनवाये। वे महल बहुत ऊंचे थे और स्वच्छ प्रभा से ऐसे मालूम होते थे मानो हंसते थे। मणि, सुवर्ण और रत्नों से रचित होने से विचित्र थे। विजय की सूचना करने वाली वायु से हिलती हुई पताकाओं के ऊपर की पताकाओं से तथा छत्र और छत्रों के ऊपर के छत्रों से युक्त थे। वे बहुत ऊंचे थे अतः ऐसे मालूम होते थे मानो उनके शिखर आकाशतल को लांघ रहे हों। जालियों के मध्य भाग में अथवा खिड़कियों में लगे हुए रत्न चमकते थे। खम्भे, मणि और सुवर्ण से जड़े हुए थे। उनमें शतपत्र कमल खिले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुए थे। तिलक, रत्न और सीढ़ियों से युक्त थे। नानामणिमय मालाओं से शोभायमान थे। अंदर और बाहर चिकने थे। तपे हुए सोने की सुंदर रेत जहां बिछी हुई थी ऐसे फर्श वाले महलों के आंगन बड़े भले मालूम होते थे, उनका स्पर्श सुखकारी था। वे सुंदर रूप वाले, चित्त को प्रसन्न करने वाले, दर्शनीय, अभिरूप-मनोहर और प्रतिरूप यानी जिसमें देखने वाले का रूप प्रतिबिम्बित हो ऐसे थे।

उन उत्तम महलों के बीचोबीच एक महान् भवन बनवाया, उसमें सैंकड़ों खंभे लगे हुए थे। उन खंभों में लीला करती हुई पुतलियां बनी हुई थीं, उनमें वज्रवेष्टित सुंदर तोरण लगे हुए थे। तोरणों पर सुंदर सुंदर पुतलियां बनाई गई थीं और विशेष आकार वाले सुंदर और स्वच्छ जड़े हुए वैडूर्य मणि के खम्भों पर पुतलियां बनाई गई थीं। अनेक मणि सुवर्ण रत्नों से वह भवन प्रकाशित था। वहां की भूमि अच्छी तरह रची हुई समतल और अतिशय रमणीय थी। उसमें भेडिया, बैल, घोड़ा, मनुष्य, मगर, पक्षी, सर्प, किन्नर, मृग, अष्टापद, चमरीगाय, हाथी वनलता और पद्मलताओं के चित्र बने हुए थे। वह भवन खंभों के ऊपर हीरों की बनी हुई वेदिकाओं से मनोहर था। विद्याधर और विद्याधरियों के जोड़ों के चित्र बने हुए थे। उसमें से हजारों किरणें निकल रही थीं। उसमें हजारों रंग थे। वह दीप्त था। वह अतिशय दीप्त था। उसे देखते ही आंखें उसमें गड़ जाती थीं। उसका स्पर्श सुखकारी था। रूप मनोहर था। उसका भूमिभाग सोना, मणि और रत्नों का बना हुआ था। उसका शिखर अनेक तरह के पांच वर्ण वाले घंटा और पताकाओं से मण्डित था। वह सफेद किरण रूप कवच को धारण कर रहा था मानो उससे किरणें निकल रही थीं, वह लिपा पुता था। घिसे हुए ताजे गोशीर्ष चंदन और रक्त चंदन के पांच अंगुलियों सहित हाथों के छापे लगे हुए थे, चंदन कलश स्थापित किये गये थे। तोरण और प्रतिद्वारों पर चन्दन लिप्त घट स्थापित किये गये थे। नीचे से ऊपर तक लम्बी चौड़ी फूलों की मालाएं लटकी हुई थीं। पांच वर्णों के ताजे फूलों के ढेर लगे हुए थे। कृष्णागर, चीड़, लोंबान आदि विविध प्रकार के धूपों से वह भवन सुगंधित था तथा उत्तमोत्तम सुगंधित पदार्थों से युक्त था। अतएव गंध की गोली के समान था। उस भवन को देखते ही चित्त प्रसन्न होता था। वह दर्शनीय था। अत्यंत मनोहर था। देखने वाले को उसका भिन्न-भिन्न रूप दिखाई देता था।

विवेचन - जब सुबाहुकुमार युवावस्था को प्राप्त हो गया तब और जब उसके नौ अंग (२ कान, २ नाक के छिद्र, २ आंखें, १ स्पर्शनइन्द्रिय, १ जिह्वा और १ मन ये नौ अंग) जागृत हो गये तब माता पिता ने पांच सौ ऊंचे-ऊंचे महल बनवाये और उन सब के बीच में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक अत्यंत सुंदर भवन बनवाया। वे सब महल अत्यंत सुंदर, मनोहर, रमणीय और दर्शनीय थे। सभी प्रकार के सुगंधित पदार्थों से सुगंधित थे।

सुबाहुकुमार का पांच सौ कन्याओं के साथ पाणिग्रहण एवं प्रीतिदान

तएणं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो अण्णया कया वि सोहणंसि तिहिकरण-दिवसणक्खत्त-मुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं पमक्खणगण्हाणगीयवाइय पसाहणट्ठंगतिलगकंकण अविहवबहुउवणीयं मंगलसुजंपिएहिं च वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावण्ण रूवजोव्वणगुणोववेयाणं विणीयाणं कयकोउयमंगलपायच्छित्ताणं सरिस्सएहिं रायकुलेहिंतो अणिल्लियाणं पुप्फचूलापामोक्खाहिं पंचसयाहिं रायवरकण्णाहिं सद्धिं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु।

तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं पीइदाणं दलयंति तं जहा - पंचसयहिरण्णकोडीओ पंचसयसुवण्णकोडीओ पंचसयमउडे मउडप्पवरे पंचसयकुंडलजुए कुंडलजुयप्पवरे पंचसयहारे हारप्पवरे पंचसयअद्धहारे अद्धहारप्पहरे पंचसयएगावलीओ एगावलीप्पवराओ एवं मुत्तावलीओ एवं कणगावलीओ एवं रयणावलीओ पंचसयकडगजोए कडगजोयप्पवरे एवं तुडियजोए पंचसय खोमजुयलाइं खोमजुयलप्पवराइं एवं वडगजुयलाइं एवं पट्टजुयलाइं एवं दुगुल्लजुयलाइं पंचसयसिरीओ पंचसयहिरीओ एवं धिईओ कित्तीओ बुद्धीओ लच्छीओ पंचसयणंदाइं पंचसयभद्दाइं पंचसयतले तलप्पवरे सव्वरयणामए णियगवरभवणकेऊ पंचसयज्झए झयप्पवरे पंचसयवए वयप्पवरे दसगोसाहस्सिएणं वएणं पंचसयणाडगाइं णाडगप्पवराइं बत्तीसबद्धेणं णाडएणं पंचसयआसे आसप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए पंचसयहत्थी हत्थिप्पवरे सव्वरयणामए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिरिघरपडिरूवए पंचसयजाणाइं जाणप्पवराइं पंचसयजुग्गाइं जुगप्पवराइं एवं सिवियाओ एवं संद्रमाणीओ एवं गिल्लिओ थिल्लीओ पंचसयवियडजाणाइं वियडजाणप्पवराइं पंचसयरहे पारिजाणिए पंचसयरहे संगामिए पंचसयआसे आसप्पवरे पंचसयहत्थी हत्थिप्पवरे पंचसयगामे गामप्पवरे दसकुलसाहस्सिएणं गाणेणं पंचसयदासे दासप्पवरे एवं चेव दासीओ एवं किंकरे एवं कंचुइज्जे एवं वरिसधरे एवं महत्तरए पंचसयसोवण्णिए ओलंबणदीवे पंचसयरुप्पामए ओलंबणदीवे पंचसयसुवण्णरुप्पामए ओलंबणदीवे पंचसयसोवण्णिए उक्कंचणदीवे एवं चेव तिण्णि वि, पंचसयसोवण्णिए पंजरदीवे एवं चेव तिण्णि वि पंचसयसोवण्णिए थाले पंचसयरुप्पामए थाले पंचसयसुवण्णरुप्पामए थाले पंचसयसोवण्णियाओ पत्तीओ पंचसयरुप्पामयाओ पत्तीओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ पत्तीओ पंचसयसोवण्णियाइं थासगाइं पंचसयरुप्पामयाइं थासगाइं पंचसयसुवण्णरुप्पामयाइं थासगाइं पंचसयसोवण्णियाइं मल्लगाइं पंचसयरुप्पामयाइं मल्लगाइं पंचसयसुवण्णरुप्पामयाइं मल्लगाइं पंचसयसोवण्णियाओ तलियाओ पंचसयरुप्पामयाओ तलियाओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ तलियाओ पंचसयसोवण्णियाओ कइवियाओ पंचसयरुप्पामयाओ कइवियाओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ कइवियाओ पंचसयसोवण्णिए अवएडए पंचसयरुप्पामए अवएडए पंचसयसुवण्णरुप्पामए अवएडए पंचसयसोवण्णियाओ अवयक्काओ पंचसयरुप्पामयाओ अवयक्काओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ अवयक्काओ पंचसयसोवण्णिए पायपीढए पंचसयरुप्पामए पायपीढए पंचसयसुवण्णरुप्पामए पायपीढए पंचसयसोवण्णियाओ भिसियाओ पंचसयरुप्पामयाओ भिसियाओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ भिसियाओ पंचसयसोवण्णियाओ करोडियाओ पंचसयरुप्पामयाओ करोडियाओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ करोडियाओ पंचसयसोवण्णिए पल्लंके पंचसयरुप्पामए पल्लंके पंचसयसुवण्णरुप्पामए पल्लंके पंचसयसोवण्णियाओ पडिसेज्जाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पंचसयरुप्पामयाओ पडिसेज्जाओ पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ पडिसेज्जाओ पंचसयहंसासणाइं पंचसयकोंचासणाइं एवं गरुलासणाइं उण्णयासणाइं पणयासणाइं दीहासणाइं भद्दासणाइं पक्खासणाइं मगरासणाइं पंचसयपउमासणाइं पंचसयदिसासोवत्थियासणाइं पंचसयतेल्लसमुग्गे जहा रायपसेणिज्जे जाव पंचसयसरिसवसमुग्गे पंचसयखुज्जाओ जहा उववाइए जाव पंचसयपारिसीओ पंचसयछत्ते पंचसयछत्तधारीओ चेडीओ पंचसयचामराओ पंचसयचामरधारीओ चेडीओ पंचसयतालियंटे पंचसयतालियंटधारीओ चेडीओ पंचसयकरोडियाधारीओ चेडीओ पंचसयखीरधाईओ जाव पंचसयअंकधाईओ पंचसयअंगमद्दियाओ पंचसयउम्मद्दियाओ पंचसयण्हावियाओ पंचसयपसाहियाओ पंचसयवण्णगपेसीओ पंचसयचुण्णगपेसीओ पंचसयकीडागारीओ पंचसयदवकारीओ पंचसयउवत्थाणियाओ पंचसयणाडइज्जाओ पंचसयकोडुंबिणीओ पंचसयमहाणसिणिओ पंचसयभंडागारीणीओ पंचसयअज्झाधारिणीओ पंचसयपुप्फाधारिणीओ पंचसयपाणियधारिणीओ पंचसयबलिकारियाओ पंचसयसेज्जाकारियाओ पंचसयअब्भंतरियाओ पडिहारीओ पंचसयबाहिरपडिहारीओ पंचसयमालाकारीओ पंचसयपेसणकारीओ अण्णं वा सुबहुं हिरण्णं वा सुवण्णं वा कंसं वा दूसं वा विउलधणकणगरयण-मणिमोत्तिय-संखसिलप्पवाल-रत्तरयणसंतसार-सावइज्जं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पगामं दाउं पगामं परिभोत्तुं पगामं परिभाएउं॥२०२॥

कठिन शब्दार्थ - **पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकण विहव बहुवणीयं**- सुहागिन स्त्रियों से मर्दन, गीत, वादिन्त्र, मण्डन और आठों अंगों पर तिलक लगवाया गया तथा कंकण बंधवाया गया और मांगलिक वचनों द्वारा, **वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं** - प्रधान कौतुक मंगलोपचार और शान्तिकर्म किया गया, **सरिसयाणं** - एक सरीखी, **सरित्तयाणं** - समान त्वचा वाली, **सरिव्वयाणं** - समान वय वाली, **सरिसलावण्णरूवजोव्वणगुणोववेयाणं** - समान रूप, लावण्य, यौवन और गुणों से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

युक्त, **आणिल्लियाणं** - लाई गई, **पंचसयहिरण्णकोडीओ** - पांच सौ कोटि चांदी के सिक्के, **मउडप्पवरे**- उत्तम मुकुट, **कुंडलजुयप्पवरे** - उत्तम कुण्डलों के जोड़े, **एगावलीप्पवराओ**- उत्तम एकावली हार, **कडगजोयप्पवरे** - उत्तम कड़े, **खोमजुयलप्पवराइं**- उत्तम कपास के वस्त्र के जोड़े, **तलप्पवरे** - ताल वृक्ष के उत्तम पंखे, **णियगवरभवणकेऊ** - प्रधान भवनों के लिए पताकाएं, **दसगोसाहस्सिएणं** - दस हजार गायों का, **वएणं** - व्रज-एक गोकुल, **बत्तीसबद्धेणं णाडएणं** - बत्तीस बत्तीस पात्र वाले, **सव्वरयणामए** - सभी रत्नों के बने हुए, **सिरिघरपडिरूवए** - लक्ष्मी के भण्डार स्वरूप, **पंचसयजुग्गाइं** - पांच सौ युग्य यानी गोल्लदेश में प्रसिद्ध दो हाथ का लम्बा चौड़ा यान विशेष, **संदमाणीओ** - पुरुष प्रमाण पालखी, **गिल्लीओ**- हाथी के होदे, **थिल्लीओ** - घोड़ों की बग्घियाँ, **कंचुइज्जे** - कञ्चुकी यानी अन्तःपुर का चपरासी, **वरिसधरे** - वर्षधर-खोजा, जो अंतःपुर में कार्य करते हैं, **महत्तरए** - महत्तरक-अन्तःपुर के कार्य की चिंता करने वाले, **पंचसयसुवण्णरुप्पामए ओलंबणदीवे** - पांच सौ सोने और चांदी की सांकल वाले दीपक, **पंचसयसुवण्णरुप्पामयाओ पत्तीओ** - पांच सौ सोने और चांदी की परात, **पंचसयसुवण्णारुप्पामयाइं थासणाइं** - पांच सौ सोने चांदी के तासक-दर्पण के आकार के पात्र विशेष, **मल्लगाइं** - कटोरे, तलियाओ -कटोरियां, **कइवियाओ** - पीकदान, **अवएडए** - तालिका हस्त-एक प्रकार का पात्र, **अवयक्काओ** - अवपाक्य-तवा, **पायपीढए** - बाजोठ, **भिसियाओ** - आसन, करोडियाओ - पान दान, **पल्लंके** - पलंग, **पडिसेज्जाओ**- प्रतिशय्या-छोटे पलंग, **उण्णयासणाइं** - उन्नत यानी ऊंचे आसन, **पणयासणाइं**- ढालू आसन, **दीहासणाइं** - दीर्घासन, **पक्खासणाइं** - पक्षासन-पक्षियों के चित्रों से चित्रित आसन, **विउलधणकणगरयणमणिमोत्तिय संखसिलप्पवालरत्तरयण संतसारसावइज्जं** - विपुल धन, सोना, रत्न, मणि, मोती, शंख, शिलप्रवाल, रक्तरत्न तथा और भी विद्यमान उत्तम उत्तम चीजें, **अलाहि** - इतनी पर्याप्त थी कि, **आसत्तमाओ कुलवंसाओ** - सात पीढ़ी तक, **पगामं दाउं** - खूब दान दिया जाय, **पगामं परिभोत्तुं**- खूब उपभोग किया जाय, **पगामं परिभाएउं** - खूब हिस्सेदारों को बांटा जाय।

भावार्थ - इसके पश्चात् किसी एक समय शुभ तिथि, करण, दिन, नक्षत्र और मुहूर्त में जब सुबाहुकुमार स्नान, तिलक छापा आदि कार्य कर चुका, विघ्न आदि की शांति के लिए मांगलिक कार्य और कौतुक आदि कर चुका। सब अलंकारों से विभूषित हुआ। सुहागिन स्त्रियों से मर्दन गीत, वादिन्त्र, मंडन और आठों अंगों पर तिलक लगवाया गया तथा कंकण बंधवाया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गया और मांगलिक वचनों द्वारा प्रधान कौतुक मंगलोपचार और शांति कर्म किया गया। ऐसे उस सुबाहुकुमार का एक सरीखी समान त्वचा वाली, समानवय वाली, समान रूप, लावण्य, यौवन और गुणों से युक्त विनीत और विघ्न शांति के लिए मंगल और कौतुक आदि जिन्होंने कर लिए हैं ऐसी समान राजकुलों से लाई गई पुष्पचूला प्रमुख आदि पांच सौ राज कन्याओं के साथ एक ही दिन में पाणिग्रहण करवाया अर्थात् विवाह कराया।

तदनन्तर उस सुबाहुकुमार के माता-पिता ने इस प्रकार प्रीतिदान दिया। यथा-पांच सौ कोटि चांदी के सिक्के, पांच सौ कोटि सोने के सिक्के, पांच सौ मुकुट, पांच सौ उत्तम मुकुट, पांच सौ कुण्डलों के जोड़े, पांच सौ उत्तम कुण्डलों के जोड़े, पांच सौ हार, पांच सौ उत्तम हार, पांच सौ अर्द्ध हार, पांच सौ उत्तम अर्द्ध हार, पांच सौ एकावली हार, पांच सौ उत्तम एकावली हार, इसी प्रकार पांच सौ मुक्तावली हार, इसी प्रकार पांच सौ कनकावली हार, पांच सौ रत्नावली हार, पांच सौ जोड़े कड़े, पांच सौ जोड़े उत्तम कडे, इसी प्रकार पांच सौ जोड़े भुजबन्ध, पांच सौ कपास के वस्त्र के जोड़े, पांच सौ उत्तम कपास के वस्त्र के जोड़े, इसी प्रकार रेशमी वस्त्र के पांच सौ जोड़े, अलसी के वस्त्र के पांच सौ जोड़े, इसी प्रकार दुकूल वृक्ष की छाल से बने हुए वस्त्र के पांच सौ जोड़े, आगे कहे जाने वाली सब रत्नों की जड़ी हुई श्री देवी की पांच सौ पुतलियां, ह्री देवी की पांच सौ पुतलियाँ इसी प्रकार धृतिदेवी की पांच सौ पुतलियाँ, कीर्तिदेवी की पांच सौ पुतलियाँ, बुद्धिदेवी की पांच सौ पुतलियां, लक्ष्मीदेवी की पांय सौ पुतलियां, पांच सौ नन्दासन यानी गोल आसन, पांच सौ भद्रासन, पांच सौ ताडवृक्ष के पंखे, पांच सौ तालवृक्ष के उत्तम पंखे, ये सब आसन आदि रत्नों से जड़े हुए थे। अपने प्रधान भवनों के लिए पांच सौ पताकाएं, पांच सौ ध्वजाएं, पांच सौ उत्तम ध्वजाएं। दस हजार गायों का एक गोकुल (व्रज) होता है ऐसे पांच सौ गोकुल, बत्तीस बत्तीस पात्र वाले पांच सौ साधारण नाटक, पांच सौ उत्तम नाटक, पांच सौ घोड़े, पांच सौ उत्तम घोड़े, ये सब रत्नों के बने हुए थे और लक्ष्मी के भण्डार स्वरूप थे। पांच सौ हाथी, पांच सौ उत्तम हाथी, ये सब रत्नों के बने हुए थें और लक्ष्मी के भण्डार स्वरूप थे। पांच सौ सवारी, पांच सौ उत्तम सवारी, पांच सौ युग्य यानी गोल देश में प्रसिद्ध दो हाथ का लम्बा चौड़ा यान विशेष, पांच सौ उत्तम युग्य, इसी प्रकार पांच सौ शिविका यानी पालखी, पांच सौ पुरुष प्रमाण पालखी, इसी प्रकार पांच सौ हाथी के होदे, पांच सौ दो घोड़ों की बग्घियाँ, पांच सौ विकट यान अर्थात् ऊपर से खुली हुई सवारी, पांच सौ उत्तम विकट यान, क्रीडार्थ जाने आने के लिए पांच सौ रथ, युद्ध में काम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आने योग्य पांच सौ रथ, पांच सौ घोड़े, पांच सौ उत्तम घोड़े, पांच सौ हाथी, पांच सौ उत्तम हाथी, जहाँ दस हजार घरों की बस्ती हो उसे गांव कहते हैं ऐसे पांच सौ साधारण ग्राम, पांच सौ उत्तम ग्राम, पांच सौ दास, पांच सौ उत्तम दास और इसी तरह पांच सौ दासियां, पांचसौ किङ्कर, पांच सौ कंचुकी यानी अन्तःपुर के चपरासी, इसी प्रकार पांच सौ वर्षधर यानी वे खोजा जो अन्तःपुर में कार्य करते हैं, पांच सौ महत्तरक यानी अन्तःपुर के कार्य की चिंता करने वाले, पांच सौ सोने की सांकल वाले दीपक, पांच सौ चांदी की सांकल वाले दीपक, पांच सौ सोने और चांदी की सांकल वाले दीपक, पांच सौ सोने की दीपक रखने की दीवट, पांच सौ चांदी की दीपक रखने की दीवट, पांच सौ सोने चांदी की दीपक रखने की दीवट, पांच सौ सोने के लालटेन वाले दीपक, इसी तरह तीन बोल कह देना चाहिए अर्थात् पांच सौ चांदी के और पांच सौ सोने चांदी के लालटेन वाले दीपक, पांच सौ सोने के थाल, पांच सौ चांदी के थाल, पांच सौ सोने और चांदी के थाल, पांच सौ सोने की परात, पांच सौ चांदी की परात, पांच सौ सोने और चांदी की परात, पांच सौ सोने के तासक यानी दर्पण के आकार का पात्र विशेष, पांच सौ चांदी के तासक, पांच सौ सोने चांदी के तासक, पांच सौ सोने के कटोरे, पांच सौ चांदी के कटोरे, पांच सौ सोने और चांदी के कटोरे, पांच सौ सोने की कटोरियां, पांच सौ चांदी की कटोरियां, पांच सौ सोने चांदी की कटोरियां, पांच सौ सोने के पीकदान, पांच सौ चांदी के पीकदान, पांच सौ सोने चांदी के पीकदान, पांच सौ सोने के तालिकाहस्त यानी एक प्रकार का पात्र, पांच सौ चांदी के तालिकाहस्त, पांच सौ सोने चांदी के तालिकाहस्त, पांच सौ सोने के अवपाक्य यानी तवे, पांच सौ चांदी के तवे, पांच सौ सोने चांदी के तवे, पांच सौ सोने के बाजोठ, पांच सौ चांदी के बाजोठ, पांच सौ सोने चांदी के बाजोठ, पांच सौ सोने के आसन, पांच सौ चांदी के आसन, पांच सौ सोने चांदी के आसन, पांच सौ सोने के पानदान, पांच सौ चांदी के पानदान, पांच सौ सोना चांदी के पानदान, पांच सौ सोने के पलंग, पांच सौ चांदी के पलंग, पांच सौ सोने चांदी के पलंग, पांच सौ सोने के प्रतिशय्या-छोटे पलंग, पांच सौ चांदी के प्रतिशय्या, पांच सौ सोने चांदी के प्रतिशय्या, पांच सौ हंस के आकार के आसन, पांच सौ कौन्चासन इसी प्रकार पांच सौ गरुडासन, पांच सौ उन्नता यानी ऊंचे आसन, पांच सौ ढालू आसन, पांच सौ दीर्घासन, पांच सौ भद्रासन, पांच सौ पक्षासन-पक्षियों के चित्रों से चित्रित आसन, पांच सौ मकरासन, पांच सौ पद्मासन, पांच सौ दिशा-सौवस्तिकासन यानी दक्षिणावर्त स्वस्तिक के आकार वाले आसन, पांच सौ तेल के बर्तन इसके अतिरिक्त जिस प्रकार राजप्रश्नीय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र में कहा है उसी प्रकार यावत् पांच सौ सरसों के बर्तन, पांच सौ कुबडी दासियाँ, इसके अलावा जिस प्रकार औपपातिक सूत्र में कहा है उसी प्रकार पांच सौ पारसी दासियों तक कह देना चाहिये। पांच सौ छत्र, पांच सौ छत्र ग्रहण करने वाली दासियाँ, पांच सौ चंवर, पांच सौ चंवर ढोलने वाली दासियाँ, पांच सौ पंखे, पांच सौ पंखे झलने वाली दासियाँ, पांच सौ पानदान उठाने वाली दासियाँ, पांच सौ दूध पिलाने वाली धाएं यावत् पांच सौ गोद में खिलाने वाली धाएं, पांच सौ अंग को मलने वाली दासियाँ पांच सौ मर्दन करने वाली दासियां, पांच सौ स्नान कराने वाली दासियां, पांच सौ श्रृंगार कराने वाली दासियाँ, पांच सौ चंदन आदि को घिसने वाली दासियाँ, पांच सौ सुगंधित द्रव्यों का पूर्ण पीसने वाली दासियां, पांच सौ क्रीडा कराने वाली दासियाँ, पांच सौ मनोरंजन कराने वाली दासियाँ, पांच सौ राजसभा में बैठने के समय साथ रहने वाली दासियाँ, पांच सौ नाटक संबंधी दासियाँ, पांच सौ चपरासी का काम करने वाली दासियाँ, पांच सौ रसोई बनाने वाली दासियाँ, पांच सौ भण्डार की रखवाली करने वाली दासियाँ, पांच सौ बालकों को खिलाने वाली दासियाँ, पांच सौ फूलमालाओं को लाने वाली दासियाँ, पांच सौ जलधर की देखभाल करने वाली दासियाँ, पांच सौ बलि करने वाली दासियाँ, पांच सौ बिछौना बिछाने वाली दासियाँ, पांच सौ आभ्यंतर परिचारिकाएं, पांच सौ बाहर की परिचारिकाएं, पांच सौ माला गूंथने वाली दासियाँ, पांच सौ पिसने वाली दासियाँ, इसके अलावा बहुत सी चांदी, कांसा, वस्त्र और विपुल धन, सोना, रत्नमणि, मोती, शंख, शिलप्रवाल, रक्त रत्न तथा और भी विद्यमान उत्तम उत्तम वस्तुएं दीं। वे वस्तुएं इतनी पर्याप्त थीं कि यावत् सात पीढ़ी तक खूब दान दिया जाय, खूब उपभोग किया जाय और हिस्सेदारों को खूब बांटा जाय तो भी समाप्त न हो।

विवेचन - सुबाहुकुमार के माता-पिता ने अपनी पांच सौ पुत्रवधुओं को उपरोक्त प्रकार से १९२ बोल का प्रीतिदान दिया।

सुबाहुकुमार का पत्नियों को प्रीतिदान

तए णं से सुबाहुकुमारे एगमेगाए भज्जाए एगमेगं हिरण्णकोडिं दलयइ, एगमेगं सुवण्णकोडिं दलयइ एगमेगं मउडं दलयइ एवं चेव सव्वं जाव एगमेगं पेसणकारीं दलयइ। अण्णं च सुबहुं हिरण्णं जाव परिभाएउं॥२०३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इसके पश्चात् उस सुबाहुकुमार ने प्रत्येक भार्या के लिए एक-एक करोड़ चांदी के सिक्के, एक-एक करोड़ सोने के सिक्के तथा एक-एक मुकुट दिये। इस प्रकार एक-एक भार्या के लिए यावत् पीसने वाली एक-एक दासी तक सब एक-एक पदार्थ दिये और दूसरे बहुत से चांदी सोने के पदार्थ दिये। वे इतने थे कि सात पीढ़ी तक खूब दान दिया जाय, उपभोग किया जाय और यावत् हिस्सेदारों को बांटा जाय तो भी समाप्त न हो।

विवेचन - जिस प्रकार सुबाहुकुमार के माता पिता ने अपनी पुत्र वधुओं को प्रीतिदान दिया था उसी प्रकार सुबाहुकुमार ने भी अपनी भार्याओं को प्रीतिदान दिया।

सांसारिक सुखोपभोग

तए णं से सुबाहुकुमारे उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसतिबद्धेहिं णाडएहिं णाणाविहवरतरुणी संपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणे उवणच्चिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे पाउसवासारत्तं सरद हेमंत वसंत गिम्ह पज्जंते छप्पिं उउ जहा विभवेणं माणमाणे माणमाणे कालं गालेमाणे गालेमाणे इट्ठे सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ॥२०४॥

कठिन शब्दार्थ - उप्पिं-पासायवरगए - ऊपर के महल में रहता हुआ, **मुइंगमत्थएहिं**- मृदङ्गों के मस्तक, **फुट्टमाणेहिं** - स्फुटित होते हुए, **बत्तीसतिबद्धेहिं** - बत्तीस प्रकार के, **णाडएहिं**- नाटक, **णाणाविहवरतरुणी संपउत्तेहिं** - अनेक तरुणी रमणियों से युक्त, **उवणच्चिज्जमाणे** - नृत्य करवाता हुआ, **उवगिज्जमाणे** - गायन करवाता हुआ, **उवलालिज्जमाणो** - अभीष्ट अर्थ संपादन करवाता हुआ, **पाउस** - प्रावृत्र ऋतु, **वासारत्त** - वर्षा ऋतु, **गिम्हपज्जंते** - ग्रीष्म ऋतु तक, **उउ** - ऋतुओं में, **जहा विभवेणं** - ऐश्वर्य के अनुसार, **माणमाणे** - आनंदानुभव करता हुआ, **गालेमाणे** - व्यतीत करता हुआ, **पच्चणुब्भवमाणे** - भोगता हुआ।

भावार्थ - इसके बाद वह सुबाहुकुमार ऊपर के महल में रहता हुआ मृदंगों के मस्तक स्फुटित होते हुए अर्थात् मृदङ्गों की ध्वनि सहित बत्तीस प्रकार के नाटक और अनेक तरुणी रमणियों से युक्त नृत्य करवाता हुआ, गायन करवाता हुआ अभीष्ट अर्थ संपादन करवाता हुआ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहने लगा। प्रावृट् ऋतु, वर्षा ऋतु, शरद, हेमंत, वसंत और ग्रीष्म ऋतु तक इन छहों ऋतुओं में ऐश्वर्य के अनुसार आनंदानुभव करता हुआ समय को व्यतीत करता हुआ इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध इन पांच प्रकार के कामभोगों को भोगता हुआ रहने लगा।

विवेचन - विवाह हो जाने के पश्चात् सुबाहुकुमार उन रमणियों के साथ उत्तम कामभोग भोगता हुआ सुखपूर्वक समय बिताने लगा।

भगवान् महावीर स्वामी का वर्णन

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थयरे जाव ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे केवली सत्तहत्थुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहणारायसंघयणे अणुलोमवाउवेगे कंकग्गहणी कवोयपरिणामे सउणिपोस-पिट्ठंतरोरु-परिणए पउमुप्पलगंध-सरिस-णिस्सास-सुरभिवयणे छवी णिरायंक उत्तमपसत्थ-अइसेस-णिरुवमपले जल्ल-मल्ल-कलंक सेयरय-दोसवज्जिय सरीरणिरुव-लेवे छाया उज्जोइअंगमंगे घणणिचियसुबद्धलक्खणं उण्णय-कूडागार-णिभपिंडिअग्गसिरए सामलिबोंडघणणिचियच्छोडिय मिउविसय-पसत्थ-सुहुमलक्खण-सुगंधसुंदर-भुअमोअग-भिंगणेल-कज्जलपहिट्ठ-भमर-गणणिद्धणिउरंब-णिचिय-कुंचियपयाहिणावत्त-मुद्धसिरए दालिम-पुप्फप्पगासतवणिज्ज-सरिस-णिम्मलसुणिद्ध-केसंत-केसभूमी घणणिचियछत्तागारुत्तमंगदेसे णिव्वण-समलट्ठमट्ठ-चंदद्धसमणिडाले उडुवइपडिपुण्ण सोमवयणे अल्लीण-पमाण-जुत्तसवणे सुस्सवणे पीणमंसलकवोल-देसभाए आणामियचावरुइल-किण्हब्भराइ-तणु-कसिण-णिद्धभमुहे अवदालिय पुंडरीयणयणे कोआसिय-धवल-पत्तलच्छे गरुलायत-उज्जुतुंगणासे उवचियसिलप्पवाल-बिंबफल-सण्णिभाहरोट्ठे मंडुर-ससिसयल-विमल-णिम्मलसंख-गोखीर-फेण-कुंददगरय-मुणालिय धवल-दंतसेढी अखंडदंते अप्फुडियदंते अविरलदंते सुणिद्धदंते सुजायदंते एगदंतसेढी विव अणेगदंते हुयवहणिद्धंत-धोयतत्ततवणिज्ज रत्ततल तालुजीहे॥२०५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - सत्तहत्थुस्सेहे - सात हाथ की अवगाहना वाले, **अणुलोमवायुवेगे** - शरीर के अंदर की अनुकूल वायु के वेग वाले, **कंकगहणी** - कंक पक्षी की तरह नीरोग शरीर वाले, **कवोयपरिणामे** - कबूतर की तरह तीव्र जठराग्नि वाले, **सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए** - शकुनि पक्षी की तरह निर्लेप गुदा वाले पीठ, पसवाडे और जांघों के सुन्दर आकार वाले, **पउमुप्पलगंध सरिसणिस्सास सुरभिवयणे** - पद्म और नीले कमल के समान सुगंधित निःश्वास वाले, **छवी** - उत्तम वर्ण और कोमल त्वचा वाले, **णिरायंक उत्तमपसत्थ अइसेस णिरुवमपले**- नीरोग और उत्तम सफेद तथा निरुपम मांस वाले, **जल्लमल्लकलंक सेयरयदोसवज्जिय सरीर णिरुवलेवे** - मैल, अशुभतिलक आदि, पसीना और धूल आदि की मलिनता से रहित निर्मल शरीर वाले, **छाया उज्जोइ अंगमंगे** - कांति की चमक से युक्त शरीर वाले, **घणणिचिय-सुबद्धलक्खण-उण्णय-कूडागरणिभपिंडिअग्गसिरए** - लोह के घन के समान दृढ़ स्नायु बंधन वाले तथा शुभ लक्षणों वाले, पर्वत के शिखर के समान उन्नत शिर वाले, **सामलिबोंडघणणिचियच्छोडिय मिउविसय पसत्थसुहुम लक्खण सुगंधसुंदर भुअमोअग भिंगणेलकज्जल पहिट्ठ भमर गण णिद्ध णिउरंब णिचिय कुंचिय पयाहिणावत्त मुद्धसिरए**- उनके शिर के बाल आक की रुई की तरह नरम, स्वच्छ, शुभ, चिकने और शुभ लक्षणों से युक्त, सुगंधित, सुंदर, भुजमोचक रत्न, भृङ्ग नील, काजल और मन्दोन्मत भ्रमरों के समूह के समान काले, दाहिनी तरफ मुड़े हुए, सघन और घुंघराले थे, **दालिमपुप्फप्पगास-तवणिज्ज-सरिस-णिम्मल-सुणिद्ध केसंत-केसभूमी** - उनके मस्तक की चमड़ी अनार के फूल और तपे हुए सोने की तरह लाल, निर्मल और चिकनी थी, **घण-णिचिय-छत्तागारुत्तमंगदेसे**-भरा हुआ और छत्र के समान उन्नत मस्तक, **णिव्वणसमलट्ठमट्ठचंदद्धसमणिडाले**- निर्व्रण यानी घाव रहित, एक समान, मनोज्ञ, दीप्त और अर्द्धचन्द्र के आकार के समान उनका ललाट था, **उडुवइपडिपुण्णसोमवयणे**- पूर्ण चन्द्रमा के समान सौम्य मुख, **अल्लीणपमाणजुत्तसवणे**- उचित प्रमाण युक्त कान, **सुस्सवणे** - बड़े सुन्दर, **पीणमंसलकवोलदेसभाए** - कपोल स्थूल यानी पुष्ट थे, **आणामिय चावरुइल-किण्हाब्भराइतणु-कसिणणिद्धभमुहे** - नमे हुए धनुष के समान, काले बादल की तरह काली और स्निग्ध उनकी भौहें थी, **अवदालिय-पुंडरीयणयणे** - खिले हुए कमल के समान नेत्र, **कोआसिय धवलपत्तलच्छे** - उनके कोये विकसित कमल सरीखे उज्ज्वल और पलक वाले थे, **गरुलायत उज्जुतुंगणासे** - गरुड की तरह लम्बी, सीधी और ऊंची नाक, **उवचिय-सिलप्पवाल-बिंबफल-सण्णिभाहरोट्ठे** - शिला रत्न, प्रवाल और

बिम्ब फल के समान लाल उनका अधरौष्ठ-नीचे का ओठ था, **पंडुर-ससि-सयल विमल-णिम्मल-संख-गोखीर-फेण-कुंद-दगरय-मुणालिय-धवलदंतसेढी** - स्वच्छ चन्द्रमा, अत्यंत निर्मल शंख, गाय के दूध का फेन, कुन्द पुष्प, जल का वेग और कमल नाल के समान सफेद दांतों की पंक्ति, **अखंडदते** - अखंड दांत-बिना टूटे हुए दांत, **अप्फुडियदंते** - उनके दांत छिदरे-विशेष दूरी वाले नहीं थे, **एगदंतसेढी विव अणेगदंते** - एक दांत की पंक्ति की तरह ही अनेक दांत थे, **हुयवहणिद्धंत धोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहे** - अग्नि से निर्मल किये हुए, पानी से धोये हुए तथा फिर से अग्नि में तपाये हुए सोने के समान लाल तालु और जिह्वा वाले।

भावार्थ - उस काल उस समय में अर्थात् चौथे आरे में जब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस भूतल पर विचरते थे वे श्रमण भगवान् महावीर कैसे थे? सो उनके विशेषण बतलाये जाते हैं - धर्म की आदि करने वाले, साधु साध्वी श्रावक श्राविका रूप धर्म तीर्थ की स्थापना करने वाले यावत् सिद्धि गति नामक स्थान को पाने की इच्छा वाले अरिहंत, राग द्वेष को जीतने वाले केवलज्ञानी, सात हाथ की अवगाहना वाले, समचतुरस्र संस्थान वाले, वज्रऋषभनाराच संहनन वाले, शरीर के अंदर की अनुकूल वायु के वेग वाले, कंक पक्षी की तरह नीरोग शरीर वाले, कबूतर की तरह तीव्र जठराग्नि वाले, शकुनि पक्षी की तरह निर्लेप गुदा वाले, पीठ पसवाडे और जांघों के सुंदर आकार वाले, पद्म और नीले कमल के समान सुगंधित निःश्वास वाले, उत्तम वर्ण और कोमल त्वचा वाले, नीरोग और उत्तम सफेद तथा निरुपम मांस वाले, मैल, अशुभ तिलक आदि पसीना और धूल आदि की मलिनता से रहित अतएव निर्मल शरीर वाले, कांति की चमक से युक्त शरीर वाले, लोह के घन के समान दृढ़ स्नायु बन्धन वाले तथा शुभ लक्षणों वाले, पर्वत के शिखर के समान उन्नत शिर वाले थे। उनके शिर के बाल आक की रुई के समान नरम, स्वच्छ, शुभ चिकने और शुभ लक्षणों से युक्त थे। वे सुगंधित और सुंदर थे। भुजमोचक रत्न, भृङ्ग नील, काजल और मदोन्मत्त भ्रमरों के समूह के समान काले थे। दाहिनी ओर मुड़े हुए सघन और घूंघराले थे। उनके मस्तक की चमड़ी अनार के फूल और तपे हुए सोने की तरह लाल, निर्मल और चिकनी थी। उनका मस्तक भरा हुआ और छत्र के समान उन्नत था। उनका ललाट निर्व्रण यानी घाव रहित था, एक समान, मनोज्ञ और दीप्त था उसका आकार अर्द्धचन्द्र के समान था। उनका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान सौम्य था। उनके कान ठीक प्रमाण युक्त थे और बड़े सुंदर थे। उनके कपोल स्थूल यानी पुष्ट थे। उनकी भौंहें, नमे हुए धनुष के समान थे और काले बादल की तरह काले और स्निग्ध थे। उनके नेत्र खिले हुए कमल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के समान थे। अतएव उनके कोये विकसित कमल सरीखे उज्ज्वल और पलक वाले थे। उनकी नाक गरुड़ की तरह लम्बी, सीधी और ऊंची थी। उनके अधरौष्ठ यानी नीचे का ओठ शिला रत्न, प्रवाल और बिम्ब फल के समान लाल था। उनके दांतों की पंक्ति स्वच्छ चन्द्रमा, अत्यंत निर्मल शंख, गाय के दूध का फेन, कुन्दपुष्प, जल का वेग और कमलनाल के समान सफेद थी। उनके दांत टूटे हुए और छिदरे-विशेष दूरी वाले न थे। उनके दांत अतिशय स्वच्छ और स्निग्ध तथा मनोहर थे। एक दांत की पंक्ति की तरह ही अनेक दांत थे क्योंकि घने होने से एक दूसरे से अलग मालूम न पड़ते थे। उनका तालु और जिह्वा अग्नि से निर्मल किये हुए, पानी से धोये हुए तथा फिर अग्नि से तपाये हुए सोने के समान लाल थी।

विवेचन - उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस भूतल पर विचरते थे। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय, इन चार घाती कर्मों का क्षय करके उन्होंने केवल ज्ञान केवलदर्शन उपार्जन कर लिये थे अतएव वे सर्वज्ञ सर्वदर्शी थे। राग द्वेष के विजेता थे। वे स्वयं कृतकार्य हो चुके थे केवल संसार के प्राणियों का उद्धार करने के लिए वे धर्मोपदेश फरमाते थे। उनका शरीर सर्वोत्कृष्ट था। शास्त्र में उनके शरीर के प्रत्येक अंग का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत सूत्र में उनके मस्तक से लेकर तालु और जिह्वा का वर्णन किया गया है। शेष अंगों का वर्णन आगे के पाठ में किया जाता है।

अवट्ठियसुविभत्त-चित्तमंसू मंसल-संठिय-पसत्थ-सद्दूलविउल-हणूए चउरंगुलसुप्पमाणं कंबुवरसरिसगीवे वरमहिस-वराह-सीह-सद्दूल-उसभणागवर पडिपुण्ण विउलक्खंधे जुगसण्णिभ-पीणरइयपीवर पउट्ठ-सुसंठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-घण-थिर-सुबद्धसंधि-पुरवर-फलिह-वट्टियभुए भुअईसर-विउलभोग आयाणफलिह-उच्छूढ-दीहबाहू रत्ततलोवइय-मउय-मंसलसुजाय लक्खण-पसत्थ अच्छिद्दजालपाणी पीवरकोमलवरंगुली आयंब-तंबतलिण-सुइरुइल-णिद्धणक्खे चंदपाणिलेहे सूरपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्कपाणिलेहे दिसासोत्थियपाणिलेहे चंद-सूर-संख-चक्क-दिसासोत्थियपाणिलेहे कणगसिलातलुज्जल-पसत्थ समतल उवचिय विच्छिण्णपिहुलवच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुयकणग रुययणिम्मल सुजायणिरुवहय देहधारी अट्ठसहस्स पडिपुण्ण वरपुरिसलक्खणधरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइय-पीण-रइयपासे उज्जुयसमसहियजच्चतणुकसिणणिद्ध आइज्जलउह-रमणिज्जरोमराई झसविहग-सुजायपीणकुच्छी झसोयरे सुइकरणे पउमवियडणाभी गंगावत्तग-पयाहिणावत्त-तरंगभंगुर-रवि-किरण तरुणबोहिय कोसायंत-पउमगंभीर-वियडणाभी साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरियवरकणगच्छरु-सरिसवरवइर-वलिय-मज्झे पमुइयवरतुरग सीहवर-वट्टिय-कडी वरतुरगसुजायसुगुज्झदेसे आइण्णहउव्वणिरुवलेवे वरवारण-तुल्लविक्कम-विलसियगई गय-ससण-सुजाय-सण्णिभोरु-समुग्गणिमग्गगूढजाणू एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणु पुव्वजंघे संठिय-सुसिलिट्ठ विसिट्ठगूढगुप्फे सुप्पइट्ठियकुम्मचारुचलणे अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए उण्णयतणुतंबणिद्धणक्खे रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमाल कोमलतले अट्ठसहस्सवर-पुरिसलक्खणधरे णग-णगर-मगर-सागर-चक्कंक-वरंकमंगलंकिय-चलणे विसिट्ठरूवे हुयवहणिद्धूमजलियतडियतरुण रवि किरण सरिस तेए॥२०५॥

कठिन शब्दार्थ - अवट्ठियसुविभत्तचित्तमंसू - दाढी और मूंछ के बाल अवस्थित और शोभनिक, **मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणूए** - मांसल-भरी हुई, शुभलक्षण युक्त और सिंह की दाढी की तरह विस्तीर्ण दाढ़ी, **चउरंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसगीवे** - चार अंगुल प्रमाण और शंख जैसी उत्तम गर्दन, **वरमहिसवराह सीहसद्दूल उसभणागवरपडिपुण्ण विउलक्खंधे** - महिष, सूअर, शार्दुल सिंह, बैल और गजेन्द्र के कंधों के समान यथाप्रमाण और विस्तीर्ण कंधे, **जुगसण्णिभपीणरइयपीवरपउट्ठ-सुसंठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठघणथिर-सुबद्धसंधिपुरवर फलिहवट्टियभूए** - उनके कन्धे यज्ञ के स्तंभ के समान लम्बे, चौड़े, मोटे और मनोहर थे, उनके हाथ की कलाई मोटी, सुंदर आकार वाली, सुसंगत, उत्तम, पुष्ट, स्थिर और मजबूत जोड़ वाली थी, **भुअईसर विउलभोग अयाणफलिहउच्छूढदीहबाहू** - भुजाएं नगर के किंवाड़ की आगल के समान ऐसी मालूम पड़ती थी जैसे अपने इच्छित स्थान को जाते हुए नागराज का शरीर हो, **रत्ततलोवइयमउयमंसल सुजायलक्खणपसत्थ अच्छिद्दजालपाणी** - उनकी हथेली उन्नत, कोमल, लाल, मांसल यानी पुष्ट सुंदर और सामुद्रिक शास्त्र के शुभ चिह्नों से युक्त थी। उनकी अंगुलियों के बीच में छेद नहीं थे, **पीवरकोमलवरंगुली** - स्थूल, कोमल और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुंदर अंगुलियां, **आयंबतंबतलिणसुइरुइलणिद्धणक्खे** - तांबे की तरह कुछ कुछ लाल, पतले, पवित्र, चमकीले और चिकने नख, **चंदपाणिलेहे** - हाथ की रेखाएं चन्द्रमा के समान आकारवाली, **दिसासोवत्थियपाणिलेहे** - दाहिनी तरफ घूमे हुए स्वस्तिक के आकार वाली, **कणगसिलातलुज्जल पसत्थ समतल उवचिय विच्छिण्णपिहुलवच्छे** - सोने की शिला के समान उज्ज्वल, शुभ, समतल, पुष्ट, विस्तीर्ण और अत्यंत विशाल वक्षस्थल, **सिरिवच्छंकियवच्छे** - वक्ष स्थल श्रीवत्स के चिह्न से शोभित, **अकरंडुय-कणग-रुयय-णिम्मल-सुजाय-णिरुवहय-देहधारी** - भरा हुआ शरीर होने से पीठ की हड्डी दिखाई नहीं देती थी, सोने की सी कांति वाले, सुंदर और रोग रहित शरीरधारी, **अट्ठसहस्सपडिपुण्णवरपुरिसलक्खणधरे** - उत्तम पुरुष के श्रेष्ठ १००८ लक्षणों से युक्त शरीर वाले, **उज्जुयसमसहिय-जच्च-तणु-कसिणणिद्ध आइज्ज-लउह-रमणिज्जरोमराई** - सीधी, विषमता रहित, घनी, पतली, काली, स्निग्ध, दर्शनीय, लावण्यवाली और रमणीय रोमराजि यानी केशों की पंक्ति, **झसविहगसुजायपीणकुच्छी** - मछली और पक्षी की तरह सुंदर और पूरी भरी हुई कुक्षि, **झसोयरे** - मछली की तरह पेट, **पउमवियडणाभी** - कमल की तरह विकसित नाभि, **गंगावत्तगपयाहिणावत्ततरंग-भंगुर-रवि-किरण-तरुण-बोहिय-कोसायंत-पउमगंभीर-वियडणाभी**- गंगा के भंवर के समान आवर्त्त वाली, सूर्य से विकसित होने वाले कमल के समान विस्तीर्ण और गंभीर नाभि, **साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरिय वरकणगच्छरुसरिसवरवइर वलियमज्झे** - त्रिकाष्टिका, मुशल, दर्पण पकड़ने की लकड़ी, शुद्ध किये हुए सोने की तलवार की मूठ के समान और उत्तमवज्र के मध्यभाग के समान उनका मध्य भाग था, **पमुइयवरतुरगसीहवरवट्टियकडी** - उनकी कमर उत्तम घोड़े और बब्बर शेर की कमर की तरह गोल, **वरतुरगसुजायसुगुज्झदेसे** - घोड़े के गुह्य देश की तरह गुप्त गुह्य भाग, **आइण्णहउव्वणिरुवलेवे** - आकीर्ण जाति के उत्तम घोड़े की तरह निर्लिप्त गुह्य शरीर, **वरवारुणतुल्लविक्कम विलसियगई** - उत्तम हाथी की तरह पराक्रम युक्त और सुंदर चाल, **गयससणसुजायसण्णिभोरु** - हाथी की सूंड की तरह गोल और पुष्ट जांघे, **समुग्गणिमग्गगूढजाणू** - जैसे अनाज भरने की कोठी और उसका ढक्कन आपस में मिला रहता है उसी प्रकार घुटने मांसल होने के कारण मिले हुए थे, **एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघे**- जैसे हरिणी की पिंडली और कुरुविंद नाम का तिनका क्रमशः पतला होता जाता है वैसी ही उनकी पिण्डली नीचे नीचे क्रम से पतली होती गई थी, **संठिय सुसिलिट्ठ विसिट्ठ गूढगुप्फे** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुंदर आकार वाली, उत्तम और गूढ गुल्फ यानी पैर की टकनियां, **सुपइट्ठिय कुम्मचारुचलणे-** सुंदर और कछुए के समान उन्नत पैर, **अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए** - यथायोग्य छोटी बड़ी और एक दूसरे से मिली हुई अंगुलियां, **उण्णयतणुतंबणिद्धणक्खे** - तांबे के समान कुछ कुछ लाल, पतले उन्नत और चिकने पैर के नख, **रत्तुप्पलपत्तमउय सुकुमाल कोमलतले** - लाल कमल के पत्ते के समान लाल कोमल और सुंदर पैरों के तले, **णगणगरमगरसागरचक्कंकवरंकमंग-लंकियचलणे** - पर्वत, नगर, मगर, सागर, रथ का पहिया और अन्य और भी श्रेष्ठ तथा मांगलिक चिह्नों से अंकित पैर, **हुयवयणिद्धूमजलिय तडिय तरुण रवि किरण सरिस तेए** - धूएं रहित अग्नि, बिजली और दोपहर के सूर्य के समान उनके शरीर का तेज था।

भावार्थ - तीर्थंकर भगवान् की दाढ़ी और मूंछ के बाल अवस्थित थे अर्थात् बढ़ते न थे किन्तु जितने शोभनिक मालूम हों उतने ही रहते थे। उनकी दाढ़ी भरी हुई, शुभ लक्षण युक्त और सिंह की दाढ़ी की तरह विस्तीर्ण थी। उनकी गर्दन चार अंगुल प्रमाण और शंख जैसी उत्तम थी। उनके कंधे महिष, सूअर, शार्दुलसिंह, बैल और गजेन्द्र के कंधों के समान यथाप्रमाण और विस्तीर्ण थे। उनके कंधे यज्ञ के स्तंभ के समान लम्बे, चौड़े, मोटे और मनोहर थे। उनके हाथ का पुणचा यानी कलाई मोटी, सुंदर, आकार वाली, सुसंगत, उत्तम, पुष्ट, स्थिर और मजबूत जोड़ वाली थी। उनकी भुजाएं नगर के किंवाड़ की आगल के समान थीं वे ऐसी मालूम पड़ती थीं जैसे अपने इच्छित स्थान को जाते हुए नागराज का शरीर हो। उनकी हथली उन्नत, कोमल, लाल मांसल यानी पुष्ट सुंदर और सामुद्रिक शास्त्र के शुभ चिह्नों से युक्त थी। उनकी अंगुलियों के बीच में छेद नहीं पड़ते थे। अंगुलियाँ स्थूल, कोमल और सुंदर थीं। अंगुलियों के नख तांबे की तरह कुछ कुछ लाल, पतले, पवित्र, चमकीले और चिकने थे। उनके हाथ की रेखाएं चन्द्रमा के समान आकार वाली, सूर्य के समान आकार वाली, शंख के समान आकार वाली और चक्र के आकार वाली तथा दाहिनी तरफ घूमे हुए स्वस्तिक के आकार वाली थीं। चन्द्र, सूर्य, शंख, चक्र, दिशा और दक्षिणावर्त स्वस्तिक के आकार वाली रेखाएं थीं। उनका वक्षस्थल सोने की शिला के समान, उज्ज्वल, शुभ, समतल, पुष्ट विस्तीर्ण और अत्यंत विशाल था। उनका वक्षस्थल श्रीवत्स के चिह्न से शोभित था। उनका शरीर मांसल यानी भरा हुआ था। इसीलिए पीठ की हड्डी दिखाई नहीं देती थी। उनका शरीर सोने की सी कांतिवाला था तथा सुंदर और रोग रहित था। उनका शरीर उत्तम पुरुष के १००८ लक्षणों से युक्त था। उनके पसवाड़े क्रमशः पतले होते गये थे। शरीर के प्रमाण के अनुसार ही उनके पसवाडे थे। वे उचित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाण वाले तथा मांसल थे इसीलिये सुंदर और मनोहर थे। उनकी रोमराजि यानी केशों की पंक्ति सीधी, विषमता रहित; घनी, पतली, काली, स्निग्ध, दर्शनीय, लावण्य वाली और रमणीय थी। उनकी कुक्षि मछली और पक्षी की तरह सुंदर और पूरी भरी हुई थी। पेट मछली की तरह था। उनकी पांचों इन्द्रियाँ पवित्र थीं। नाभि कमल की तरह विकसित थी। उनकी नाभि गंगा के भंवर के समान आवर्त्तवाली तथा सूर्य से विकसित होने वाली कमल के समान विस्तीर्ण और गंभीर थी। उनका मध्य भाग त्रिकाष्टिका, मुशल, दर्पण पकड़ने की लकड़ी तथा शुद्ध किये हुए सोने की तलवार की मूठ के समान और उत्तम वज्र के मध्य भाग के समान था अर्थात् जिस तरह तिपाई के ऊपर का भाग, मूसल के बीच का भाग, दर्पण पकड़ने का काठ और तलवार की मूठ का मध्य भाग पतला होता है उसी तरह भगवान् का मध्य भाग भी पतला था और वज्र की तरह जरा सा टेढा था। उनकी कमर उत्तम घोड़े और बब्बर शेर की कमल सरीखी गोल थी। उनका गुह्य भाग घोड़े के गुह्य देश की तरह गुप्त था। आकीर्ण जाति के उत्तम घोड़े की तरह उनका गुह्य शरीर मल मूत्र से लिप्त नहीं होता था। उनकी चाल उत्तम हाथी की तरह पराक्रम युक्त और सुंदर थी। उनकी जांघें हाथी की सूंड की तरह गोल और पुष्ट थीं। उनके घुटने मांस से भरे हुए होने के कारण ऐसे मिले हुए थे जैसे अनाज भरने की कोठी और उसका ढक्कन आपस में मिला रहता है। जैसे हरिणी की पिंडली और कुरुविंद नाम का तिनका क्रमशः पतला होता जाता है उसी तरह उनकी पिंडली नीचे नीचे क्रम से पतली होती गई थी। उनकी गुल्फ यानी पैर की टकनियां सुन्दर आकार वाली और उत्तम थी तथा मांस से भरी हुई होने के कारण ऊपर उठी हुई नहीं दिखती थीं। उनके पैर सुन्दर और कछुए के समान उन्नत थे। उनकी अंगुलियाँ यथा-योग्य छोटी बड़ी और एक दूसरी से मिली हुई थीं। पैर के नख तांबे के समान कुछ-कुछ लाल, पतले, उन्नत और चिकने थे। उनके पैरों के तले लाल कमल के पत्ते के समान लाल कोमल और सुंदर थे। उनका शरीर उत्तम पुरुषों के १००८ शुभ लक्षणों से युक्त था। उनके पैर, पर्वत, नगर, मगर, सागर, रथ का चक्र और इनके अतिरिक्त अन्य और भी श्रेष्ठ तथा मांगलिक चिह्नों से अंकित थे। वे विशिष्ट रूप वाले थे। धूएं रहित अग्नि, बिजली और दोपहर के सूर्य के समान उनके शरीर का तेज था।

विवेचन - उपरोक्त पाठ में भगवान् के शरीर के समस्त अंगों का वर्णन किया गया है। उनके शरीर के समस्त अङ्ग पूर्ण और सुंदर थे। उनका कोई भी अङ्ग ऐसा न था जो अशोभनिक मालूम हो, यहाँ तक कि उन के शरीर में नख, केश आदि भी परिमाण से अधिक न बढ़ते थे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बल्कि वे सदा उतने ही परिमाण में रहते थे जितने कि शोभनिक मालूम हो। उनका शरीर का वर्ण स्वर्ण सरीखा था। सर्वाङ्ग सुन्दर और रोगादि से रहित था और उत्तम पुरुष के १००८ लक्षणों से युक्त था।

भगवान् का आगमन

अणासवे अममे अकिंचणे छिण्णसोए णिरुवलेवे ववगयपेमरागदोसमोहे णिग्गंथस्स पवयणस्स देसए सत्थणायगे पइट्ठावए समणगपई समणगविंदपरिअट्टए चउत्तीस बुद्धवयणाइसेसपत्ते पणतीससच्चवयणाइसेसपत्ते आगासगएणं चक्केणं आगासगएणं छत्तेणं आगासगयाहिं सेयवरचामराहिं आगासफलिहामएणं सपायपीढेणं सीहासणेणं धम्मज्झएणं पुरओ पकढिज्जमाणेणं चउद्दसहिं समणसाहस्सीहिं छत्तीसाए अज्जिआसाहस्सीहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे हत्थिसीसे णयरे पुप्फकरंडे उज्जाणे वण्णओ पुढविसिलापट्टए वण्णओ तहेव समोसरइ॥२०७॥

कठिन शब्दार्थ - **अणासवे** - आस्रवों से रहित, **अममे** - ममत्वभाव रहित, **अकिंचणे**- अकिञ्चन-परिग्रह से रहित, **छिण्णसोए** - शोक रहित, **णिरुवलेवे** - निरुपलेप, **ववगयपेमरागदोसमोहे** - प्रेम, राग, द्वेष, दोष और अज्ञान मोह से रहित, **णिग्गंथस्स पवयणस्स**- निर्ग्रन्थ प्रवचन के, **देसए** - उपदेशक, **सत्थणायगे** - उपदेशों के नायक, **पइट्ठावए**- प्रतिष्ठापक-स्थापना करने वाले, **समणगपई** - श्रमण संघ के अधिपति, **समणगविंदपरिअट्टए**- साधुओं के समूह को बढ़ाने वाले, **चउत्तीसबुद्धवयणाइसेसपत्ते** - तीर्थंकर के वचनादि चौतीस अतिशयों से युक्त, **पणतीससच्चवयणाइ सेसपत्ते** - सत्य वचन के पैंतीस अतिशयों से युक्त, **आगासगएणं चक्केणं** - आकाश में धर्मचक्र, **आगासगएणं छत्तेणं** - आकाश में छत्र, **आगासगयाहिं सेयवरचामराहिं** - आकाश में उत्तम सफेद चंवर, **आगासफलिहामएणं सपायपीढेणं सीहासणेणं**- आकाश में स्वच्छ स्फटिक रत्नों का सिंहासन, **धम्मज्झएणं पुरओ पकढिज्जमाणेणं** - चलते समय उनके आगे आगे धर्म ध्वजा, **पुव्वाणुपुव्विं** - अनुक्रम से, **पुढविसिलापट्टए** - पृथ्वी शिलापट्ट।

भावार्थ - भगवान् महावीर स्वामी प्राणातिपात आदि आश्रवों से रहित थे, ममत्व भाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहित थे, अकिञ्चन-परिग्रह से रहित थे, शोक रहित थे तथा भव भ्रमण से रहित थे। द्रव्य से निर्मल शरीर वाले और भाव से कर्मबंध के हेतुओं से रहित थे। प्रेम यानी सांसारिक संबंध, राग यानी विषयानुराग, द्वेष और अज्ञान रूप मोह से रहित थे। निर्ग्रन्थ प्रवचनों के अर्थात् आगमों के उपदेशक थे। उपदेशकों के नायक थे और उनकी स्थापना करने वाले थे। साधु संघ के अधिपति थे। साधुओं के समूह को बढ़ाने वाले थे। तीर्थंकर भगवान् के वचनादि चौतीस अतिशयों से युक्त थे। सत्य वचन के पैंतीस अतिशयों से युक्त थे। भगवान् के आगे आगे धर्मचक्र आकाश में चलता था। भगवान् के ऊपर तीन छत्र आकाश में रहते थे। उनके ऊपर आकाश में उत्तम सफेद चंवर होते थे। आकाश में स्फटिक रत्नों का सिंहासन प्रतीत होता था। चलते समय धर्म ध्वजा उनके आगे आगे चलती थी। उनकी आज्ञा में चौदह हजार साधु और छत्तीस हजार साध्वियाँ थीं। आगे बडा साधु और पीछे छोटा साधु इस प्रकार अनुक्रम से चलते हुए और ग्रामानुग्राम यानी एक गांव (ग्राम) से दूसरे ग्राम पधारते हुए शरीर और संयम में बाधा नहीं पहुँचाते हुए सुखपूर्वक विहार करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हस्तिशीर्ष नगर के पुष्पकरण्ड उद्यान में पृथ्वी शिलापट्ट पर पधारे। पुष्प करण्ड उद्यान का और पृथ्वी शिलापट्ट का वर्णन पहले किया जा चुका है।

विवेचन - तीर्थंकर भगवंतों के शरीर का वर्णन शिख नख अर्थात् मस्तक से लेकर पैरों के नखों तक होता है जबकि सामान्य मनुष्यों के शरीर का वर्णन पैरों से लगा कर मस्तक तक होता है।

तीर्थंकर भगवंतों के चौतीस अतिशयों का वर्णन समवायांग सूत्र के ३४वें समवाय में तथा वाणी के पैंतीस अतिशय का वर्णन समवायांग सूत्र के ३५वें समवाय में है। अतः जिज्ञासुओं को वहाँ देख लेना चाहिये।

सुबाहुकुमार की जिज्ञासा

परिसा णिग्गया अदीणसत्तू जहा कोणिए तहेव णिग्गए जहा उववाइए जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तएणं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसण्णिवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था किण्णं अज्ज हत्थिसीसे णयरे इंदमहेइ वा खंदमहेइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा मुगुंदमहेइ वा णागमहेइ वा जक्खमहेइ वा भूयमहेइ वा कूवमहेइ वा तडागमहेइ वा णईमहेइ वा दहमहेइ वा पव्वयमहेइ वा रुक्खमहेइ वा चेइयमहेइ वा थूभमहेइ वा जण्णं एए बहवे उग्गा भोगा राइण्णा इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता सेणावई पसत्थारो लेच्छइ माहणा इब्भा जहा उववाइए जाव सत्थवाहप्पभिइए ण्हाया कयबलिकम्मा जाव णिग्गच्छंति एवं संपेहेइ एवं संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-किण्णं देवाणुप्पिया! अज्ज हत्थिसीसे णयरे इंदमहेइ वा जाव णिग्गच्छंति?

तए णं से कंचुइज्जपुरिसे सुबाहुणा कुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहिय विणिच्छिए करयलपरिग्गहियं सुबाहुकुमारं जएणं विजएणं बद्धावेइ, बद्धावित्ता एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिया! अज्ज हत्थिसीसे णयरे इंदमहेइ वा जाव णिग्गच्छंति। एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी हत्थिसीसस्स णयरस्स बहिया पुप्फकरंडे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता णं जाव विहरइ॥२०८॥

कठिन शब्दार्थ - **तिविहाए पज्जुवासणाए** - तीन प्रकार की पर्युपासना, **जणसण्णिवायं**- मनुष्यों के कोलाहल को, **इंदमहेइ** - इन्द्र महोत्सव, **आगमणगहिय विणिच्छिए** - आगमन का निश्चय करके, **अहापडिरूवं** - यथायोग्य, **उग्गहं** - अभिग्रह को, **उगिण्हित्ता** - ग्रहण करके।

भावार्थ - भगवान् के आगमन को जान कर परिषद् यानी जनसमूह भगवान् को वन्दना करने के लिए निकला। जिस प्रकार उववाई सूत्र में कोणिक राजा का वर्णन किया गया है उसी प्रकार अदीनशत्रु राजा भी भगवान् को वंदना करने के लिए निकला। वहाँ जाकर वह तीन प्रकार की पर्युपासना से यानी मन, वचन, काया से भगवान् की पर्युपासना करने लगा। उसी समय मनुष्यों के उस महान् शब्द को यावत् मनुष्यों के कोलाहल को सुन कर एवं देख कर उस सुबाहुकुमार के मन में इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ कि क्या आज हस्तिशीर्ष नगर में इन्द्र महोत्सव है अथवा कार्तिकेय महोत्सव है अथवा वासुदेव बलदेव का महोत्सव है अथवा नागकुमार देवों का महोत्सव है अथवा यक्ष महोत्सव है अथवा भूत महोत्सव है अथवा कूप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महोत्सव है अथवा तालाब महोत्सव है अथवा नदी महोत्सव है अथवा द्रह महोत्सव है अथवा पर्वत महोत्सव है अथवा वृक्ष महोत्सव है अथवा चैत्य महोत्सव है अथवा स्तूप महोत्सव है जिससे ये बहुत से उग्रवंशी, भोगवंशी, राजवंशी इक्ष्वाकुवंशी, ज्ञातवंशी, कुरुवंशी, क्षत्रिय, क्षत्रियपुत्र, योद्धा, योद्धपुत्र, सेनापति, उपदेशक, लेच्छकी-एक प्रकार के ब्राह्मण, इब्भ यानी धनिक सेठ और जैसा की उववाई सूत्र में कहा है उसके अनुसार यावत् सार्थवाह आदि सब लोग स्नान करके बलिकर्म यानी तिलक छापा आदि करके नगर से बाहर जा रहे हैं ऐसा विचार करके सुबाहुकुमार ने कञ्चुकी पुरुष यानी अन्तःपुर की देखभाल करने वाले पुरुष को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रिय! क्या आज हस्तिशीर्ष नगर में इन्द्र महोत्सव आदि कोई महोत्सव है जिससे कि ये सब लोग बाहर जा रहे हैं। इसके पश्चात् सुबाहुकुमार ने द्वारा ऐसा कहा जाने पर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। तदनन्तर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन का निश्चय करके उस कञ्चुकी पुरुष ने हाथ जोड़ कर सुबाहुकुमार को जय विजय शब्दों से बधाई देते हुए इस प्रकार कहा - हे देवानुप्रिय! आज हस्तिशीर्ष नगर में इन्द्र महोत्सव आदि कोई महोत्सव नहीं है किन्तु आज सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हस्तिशीर्ष नगर के बाहर पुष्पकरण्डक उद्यान में पधारे हैं और यथायोग्य अभिग्रह को ग्रहण करके वहाँ विराजे हैं।

विवेचन - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन को सुनकर हस्तिशीर्ष नगर के लोग और वहाँ का राजा अदीनशत्रु भगवान् को वन्दना करने के लिए नगर के बाहर पुष्पकरण्डक उद्यान में जाने लगे। इस प्रकार जाते हुए जनसमूह को देख कर सुबाहुकुमार के मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि क्या आज इस नगर में इन्द्र महोत्सव आदि कोई महोत्सव है जिससे कि ये सब लोग नगर के बाहर जा रहे हैं? ऐसा विचार होने पर सुबाहुकुमार ने अपने नौकर को इस बात का पता लगाने के लिए भेजा। वापिस आकर नौकर ने सुबाहुकुमार को यह शुभ संदेश दिया कि - हे स्वामिन्! हस्तिशीर्ष नगर में आज इन्द्र महोत्सव आदि कोई महोत्सव नहीं हैं किन्तु श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हस्तिशीर्ष नगर के बाहर पुष्पकरण्डक उद्यान में पधारे हैं अतएव ये लोग वहाँ जा रहे हैं।

तएणं एए बहवे उग्गा भोगा जाव अप्पेगइया वंदणवत्तियं अप्पेगइया पूयण-वत्तियं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं अप्पेगइया अत्थविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणिस्सामो सुयाइं णिस्संकियाइं करिस्सामो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अप्पेगइया अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो। अप्पेगइया सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो अप्पेगइया पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो। अप्पेगइया जिण-भत्ति-रागेण अप्पेगइया जीयमेयं तिकट्टु ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगल-पायच्छित्ता सिरसाकंठे मालाकडा आविद्धमणिसुवण्णा कप्पियहारद्धहारतिसरय-पालंब पलंबमाण कडिसुत्त सुकयसोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणोलित्त गाय-सरीरा अप्पेगइया हयगया एवं गयगया रहगया सिवियागया संदमाणिगया अप्पेगइया पायविहारचारेणं पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महया उक्किट्ठसीह-णायबोलकलकलरवेणं पखुब्भिय महासमुद्दरवभूयं विव करेमाणा हत्थिसीसस्स णयरस्स मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छंति॥२०६॥

कठिन शब्दार्थ - तण्णं - इसलिए, **अप्पेगइया** - कितनेक, **वंदणवत्तियं** - वन्दना करने के लिए, **कोऊहलवत्तियं** - कुतूहल के लिए, **अत्थविणिच्छेयहेउं** - अर्थ का निश्चय करने के लिए, **अस्सुयाइं सुणिस्सामो** - पहले नहीं सुने हुए अर्थों को सुनने के लिए, **सुयाइं णिस्संकियाइं करिस्सामो**- सुने हुए तत्त्वों में उत्पन्न संदेह को दूर करने के लिए, **अट्ठाइं** - अर्थ, **हेऊइं** - हेतु, **वागरणाइं** - प्रश्न, **पुच्छिस्सामो** - पूछने के लिए, **अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो** - गृहस्थावास का त्याग कर साधु बनने के लिए, **पंचाणुव्वइयं** - पांच अणुव्रत, **सत्तसिक्खावइयं** - सात शिक्षा व्रत, **पडिवज्जिस्सामो** - अंगीकार करने के लिए, **जिणभत्तिरागेण** - जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति में राग होने से, **जीयमेयं त्तिकट्टु** - जीताचार का पालन करने के लिए, **कप्पिय-हारद्धहार-तिसरय-पालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकय-सोहाभरणा**-लटकते हुए हार, अर्द्ध हार, तिलडा हार, लटकते हुए गुच्छों वाला कंदोरा आदि सुंदर आभूषण पहन कर, **पवरवत्थपरिहिया** - श्रेष्ठ वस्त्र पहन कर, **चंदणोलित्तगायसरीरा** - शरीर पर चंदन का लेप करके, **हयगया** - घोड़े पर सवार होकर, **पायविहार चारेणं** - पैदल चलते हुए, **महया-उक्किट्ठसीहणायबोल कलकलरवेणं पक्खुब्भिय महासमुद्दरवभूयं विव करेमाणा** - जैसे क्षोभित हुआ समुद्र गम्भीर शब्द करता है उसी प्रकार तुमुल यानी गंभीर हर्ष ध्वनि सिंहनाद अव्यक्त शब्द और कलकल शब्द करते हुए, **पुरिसवग्गुरा परिक्खित्ता** - पुरुषों के समूह के समूह।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इसलिए ये बहुत से उग्रवंशी, भोगवंशी आदि लोग वहाँ जा रहे हैं। उनमें से कितनेक वन्दना करने के लिए, कितनेक पूजन करने के लिए, कितनेक सत्कार करने के लिए, कितनेक सम्मान करने के लिए, कितनेक दर्शन करने के लिए, कितनेक कुतूहल के लिए, कितनेक सूत्रों का अर्थ निश्चय करने के लिए, कितनेक पहले नहीं सुने हुए अर्थों को सुनने के लिए, कितनेक सुने हुए तत्त्वों में उत्पन्न शंका को दूर करने के लिए, कितनेक अर्थ, हेतु, कारण और प्रश्न पूछने के लिए, कितनेक सर्व प्रकार से मुंडित होकर गृहस्थावास का त्याग कर साधु बनने के लिए, कितनेक पांच अणुव्रत, सात शिक्षा व्रत इस प्रकार बारह प्रकार का गृहस्थ धर्म यानी श्रावक व्रत अंगीकार करने के लिये कितनेक जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति में राग होने से और कितनेक अपने जीताचार यानी परम्परागत आचार का पालन करने के लिए स्नान करके, तिलक छापा आदि करके कौतुक और मांगलिक कार्य करके, मस्तक और गले में मालाएं धारण करके माणियों के और सोने के गहनें पहन कर, लटकते हुए हार अर्द्धहार, तिलड़ाहार, लटकते हुए गुच्छों वाला कन्दौरा आदि सुन्दर आभूषण पहन कर बढ़िया बढ़िया वस्त्र पहन कर शरीर पर चंदन का लेप करके कोई घोड़े पर सवार होकर, कोई हाथी पर सवार होकर, कोई रथ में बैठ कर, कोई पालखी में बैठ कर कोई स्यंदमान यानी पुरुषाकार पालखी में बैठ कर और कितनेक पैदल चलते हुए जैसे क्षोभित हुआ, समुद्र गम्भीर शब्द करता है उसी प्रकार गंभीर हर्ष ध्वनि, सिंहनाद, अव्यक्त शब्द और कलकल शब्द करते हुए पुरुषों के समूह के समूह हस्तिशीर्ष नगर के बीचोबीच होकर बाहर जा रहे हैं।

विवेचन - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन को सुन कर कितनेक उनकी सेवा, भक्ति एवं वंदन करने के लिए तथा कितनेक प्रश्न पूछ कर अपनी शंका को दूर करने के लिए स्नानादि करके उत्तम वस्त्राभूषण पहन कर कितनेक हाथी, घोड़े, रथ, पालखी आदि सवारी पर सवार होकर और कितनेक पैदल चलते हुए हस्तिशीर्ष नगर के बाहर पुष्पकरण्डक उद्यान में जाने लगे।

कौटुम्बिक पुरुषों को आज्ञा

तए णं से सुबाहुकुमारे कंचुइज्ज पुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्मं हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह उवट्ठवित्ता मम एयमाणत्तियं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबिय पुरिसा सुबाहुकुमारेणं एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति ॥२१०॥

कठिन शब्दार्थ - चाउग्घंटं - चार घंटों वाले, **आसरहं** - अश्व रथ को, **जुत्तामेव** - जिसमें घोड़े जोते हो, **खिप्पामेव** - शीघ्र ही, **उवट्ठवेह** - लाओ, **आणत्तियं** - आज्ञा, **पच्चप्पिणह** - वापिस सौंपो।

भावार्थ - तदनन्तर कञ्चुकी पुरुष से यह बात सुन कर एवं हृदय में धारण करके सुबाहुकुमार हर्षित एवं संतुष्ट हुआ फिर अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहा कि - हे देवानुप्रियो! जिसमें घोड़े जोते हुए हो ऐसे चार घंटों वाले अश्व रथ को शीघ्र ही लाओ और लाकर यह मेरी आज्ञा मुझे वापिस सौंपो अर्थात् मुझे सूचित करो। सुबाहुकुमार के इस प्रकार कहा जाने पर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उनकी आज्ञानुसार अश्व रथ ला कर उनको सूचित किया।

विवेचन - अपने नौकरों द्वारा भगवान् के आगमन की खबर सुन कर सुबाहुकुमार बहुत प्रसन्न हुआ। उसने तत्काल अपने नौकरों को आज्ञा दे कर चार घोडों वाला रथ मंगवाया।

भगवान् की पर्युपासना

तए णं से सुबाहुकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जहा उववाइए परिसा वण्णओ तहा भाणियव्वं जाव चंदणोवलित्तगायसरीरे सव्वालंकार विभूसिए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, चाउग्घंटं आसरहं दुरूहित्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडकरपहकर बंधपरिक्खित्ते हत्थिसीसं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फकरंडे चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तुरए णिगिण्हिइ, तुरह णिगिण्हित्ता रहं ठवेइ रहं ठवित्ता रहाओ पच्चोरुहइ, रहाओ पच्चोरुहित्ता पुप्फतंबोलाउहमाइयं वाणहाओ य विसज्जेइ, विसज्जित्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, उत्तरासंगं करित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयंते चोक्खे परम सुइब्भूए अंजलि मउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ, आयाहिणपयाहिणं करित्ता तिक्खुत्तो जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ॥२११॥

कठिन शब्दार्थ - महया भडचडकरपहकर-बंधपरिक्खित्ते - बहुत से सुभट, नौकर चाकर और दासों से घिरा हुआ, **तुरए** - घोड़ों को, **पुप्फतंबोलाउहमाइयं** - फूल, तम्बोल (पान) और अस्त्र शस्त्र आदि को, **वाणहाओ** - जूते आदि को, **विसज्जेइ** - छोड़ दिया, **एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ** - एकसाटिक बीच में बिना सिले हुए एक वस्त्र का उत्तरासंग किया, **अंजलि मउलियहत्थे**- अञ्जलि करके यानी दोनों हाथों को जोड़ करके, **आयाहिणपयाहिणं** - आदक्षिण-प्रदक्षिणा।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार जहाँ स्नान घर था वहाँ आया और आकर स्नान किया, तिलक छापे आदि किये। सभा आदि का वर्णन उववाई सूत्र के अनुसार यहाँ पर भी कह देना चाहिए। यावत् शरीर पर चंदन का लेप किया सब अलंकारों से विभूषित हुआ और स्नान घर से निकला। स्नान घर से बाहर निकल कर जहाँ बाहर का सभा भवन था और जहाँ पर चार घंटों वाला अश्वरथ था वहाँ आया, आकर चार घण्टों वाले अश्वरथ पर चढ़ा, चार घंटों वाले अश्वरथ पर चढ़ कर कोरंट के फूलों की मालाओं से शोभित छत्र को धारण करके बहुत से सुभट, नौकर, चाकर और दासों से घिरा हुआ वह सुबाहु कुमार हस्तिशीर्ष नगर के मध्य होकर जहाँ पुष्पकरण्ड उद्यान था वहाँ आया, आकर घोड़ों को ठहरा कर रथ को ठहरा कर, रथ से नीचे उतरा। रथ से उतर कर फूल, तम्बोल, अस्त्र शस्त्र और जूते आदि को वहीं छोड़ दिया। मुख पर उत्तरासंग किया। शुद्ध, अशुचि से रहित और परम पवित्र होकर दोनों हाथों को जोड़ कर जहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विराजमान थे वहाँ आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा कर वंदना की और वंदना करके तीन प्रकार की पर्युपासना से अर्थात् मन, वचन और काया से उसने उपासना की।

विवेचन - सुबाहुकुमार स्नान करके, शरीर पर चंदन आदि का लेप करके उत्तम वस्त्राभूषणों से अलंकृत हुआ। फिर घोड़ों के रथ में बैठ कर पुष्पकरण्ड उद्यान में आया। रथ से नीचे उतर कर उसने फूलमाला पात्र, अस्त्र, शस्त्र, छत्र और जूत्ते आदि को वहीं छोड़ दिया। फिर मुख

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर उत्तरासंग करके दोनों हाथों को जोड़कर भगवान् के पास आया और भगवान् को तीन बार वन्दना करके उसने मन, वचन, काया से उनकी पर्युपासना-सेवा की।

श्रावक धर्म ग्रहण

तए णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्सकुमारस्स तीये य महइमहालियाए इसि जाव धम्मकहा कहिया, परिसा पडिगया। तए णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठे जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता एवं वयासी-सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, रोएमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेय भंते! असंद्धिद्धमेयं भंते! जाव से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु एवं वयासी-जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं दुप्पडियारेणं भोगा राइण्णा इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया माहणा भडा जोहा पसत्थारो मल्लई लेच्छई पुत्ता अण्णे य बहवे राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइस्स सत्थवाहपभिइओ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया। अहं अहण्णे णो संचाएमि जाव पव्वइत्तए। अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वयं सत्तसिक्खाव्वयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि। अहासुहं मा पडिबंधं करेह।

तए णं से सुबाहु कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वयं सत्तसिक्खाव्वयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता तमेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, दुरूहित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए॥२१२॥

कठिन शब्दार्थ - णिग्गंथं पावयणं - निर्ग्रन्थ प्रवचनों पर, **सद्दहामि** - श्रद्धा करता हूँ, **पत्तियामि** - प्रतीति करता हूँ, **रोएमि** - रुचि रखता हूँ, **अब्भुट्ठेमि** - उद्योग करता हूँ, **दुप्पडियारेणं** - द्विप्रतिकार।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - इसके पश्चात् श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने सुबाहु कुमार को और उस महती सभा को धर्मकथा कही यानी धर्मोपदेश फरमाया। धर्मोपदेश सुन कर परिषद् वापिस लौट गई। तदनन्तर वह सुबाहुकुमार श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्म सुन कर तथा हृदय में धारण कर बहुत हर्षित एवं संतुष्ट हुआ फिर वह उठ कर खड़ा हुआ, खड़ा होकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार वंदना नमस्कार कर इस प्रकार निवेदन किया-'हे भगवन्! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचनों पर श्रद्धा करता हूँ, प्रतीति करता हूँ, रुचि करता हूँ, उद्योग करता हूँ। हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन यही है जैसा कि आपने फरमाया है। ये निर्ग्रन्थ प्रवचन यथार्थ हैं, संदेह रहित है, यावत् जैसा आप फरमाते हैं वैसा ही निर्ग्रन्थ प्रवचन यथार्थ है, ऐसा कह कर वह इस प्रकार बोला कि - हे भगवन्! जिस प्रकार आपके पास बहुत से उग्रवंशी, उग्रवंशीकुमार, भोगवंशी, भोगवंशीकुमार, राजवंशी राजवंशीकुमार, इश्वाकु इश्वाकुकुमार, ज्ञातवंशी, ज्ञातवंशीकुमार, कुरुवंशी और कुरुवंशीकुमार, क्षत्रिय और क्षत्रियकुमार, ब्राह्मण और ब्राह्मणकुमार, शूरवीर और शूरवीरकुमार, योद्धा और योद्धाकुमार, प्रशास्ता यानी धर्मोपदेशक मल्लकी राज विशेष और उनके कुमार लेच्छकी राज विशेष और उनके कुमार आदि और अन्य बहुत से राजा, युवराज, ब्रलवर यानी कोटवाल, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य, सेठ, सेनापति और सार्थवाह आदि मुण्डित होकर गृह त्याग कर मुनि दीक्षा अंगीकार करते हैं किन्तु मैं अधन्य हूँ कि मैं दीक्षा लेने में समर्थ नहीं हूँ। हे भगवन्! मैं आपके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत इस तरह बारह प्रकार के गृहस्थ धर्म यानी श्रावक धर्म अंगीकार करूँगा। भगवान् ने फरमाया कि हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा करो किन्तु धर्मकार्य में किञ्चिन्मात्र भी प्रमाद मत करो।

इसके बाद सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत, इस तरह बारह प्रकार के गृहस्थ (श्रावक) धर्म को अंगीकार किया। अंगीकार करके वह उसी चार घंटों वाले अश्वरथ पर सवार हुआ। सवार होकर वह जिस दिशा से आया था उसी दिशा में वापिस चला गया।

विवेचन - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने उस महती सभा को तथा सुबाहुकुमार को धर्मोपदेश फरमाया, धर्मोपदेश सुनकर सुबाहुकुमार ने भगवान् से अर्ज किया कि हे भगवन्! जिस प्रकार राजा महाराजा सेठ सेनापति आदि गृहस्थवास को छोड़ कर आपके पास दीक्षा लेते हैं उसी प्रकार मैं दीक्षा लेने में असमर्थ हूँ किन्तु पांच अणुव्रत (स्थूल प्राणातिपात त्याग, स्थूल मृषावाद त्याग, स्थूल अदत्तादान त्याग, स्वदार संतोष और परिग्रह परिमाण) और सात शिक्षा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्रत (दिशा परिमाण, उपभोगपरिभोग परिमाण, अनर्थ दण्ड विरमण, सामायिक, देशावकासिक, पौषधोपवास और अतिथि संविभाग) रूप श्रावक के बारह व्रत धारण करना चाहता हूं। भगवान् ने फरमाया कि-हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार सुख हो वैसा करो किन्तु धर्म कार्य में ढीलमत करो। तत्पश्चात् उस सुबाहुकुमार ने भगवान् के पास श्रावक के बारहव्रत अंगीकार किये। फिर उस चार घंटों वाले घोड़ों के रथ पर सवार हो कर वापिस अपने घर लौट गया।

''दुप्पडियारेणं'' - द्वि प्रतिकार शब्द का अर्थ यह है कि जिस प्रकार **उग्गा** और **उग्गपुत्ता** ये दो शब्द हैं उसी प्रकार आगे भी दो-दो शब्द कह देने चाहिये। जैसे **'भोगा भोगपुत्ता, राइण्णा राइण्णपुत्ता, इक्खागा इक्खागपुत्ता'** इस प्रकार आगे प्रत्येक शब्द के साथ **''पुत्ता''** शब्द जोड़ देना चाहिये।

इभ्य - जिसके पास इतना धन हो कि जिस धन से हाथी ढक सके उसे 'इभ्य' कहते हैं। इभ्य के तीन भेद हैं - जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट। जिसके पास उपरोक्त परिणाम चांदी हो वह जघन्य इभ्य, सोना हो वह मध्यम इभ्य और जवाहरात हो वह उत्कृष्ट इभ्य कहलाता है।

पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रतों के विशेष स्वरूप को समझने की इच्छा वालों को अथवा श्रावक के बारह व्रत धारण करने की इच्छा वालों को संघ द्वारा प्रकाशित **'अगार-धर्म'** नामक पुस्तक देखनी चाहिये।

गौतम स्वामी की जिज्ञासा

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे गोयम गोत्तेणं सत्तुस्सेहे समचउरंस संठाण संठिए वज्जरिसहणाराय संघयणे कणगपुलगणिघसपम्हगोरे, उग्गतवे, दित्ततवे, तत्ततवे महातवे, उराले, घोरे, घोरगुणे, घोरतवस्सी, घोरबंभचेरवासी, उच्छूढसरीरे संखित्तविउलतेयलेस्से चोद्दसपुव्वी चउण्णाणोवगए सव्वक्खरसण्णिवाई समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढं जाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे जायसंसए, जायकोउहल्ले उप्पण्णसड्ढे उप्पण्णसंसए उप्पण्णकोउहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोउहल्ले समुप्पण्ण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सड्ढे समुप्पण्णसंसए समुप्पण्णकोउहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं वयासी-अहो णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते कंतरूवे पिए पियरूवे मणुण्णे मणुण्णरूवे मणामे मणामरूवे सोमे सोमरूवे सुभगे पियदंसणे सुरूवे बहुजणस्स वि य णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे जाव सुरूवे साहुजणस्स वि य णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे जाव सुरूवे। सुबाहुणा भंते! कुमारेणं इमेयारूवा उराला माणुस्स रिद्धि किण्णा लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभिसमण्णागया के वा एस आसी पुव्वभवे? किं णामए वा किं वा गोए कयरंसि वा गामंसि वा सण्णिवेसंसि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा किच्चा कस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आयरियं सुवयणं सोच्चा णिसम्म सुबाहुणा कुमारेण इमा एयारूवा उराला माणुस्स रिद्धि लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया॥२१३॥

कठिन शब्दार्थ - **सत्तुस्सेहे** - सात हाथ ऊँचा, **कणगपुलग-णिघसपम्हगोरे** - कसौटी पर घिसे हुए सोने के समान गोरा, **उग्गतवे** - उग्र तपस्वी, **दित्ततवे** - दीप्त तपस्वी, **तत्ततवे** - तप्त तपस्वी, **उच्छूढसरीरे** - शरीर की सेवा शुश्रूषा से रहित, **संखित्त विउलतेयलेस्से** - विपुल तेजोलेश्या को संक्षिप्त, **सव्वक्खरसण्णिवाई** - सर्वाक्षर सन्निपाती, **झाणकोट्ठोवगए** - ध्यान रूपी कोठे में स्थिर, **जायसड्ढे** - तत्त्वों में श्रद्धा होने से, **जायसंसए** - जिज्ञासा रूप संशय, **जायकोउहल्ले** - जिज्ञासा रूप कौतुहल, **संजायसड्ढे** - सम्यक् प्रकार श्रद्धा होने से, **संजाय संसए** - सम्यक् संशय, **संजायकोउहल्ले** - सम्यक् कौतुहल, **समुप्पण्णसड्ढे** - भली प्रकार श्रद्धा, **समुप्पण्णसंसए** - भली प्रकार संशय, **समुप्पेण्णकोउहल्ले** - भली प्रकार कौतुहल, **अभिमुहे** - सामने, **सुस्सूसमाणे** - शुश्रूषा करते हुए, **इट्ठरूवे** - इष्ट रूप वाला, **कंतरूवे** - कांत रूप-सुंदर रूप वाला, **सोमरूवे** - सौम्य रूप वाला, **सुभगे** - सुभग यानी सौभाग्यवान्, **इमा एयारूवा**- यह इस तरह की, **माणुस्सरिद्धी**- मनुष्य ऋद्धि, **किण्णा** - कैसे, **लद्धा** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिली, **पत्ता** - प्राप्त हुई, **अभिसमण्णागया** - सामने आई, **दच्चा** - दान दिया, **भोच्चा** - भोजन किया, **समायरित्ता** - शुभ आचरण किया, **तहारूवस्स** - तथा रूप के, **आयरियं सुवयणं** - आर्य सुवचन को।

भावार्थ - उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ यानी सबसे बड़े प्रधान शिष्य इन्द्रभूति नाम के अनगार थे। उनका गोत्र गौतम था। उनका शरीर सात हाथ ऊंचा था। उनका शरीर समचतुरस्र संस्थान और वज्रऋषभ नाराच संहनन से युक्त था। उनका शरीर कसौटी पर घिसे हुए सोने के समान गोरा था। वे उग्र तपस्वी यानी उत्कृष्ट तप करने वाले, दीप्त तपस्वी यानी अग्नि के समान कर्म रूपी वन को जलाने वाला तप करने वाले, तप्त तपस्वी यानी कर्मों को तपाने वाली तपस्या करने वाले और महातपस्वी यानी फल की इच्छा न करते हुए निष्काम तपस्या करने वाले, उदार और घोर यानी कर्म रूपी शत्रुओं को जीतने में शूरवीर थे वे महान् गुणशाली थे। घोर तपस्वी और घोर ब्रह्मचारी थे। वे शरीर की सेवा शुश्रूषा से रहित थे। उन्होंने अपनी विपुल तेजोलेश्या को संक्षिप्त कर रखी थी यानी वे तेजोलेश्या का प्रयोग नहीं करते थे, चौदह पूर्व के ज्ञाता थे। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यव इन चार ज्ञानों के धारक थे। सब अक्षरों के उदात्त आदि भेदों को जानने वाले थे। वे इन्द्रभूति अनगार श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के न तो अधिक दूर और न अधिक नजदीक बैठे हुए थे। घुटने ऊपर की ओर तथा शिर नीचे किये हुए ध्यान रूपी कोठे में स्थिर थे। संयम और तप के द्वारा आत्मा की भावना करते हुए आत्मगुणों में विचरण कर रहे थे।

इसके पश्चात् उन भगवान् गौतम स्वामी को तत्त्वों में श्रद्धा होने से जिज्ञासा रूप संशय उत्पन्न हुआ। इसी कारण उन्हें कौतुहल पैदा हुआ। तत्त्वों में सम्यक् प्रकार श्रद्धा होने से सम्यक् जिज्ञासा रूप संशय उत्पन्न हुआ, इसी कारण सम्यक् कौतुहल पैदा हुआ। उन्हें तत्त्वों में भली प्रकार श्रद्धा थी इसीलिए भली प्रकार जिज्ञासा रूप संशय उत्पन्न हुआ और इसी कारण भली प्रकार कौतुहल उत्पन्न हुआ इसलिए अपने स्थान से उठे, उठ कर जहाँ पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विराजमान थे वहाँ पर आये, आकर भगवान् महावीर स्वामी की आदक्षिण प्रदक्षिणा करके तीन बार वंदना नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके न तो अधिक नजदीक और न अधिक दूर किंतु यथोचित स्थान पर सामने उनकी शुश्रूषा करते हुए और नमस्कार करते हुए विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़ कर सेवा करते हुए इस प्रकार बोले कि अहो भगवन्! यह सुबाहुकुमार इष्ट, इष्ट रूप वाला, कांत यानी सुंदर कान्तरूप वाला, प्रिय, प्रिय रूप वाला,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनोज्ञ, मनोज्ञ रूपवाला, मनोहर, मनोहर रूप वाला, सौम्य, सौम्य रूप वाला, सुभग यानी सौभाग्यवान्, प्रियदर्शन यानी देखने में प्यारा और सुरूप है। हे पूज्य! बहुत आदमियों को भी यह सुबाहुकुमार इष्ट, इष्ट रूप वाला यावत् सुरूप लगता है और हे भगवन्! यह सुबाहुकुमार साधुओं को भी इष्ट, इष्ट रूप वाला यावत् सुरूप लगता है। हे भगवन्! सुबाहुकुमार को यह इस तरह की उदार मनुष्य ऋद्धि इष्ट रूपता यावत् सुरूपता आदि मनुष्य संबंधी ऋद्धि कैसे मिली? कैसे प्राप्त हुई? और यह मनुष्य ऋद्धि इसके सामने कैसे आई? पूर्वभव में यह कौन था? इसका क्या नाम था? क्या गोत्र था? किस गांव और किस सन्निवेश यानी जगह का रहने वाला था? इसने क्या दान दिया था? क्या भोजन किया था? क्या शुभ आचरण किया था? किस तथारूप के यानी सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र से सम्पन्न श्रमण अथवा श्रावक के पास एक भी आर्य सुवचन को सुनकर, हृदय में धारण किया था। जिसके कारण, सुबाहुकुमार को इस प्रकार की यह उदार मनुष्य ऋद्धि मिली है, प्राप्त हुई है और स्वयं इसके सामने आई है।

विवेचन - जब सुबाहुकुमार वापिस लौट गया तो उसके इष्ट रूपता आदि उदार मनुष्य ऋद्धि की प्राप्ति का कारण जानने की श्री गौतम स्वामी के मन में इच्छा उत्पन्न हुई। इस कारण हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक भगवान् की सेवा शुश्रूषा करते हुए उन्होंने पूछा कि - हे भगवन्! यह सुबाहुकुमार इष्ट रूप वाला यावत् सुरूप वाला है देखने वाले बहुत लोगों को और यहाँ तक कि साधुओं को भी इसका रूप प्यारा लगता है। हे भगवन्! इसका क्या कारण है? पूर्व भव में यह कौन था? इसने कौन सा उत्तम दान दिया था? क्या भोजन किया था और कौन से शुभ आचरण का पालन किया था जिसके कारण इसको यह उदार मनुष्य ऋद्धि प्राप्त हुई है?

महावीर स्वामी का समाधान

एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे णामं णयरे होत्था। रिद्धित्थिमिय समिद्धे वण्णओ। तत्थ णं हत्थिणाउरे णयरे सुमुहे णामं गाहावई परिवसइ। अड्ढे दित्ते विच्छिण्ण-विउल भवण-सयणासण-जाण-वाहणाइण्णे बहुधण-बहुजायरूवरयए आओगपओगसंपउत्ते विच्छडिय-पउरभत्तपाणे बहुदासीदास-गोमहिस-गवेलगप्पभूए बहुजणस्स अपरिभूए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा णामं थेरा जाइसंपण्णा जहेव सुहम्मसामी तहेव पंचहिं समणसएहिं सद्धिं संपरिवुडा पुव्वाणुपव्विं चरमाणा गामाणुगामं दुइज्जमाणा जेणेव हत्थिणाउरे जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी सुदत्ते णामं अणगारे उराले जाव संखित्ततेउलेस्से मासं मासेणं खममाणे विहरइ। तएणं से सुदत्ते अणगारे मासक्खणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ। बीयाए पोरिसीए झाणं झियाएइ। तइयाए पोरिसीए धम्मघोसे थेरे आपुच्छइ आपुच्छित्ता उच्चणीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स अडमाणे सुमुहस्स गाहावइस्स गिहं अणुप्पविट्ठे। तएणं से सुहुमे गाहावई सुदत्तं अणगारं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठे जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहेइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ मुयइ, मुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, करित्ता सुदत्तं अणगारं सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सएणं हत्थेणं विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पडिलाभिस्सामि त्ति तुट्ठे पडिलाभेमाणे वि तुट्ठे पडिलाभिए वि तुट्ठे। तएणं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं पत्तसुद्धेणं तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते अणगारे पडिलाभिए समाणे संसारे परित्तीकए मणुस्साउए णिबद्धे गिहंसि य से इमाइं पंचदिव्वाइं पाउब्भूयाइं तंजहा - १. वसुहारा वुट्ठा २. दसद्धवण्णे कुसुमे णिवाइए ३. चेलुक्खेवे कए ४. आहयाओ देव दुंदुहिओ ५. अंतरा वि य णं आगासंसि अहोदाणमहोदाणं घुट्ठे य। हत्थिणाउरे सिंघाडग जाव पहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खेइ, एवं भासइ, एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ, धण्णे णं देवाणुप्पिए सुमुहे गाहावई सुकयपुण्णे कयलक्खणे सुलद्धे णं मणुस्स जम्मे सुकयत्थरिद्धि य जाव तं धण्णे॥२१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **अड्ढे** - आढ्य-धन धान्य से परिपूर्ण, **विच्छिण्णविउल-भवण-सयणासण-जाण-वाहणाइण्णे** - विस्तृत एवं बड़े-बड़े भवन, शय्या, आसन, यान और वाहनों से युक्त, **बहुधणबहुजायरूवरयए** - बहुत धन और स्वर्ण से परिपूर्ण, **आओगपओग संपउत्ते**- आयोग प्रयोग से युक्त, **विच्छड्डियपउरभत्तपाणे** - प्रचुर मात्रा में आहार पानी होता था, **बहुजणस्स अपरिभूए** - बहुतजनों का माननीय, **जाइसंपण्णा** - जाति सम्पन्न, **थेरा** - स्थविर, **संपरिवुडा** - परिवृत्त यानी घिरे हुए, **पोरिसीए** - पौरिसी में, **झाणं झियाएइ** - ध्यान किया, **घरसमुदाणस्स अडमाणे** - घरो में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए, **गिहं** - घर में, **अणुप्पविट्ठे** - प्रवेश किया, **पायपीढाओ** - पाद पीठ यानी आसन से, **पच्चोरुहेइ** - नीचे उतरा, **पाउयाओ** - पादुका यानी खडाऊ, **सत्तट्ठपयाइं** - सात आठ पैर, **अणुगच्छइ** - सामने गया, **पडिलाभिस्सामि** - दान दूंगा, **तुट्ठे** - प्रमुदित, **पडिलाभेमाणे** - दान देते समय, **पडिलाभिए** - दान देकर, **दव्वसुद्धेणं** - शुद्ध द्रव्य के द्वारा, **दायगसुद्धेणं** - दाता के शुद्ध होने से, **पत्तसुद्धेणं** - पात्र के शुद्ध होने से, **संसारे परित्तीकए**- संसार परित्त किया, **वसुहारा**- सोनैयों की, **वुट्ठा** - वर्षा हुई, **दसद्धवण्णे** - पांच वर्ण के, **णिवाइए** - वर्षा हुई, **चेलुक्खेवे कए** - दिव्य वस्त्रों की वृष्टि, **देवदुंदुहीओ आहयाओ** - आकाश में देवदुंदुभी बजी, **घुट्ठे** - शब्द हुआ, **आइक्खेइ** - कहने लगे, **भासइ** - भाषण करने लगे, **पण्णवेइ** - प्रतिपादन करने लगे, **परूवेइ** - प्ररूपणा करने लगे, **सुकयपुण्णे** - पुण्यवान्, **कयलक्खणे** - सुलक्षण, **सुकयत्थरिद्धि** - प्राप्त की हुई ऋद्धि सफल है।

भावार्थ - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने फरमाया कि हे गौतम! उस काल उस समय में सब द्वीप समुद्रों के मध्यवर्ती इस जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र में हस्तिनापुर नाम का नगर था। वह ऋद्धि से पूर्ण समृद्ध था। इसका विशेष वर्णन उववाई सूत्र में है। उस हस्तिनापुर नगर में सुमुख नाम का गाथापति यानी सेठ रहता था। वह धन धान्य से परिपूर्ण, दीप्त और विस्तृत एवं बड़े-बड़े भवन शय्या, आसन, यान और वाहनों से युक्त था। बहुत धन और स्वर्ण से परिपूर्ण था, आयोग प्रयोग से युक्त था। उसके यहाँ आहार पानी प्रचुर मात्रा में होता था। उसके यहाँ बहुत दासी, दास, गाय भैंस, भेड़ आदि थे। वह बहुतजनों का माननीय था। उस काल उस समय में जाति सम्पन्न धर्मघोष नामक स्थविर सुधर्मा स्वामी की तरह पांच सौ साधुओं से परिवृत यानी घिरे हुए पूर्वानुपूर्वी से यानी अनुक्रम से चलते हुए ग्रामानुग्राम विहार करते हुए हस्तिनापुर के सहस्राम्रवन नामक उद्यान में पधारे। पधार कर यथायोग्य अवग्रह की आज्ञा ले कर संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए धर्मध्यान में विचरण करने लगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसी काल उसी समय में धर्मघोष स्थविर के शिष्य सुदत्त नामक अनगार उदार यावत् उन्होंने अपनी तेजोलेश्या को संक्षिप्त कर रखी थी। वे मासमासखमण यानी एक-एक महीने में पारणा करते हुए धर्म ध्यान में तल्लीन थे। तत्पश्चात् उन सुदत्त अनगार ने मासखमण के पारणे के दिन पहली पौरिसी में स्वाध्याय किया, दूसरी पौरिसी में ध्यान किया। तीसरी पौरिसी में धर्मघोष स्थविर अपने गुरु महाराज की आज्ञा लेकर ऊंच, नीच और मध्यम कुलों के घरों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए सुदत्त अनगार ने सुमुख गाथापति के घर में प्रवेश किया। इसके बाद उस सुमुख गाथापति ने सुदत्त अनगार को आते हुए देखा, देख कर बहुत प्रसन्न हुआ और आसन से उठ कर पादपीठ से नीचे उतरा, उत्तर कर पादुका (खडाऊ) को पैरों से उतार दिया। उतार कर बीच में बिना सिले हुए एक कपड़े का उत्तरासंग किया और सात आठ कदम सुदत्त अनगार के सामने गया। सामने जा कर तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा कर वंदना नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके जहाँ भोजन घर था वहाँ आया, आकर अपने हाथ से विपुल अशन, पानी, खादिम और स्वादिम इस चारों प्रकार के आहार का दान दूंगा ऐसा सोच कर प्रमुदित हुआ। दान देते समय भी आनंदित हुआ और दान देकर भी आनंदित हुआ। इसके पश्चात् उस सुमुख गाथापति के उस शुद्ध द्रव्य के द्वारा, दाता के शुद्ध होने से और पात्र के शुद्ध होने से यानी द्रव्य, दाता और पात्र इन तीनों के शुद्ध होने से तथा तीन करण और तीन योगों की शुद्धि पूर्वक सुदत्त अनगार को आहार बहरा कर सुमुख गाथापति ने संसार परित्त किया और मनुष्य आयु का बन्ध किया। उसके घर पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए। यथा - १. सौनैयों की वर्षा हुई २. पांच वर्ण के फूलों की वर्षा हुई ३. दिव्य वस्त्रों की वृष्टि हुई ४. आकाश में देवदुंदुभि बजी और ५. आकाश में अहो दान! अहो दान!! यह शब्द हुआ। हस्तिनापुर में तिरस्तों चौरस्तों पर यानी छोटे बड़े सब रास्तों पर यावत् सड़कों पर जगह-जगह अनेक मनुष्य इस प्रकार कहने लगे, इस प्रकार भाषण करने लगे, इस प्रकार प्रतिपादन करने लगे एवं इस प्रकार प्ररूपणा करने लगे कि हे देवानुप्रियो! यह सुमुख गाथापति धन्य है, पुण्यवान् है, सुलक्षण है, इसका मनुष्य जन्म प्राप्त करना सफल है इसकी प्राप्त की हुई ऋद्धि सफल है यावत् यह धन्य है।

विवेचन - गौतम स्वामी के प्रश्न पूछने पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने फरमाया कि हे गौतम! इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में हस्तिनापुर नाम का एक नगर था। वह अत्यंत सुन्दर एवं रमणीय था उसमें सुमुख गाथापति रहता था। वह ऋद्धिसम्पत्ति से संपन्न था और नगर में माननीय एवं प्रतिष्ठित था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उस समय में धर्मघोष आचार्य विचरते थे। उनके पाँच सौ शिष्य थे। एक समय ग्रामानुग्राम विहार करते हुए धर्मघोष आचार्य हस्तिनापुर के सहस्राम्रवन उद्यान में पधारे। उनके सुदत्त नामक एक शिष्य थे वे मास मासखमण तप करते थे। एक समय मासखमण के पारणे के दिन सुदत्त अनगार ने पहले प्रहर में स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर में ध्यान दिया और तीसरे प्रहर में धर्मघोष आचार्य की आज्ञा ले कर हस्तिनापुर में प्रवेश किया। गोचरी के लिए ऊंच, नीच, मध्यम कुलों में समान रूप से घूमते हुए उन्होंने सुमुख गाथापति के घर में प्रवेश किया। सुदत्त अनगार को पधारते हुए देख कर सुमुख गाथापति बड़ा प्रसन्न हुआ, उस का रोम रोम खिल उठा, आसन से उठकर सात आठ कदम उनके सामने जा कर विनय पूर्वक वंदन नमस्कार किया और अपने रसोई घर की ओर आने लगा। "आज मैं स्वयं अपने हाथ से इन मुनिराज को पर्याप्त आहार पानी आदि चारों आहार बहराऊँगा" ऐसा सोचकर वह प्रसन्न हुआ। रसोई घर में आकर उसने निर्दोष अशनादि बहराया, आहार आदि देते समय और देने के बाद भी वह बड़ा प्रसन्न हुआ। द्रव्य, दाता, पात्र इन तीनों के शुद्ध होने से तथा तीनकरण और तीन योगों की शुद्धता पूर्वक आहार आदि देने से सुमुख गाथापति ने संसार परित्त किया और मनुष्य आयु का बंध किया। दान का महत्त्व प्रकट करने के लिए देवों ने उसके घर में पांच दिव्य प्रकट किये। फल स्वरूप हस्तिनापुर नगर के निवासी इस प्रकार कहने लगे कि 'यह सुमुख गाथापति धन्य है। पुण्यशाली है। इसका मनुष्य जन्म पाना सफल है। इसकी समस्त ऋद्धि भी सार्थक है। यह बारबार धन्य है।' इस प्रकार सब लोग सुमुख गाथापति की प्रशंसा करने लगे।

श्रावक व्रतों का पालन

से सुमुहे गाहावई बहूइं वाससयाइं आउयं पालेइ, पालित्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव हत्थिसीसे णयरे अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णो। तए णं सा धारिणी देवी सयणिज्जंसि सुत्त जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी तहेव सीहं पासइ, सेसं तं चेव जाव उप्पिं पासायवरगए विहरइ। तं एवं खलु गोयमा! सुबाहुणा इमा एयारूवा माणुस्सरिद्धि लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया।

पहू णं भंते! सुबाहुकुमारे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणगारियं पव्वइत्तए? हंता पभू! तएणं से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तए णं से समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ हत्थिसीसाओ णयराओ पुप्फकरंडाओ उज्जाणाओ कयवणमालप्पियजक्खस्स जक्खाययणाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ। तए णं से सुबाहु कुमारे समणोवासए जाए अभिगय जीवाजीवे उवलद्धपुण्णपावे आसव-संवर-णिज्जरकिरियाहिगरण बंधमोक्खकुसले असहिज्ज-देवासुर-णागसुवण्ण-जक्खरक्खस-किण्णर-किंपुरिस-गरुल-गंधव्व-महोरगाइएहिं देवगणेहिं णिग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे णिग्गंथे पावयणे णिस्संकिए णिक्कंखिए णिव्वितिगिच्छे लद्धट्ठे गहियट्ठे पुच्छियट्ठे अहियगट्ठे विणिच्छियट्ठे अट्ठिमिंज-पेम्माणुरागरत्ते अयमाउसो णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे ऊसियफलिहे अवंगुयदुवारे चियत्तंतेउरघरप्पवेसे बहूहिं सीलव्वय-गुणवेरमण-पच्चक्खाणपोसहोववासेहिं चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ-पुण्णिमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समणे णिग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थ-पडिग्गह-कंबल-पायपुंछणेणं पीढफलग-सिज्जासंथारएणं ओसह-भेसज्जेणं च पडिलाभेमाणे अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ॥२१५॥

कठिन शब्दार्थ - **कयवणमालप्पियजक्खस्स जक्खाययणाओ** - कृतवन मालप्रिय यक्ष के यक्षायतन से, **अभिगय जीवाजीवे** - जीव और अजीव के स्वरूप को भली प्रकार जान लिया, **उवलद्धपुण्णपावे** - पुण्य और पाप को जाना, **आसव-संवर-णिज्जर किरियाहिगरण-बंध-मोक्खकुसले** - आस्रव, संवर, निर्जरा, क्रियाधिकरण, बंध और मोक्ष के स्वरूप को जानने में कुशल, **असहिज्जदेवासुर-णाग-सुवण्ण-जक्ख-रक्खस-किण्णर-किंपुरिस-गरुल-गंधव्व-महोरगाइएहिं देवगणेहिं**- देव असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्ण कुमार, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, गरुड़, गन्धर्व, महोरग आदि देवों के समूह की सहायता न लेने वाला, **णिग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे** - कोई भी उसको निर्ग्रन्थ प्रवचन से विचलित नहीं कर सकता था, **णिस्संकिए** - निःशंकित-शंका रहित, **णिक्कंखिए** - निःकांक्षित-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्य दर्शनों की आकांक्षा रहित, **णिव्वितिगिच्छे** - निर्विचिकित्सक-धर्म क्रियाओं के फल में संदेह रहित, **लद्धट्ठे** - जीवादि तत्त्वों के अर्थ को प्राप्त किया, **गहियट्ठे** - अर्थ को जाना, **पुच्छियट्ठे** - संशय को पूछा, **विणिच्छियट्ठे** - पूछ कर निर्णय किया, **अहिगयट्ठे** - तात्पर्य जानकर हृदय में धारण किया, **अट्ठिमिंज पेम्माणुरागरत्ते** - हड्डिया और मज्जा निर्ग्रन्थ प्रवचन के अनुराग से अनुरक्त, **ऊसियफलिहे** - उसके किवाड़ों का भोगल अलग रहता था, **अवंगुयदुवारे** - दान देने के लिए उसके घर के द्वार सदा खुले रहते थे, **चियत्तंतेउरघरप्पवेसे** - किसी के घर में अथवा राजा के अन्तःपुर में भी चला जाता तो उस पर किसी का अविश्वास नहीं किया जाता, **बहहिं सीलव्वय-गुणवेरमण-पच्चक्खाणपोसहोववासेहिं** - बहुत से शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण व्रत, पोरिसी आदि पच्चक्खाण और पौषध उपवास करता, **चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ पुण्णिमासिणीसु** - चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा को, **पडिपुण्णं पोसहं** - प्रतिपूर्ण पौषध का, **सम्मं अणुपालेमाणे** - सम्यक् प्रकार से पालन करता हुआ।

भावार्थ - वह सुमुख गाथापति बहुत सौ वर्षों तक जीवित रह कर अंत में यथासमय काल करके इसी हस्तिशीर्ष नगर में अदीनशत्रु राजा के यहाँ धारिणी रानी की कुक्षि में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ है। जब यह गर्भ में आया तब उस धारिणी रानी ने शय्या पर अर्द्धनिद्रित अवस्था में जागने के समय पहले कहे अनुसार सिंह को स्वप्न में देखा। शेष पूर्व के समान समझना यावत् ऊंचे महल में रहने लगा। इस प्रकार हे गौतम! सुबाहुकुमार को यह इस प्रकार की विशाल मनुष्य ऋद्धि मिली है, प्राप्त हुई है, उसके समुख आई है।

गौतम स्वामी ने पूछा कि - 'हे भगवन्! क्या सुबाहुकुमार आपके पास मुण्डित होकर घर से निकल कर दीक्षा लेने में समर्थ है?'

भगवान् ने फरमाया कि - हाँ, दीक्षा लेने में समर्थ है।

तदनन्तर भगवान् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किया, वंदना नमस्कार करके संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए आत्म चिंतन में तल्लीन रहने लगे।

इसके बाद किसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हस्तिशीर्ष नगर के पुष्पकरण्डक उद्यान के कृतवनमालप्रिय यक्ष के यक्षायतन से निकले, निकल कर बाहर के देशों में विचरने लगे। तदनन्तर वह सुबाहुकुमार श्रावक हुआ। उसने जीव और अजीव के स्वरूप को भली प्रकार जान लिया। पुण्य और पाप को जाना। आस्रव, संवर, निर्जरा, क्रियाधिकरण, बंध और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोक्ष के स्वरूप को जानने में कुशल हुआ। वह देव, असुरकुमार, नागकुमार सुवर्णकुमार, यक्ष, राक्षस, किन्नर किंपुरुष, गरुड़, गंधर्व, महोरग आदि देवों के समूह की सहायता न लेने वाला था। कोई भी उसको निर्ग्रन्थ प्रवचन से विचलित नहीं कर सकता था। उसको निर्ग्रन्थ प्रवचनों में शंका नहीं थी, अन्य दर्शनों में आकांक्षा नहीं थी, धार्मिक क्रियाओं के फल में उसे संदेह नहीं था। उसने जीवादि तत्त्वों के अर्थ को प्राप्त किया था, उनके अर्थ को जाना था, उनमें उत्पन्न संशय को पूछा था, पूछ कर निर्णय किया था और उनका तात्पर्य जान कर हृदय में धारण किया था। उसकी हड्डियाँ और मज्जा निर्ग्रन्थ प्रवचन के अनुराग से अनुरक्त थी। हे आयुष्मन्! वह सुबाहुकुमार ऐसा विचार किया करता था कि यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ (सार) है, यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही परमार्थ है और शेष सब अनर्थ है। उसके किवाड़ों का भोगल अलग रहता था। दान देने के लिए उसके घर के द्वार सदा खुले रहते थे। यदि वह किसी के घर में जाता और यहाँ तक कि वह राजा के अन्तःपुर में भी चला जाता तो भी उस पर किसी प्रकार का अविश्वास नहीं किया जाता था। वह शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण व्रत, पोरिसी आदि पच्चक्खाण और पौषध उपवास करता था। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा इन तिथियों के दिन वह प्रतिपूर्ण पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन करता था। श्रमण निर्ग्रन्थों को प्रासुक और एषणीय अशन, पान, खादिम, स्वादिम यह चारों प्रकार का आहार तथा वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण और पडिहारी रूप से बाजोठ, पाटिया, शय्या, संथारा तथा औषध और भेषज आदि से मुनियों को प्रतिलाभित करता हुआ अर्थात् मुनियों को उपरोक्त चौदह प्रकार का दान देता हुआ और स्वीकार किये हुए तप नियम आदि धार्मिक क्रियाओं से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ आत्म-चिंतन में तल्लीन रहता था।

विवेचन - वह सुमुख गाथापति बहुत वर्षों तक जीवित रह कर यथासमय काल करके इस हस्तिशीर्ष नगर में अदीनशत्रु राजा के यहाँ धारिणी रानी कि कुक्षि से पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ। इस प्रकार सुबाहुकुमार को यह मनुष्य ऋद्धि प्राप्त हुई। गौतम स्वामी द्वारा पूछने पर भगवान् ने फरमाया कि सुबाहुकुमार दीक्षा लेने में समर्थ है।

तत्पश्चात् सुबाहुकुमार श्रावक बन गया। उसे जीवादि नव तत्त्वों का भली प्रकार ज्ञान था। उसने उनके अर्थों को जान कर हृदय में धारण किया था। निर्ग्रन्थ प्रवचनों में वह दृढ़ था। उन में उसको शंका, कांक्षा आदि नहीं थी। देवता भी उसको श्रद्धा से विचलित नहीं कर सकते थे। वह सब का विश्वास पात्र था। वह श्रावक के बारह व्रतों का सम्यक् प्रकार से पालन करता हुआ आत्मचिंतन में तल्लीन रहता था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुबाहुकुमार की धर्म जागरणा

तएणं से सुबाहुकुमारे अण्णया कयाइं चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ-पुण्णिमासिणीसु जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता पोसहसालं पमज्जइ, पमज्जित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता दब्भसंथारं संथरेइ, संथरित्ता दब्भसंथारं दुरुहइ, दुरुहित्ता अट्ठमभत्तं पगिण्हइ, पगिण्हित्ता पोसहसालाए पोसहिए अट्ठमभत्तिए पोसहं पडिजागरेमाणे विहरइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स पुव्वरत्तावरत्त-कालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए मणोगए संकप्पे-धण्णा णं ते गामागरणगर-खेडकब्बड-दोणमुह-पट्टणासम-णिगम- संवाहसण्णिवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे विहरइ। धण्णा णं ते राईसर तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भसेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहप्पभिइओ जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयंति। धण्णा णं ते राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहप्पभिइओ जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वयाइं जाव गिहिधम्मं पडिवज्जंति। धण्णा णं ते राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहप्पभिइओ जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सुणेंति। तं जइ णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे इहमागच्छेज्जा जाव विहरिज्जा तए णं अहं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा॥२१६॥

कठिन शब्दार्थ - **पोसहसाला** - पौषधशाला, **पमज्जइ** - प्रमार्जित किया, **उच्चारपासवणभूमिं** - शौच और लघुशंका करने के स्थान का, **पडिलेहेइ** - प्रतिलेखन किया, **दब्भसंथारं** - डाभ का संथारा, **अट्ठमभत्तं** - अष्टम भक्त-तेले का तप, **गामागर-णगर-खेड-कब्बड-दोणमुह-पट्टणासम-णिगम-संवाह-सण्णिवेसा** - ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, निगम, संबाह, सन्निवेश, **धण्णा** - धन्य हैं, **राईसर-तलवर-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइसत्थवाहप्पभिइओ - राजा, राजकुमार, तलवर (कोटवाल), माडंबिक, कौटुम्बिक, इभ्य, सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदि।

भावार्थ - किसी समय चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा के दिन वह सुबाहुकुमार पौषधशाला में आया। वहां आकर पौषधशाला को पूंजा और शौच और लघुशंका के स्थान को अच्छी तरह से देखा। फिर डाभ का संथारा बिछा कर उस पर बैठा, बैठ कर तेले का तप अंगीकार किया। पौषध सहित तेला अंगीकार करके धर्मजागरणा करने लगा। धर्मजागरणा करते हुए उस सुबाहुकुमार को अर्द्ध रात्रि के समय ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि वे ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, निगम, संबाह सन्निवेश आदि धन्य हैं जहां पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विचरते हैं। वे राजा, राजकुमार, तलवर, मांडबिक, कौटुम्बिक, इभ्य, सेठ, सेनापति सार्थवाह धन्य हैं जो श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्मोपदेश सुनते हैं। धर्मोपदेश सुन कर उनमें से कोई तो उनके पास दीक्षा अंगीकार करते हैं और कोई श्रावक धर्म अंगीकार करते हैं इसलिये यदि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पूर्वानुपूर्वी से चलते हुए और ग्रामानुग्राम विहार करते हुए यहां पधारें तो मैं उनके पास मुण्डित होकर दीक्षा अंगीकार करूँ।

भगवान् की देशना

तएणं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स कुमारस्स इमं एयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे णयरे जेणेव पुप्फकरंडउज्जाणे वण्णओ कयवणमालप्पियस्स जक्खस्स जक्खाययणे वण्णओ तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तहेव परिसा राया णिग्गया। तएणं से सुबाहुकुमारे तं महया जहा पढमं तहा णिग्गओ। धम्ममाइक्खइ तं जहा-सव्वओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं, सव्वओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वओ परिग्गहाओ वेरमणं। तएणं सा महतिमहालिया मणूस परिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा तहेव परिसा राया पडिगया।।२१७।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **एयारूवं** - इस प्रकार के, **अज्झत्थियं** - आध्यात्मिक विचारों को, **णिग्गओ** - निकला, **धम्ममाइक्खइ** - धर्मोपदेश दिया, **सव्वओ** - सब प्रकार के, **पाणाइवायाओ**- प्राणातिपात से, **वेरमणं** - निवृत्त होना, **मुसावायाओ** - मृषावाद से, **अदिण्णादाणाओ** - अदत्तादान यानी चोरी से, **मेहुणाओ** - मैथुन से, **परिग्गहाओ** - परिग्रह से, **महतिमहालिया मणूसपरिसा** - बहुत बड़ा जन समुदाय।

भावार्थ - तदनन्तर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुबाहुकुमार के इस प्रकार के उपरोक्त आध्यात्मिक विचारों को जान कर पूर्वानुपूर्वी से चलते हुए ग्रामानुग्राम विहार करते हुए जहां पर हस्तिशीर्ष नगर के पुष्पकरण्डक उद्यान में कृतवनमालप्रिय यक्ष का यक्षायतन है वहां पर पधारे। वहां पधार कर यथोचित अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप पूर्वक आत्मचिंतन करते हुए विचरने लगे। भगवान् का आगमन सुन कर नगर निवासी लोग और राजा वन्दना करने के लिए निकले। सुबाहुकुमार भी उस महान् कोलाहल को सुन कर पहले की तरह वन्दना करने के लिये निकला। भगवान् ने धर्मोपदेश फरमाया, यथा - सर्व प्राणातिपात से निवृत्त होना, सर्व मृषावाद से निवृत्त होना, सर्व अदत्तादान से निवृत्त होना, सर्व मैथुन से निवृत्त होना, सर्व परिग्रह से निवृत्त होना, ये पांच महाव्रत हैं। तदनन्तर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास में धर्म सुन कर नगरनिवासी लोग और राजा वापिस लौट गये।

प्रव्रज्या का संकल्प

तएणं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी - सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं एवं पत्तियामि णं रोएमि णं अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! इच्छियमेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते! इच्छिय पडिच्छियमेयं भंते! से जहेव तं तुब्भे वयह। जं णवरं देवाणुप्पिया अम्मापियरो आपुच्छामि। तओ पच्छा देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामि। अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह॥२१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्मोपदेश सुन कर और हृदय में धारण करके सुबाहुकुमार अत्यंत प्रसन्न हुआ। फिर उसने प्रभु को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके वंदन नमस्कार किया और निवेदन किया कि हे भगवन्! मैं निर्ग्रंथ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूं, प्रतीति करता हूं और रुचि रखता हूँ। मैं निर्ग्रंथ प्रवचनों को स्वीकार करता हूं। हे भगवन्! निर्ग्रंथ प्रवचन ये ही हैं, ये इसी प्रकार हैं। ये तथ्य-सत्य हैं अन्यथा नहीं हैं। हे भगवन्! ये ही इष्ट हैं, अभीष्ट हैं एवं बारम्बार इष्ट अभीष्ट हैं। जिस प्रकार आप फरमाते हैं वैसे ही हैं, अन्यथा नहीं है किंतु हे देवानुप्रिय! मैं अपने माता पिता से पूछने के बाद आपके पास मुण्डित होकर, गृहस्थवास को त्याग कर मुनि दीक्षा अंगीकार करूंगा। भगवान् ने फरमाया कि-हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार सुख की प्राप्ति हो वैसा करो किंतु धर्म कार्य में विलम्ब मत करो।

माता-पिता के समक्ष निवेदन

तएणं से सुबाहुकुमारे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटं आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरुहइ, दुरुहित्ता महया भडचडगरपहकरेणं हत्थिसीसस्स णयरस्स मज्झं मज्झेणं जेणामेव सए भवणे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटाओ आसरहाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणामेव अम्मापियरो तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अम्मापिऊणं पायवंदणं करेइ, करित्ता एवं वयासी - एवं खलु अम्मयाओ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, से वि य धम्मे मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए। तएणं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुकुमारं एवं वयासी- धण्णो सि णं तुमं जाया! संपुण्णो सि कयत्थो सि कयलक्खणो सि तुमं जाया! जे णं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, से वि य ते धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए।

तएणं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरो दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी - एवं खलु अम्मयाओ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, से वि य धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए। तं इच्छामि णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। तए णं धारिणी देवी तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुण्णं अमणामं अस्सुयपुव्वं फरुसं गिरं सोच्चा णिसम्म इमेणं एयारूवेणं मणोमाणसिएणं महया पुत्तदुक्खेणं अभिभूया समाणी सेयागयरोमकूवपगलंत विलीणगाया सोयभर-पवेवियंगी णित्तेया दिणविमणवयणा करयलमलियव्व-कमलमाला तक्खणओ लुग्गदुब्बलसरीरा लावण्णसुण्णणिच्छायगयसिरीया पसिढिलभूसण-पडंत-खुम्मिय-संचुण्णिय धवलवलयपब्भट्ठ-उत्तरिज्जा सूमाल-विकिण्णकेसहत्था मुच्छावसणट्ठचेयगरुई परसुणियत्तव्व-चंपगलया णिव्वत्तमहव्व-इंदलट्ठी विमुक्कसंधी बंधणा कोट्टिमतलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति पडिया॥२१६॥

कठिन शब्दार्थ - धम्मे - धर्म, **णिसंते** - सुना है, **इच्छिए** - इष्ट-इच्छा करता हूँ, **पडिच्छिए**- अभिष्ट-बार-बार इच्छा करता हूँ, **अभिरुइए** - मुझे रुचता है, **संपुण्णोसि**- पुण्यवान् हो, **कयत्थोसि**- कृतार्थ हो, **कयलक्खणो वि** - शुभ लक्षण वाले हो, **अणिट्ठं** - अनिष्ट, **अकंतं** - अकांतकारी, **अप्पियं** - अप्रियकारी, **अमणुण्णं** - अमनोज्ञ, **अमणामं** - असुन्दर, **अस्सुयपुव्वं** - अश्रुतपूर्व, **फरुसं** - कठोर, **गिरं** - वचन को, **मणोमाणसिएणं** - मानसिक शोक से, **सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगाया** - रोम-रोम से पसीना निकलने से सारा शरीर भीग गया, **सोयभरपवेवियंगी** - शोक से शरीर थर-थर कांपने लगा, **णित्तेया** - निस्तेज, **करयलमलियव्वकमलमाला** - हाथ से मसलने से मुरझाई हुई कमल की माला के समान, **तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरा** - तत्क्षण उसका शरीर दुर्बल और रुग्ण हो गया, **लावण्ण-सुवण्ण णिच्छायगयसिरीया** - शरीर लावण्य शून्य हो गया और शरीर की शोभा नष्ट हो गई, **पसिढिल भूसण पडंत खुम्मिय संचुण्णिय धवलवलय पब्भट्ठ उत्तरिज्जा** - शरीर दुर्बल होने से आभूषण ढीले हो गये, सफेद चूड़ियाँ धरती पर जा गिरी और टूट कर चूर चूर हो गयी, ओढ़ने का वस्त्र शिर से दूर हो गया, **सूमाल विकिण्ण केसहत्था** - शिर के कोमल केश इधर-उधर बिखर गये, **मुच्छावसणट्ठचेयगरुई** - मूर्च्छा आने से चेतना नष्ट हो गई, **परसुणियत्तव्वचंपगलया** - परशु-कुल्हाड़ी से काटी हुई चम्पक बेल की तरह मुरझा गई, **णिव्वत्तमहव्वइंदलट्ठी** - उत्सव समाप्त होने पर इन्द्र स्तम्भ के समान शोभा रहित हो गई,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विमुक्क संधि बंधणा - शरीर की सब संधियां ढीली पड़ गई, **कोट्टिमतलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति पडिगया** - सारा शरीर धड़ाम से धरती पर गिर पड़ा।

भावार्थ - इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार करके सुबाहुकुमार अश्वरथ पर सवार होकर अपने महल में चला गया। वहाँ जाकर अपने माता-पिता को नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगा कि हे माता-पिताओ! मैंने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्मोपदेश सुना है। वह धर्म मुझे बड़ा रुचिकर हुआ है। उसकी मैं बार-बार इच्छा करता हूँ।

सुबाहुकुमार के उपरोक्त कथन को सुन कर उसके माता-पिता ने कहा कि हे पुत्र! तुम धन्य हो, पुण्यवान् हो और कृतार्थ हो तुम शुभ लक्षण वाले हो क्योंकि तुमने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्म श्रवण किया है और वह धर्म तुम्हें इष्ट अभीष्ट और रुचिकर हुआ है। इसके पश्चात् सुबाहुकुमार ने दो तीन बार कहा कि हे माता-पिताओ! मैंने भगवान् के पास धर्म श्रवण किया है और वह धर्म मुझे इष्ट, अभीष्ट एवं रुचिकर हुआ है इसलिए मैं आपकी आज्ञा लेकर भगवान् के पास मुंडित होकर गृहस्थवास से निकल कर मुनि दीक्षा लेना चाहता हूँ।

तदनन्तर धारिणी रानी इन अनिष्ट, अकांतकारी अप्रियकारी, अमनोज्ञ, असुंदर, अश्रुतपूर्व (पहले कभी न सुने हुए) और कठोर वचन सुन कर और हृदय में धारण करके इस प्रकार के महान् पुत्र के मानसिक शोक से महा दुःखी हुई। रोम-रोम से पसीना निकलने लगा जिससे सारा शरीर भीग गया। शोक से शरीर थर-थर कापने लगा। चेहरा निस्तेज यानी फीका पड़ गया। मुख दीन और म्लान हो गया अथवा दीन और बेसुध के समान वचन बोलने लगी। हाथ से मसलने से मुरझाई हुई कमल की माला के समान वह मुरझा गई। तत्क्षण ही उसका शरीर दुर्बल और रुग्ण हो गया। उसका शरीर लावण्य शून्य हो गया और शरीर की शोभा नष्ट हो गई। शरीर दुर्बल होने से आभूषण ढीले हो गये। सफेद चूड़ियाँ धरती पर जा गिरी और टूट कर चूर चूर हो गई। ओढ़ने का वस्त्र शिर से दूर हो गया। शिर के कोमल केश इधर-उधर बिखर गये। मूर्च्छा आने से चेतना नष्ट हो गई। परशु-कुल्हाड़ी से काटी हुई चम्पकवेल की तरह मुरझा गई। उत्सव समाप्त होने पर इन्द्र स्तंभ के समान शोभा रहित हो गई। उसके शरीर की सब संधियाँ ढीली पड़ गई। उसका सारा शरीर धड़ाम से धरती पर गिर पड़ा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माता-पिता और पुत्र संवाद

तएणं सा धारिणीदेवी ससंभमोववत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गय सीयलजल विमलधाराए परिसिंचमाणा णिव्वावियगायलट्ठी उक्खेवगतालविंट-वीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतोउरपरियणेणं आसासिया समाणी मुत्तावलिसण्णिगास पवडंत अंसुधाराहिं सिंचमाणी पओहरे, कलुणविमणदीणा रोयमाणी कंदमाणी तिप्पमाणी सोयमाणी विलवमाणी सुबाहुकुमारं एवं वयासी-तुम्हंसि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते, इट्ठे, कंते, पिए मणुण्णे मणामे थिज्जे वेसासिए सम्मए बहुमए अणुमए भण्डकरंडगसमाणे रयणे रयणभूए जीवियउस्सासए हिययाणंदजणणे उंबरपुप्फं व दुल्लहे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए। णो खलु जाया! अम्हे इच्छामो खणमवि विप्पओगं सहित्तए, तं भुंजाहि ताव जाया। विउले माणुस्सए, कामभोगे जाव ताव वयं जीवामो। तओ पच्छा अम्हेहिं कालगएहिं परिणयवए वड्ढिय कुलवंसतंतुकज्जम्मि णिरावयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्ससि॥२२०॥

कठिन शब्दार्थ - **ससंभमोववत्तियाए** - व्याकुल चित्त हो कर धरती पर गिर पड़ी, **अंतोउरपरियणेणं** - अन्तःपुर परिवार ने, **कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलजलविमलधाराए**- सोने की झारी के मुख से निकलती हुई निर्मल शीतल जल की धारा से, **णिव्वावियगायलट्ठी**- शरीर को ठंडा किया, **उक्खेवगतालविंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं** - बांस आदि के पत्ते की डंडी वाले तथा तालवृक्ष के पत्तों के पंखे से पानी की बूंदों सहित हवा करके, **आसासिया समाणी** - सचेत किया, **मुत्तावलिसण्णिगासपवडंत अंसुधाराहिं** - मोतियों की पंक्ति के समान निरन्तर गिरती हुई आसुंओं की धारा से, **कलुणविमणदीणा** - दया पात्र उदास और दीन होती हुई, **रोयमाणी**- रोती हुई, **कंदमाणी** - आक्रन्दन करती हुई, **तिप्पमाणी** - मुख से लार पटका कर रोती हुई, **सोयमाणी** - शोक करती हुई, **विलवमाणी** - विलाप करती हुई, **थिज्जे** - धीरज बंधाने वाले, **वेसासिए** - विश्वास पात्र, **सम्मए** - सम्मत-मानने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योग्य, **बहुमए** - बहुमत-बहुत मानने योग्य, **अणुमए** - अनुमत-कार्य होने के बाद भी मानने योग्य, **भंडकरंडगसमाणे** - आभूषणों के पिटारे के समान, **जीवियउस्सासए** - जीवन के श्वास समान, **हिययाणंदजणणे** - हृदय को आनंद देने वाले, **उंबरपुप्फं व दुल्लहे सवणयाए किमंग पुणपासणयाए** - उम्बरवृक्ष के फूल के समान देखना तो दूर रहा, तुम्हारा नाम सुनना भी दुर्लभ हो जायगा, **अम्हे** - हम, **जाया** - हे पुत्र!, **विप्पओगं** - वियोग, **खणमंवि**- एक क्षण भर भी, **परिणयवए** - परिणतवय-जब तुम्हारी अवस्था परिपक्व हो जाय, **वड्डियकुलवंसतंतुकज्जम्मि** - कुल की वृद्धि करने वाली संतान हो जाय, **णिरावयक्खे**- सब प्रयोजन सिद्ध हो जाय, **पव्वइस्ससि** - प्रव्रजित हो जाना।

भावार्थ - धारिणी रानी की यह अवस्था देख कर दासियों ने शीघ्र ही उसके शरीर पर ठंडे जल के छींटे दिये और वे पानी से भीगे हुए पंखे से हवा करने लगी। थोड़ी देर बाद जब धारिणी रानी की मूर्च्छा दूर होकर वह सचेत हुई तब वह दया पात्र, उदास और दीन होती हुई रोती हुई एवं विलाप करती हुई सुबाहुकुमार से इस प्रकार कहने लगी-'हे पुत्र! तू हमारे इकलौते पुत्र हो। तुम हमें बहुत ही इष्ट कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मनोरम, धीरज बंधाने वाले विश्वास पात्र, सम्मत-मानने योग्य बहुत मानने योग्य, कार्य होने के बाद भी मानने योग्य आभूषणों के पिटारे के समान और मनुष्य जाति में रत्न के समान हो। तुम मेरे जीवन के श्वास के समान हो, हृदय को आनंद देने वाले हो। उम्बर वृक्ष के फूल के समान तुम्हारे सरीखे पुत्रों को देखना तो दूर रहा किन्तु नाम सुनना भी कठिन है। हे पुत्र! हम तेरा वियोग एक क्षण भर भी सहन नहीं कर सकते हैं। इसलिये हे पुत्र! जब तक हम जीवित हैं, तब तक तुम गृहस्थावास में रह कर मनुष्य संबंधी कामभोग भोगों। हमारे मर जाने पर जब तुम्हारे कुल की वृद्धि करने वाले पुत्र पौत्र आदि हो जाय और तुम्हारी अवस्था भी परिपक्व हो जाय और तुम्हारे सब प्रयोजन सिद्ध हो जाय तब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा धारण कर लेना।

तए णं से सुबाहु कुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरो एवं वयासी-तहेव णं तं अम्मयाओ जहेव णं तुम्हे ममं एवं वयह "तुमं सि णं जाया! अम्हे एगे पुत्ते तं चेव जाव णिरावयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससिं।" एवं खलु अम्मयाओ माणुस्सए भवे अधुवे अणियए असासए वसणसय उवद्दवाभिभूए विज्जुयाचंचले अणिच्चे जलबुब्बुयसमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुसग्गजलबिंदुसण्णिभे संज्झब्भरागसरिसे सुविणदंसणोवमे सडणपडण-विद्धंसणधम्मे पच्छापुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जे। से के णं जाणंति अम्मयाओ! के पुव्विं गमणाए के पच्छा गमणाए तं इच्छामि णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए।२२१।

कठिन शब्दार्थ - **अधुवे** - अध्रुव-सदा टिकने वाला नहीं है, **अणियए** - अनियत, **असासए** - अशाश्वत-एक ही क्षण में नष्ट हो सकता है, **वसणसयउवद्दवाभिभूए** - सैकड़ों दुःख और उपद्रवों से भरा हुआ है, **विज्जुयाचंचले** - बिजली के समान चंचल है, **अणिच्चे**-अनित्य, **जलबुब्बुयसमाणे** - पानी के बुलबुले के समान क्षणिक, **कुसग्ग जलबिंदुसण्णिभे** - कुश के अग्रभाग पर पड़ी हुई पानी की बूंद के समान क्षणिक, **संज्झब्भरागसमाणे** - संध्या के समय की लालिमा के समान क्षणिक, **सुविणदंसणोवमे** - स्वप्न दर्शन के समान क्षणिक, **सडणपडणविद्धंसणधम्मे** - सड़ना, गलना और नष्ट होना ही जिसका धर्म (स्वभाव) है, **पच्छापुरं** - पहले या पीछे—कभी न कभी, **अवस्सविप्पजहणिज्जे** - इस शरीर को अवश्य छोड़ना पड़ेगा, **के** - कौन?

भावार्थ - तदनन्तर माता-पिता के इस प्रकार कहने पर वह सुबाहुकुमार माता-पिता के इस प्रकार कहने लगा कि हे माता-पिताओ! आपने मुझे जो यह कहा कि "तुम हमारे इकलौते पुत्र हो इसलिए हमारे मर जाने के बाद सब प्रयोजन साध कर फिर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा ले लेना" सो ठीक है किन्तु हे माता पिताओ! यह मनुष्य शरीर अध्रुव, अनित्य और अशाश्वत है। इसमें सैकड़ों दुःख भरे हुए हैं। यह बिजली की चमक के समान, जल के बुलबुलों के समान, डाभ पर पड़ी हुई पानी की बूंदे के समान, संध्या की लालिमा के समान और स्वप्न दर्शन के समान क्षणिक है। सड़ना, गलना और नष्ट होना ही इस शरीर का स्वभाव है। पहले या पीछे—कभी न कभी इसे अवश्य छोड़ना पडेगा किन्तु हे माता-पिताओ! यह कोई नहीं जानता कि पहले कौन मरेगा और पीछे कौन मरेगा? इसलिए आपकी आज्ञा लेकर मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।

तए णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी-इमाओ ते जाया! सरिसियाओ सरित्तयाओ सरिव्वयाओ सरिसलावण्णरूवजोव्वणगुणोववेयाओ सरिसेहिंतो रायकुलेहिंतो आणिल्लियाओ भारियाओ तं भुंजाहि णं जाया। एयाहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे? तओ पच्छा भुत्तभोगे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि॥२२२॥

कठिन शब्दार्थ - **सरिसियाओ** - सरीखी, **सरित्तयाओ** - समान त्वचा वाली, **सरिव्वयाओ**- समान उम्र वाली, **सरिसलावण्णरूवजोव्वण गुणोववेयाओ** - समान लावण्य, रूप, यौवन और गुणों वाली, **सरिसेहिंतो रायकुलेहिंतो आणिल्लियाओ** - अपने समान राजकुलों से लाई हुई।

भावार्थ - तदनन्तर सुबाहुकुमार के माता-पिता उससे कहने लगे कि हे पुत्र! तेरे समान त्वचा, उम्र, रूप, लावण्य, यौवन और गुणों वाली अपने समान राजकुलों से लाई हुई ये तेरी पांच सौ पत्नियाँ हैं इनके साथ मनुष्य संबंधी विपुल कामभोग भोगो। फिर वृद्धावस्था आने पर भुक्त भोगी हो कर तुम श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा ले लेना।

तए णं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरं एवं वयासी-''तहेव णं अम्मयाओ! जण्णं तुब्भे ममं एवं वयए सरिसियाओ जाव समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि'' एवं खलु अम्मयाओ! माणुस्सगा कामभोगा असुई असासया वंतासवा पित्तासवा खेलासवा सुक्कासवा सोणियासवा दुरुस्सासणीसासा दुरुयमुत्त-पुरिस-पूयबहुपडिपण्णा उच्चार-पासवणखेलजल्ल- सिंघाणगवंतपित्त-सुक्क-सोणियसंभवा अधुवा अणियया असासया सडणपडण-विद्धंसणधम्मा पच्छापुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जा। से के णं अम्मयाओ! जाणंति, के पुव्विं गमणाए के पच्छा गमणाए तं इच्छामि णं अम्मयाओ जाव पव्वइत्तए।२२३।

कठिन शब्दार्थ - **वंतासवा** - वमन उत्पन्न होता है, **पित्तासवा** - पित्त उत्पन्न होते हैं, **खेलासवा** - कफ निकलता है, **सुक्कासवा** - शुक्र यानी वीर्य निकलता है, **सोणियासवा** - खून निकलता है, **दुरुस्सासणीसासा** - खराब श्वासउच्छ्वास निकलते हैं, **दुरुयमुत्तपुरिस-पूयबहुपडिपुण्णा** - घृणित मल, मूत्र और पीव निकलते हैं, **उच्चारपासवणखेल जल्लसिंघाणगवंतपित्तसुक्कसोणियसंभवा** - मल, मूत्र, कफ, मैल, वमन, पित्त, शुक्र और खून ये सब घृणित पदार्थ उत्पन्न होते हैं।

भावार्थ - यह सुन कर सुबाहुकुमार अपने माता-पिता से कहने लगा कि हे माता-पिताओ! आपने भोग भोगने का कहा सो ये कामभोग और इनका आधारभूत यह शरीर अशुचि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूप हैं। इसमें मल, मूत्र, कफ, शुक्र, शोणित आदि महा घृणित पदार्थ भरे हुए हैं तथा शुक्र रज आदि घृणित पदार्थों से ही इसकी उत्पत्ति हुई है। यह शरीर और कामभोम सभी अनित्य, अशाश्वत और अध्रुव हैं। आगे या पीछे कभी न कभी इन्हें अवश्य छोड़ना पड़ेगा। यह कौन जानता है कि पति और पत्नी में से पहले कौन मरेगा और पीछे कौन मरेगा? अतः हे माता-पिताओ! आपकी आज्ञा लेकर मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।

तए णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी-इमे य ते जाया! अज्जय-पज्जय पिउपज्जयागए सुबहु हिरण्णे य सुवण्णे य कंसे य दूसे य मणिमोत्तिय-संखसिलप्पवालरत्तरयणसंतसार-सावतिज्जे य अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पगामं दाउं पगामं भोत्तुं पगामं परिभाएउं तं अणुहोहि त्ति ताव जाव जाया! विउलं माणुस्सगं इड्डिसक्कारसमुदयं तओ पच्छा अणुभूयकल्लाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि॥२२४॥

कठिन शब्दार्थ - अज्जयपज्जय-पिउपज्जयागए - दादा, परदादा और पिता के परदादा से चला आया, **कंसे** - कांसी, **दूसे** - वस्त्र, **मणिमोत्तिय-संखसिलप्पवालरत्तरयण-संतसारसावतिज्जे** - मणि, मोती, शंख, शिला (राजपट्ट) प्रवाल (मूंगा) लालरत्न आदि समस्त द्रव्य विद्यमान है, **आसत्तमाओ कुलवंसाओ** - सात पीढ़ी तक, **पगामं** - इच्छानुसार, **दाउं** - दान दिया जाय, **भोत्तुं** - भोगा जाय, **परिभाएउं** - बांटा जाय, **अलाहि अणुहोहित्ति**- तो भी समाप्त न हो, **इड्डिसक्कारसमुदयं** - ऋद्धि, सत्कार, सम्मान आदि का भोग करो, **अणुभूयकल्लाणे** - कल्याण यानी सुखों का उपभोग करके।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार के माता-पिता उसको इस प्रकार कहने लगे कि हे पुत्र! दादा परदादा आदि वंश परम्परा से चला आया यह सोना, चांदी, मणि, मोती, वस्त्र आदि द्रव्य इतना है कि सात पीढ़ी तक खूब दान दिया जाय, भोगा जाय और अपने कुटुम्बियों को बांटा जाय तो भी समाप्त न हो। इसलिए हे पुत्र! मनुष्य संबंधी यह विपुल ऋद्धि सम्पत्ति प्राप्त हुई है उसका उपभोग करो। सांसारिक सुखों का उपभोग करने के बाद फिर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा ले लेना।

तए णं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरं एवं वयासी-तहेव णं अम्मयाओ! जण्णं तुब्भे ममं एवं वयह-"इमे ते जाया! अज्जयपज्जय० जाव तओ पच्छा अणुभूय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्लाणे समणस्स भगवओ जाव पव्वइस्ससि।" एव खलु अम्मयाओ! हिरण्णे य सुवण्णे य जाव सावतिज्जे अग्गिसाहिए चोरसाहिए रायसाहिए दाइयसाहिए मच्चुसाहिए अग्गिसामण्णे जाव मच्चुसामण्णे सडणपडणविद्धंसण-धम्मे पच्छापुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जे से के णं अम्मयाओ जाणंति-के पुव्विं गमणाए के पच्छा गमणाए तं इच्छामि णं अम्मयाओ! जाव पव्वइत्तए॥२२५॥

कठिन शब्दार्थ - **अग्गिसाहिए** - अग्नि नष्ट कर सकती है, **चोरसाहिए** - चोर चुरा सकता है, **रायसाहिए** - राजा ले सकता है, **दाइयसाहिए** - भाई आदि हिस्सेदार बंटा सकते हैं, **मच्चुसाहिए** - मृत्यु होने पर छूट जाता है, **अग्गिसामण्णे** - अग्नि के लिए साधारण है, **मच्चुसामण्णे** - मृत्यु के लिए साधारण है।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार ने अपने माता-पिता से कहा कि - हे माता-पिताओ! आपने धन सम्पत्ति एवं सांसारिक सुखों को भोगने के लिए जो कहा है सो धन को अग्नि नष्ट कर सकती है, चोर चुरा सकता है, राजा ले सकता है और भाई आदि हिस्सेदार बंटा सकते हैं। सड़ना, गलना और नष्ट होना, यह इसका स्वभाव है। पहले या पीछे-कभी न कभी इसे अवश्य ही छोड़ना पड़ेगा। इस बात को भी कौन जानता है कि धन और उसका स्वामी इन दोनों में से पहले कौन नष्ट होगा और पीछे कौन नष्ट होगा? इसलिए हे माता-पिताओ! मैं आपकी आज्ञा लेकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।

तए णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो जाहे णो संचाएइ, सुबाहुकुमारं बहूहिं विसयाणुलोमाहिं आघवणाहि य पण्णवणाहि य सण्णवणाहि य विण्णवणाहि य आघवित्तए वा पण्णवित्तए वा सण्णवित्तए वा विण्णवित्तए वा ताहे विसयपडिकूलाहिं संजमभयउव्वेयकारियाहिं पण्णवणाहि य पण्णवेमाणा एवं वयासी-एस णं जाया! णिग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवलिए पडिपुण्णे णेयाउए संसुद्धे सल्लगत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे णिज्जाणमग्गे णिव्वाणमग्गे सव्वदुक्खपहीणमग्गे अहीव एगंतदिट्ठीए खुरो इव एगंतधाराए, लोहमया इव जवा चावेयव्वा वालुयाकवले इव णिस्साराए, गंगा इव महाणई पडिसोयगमणाए, महासमुद्दो इव भुयाहिं दुत्तरे, तिक्खं चंकमियव्वं, गरुयं लंबेयव्वं असिधारव्व

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संचरियव्वं, णो खलु कप्पइ जाया! समणाणं णिग्गंथाणं आहाकम्मिए वा उद्देसिए वा कीयगडे वा ठविए वा रइए वा दुब्भिक्खभत्ते वा कंतारभत्ते वा वद्दलियाभत्ते वा गिलाणभत्ते वा मूलभोयणे वा कंदभोयणे वा फलभोयणे वा बीयभोयणे वा हरियभोयणे वा भोत्तए वा, पायए वा। तुमं च णं जाया! सुहसमुचिए णो चेव णं दुहसमुचिए, णालं सीयं, णालं उण्हं, णालं खुहं, णालं पिवासं, णालं वाइयपित्तिय-सिंभिय-सण्णिवाइय विविहे रोगायंके उच्चावए गामकंटए बावीसं परीसहोवसग्गे उदिण्णे सम्मं अहियासित्तए भुंजाहि ताव जाया! माणुस्सए कामभोगे तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स जाव पव्वइस्ससि॥२२६॥

कठिन शब्दार्थ - **विसयाणुलोमाहिं** - विषय के अनुकूल, **आघवणाहि** - सामान्य वचनों से, **पण्णवणाहि** - विशेष वचनों से, **सण्णवणाहि** - संबोधन वचनों से, **विण्णवणाहि**- नम्र वचनों से, **आघवित्तए** - सामान्य रूप से, **पण्णवित्तए** - विशेष रूप से, **सण्णवित्तए** - संबोधन रूप से, **विण्णवित्तए** - नम्र रूप से, **विसयपडिकूलाहिं** - विषयों के प्रतिकूल, **संजमभय उव्वेयकारियाहिं** - संयम से भय और उद्वेग पैदा करने वाले, **पण्णवणाहि पण्णवेमाणा** - वचनों का प्रयोग करते हुए, **पडिपुण्णे** - गुणों से परिपूर्ण, **णेयाउए** - न्याय युक्त यानी अनेकान्तात्मक, **संसुद्धे** - शुद्ध, **सल्लगत्तणे** - तीन शल्यों से रहित, **सिद्धिमग्गे** - सिद्धि का मार्ग, **मुत्तिमग्गे** - मुक्ति का मार्ग, **णिज्जाणमग्गे** - निर्याण मार्ग यानी जन्म मरण के चक्र से निकलने का मार्ग, **णिव्वाणमग्गे** - निर्वाण का मार्ग, **सव्वदुक्खपहीणमग्गे** - सब दुःखों का नाश करने का उपाय, **अहीव एगंतदिट्ठीए**- सर्प के समान एकाग्र दृष्टि, **खुरो इव एगंतधाराए** - एक धार वाले छुरे के समान निर्ग्रन्थ मार्ग पर चलना कठिन है, **वालुयाकवले**- रेत के ग्रास के समान, **णिस्सारए** - स्वाद रहित, **पडिसोयगमणाए** - प्रतिस्रोत गमन-पूर के सामने जाना कठिन, **भुयाहिं दुत्तरे** - भुजाओ से तैरना कठिन, **चंकमियव्वं** - आक्रमण कठिन है, **आहाकम्मिए** - आधाकर्मी, **उद्देसिए** - औद्देशिक, **कीयगडे** - खरीदा हुआ, **ठविए** - स्थापित, **रइए** - रचित-नवीन बनाया हुआ, **दुब्भिक्खभत्ते** - दुर्भिक्ष भक्त-दुर्भिक्ष पीड़ित प्राणियों के लिए बनाया हुआ, **कंतारभत्ते** - कान्तारभक्त-जंगल में दान देने के लिए बनाया हुआ, **वद्दलियाभत्ते** - पानी बरसने के समय अनाथ आदि के लिए बनाया हुआ, **गिलाणभत्ते**- ग्लान भक्त-रोगी के लिए बनाया हुआ आहार आदि, **मूलभोयणे** - मूल-जमीकंद का भोजन,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुहसमुचिए - सुख में बढ़े हो, **णोदुहसमुचिए** - दुःख नहीं देखा है, **वाइयपित्तियसिंभिय सण्णिवाइय विविहे रोगायंके** - वात, पित्त, कफ संबंधी विविध रोग और सन्निपात आदि आतंक, **गामकंटए** - इन्द्रियों के प्रतिकूल, **उच्चावए** - बड़े छोटे रोग, **उदिण्णे** - प्राप्त होने पर, **सम्मं** - समभाव पूर्वक, **अहियासित्तए** - सहन करना।

भावार्थ - जब सुबाहुकुमार के माता-पिता विषयों के अनुकूल वचनों द्वारा यानी विषयों के प्रलोभन द्वारा सुबाहुकुमार को अपने ध्येय से विचलित न कर सके तब वे विषयों के प्रतिकूल वचनों द्वारा तथा संयम में आने वाले कष्टों को बताते हुए इस प्रकार कहने लगे कि-हे पुत्र! ये निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य, प्रधान, सर्वज्ञ भाषित, अनेकान्तात्मक शुद्ध, माया, निदान और मिथ्यात्व इन तीन शल्यों से रहित, सिद्धि का मार्ग, मुक्ति का मार्ग, निर्याणमार्ग यानी जन्म मरण के चक्र से निकलने का मार्ग, निर्वाण का मार्ग और सब दुःखों का नाश करने का उपाय है। जिस प्रकार मार्ग में चलता हुआ सांप सामने एकाग्रदृष्टि रखता है उसी प्रकार निर्ग्रन्थ प्रवचनों का पालन करने के लिए इनमें ही एकाग्र दृष्टि रखनी पड़ती है। ये छुरे की तरह एक धार वाले हैं क्योंकि निर्ग्रन्थ प्रवचनों का पालन करने में किसी प्रकार की छूट नहीं है, जिस प्रकार लोह के चने चबाना, बालू रेत के ग्रास को निगलना, गंगा नदी के पूर के सामने जाना, भुजाओं से तैर कर समुद्र को पार करना, तलवार की तीखी धार पर आक्रमण करना, पत्थर की भारी शिला को उठाना और तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलना, ये सब कार्य कठिन हैं उसी प्रकार संयम का पालन करना भी महाकठिन है क्योंकि निर्ग्रन्थ साधुओं को आधाकर्मी, औद्देशिक, उनके निमित्त खरीद कर लाया हुआ आहार आदि ग्रहण करने योग्य नहीं है। इसी प्रकार दीन अनाथों के लिए बनाया हुआ और दान शाला में मंगते भिखारियों को देने के लिए बनाया हुआ आहार भी निर्ग्रन्थ साधुओं को ग्रहण करना नहीं कल्पता है एवं कंद, मूल, फल, बीज आदि का सचित्त भोजन करना भी नहीं कल्पता है। सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास आदि बाईस परीषहों को समभाव पूर्वक सहन करना होता है। हे पुत्र! तेरा लालन पालन सुख में हुआ है। तूने कभी दुःख नहीं देखा है। इसलिए संयम में आने वाले कष्टों को तू सहन नहीं कर सकेगा। इसलिए हे पुत्र! अभी इस तरुण अवस्था में मनुष्य संबंधी कामभोगो को भोगो। वृद्धावस्था आने पर भुक्त भोगी होकर फिर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा ले लेना।

तए णं से सुबाहुकुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरं एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वयासी-तहेव णं तं अम्मयाओ! जण्णं तुब्भे ममं एवं वयह-''एस णं जाया! णिग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे पुणरवि तं चेव जाव तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि'' एवं खलु अम्मयाओ! णिग्गंथे पावयणे कीवाणं कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगणिप्पिवासाणं दुरणुचरे पाययजणस्स णो चेव णं धीरस्स णिच्छिय ववसियस्स एत्थ किं दुक्करं करणयाए तं इच्छामि णं अम्मयाओ। तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स जाव पव्वइत्तए॥२२७॥

कठिन शब्दार्थ - इहलोगपडिबद्धाणं - इस लोक संबंधी लालसाओं में फंसे हुए, **परलोगणिप्पिवासाणं** - परलोक के सुखों की परवाह न करने वाले, **कापुरिसाणं** - कापुरुष यानी नीच, **कीवाणं** - पुरुषार्थ हीन कायर पुरुषों के लिए, **दुरणुचरे** - पालन करना कठिन है, **पाययजणस्स** - मुझ सरीखे, **णिच्छियववसियस्स** - दृढ़ निश्चय वाले।

भावार्थ - सुबाहुकुमार के माता-पिता जब चारित्र पालन की कठिनता बता चुके तब सुबाहुकुमार अपने माता पिता से इस प्रकार कहने लगा कि हे माता-पिताओ! आपने चारित्र पालन की जो कठिनता बतलाई है सो इस लोक के सुखों की लालसाओं में फंसे हुए और परलोक के सुखों की परवाह न करने वाले कापुरुष एवं पुरुषार्थ हीन कायर पुरुषों के लिए चारित्र पालन करना कठिन है किन्तु मुझे सरीखे दृढ़ निश्चय वाले धैर्यवान् पुरुष के लिए चारित्र पालन करना क्या कठिन है? अर्थात् कुछ भी कठिन नहीं है। इसलिए आप मुझे आज्ञा दीजिये। आपकी आज्ञा ले कर मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।

एक दिवस का राज्य

तएणं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो जाहे णो संचाएइ बहूहिं विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि य आघवणाहि य पण्णवणाहि य सण्णवणाहि य विण्णवणाहि य आघवित्तए वा पण्णवित्तए वा सण्णवित्तए वा विण्णवित्तए वा, ताहे अकामए चेव सुबाहुकुमारं एवं वयासी-इच्छामो ताव जाया। एगदिवसमवि ते रायसिरिं पासित्तए। तएणं से सुबाहुकुमारे अम्मापियरमणुवत्तमाणे तुसिणीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संचिट्ठइ। तएणं से अदीणसत्तू राया कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सुबाहुस्स कुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह। तएणं ते कोडुंबिय पुरिसा जाव ते वि तहेव उवट्ठवेंति। तए णं से अदीणसत्तू राया बहूहिं गणणायगदंडणायगेहि य जाव संपरिवुडे सुबाहुकुमारं अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं एवं रुप्पमयाणं कलसाणं सुवण्णरुप्पमयाणं कलसाणं, मणिमयाणं कलसाणं, सुवण्णमणिमयाणं कलसाणं रुप्पमणिमयाणं कलसाणं, सुवण्णरुप्पमणिमयाणं कलसाणं, भोमेज्जाणं कलसाणं सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वपुप्फेहिं सव्वगंधेहिं सव्वमल्लेहिं सव्वोसहिहिं य सिद्धत्थएहि य सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं जाव दुंदुभिणिग्घोसणाइयरवेणं महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचिइ अभिसिंचित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी-जय जय णंदा! जय जय भद्दा! जय णंदा! भद्दं ते, अजियं जिणाहि जियं च पालियाहि, जियमज्झे वसाहि, अजियं जिणाहि सत्तुपक्खं जियं च पालेहिं मित्तपक्खं जाव भरहो इव मणुयाणं हत्थिसीसस्स णगरस्स अण्णेसिं च बहूणं गामागरणगर जाव सण्णिवेसाणं आहेवच्चं जाव विहराहि त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति॥२२८॥

कठिन शब्दार्थ - **अकामए** - निराश होकर, **एगदिवसमवि** - एक दिन के लिए भी, **अणुवत्तमाणे** - बात को मान कर, **महत्थं** - महान् कार्य में काम आने वाली, **महग्घं** - बहुमूल्य, **महरिहं** - महान् कार्य में काम आने वाली, **महग्घं** - बहुमूल्य, **महरिहं** - महान् पुरुषों के योग्य, **गणणायगदंडणायगेहिं** - गणनायक (सेनापति) और दण्डनायक (कोटवाल) आदि राज्य कर्मचारियों से, **अट्ठसएणं** - एक सौ आठ, **कलसाणं** - कलश, **सुवण्णरुप्पमणिमयाणं** - मणियों से जड़े हुए सोने चांदी के, **सव्वगंधेहिं** - सब प्रकार के सुगंधित पदार्थों से, **सव्वमल्लेहिं** - सब प्रकार की मालाओं से, **सव्वोसहिहिं** - सब प्रकार की औषधियों से, **सिद्धत्थएहिं** - सरसों आदि से, **सव्विड्ढीए** - समस्त ऋद्धियों से, **सव्वजुईए**- सब कांति युक्त पदार्थों से, **दुंदुभिणिग्घोसणाइयरवेणं** - दुंदुभि आदि वादिन्त्रों के गंभीर शब्दों से, **णंदा** - हे आनंद के देने वाले, **भद्दा** - हे कल्याण के करने वाले, **जिणाहि**- जीतो,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पालियाहि - भली भांति पालन करो, **जियमज्झेवसाहि** - कुलाचार को पालने वाले, कुटुम्बीजनों के बीच रहो, **सत्तुपक्खं** - शत्रुओं को, **मित्तपक्खं** - मित्र के समान।

भावार्थ - जब सुबाहुकुमार के माता-पिता विषयों के अनुकूल और प्रतिकूल अनेक प्रकार के वचनों से सुबाहुकुमार को अपने ध्येय से विचलित न कर सके तब निराश हो कर उन्होंने सुबाहुकुमार से कहा कि हे पुत्र! कम से कम एक दिन के लिए हम तुम्हें राज्य लक्ष्मी भोगते हुए राज्यसिंहासन पर बैठा हुआ देखना चाहते हैं। माता-पिता के उपरोक्त वचनों को सुन कर सुबाहुकुमार मौन रहा। **"मौनं सम्मति लक्षणं"** अर्थात् मौन रह जाना स्वीकृति का चिह्न है इस न्याय के अनुसार राजगद्दी के लिए सुबाहुकुमार की स्वीकृति समझ कर राजा अदीनशत्रु ने सेवकों को बुलाया। सेवकों को बुला कर उनसे कहा कि - महान् कार्यों में काम आने वाली, बहुमूल्य और महापुरुषों के योग्य राज्याभिषेक की सामग्री शीघ्र ही इकट्ठी करो। राजा की आज्ञा पाकर सेवकों ने तत्काल राजा की आज्ञानुसार सब सामग्री इकट्ठी कर दी। इसके बाद सेनापति, कोटवाल आदि समस्त राज्य कर्मचारियों से घिरे हुए राजा अदीनशत्रु ने १०८ सोने के, १०८ चांदी के, १०८ सोने चांदी के, १०८ मणियों के, १०८ मणियों से जड़े हुए सोने के, १०८ मणियों से जड़े हुए चांदी के, १०८ मणियों से जड़े हुए सोने चांदी के और १०८ मिट्टी के कलशों में भरे हुए सब प्रकार के जलों से, सब प्रकार की मिट्टी से, सब प्रकार के फूल, सुगंधित पदार्थ, माला, औषधि और सरसों आदि से तथा समस्त आभूषण आदि ऋद्धि से कांति युक्त पदार्थों से और सेना द्वारा दुंदुभि आदि वादिन्त्रों के गंभीर शब्दों से सुबाहुकुमार का राज्याभिषेक किया। फिर हाथ जोड़ कर सब लोग इस प्रकार कहने लगे कि हे आनंद के देने वाले! हे कल्याण के देने वाले! आपकी जय हो! जय हो! आप नहीं जीते हुए शत्रुओं को जीतो और जीते हुओं का मित्र के समान पालन करो। जिस प्रकार भरत चक्रवर्ती ने मनुष्यों का पालन किया था उसी प्रकार आप भी प्रजा का पालन करो। इस हस्तिशीर्ष नगर का तथा दूसरे बहुत से ग्राम, आकर, नगर यावत् सन्निवेशों का आधिपत्य करते हुए आनंद से रहो। इतना कह कर उन्होंने फिर जय जय शब्द किया।

संयमोपकरण की मांग

तए णं से सुबाहुकुमारे राया जाए महया जाव विहरइ। तएणं तस्स सुबाहुस्स रण्णो अम्मापियरो एवं वयासी-भण जाया! किं दलयामो किं पयच्छामो, किं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा ते हियइच्छिए सामत्थे? तए णं से सुबाहु राया अम्मापियरो एवं वयासी- इच्छामि णं अम्मयाओ! कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहगं च आणिउं कासवयं च सद्दावेउं। तए णं से अदीणसत्तू राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहगं च उवणेह, सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेह। तएणं ते कोडुंबिय पुरिसा अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ तुट्ठा सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं गहाय कुत्तियावणाओ दोहिं सयसहस्सेहिं रयहरणं पडिग्गहं च उवणेंति। सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेंति। तए णं से कासवए तेहिं कोडुंबिय पुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे जाव हियए ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं वत्थाइं मंगलाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकिय सरीरे जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं करयलमंजलिं कट्टु एवं वयासी-संदिसह णं देवाणुप्पिया! जं मए करणिज्जं ? तएणं से अदीणसत्तू राया कासवयं एवं वयासी-गच्छाहि णं तुमं देवाणुप्पिया! सुरभिणा गंधोदएणं णिक्के हत्थ पाए पक्खालेह। सेयाए चउप्फालाए पोत्तीए मुहं बंधित्ता सुबाहुस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे णिक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेहि। तएणं से कासवए अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठहियए जाव पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता, सुरभिणा गंधोदएणं हत्थ पाए पक्खालेइ, पक्खालित्ता सुद्धवत्थेणं मुहं बंधेइ बंधित्ता परेण जत्तेणं सुबाहुस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे णिक्खमण पाउग्गे अग्गकेसे कप्पेइ। तएणं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स माया महरिहेणं हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ, पक्खालित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं चच्चाओ दलयइ दलइत्ता सेयाए पोत्तीए बंधेइ, बंधित्ता रयणसमुग्गयंसि पक्खिवइ, पक्खिवित्ता मंजूसाए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता हारवारिधारसिंदुवार-छिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोगदूसदाइं अंसूइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी रोयमाणी कंदमाणी कंदमाणी विलवमाणी विलवमाणी एवं वयासी-एस णं अम्हं सुबाहुस्स कुमारस्स अब्भुदएसु य उस्सवेसु य पसवेसु य तिहिसु य छणेसु य जण्णेसु य पव्वणीसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सइ त्ति कट्टु उसीसामूले ठवेइ॥२२६॥

कठिन शब्दार्थ - **भण** - कहो कि, **दलयामो** - देवें, **किं ते हियइच्छिए सामत्थे** - तुमको क्या इष्ट है, **कुत्तियावणाओ** - कुत्रिकापण से-देवता से अधिष्ठित होने के कारण जहाँ तीन लोक की सब चीजें मिल सके उसे कुत्रिकापण (कुत्रिक दूकान) कहते हैं, **रयहरणं** - रजोहरण, **पडिग्गहगं**- पात्र, **आणिउं** - मंगवाना, **कासवयं** - नाई को, **सिरिघराओ** - खजाने से, **गंधोदएणं**- गन्धोदक से, **हत्थपाए** - अपने हाथ पैरों को, **णिक्के** - अच्छी तरह साफ, **पक्खालेह** - धोवो, **चउप्फालाए** - चार पुट वाले, **सेयाए** - सफेद, **पोत्तीए** - वस्त्र से, **णिक्खमणपाउग्गे** - दीक्षा के योग्य, **चउरंगुलवज्जे** - चार अङ्गुल छोड़ कर, **अग्गकेसे** - सुंदर केशों को, **कप्पेहि** - काटो, **परेण जत्तेणं** - बड़ी सावधानी से, **हंसलक्खणेणं** - हंस के समान सफेद अथवा हंस के चिह्न वाले, **पडसाडएणं** - वस्त्र में, **सरसेणं गोसीसचंदणेणं** - प्रधान गोशीर्ष (बावना) चंदन के, **चच्चाओ** - छींटे, **रयणसमुग्गयंसि** - रत्नों के डिब्बों में, **हारवारिधारसिंदुवार छिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं** - मोतियों की माला, जल की धारा तथा निर्गुण्डी के फूलों के समान सफेद, **सुयवियोगदूसहाइं** - दुःसह पुत्र वियोग को सूचित करने वाले, **अंसूइ** - आंसू, **विणिम्मुयमाणी** - गिराती हुई, **अब्भुदएसु** - अभ्युदय के समय, **उस्सवेसु** - उत्सव के समय, **पसवेसु** - पुत्रादि के जन्मोत्सव में, **तिहिसु** - शुभ तिथियों में, **छणेसु** - इन्द्रादि के उत्सव के समय, **जण्णेसु** - नागपूजा आदि के उत्सव के समय, **पव्वणीसु** - पर्वों के समय, **अपच्छिमे** - अंतिम, **दरिसणे** - दर्शन, **उसीसामूले**- अपने सिरहाने, **ठवेइ** - रख दिया।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार राजा हो गया तब उसके माता-पिता ने कहा कि हे पुत्र! कहो, तुम्हारी क्या इच्छा है? हम तुम्हारे लिए क्या इच्छित कार्य करें और क्या दें? तब सुबाहुकुमार ने कहा कि हे माता-पिताओ! मैं कुत्रिक दुकान से रजोहरण और पात्र मंगवाना चाहता हूँ और नाई को बुलवाना चाहता हूँ। तब अदीनशत्रु राजा ने नौकरों को बुला कर कहा कि जाओ, खजाने में से तीन लाख मोहरें निकाल कर ले जाओ। दो लाख मोहरें देकर कूत्रिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुकान से रजोहरण और पात्र लाओ तथा एक लाख मोहरें देकर नाई को बुला लाओ। राजा की आज्ञा पाकर नौकरों ने खजाने से तीन लाख मोहरें निकालीं फिर दो लाख मोहरें देकर वे कुत्रिक दूकान से रजोहरण और पात्र लाये तथा एक लाख मोहरें देकर नाई को बुला लाये। स्नानादि करके और सभा में जाने योग्य वस्त्र और आभूषण पहन कर नाई राजा अदीनशत्रु के सामने उपस्थित हुआ और बोला कि - हे राजन्! मेरे करने योग्य कार्य के लिए आज्ञा दीजिये। राजा ने नाई से कहा कि-सुगंधित गंधोदक से अपने हाथ पैर साफ धोकर और चार पुट वाले सफेद वस्त्र से मुंह बांध कर सुबाहुकुमार के दीक्षा के योग्य चार अंगुल छोड़ कर बाकी केशों को काटो। राजा की आज्ञानुसार सुगंधित गंधोदक से अपने हाथ पैर धोकर और चार पुट वाले सफेद कपड़े से मुंह बांध कर उस नाई ने सुबाहुकुमार के दीक्षा के योग्य चार अंगुल छोड़ कर बाकी केशों को बड़ी सावधानी पूर्वक काटा। सुबाहुकुमार की माता ने उन कटे हुए सुंदर केशों को एक सफेद कपड़े में झेला, झेल कर उनको सुगंधित गंधोदक से धोया फिर सर्वोत्तम बावने चन्दन के छींटे दे कर सफेद वस्त्र में बांध लिया बांध कर रत्नों के डिब्बे में रख कर एक संदुक में रख दिया। फिर वह सुबाहुकुमार की माता, मोतियों के समान एवं जल की धारा के समान दुःसह पुत्र वियोग के कारण आंसू डालती हुई, रोती हुई, आक्रन्दन करती हुई और विलाप करती हुई इस प्रकार बोली कि - "अभ्युदय, पुत्र जन्म, इन्द्र उत्सव, तिथि, पर्व दिन आदि सब उत्सवों के समय हमारे लिए यही दर्शन सुबाहुकुमार का अन्तिम दर्शन होगा।" ऐसा कह कर उस बालों वाली संदूक को अपने सिरहाने रख लिया।

दीक्षा की तैयारी

तए णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति रयावित्ता सुबाहुकुमारं दोच्चं पि तच्चं पि सेयपीयएहिं कलसेहिं ण्हावेंति ण्हावित्ता पम्हलसुउमालाए गंधकासाइयाए गायाइं लूहेंति, लूहित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपंति अणुलिंपित्ता णासाणीसासवायवोज्झं जाव हंसलक्खणं पडगसाडगं णियंसेंति णियंसित्ता हारं पिणद्धंति पिणद्धित्ता अद्धहारं पिणद्धंति पिणद्धित्ता एवं एगावलिं मुत्तावलिं कणगावलिं रयणावलिं पालंबं पायपलंबं कडगाइं तुडियाइं केऊराइं अंगयाइं दसमुद्दियाणंतयं कडिसुत्तयं कुंडलाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चूडामणिं रयणुक्कडं मउडं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दिव्वं सुमणदामं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दद्दरमलयसुगंधिए गंधे पिणद्धंति। तएणं तं सुबाहुकुमारं गंथिम-वेढिम-पूरिम-संघाइमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं विव अलंकिय-विभूसियं करेंति।

तएणं से अदीणसत्तू राया कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं ईहामियउसभतुरगणरमगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमरकुंजरवणलय-पउमलयभत्तिचित्तं घंटावलि-महुरमणहरसरं सुभकंतदरिसणिज्जं णिउणोवचिय-मिसिमिसंत मणिरयण-घंटिया-जालपरिक्खित्तं अब्भुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहर-जमल-जंतजुत्तं विव अच्चीसहस्समालिणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेस्सं सुहफासं सस्सिरीयरूवं सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं उवट्ठवेह। तएणं ते कोडुंबिय पुरिसा हट्ठ तुट्ठ जाव उवट्ठवेंति। तएणं से सुबाहुकुमारे सीयं दुरुहइ, दुरुहित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे॥२३०॥

कठिन शब्दार्थ - **उत्तरावक्कमणं** - उत्तरदिशा की तरफ मुख वाला, **रयावेंति** - रखवाया, **सेयपीयएहिं** - सफेद और पीले यानी चांदी और सोने के, **पम्हलसुउमालाए** - रुएंदार सुकोमल, **गंधकासाइयाए** - सुगंधित रंगीन वस्त्र से, **णासाणीसासवायवोज्झं** - नाक के निःश्वास की हवा से उड़ने वाला यानी बहुत पतला, **णियसेंति** - पहनाया, **पिणद्धंति** - पहनाया, **पालंबं पाय पलंबं** - पैरों तक लटकने वाला हार, **तुडियाइं** - त्रुटिका यानी बाहु रक्षक, **केऊराइं अंगयाइं** - केयूर और अङ्गद यानी दोनों भुजाओं पर भुजबन्ध, **दसमुद्दियाणंतयं**-दसों अंगुलियों में दस मुद्रिकाएं, **गंथिम वेढिम पूरिम संघाइमेणं** - ग्रन्थिम-सूत में गूंथी हुई, वेष्टिम-गूंथ कर लपेटी हुई पूरिम-पूर्ण की हुई, संघातिम-फूलों के परस्पर संयोग से बनाई हुई, **अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं** - सैकड़ों स्तम्भों वाली, **लीलट्ठियसालभंजियागं** - लीला करती हुई अनेक पुतलियों से युक्त, **ईहामिय-उसभ-तुरग-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु सरभ-चमरकुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं** - ईहामृग (भेड़िया) बैल, घोड़ा, नर, मगर,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पक्षी, सर्प, किन्नर, रुरु (एक प्रकार का मृग) अष्टापद, चमरी गाय, हाथी, वनलता और पद्मलता के चित्रों से शोभायमान, **घंटावलिमहुरमणहरसरं** - घंटियों के समुदाय के मधुर और मनोहर शब्द से युक्त, **सुभकंतदरिसणिज्जं** - शुभ, कान्त और दर्शनीय, **णिउणोवचियमिसिमिसंतमणिरयण-घंटियाजाल परिक्खित्तं** - चतुर कारीगरों द्वारा बनाई गई देदीप्यमान मणि और रत्नों की बनी हुई घंटियों से व्याप्त, **अब्भुग्गयवइरवेइया परिगयाभिरामं**- वज्र की बनी हुई ऊंची वेदिका से युक्त, **विज्जाहरजमलजंतजुत्तं** - विद्याधरों की चलती फिरती, पुतलियों के जोड़े से युक्त, **अच्चीसहस्समालिणीयं** - हजारों किरणों से युक्त, **रूवगसहस्सकलियं**- हजारों रूपों से युक्त, **भिसमाणं** - चमकती हुई, **भिब्भिसमाणं** - खूब चमकती हुई, **चक्खुल्लोयणलेस्सं** - अतिशय दर्शनीय, **पुरिससहस्स वाहिणीं** - हजार पुरुषों से उठाई जाने वाली, **सीयं** - पालकी।

भावार्थ - इसके बाद सुबाहुकुमार के माता-पिता ने सुबाहुकुमार को उत्तर की तरफ रखे हुए सिंहासन पर बैठा कर सोने और चांदी के कलशों से दो तीन बार स्नान कराई। फिर रुएंदार सुगंधित रंगीन वस्त्र से उसके शरीर को पोंछ कर सरस बावने चंदन का लेप किया, फिर स्वच्छ वस्त्र पहनाये, वस्त्र पहना कर एकावली, मुक्तावली, कनकावली, रत्नावली हार तथा अठारहलड़ा हार और नवसर हार, मुद्रिकाएं, कन्दोरा आदि सब आभूषण पहनाये। ग्रन्थिम, वेष्टिम, पूरिम और संघातिम, ये चार प्रकार की मालाएं पहना कर उसे अलंकृत और विभूषित किया। तदनन्तर अदीन शत्रु राजा ने सेवकों को बुला कर आज्ञा दी कि सुन्दर दर्शनीय एवं सब विशेषणों से विशिष्ट एक हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली पालकी लाओ। राजा की आज्ञा पाकर सेवक लोग पालकी ले आये। सुबाहुकुमार उस पालकी पर चढ़ कर पूर्व की तरह मुंह करके सिंहासन पर बैठ गया।

तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स माया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घा-भरणालंकियसरीरा सीयं दुरूहइ दुरूहित्ता सुबाहुकुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणंसि णिसीयइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स अंबधाई रयहरणं पडिग्गहगं च गहाय सीयं दुरूहइ दुरूहित्ता सुबाहुकुमारस्स वामे पासे भद्दासणंसि णिसीयइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स पिट्ठओ एगावरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगयगय-हसियभणियचिट्ठिय विलाससंलावुल्लावणिउणजुत्तोवयारकुसला आमेलग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमल-जुयल-वट्टिय-अब्भुण्णयपीणरइय-संठिय-पयोहरा हिमरययकुंदेंदुपगासं सकोरंटमल्लदामं धवलं आयवत्तं गहाय सलीलं ओहारेमाणी ओहारेमाणी चिट्ठइ।

तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारुवेसाओ जाव कुसलाओ सीयं दुरूहंति, दुरूहित्ता सुबाहुकुमारस्स उभओ पासं णाणामणि-कणगरयणमहरिह तवणिज्जुज्जलविचित्त दंडाओ चिल्लियाओ सुहुमवर-दीहबालाओ संखकुंददगरयअमयमहियफेणपुंजसण्णिगासाओ चामराओ गहाय सलीलं ओहारेमाणीओ ओहारेमाणीओ चिट्ठंति। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स एगावरतरुणी सिंगारा जाव कुसला सीयं जाव दुरूहइ दुरूहित्ता सुबाहुकुमारस्स पुरओ पुरत्थिमेणं चंदप्पभवइर-वेरुलिय-विमलदंडं तालियंटं गहाय चिट्ठइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स एगावरतरुणी जाव सुरूवा सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सुबाहुकुमारस्स पुव्वदक्खिणेणं सेयं रययामयं विमलसलिलपुण्णं मत्तगयमहामुहाकित्तिसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं एगाभरण-वसणगहिय-णिज्जोयाणं कोडुंबियवरतरुणाणं सहस्सं सद्दावेह। तएणं कोडुंबियपुरिसा जाव सद्दावेंति।

तएणं ते कोडुंबियवरतरुणपुरिसा अदीणसत्तुस्स रण्णो कोडुंबिय पुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठा ण्हाया जाव एगाभरणवसणगहियणिज्जोया जेणामेव अदीणसत्तू राया तेणामेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायं एवं वयासी-संदिसह णं देवाणुप्पिया! जण्णं अम्हेहिं करणिज्जं। तएणं से अदीणसत्तू राया तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं एवं वयासी - गच्छह णं देवाणुप्पिया! सुबाहुकुमारस्स पुरिस सहस्सवाहिणिं सीयं परिवहेह। तएणं तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं अदीणसत्तुणा रण्णा एवं वुत्तं संतं हट्ठतुट्ठं सुबाहुकुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं परिवहइ। तएणं सुबाहुकुमारस्स पुरिस-सहस्सवाहिणिं सीयं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठट्ठमंगलगा तप्पढमयाए पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया। तंजहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोत्थिय, सिरीवच्छ, णंदियावत्तं, वद्धमाणग, भद्दासण, कलस, मच्छ, दप्पण जाव बहवे अत्थत्थिया जाव ताहिं इट्ठाहिं जाव अणवरयं अभिणंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी - जय जय णंदा! जय जय भद्दा! जय णंदा! भद्दं ते, अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जियं च पालेहि समणधम्मं, जियविग्घो वि य, वसाहि तं देव! सिद्धिमज्झे णिहणाहि रागदोसमल्ले तवेणं धिइधणिय बद्धकच्छे मद्दाहि य अट्ठ कम्मसत्तू, झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं अप्पमत्ते पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं णाणं, गच्छ य परमपयं सासयं च अयलं हंता परीसहचमुं णं अभीओ परीसहोवसग्गाणं धम्मे ते अविग्घं भवउ त्ति कट्टु पुणो पुणो मंगल जय जय सद्दं पउंजंति।

तएणं से सुबाहुकुमारे हत्थिसीसस्स णयरस्स मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फकरंडे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुरिससहस्स-वाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुहइ॥२३१॥

कठिन शब्दार्थ - दाहिणे पासे - दाहिनी तरफ, **भद्दासणंसि** - भद्रासन पर, **अंबधाई**- अंबधात्री-दूध पिलाने वाली-धायमाता, **वरतरुणी** - सुंदर स्त्री, **सिंगारागारचारुवेसा** - श्रृंगार का घर हो, उसका वेष बहुत सुंदर था, **संगयगय-हसिय-भणिय-चिट्ठिय- विलास-संलावुल्लाव-णिउणजुत्तोवयार कुसला** - चलने में, हंसने में, बोलने में, चेष्टा करने में, विलास में-नेत्र विकार में, संलाप और उल्लाप में निपुण तथा लोक व्यवहार में बड़ी चतुर थी, **आमेलग-जमल-जुयलवट्टियअब्भुण्णय पीणरइय संठिय पयोहरा** - एक दूसरे से आपस में कुछ कुछ मिले हुए, समश्रेणी में रहे हुए, उसके दोनों स्तन गोल, ऊंचे उठे हुए, मोटे, सुखद और सुंदर आकार वाले थे, **हिमरयय कुंदेंदुपगासं** - बर्फ, चांदी और कुंद के फूल के समान सफेद और चन्द्रमा के समान कांति वाले, **सकोरंटमल्लदामं** - कोरंटवृक्ष के फूलों की माला से युक्त, **आयवत्तं** - छत्र को, **सलीलं** - प्रसन्नतापूर्वक, **णाणामणि-कणग-रयण-महरिह-तवणिज्जुज्जल विचित्तदंडाओ** - नाना मणि सुवर्ण रत्न और बहुमूल्य लाल सोने से युक्त उज्ज्वल डंडी वाले, **चिल्लियाओ** - देदीप्यमान-चमकदार, **सुहुमवरदीहबालाओ** - पतले उत्तम और लम्बे बालों वाले, **संख-कुंद-दगरय-अमयमहिय-फेणपुंजसण्णिगासाओ** - शंख,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुंद के फूल, पानी का वेग, मथे हुए अमृत के फेन के समूह के समान सफेद, **चंदप्पभवइरवेरुलियविमलदंडं** - चन्द्रकांत मणि और वैडूर्यमणि से जड़ी हुई डांडी वाले, **तालियंटं** - पंखे को, **पुव्वदक्खिणेणं** - पूर्व दक्षिण यानी आग्नेय कोण में, **विमलसलिलपुण्णं-** निर्मल जल से भरी हुई, **मत्तगयमहामुहाकिइसमाणं** - मदोन्मत्त हाथी के बड़े मुंह के जैसी आकार वाली, **भिंगारं** - झारी को, **एगाभरणवसणगहिय-णिज्जोयाणं** - एक समान आभरण और पोषाक पहने हुए, **कोडुंबियवरतरुणाणं सहस्सं** - एक हजार जवान सेवकों को, **तप्पढमयाए-** सबसे प्रथम, **अट्ठट्ठ मंगलगा** - आठ मांगलिक, **अत्थत्थिया** - याचक पुरुष, **अणवरयं** - बारम्बार, **अभिणंदंता** - अभिनंदन करते हुए, **अभित्थुणंता** - स्तुति करते हुए, **जियविग्घो** - विघ्नों को जीत कर, **रागदोसमल्ले** - राग द्वेष रूपी पहलवानों का, **णिहणाहि-** विनाश करो, **धिइधणियबद्धकच्छे** - अत्यंत धीरता के साथ कमर कस कर, **अट्ठकम्मसत्तू** - आठ कर्म रूपी शत्रुओं का, **मद्दाहि** - मर्दन करो, **वितिमिरं** - देदीप्यमान, **पावय** - प्राप्त करो, **परीसहचमुं** - परीषह रूपी सेना को, **हंता** - जीतो, **परीसहोवसग्गाणं** - परीषह उपसर्गों से, **अभीओ** - निर्भय होओ, **अविग्घं** - निर्विघ्न।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार की माता स्नान करके और वजन में हल्के किंतु कीमत में भारी बहुमूल्य आभूषणों को पहन कर पालकी पर सवार हुई और सुबाहुकुमार के दाहिनी तरफ भद्रासन पर बैठ गई। सुबाहुकुमार की धायमाता अपने हाथ में रजोहरण और पात्र लेकर सुबाहुकुमार के बाईं तरफ भद्रासन पर बैठ गई। इसके बाद एक अत्यंत रूपवती सुंदर तरुण स्त्री सुबाहुकुमार के पीछे बैठी। वह हाथ में छत्र लेकर सुबाहुकुमार के शिर पर धारण किये हुए थी। दो सुंदर तरुण स्त्रियां सुबाहुकुमार के दोनों तरफ खड़ी होकर सुबाहुकुमार पर चंवर ढोलने लगी। एक सुंदर तरुण स्त्री सुबाहुकुमार के सामने खड़ी होकर पंखे से हवा करने लगी। एक सुंदर तरुण स्त्री सुबाहुकुमार के पूर्व दक्षिण में यानी आग्नेय कोण में निर्मल जल से भरी हुई एक झारी लेकर खड़ी रही। इसके बाद अदीनशत्रु राजा ने अपने सेवकों को बुला कर कहा कि-हे देवानुप्रियो! एक समान, एक समान रंग वाले, एक समान उम्र वाले और एक समान पोषाक वाले एक हजार पुरुषों को बुला लाओ। सेवक लोग तत्काल गये और राजा की आज्ञानुसार एक हजार पुरुषों को बुला लाये। तत्पश्चात् अदीनशत्रु राजा ने सुबाहुकुमार की पुरुष सहस्रवाहिनी पालकी उठाने के लिये उनको आज्ञा दी। राजा की आज्ञा सुन कर हर्षित होकर उन एक हजार पुरुषों ने सुबाहुकुमार की पुरुष सहस्रवाहिनी पालकी उठाई। इसके पश्चात् पालकी पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बैठे हुए सुबाहुकुमार के आगे निम्नलिखित ये आठ मांगलिक पदार्थ चलने लगे - १. स्वस्तिक २. श्रीवत्स ३. नन्दावर्त्त ४. वर्द्धमान ५. सिंहासन ६. पूर्ण कलश ७. मत्स्य युगल और ८. दर्पण। बहुत से याचक पुरुष इष्ट वचनों से बारम्बार अभिनंदन और स्तुति करते हुए इस प्रकार कहने लगे कि - "हे आनंद के देने वाले! तुम्हारी जय हो। हे कल्याण के देने वाले! तुम्हारी जय हो। नहीं जीती हुई इन्द्रियों को जीतो। विघ्नों को पार कर श्रमण धर्म का पालन करो। सिद्धि प्राप्त करो। राग द्वेष रूपी पहलवानों को तप द्वारा पराजित कर दो। आठ कर्म रूपी शत्रुओं का विनाश करो। शुक्लध्यान द्वारा सर्वोत्कृष्ट केवलज्ञान को प्राप्त करके शाश्वत अविचल परमपद को प्राप्त करो! परीषह रूपी सेना को जीत कर परीषह और उपसर्गों से निर्भय बन जाओ तुम्हारा श्रमण धर्म सब प्रकार से निर्विघ्न होवे।"

तत्पश्चात् सुबाहुकुमार हस्तिशीर्ष नगर के बीचोंबीच होकर निकला, निकल कर पुष्पकरण्डक उद्यान में पहुँचा। वहाँ पहुँच कर पुरुष सहस्रवाहिनी पालकी से नीचे उतरा।

तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो सुबाहुकुमारं पुरओ कट्टु जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करित्ता वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी - एस णं देवाणुप्पिया! सुबाहुकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुण्णे मणामे वीसासिए जीवियऊसासए हिययाणंदजणए उंबरपुप्फं विव दुल्लहे सवणयाए किमंगपुण पासणयाए, से जहाणामए उप्पले इ वा पउमे इ वा कुमुए इ वा पंके जाए जले संवड्ढिए णोवलिप्पइ पंकरएणं, णोवलिप्पइ जलरएणं, एवामेव सुबाहुकुमारे कामेसु जाए भोगेसु संवड्ढिए, णोवलिप्पइ कामरएणं, णोवलिप्पइ भोगरएणं। एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गे भीए जम्मणजरामरणाणं इच्छइ देवाणुप्पिया अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। अम्हे णं देवाणुप्पियाणं सिस्सभिक्खं दलयामो। पडिच्छंतु णं तुम्हे देवाणुप्पिया! सिस्सभिक्खं।

तएणं समणे भगवं महावीरे सुबाहुकुमारस्स अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे एयमट्ठं सम्मं पडिसुणेइ। तएणं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंतियाओ उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागं अवकम्मइ, अव्वकमित्ता सयमेव आभरण-मल्लालंकारं उम्मुयइ। तएणं तस्स सुबाहुकुमारस्स मायाहंसलक्खणेणं पडगसाडएणं आभरणमल्लालंकारं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता हारवारिधार-सिंदुवार-छिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोगदूसहाइं अंसूणि विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी रोयमाणी कंदमाणी कंदमाणी विलवमाणी विलवमाणी एवं वयासी - जइयव्वं जाया! घडियव्वं जाया! परिक्कमियव्वं जाया! अस्सिं(य)च णं अट्ठे णो पमाएयव्वं। अम्हं वि णं एवमेव मग्गे भवउ त्ति कट्टु, सुबाहुकुमारस्स अम्मापियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया॥२३२॥

कठिन शब्दार्थ - वीसासिए - विश्वासपात्र, **जीवियऊसासए** - जीवन के लिये श्वास के समान, **हिययाणंदजणए** - हृदय को आनंद देने वाला, **उप्पलेइ**- नीलोत्पल कमल, **पउमे**- सूर्य विकासी पद्म कमल, **कुमुए** - चन्द्र विकासी कुमुद कमल, **संवड्डिए** - बढ़ते हैं, **पंकरएणं**- पंक रज से, **णोवलिप्पइ** - लिप्त नहीं होते हैं, **संसारभउव्विग्गे** - संसारभय से उद्विग्न, **सिसभिक्खं**- शिष्य की भिक्षा, **हारवारिधारसिंदुवारछिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं** - हार, जल की धारा, निर्गुण्डी के फूल और हार के टूटे हुए मोतियों के समान, **जइयव्वं** - संयम में यत्न करना, **घडियव्वं** - अप्राप्त गुणों को प्राप्त करना, **परिक्कमियव्वं** - संयम में पराक्रम करना, **अस्सिं अट्ठे** - इस विषय में, **णो पमाएयव्वं** - प्रमाद नहीं करना।

भावार्थ - तदनन्तर सुबाहुकुमार के माता पिता सुबाहुकुमार को आगे करके श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये। भगवान् को तीन बार वंदना नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगे कि - "हे भगवन्! यह सुबाहुकुमार हमारा इकलौता पुत्र है। यह हमें इष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मनोरम, विश्वासपात्र तथा हृदय को आनंद देने वाला है। जैसे कमल कीचड़ में उत्पन्न होता है और जल में बढ़ता है फिर भी वह कीचड़ और जल से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार इस सुबाहुकुमार ने कामों में जन्म लिया है और भोगों में बढ़ा है किंतु यह कामभोगों में लिप्त नहीं हुआ है। हे भगवन्! यह संसार से उद्विग्न हुआ है और जन्म, जरा, मरण से डरा है। इसलिए यह आपके पास मुण्डित होकर गृहस्थावास का त्याग कर दीक्षा अंगीकार करना चाहता है। हम आपको शिष्य-भिक्षा देते हैं। आप शिष्य-भिक्षा को स्वीकार कीजिये।"

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् ने सुबाहुकुमार के माता पिता के इस कथन को अच्छी तरह सुना। इसके पश्चात् ईशान कोण में जाकर सुबाहुकुमार ने स्वयं अपने हाथों से आभरण, फूलमाला और अलंकारों को उतार दिया। उसकी माता ने उन्हें हंस के समान एक सफेद कपड़े में ले लिया। फिर वह पुत्र वियोग से दुःखित होकर जलधारा, निर्गुण्डी के फूल और मोतियों के समान आंसू गिराती हुई, रोती हुई, क्रन्दन और विलाप करती हुई इस प्रकार बोली कि - हे पुत्र! संयम में यत्न करना, अप्राप्त गुणों को प्राप्त करना और संयम में पराक्रम करना। किंचित् मात्र भी प्रमाद न करना। हमारा भी यही मार्ग हो। इस प्रकार कह कर सुबाहुकुमार के माता पिता भगवान् को वन्दना नमस्कार करके वापिस लौट गये।

दीक्षा ग्रहण

तएणं से सुबाहुकुमारे पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी- आलित्ते णं भंते! लोए, पलित्ते णं भंते! लोए, आलित्तपलित्ते णं भंते! लोए जराए मरणेण-य। से जहाणामए केई गाहावई अगारंसि झियायमाणंसि जे तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहाय आयाए एगंतं अवक्कमइ। एस मे णित्थारिए समाणे पच्छा पुरा हियाए सुहाए खेमाए णिस्सेसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ। एवामेव मम वि एगे आया भंडे इट्ठे कंते पिए मणुण्णे मणामे। एस मे णित्थारिए समाणे संसारवोच्छेयकरे भविस्सइ। तं इच्छामि णं देवाणुप्पिएहिं सयमेव पव्वावियं, सयमेव मुंडावियं, सेहावियं, सिक्खावियं सयमेव आयार-गोयर-विणय- वेणइय-चरण-करण-जायामायावत्तियं धम्ममाइक्खियं।

तएणं समणे भगवं महावीरे सुबाहुकुमारं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव मुंडावेइ, सयमेव आयार जाव धम्ममाइक्खइ। एवं देवाणुप्पिया! गंतव्वं चिट्ठियव्वं णिसीयव्वं तुयट्टियव्वं भुंजियव्वं भासियव्वं एवं उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं, अस्सिं च णं अट्ठे णो पमाएयव्वं तएणं से सुबाहुकुमारे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं णिसम्म सम्मं पडिवज्जइ। तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ जाव उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेइ॥२३३॥

कठिन शब्दार्थ - **आलित्ते** - जल रहा है, **पलित्ते** - खूब जल रहा है, **गाहावई** - गाथापति (सेठ), **अगारंसि** - घर में, **झियायमाणंसि** - आग लगने पर, **भंडे** - वस्तु, **अप्पभारे** - भार (वजन) में हल्की, **मोल्लगुरुए** - मूल्य में भारी यानी बहुमूल्य, **आयाए** - स्वयं, **खेमाए**-क्षेम के लिए, **णिस्सेसाए** - निःश्रेयस यानी कल्याण के लिये, **संसारवोच्छेयकरो**-संसार का नाश करने वाली, **सयमेव** - स्वयं, **पव्वावियं** - दीक्षा लेना, **मुंडावियं** - मुण्डित होना, **सेहावियं** - प्रतिलेखना आदि क्रियाओं को ग्रहण करना, **सिक्खावियं** - सूत्र अर्थ सीखना, **आयार-गोयर-विणय-वेणइय-चरण- करण-जायामायावत्तियं** - आचार, गोचरी, विनय, विनय का फल, चरण सत्तरी, करणसत्तरी, संयम की यात्रा, आहार आदि की मात्रा (परिमाण) आदि, **धम्ममाइक्खियं** - धर्म को धारण करना, **गंतव्वं** - ईर्या समिति से चलना चाहिये, **चिट्ठियव्वं** - निर्दोष पृथ्वी पर ठहरना चाहिये, **णिसीयव्वं** - जगह को पूंज कर बैठना चाहिये, **तुयट्टियव्वं** - यतना पूर्वक सोना चाहिये, **भुंजियव्वं**- निर्दोष आहार करना चाहिये, **भासियव्वं**- हितमित प्रिय वचन बोलना चाहिये, **धम्मियं उवएसं**- धर्मोपदेश को।

भावार्थ - इसके पश्चात् सुबाहुकुमार ने स्वयमेव पंचमुष्टि लोच किया फिर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आकर विनयपूर्वक उन्हें वंदना नमस्कार करके अर्ज किया कि हे भगवन्! यह संसार जन्म जरा मरण रूप अग्नि से जल रहा है। जैसे किसी घर में आग लगने पर उसका स्वामी सार वस्तुओं को बाहर निकालता है और यह विचार करता है कि ये वस्तुएं आगामी काल में मुझे सुखदायक होंगी। इसी प्रकार यह मेरी आत्मा भी एक उपकरण है। यदि मैं अपनी आत्मा को जलते हुए संसार से निकालूंगा तो यह आठ कर्मों का विनाश करके मोक्षगामी होगी। इसलिए हे भगवन्! मैं आप स्वयं के पास दीक्षा लेना, मुण्डित होना, सूत्रार्थ सीखना तथा साधु संबंधी सारी क्रियाएं रूप धर्म को धारण करना चाहता हूँ।

तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुबाहुकुमार को स्वयमेव दीक्षा दी, स्वयमेव मुण्डित किया और स्वयमेव साधु आचार संबंधी शिक्षा दी कि चलना, खड़े रहना, बैठना, सोना, बोलना, आहार करना आदि सारी क्रियाएं यतनापूर्वक करनी चाहिए। प्राण, भूत, जीव, सत्त्व की रक्षा करते हुए संयम का पालन करना चाहिये।

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

सुबाहुकुमार ने भगवान् के उपरोक्त धर्मोपदेश को सुन कर उसे सम्यक् प्रकार अंगीकार किया। वह भगवान् की आज्ञा अनुसार ही सारी क्रियाएं करता था और प्राण, भूत, जीव, सत्त्व की रक्षा करता हुआ संयम का पालन करता था।

साधना और समाधिमरण

तएणं से सुबाहुकुमारे अणगारे जाए ईरियासमिए जाव बंभयारी। तएणं से सुबाहू अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्झेइ अहिज्झित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमेहिं जाव तवोविहाणेहिं अप्पाणं भावित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठि भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववण्णे। से णं तओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति लभित्ता केवलं बोहिं बुज्झिहिति बुज्झित्ता तहारूवाणं थेराणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वइस्सइ। से णं तत्थ बहुइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालगए सणंकुमारे देवत्ताए उववज्जिहिइ। से णं तओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव बंभलोए से णं ताओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव महासुक्के तओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव आणए तओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव आरणाए ताओ देवलोगाओ तहेव माणुस्सं पव्वज्जा, तहेव सव्वट्ठसिद्धे॥२३४॥

कठिन शब्दार्थ - **इरियासमिए** - ईर्यासमिति से युक्त, **बंभयारी** - पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला, **सामाइयमाइयाइं** - सामायिक-आचारांग आदि, **चउत्थछट्ठट्ठमेहिं** - चतुर्थभक्त (उपवास) षष्ठभक्त (बेला) अष्टमभक्त (तेला), **तवोविहाणेहिं** - नाना प्रकार के तपों द्वारा, **सामण्णपरियागं** - श्रमण पर्याय का, **पाउणित्ता** - पालन करके, **अप्पाणं झूसित्ता** - आत्म चिंतन करते हुए, **आलोइयपडिक्कंते** - आलोचना और प्रतिक्रमण करके, **समाहिपत्ते** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधिपूर्वक, **आउक्खएणं** - आयुक्षय, **भवक्खएणं** - भवक्षय, **ठिइक्खएणं** - स्थिति क्षय करके।

भावार्थ - इसके बाद सुबाहुकुमार ईर्यासमिति से युक्त पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला मुनि बन गया। तत्पश्चात् सुबाहुमुनि ने स्थविर मुनियों के पास सामायिक आदि ग्यारह अंग का ज्ञान पढ़ा। पढ़कर उपवास, बेला, तेला आदि विविध प्रकार के तपों द्वारा आत्मा को भावित करके बहुत वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके एक मास की संलेखना द्वारा आत्मचिंतन करते हुए एक महीने का अनशन करके समाधिपूर्वक आयु पूर्ण होने पर काल करके पहले सौधर्म देवलोक में देवरूप से उत्पन्न हुआ। वहां से चव कर मनुष्य होगा, दीक्षा लेकर तीसरे सनत्कुमार देवलोक में देव होगा। वहां से चव कर मनुष्य होगा। दीक्षा लेकर पांचवें ब्रह्म देवलोक में देव होगा। वहां से चव कर मनुष्य होगा। दीक्षा लेकर सातवें महाशुक्र देवलोक में देव होगा। वहां से चव कर मनुष्य होगा, दीक्षा लेकर नववें आणत देवलोक में देव होगा। वहां से चव कर मनुष्य होगा, दीक्षा लेकर ग्यारहवें आरण देवलोक में उत्पन्न होगा। वहां से चव कर मनुष्य होगा, दीक्षा लेकर सर्वार्थसिद्ध विमान में देव होगा।

भविष्य कथन और सिद्धि गमन

से णं तओ देवलोगाओ अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति?

गोयमा! महाविदेहे वासे जाइं इमाइं कुलाइं भवंति, अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं विच्छिण्णा विउलभवणसयणासण-जाणवाहणाइं बहुधणबहुजायरूवरययाइं आओगपओगसंपउत्ताइं विच्छड्डिय पउरभत्तपाणाइं बहुदासीदासगोमहिसग वेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं तहप्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चायाहिति। तएणं तस्स दारगस्स माया णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं सुरूवं दारयं पयाहिति। जहेव पुव्वं तहेव णेयव्वं जाव भोयरएणं णोवलिप्पइ। तहेव मित्तणाइणियगसंबंधि-परिजणेणं। से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिति, केवलं बोहिं बुज्झित्ता मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सइ। से णं अणगारे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भविस्सइ, इरियासमिए जाव सुहुयहुयासणे इव तेयसा जलंते। तस्स णं भगवओ अणुत्तरेणं णाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्जवेणं मद्दवेणं लाघवेणं खंतीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं सव्वसंजमतवसुचरियफलणिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे णिरावरणे णिव्वाघाए केवलवरणाणदंसणे समुप्पज्जिहिति। तएणं से भगवं अरहा जिणे केवली भविस्सइ। सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स परियागं जाणिहिइ पासिहिइ तंजहा - आगइं गइं ठिइं चवणं उववायं तक्कं पच्छाकडं पुरेकडं मणोमाणसियं खइयं भुत्तं कडं पडिसेवियं आवीकम्मं रहोकम्मं अरहा अरहस्सभागी तं तं कालं मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरिस्सइ।

तएणं से सुबाहुकेवली एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे बहूइं वासाइं केवलि परियागं पाउणित्ता अप्पणो आउसेसं आभोइत्ता बहूइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ, पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदिस्सइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे मुंडभावे केसलोए बंभचेरवासे अण्हाणगं अदंतवणं अछत्तगं अणुवाहणगं भूमिसिज्जाओ फलहसिज्जाओ परघरप्पवेसो लद्धावलद्धाइं माणावमाणाइं परेहिं हीलणाओ णिंदणाओ खिंसणाओ गरहणाओ तज्जणाओ तालणाओ परिभवणाओ पव्वहणाओ उच्चावया विरूवा बावीसं परीसहोवसग्गा गामकंटगा अहियासिज्जंति तमट्ठं आराहेइ, आराहित्ता चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ।

सेवं भंते! सेवं भंते! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

एवं खलु जम्बू! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्तिबेमि॥२३५॥

॥पढमज्झयणं समत्तं॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - अड्ढाइं - धनादि से परिपूर्ण, **दित्ताइं** - प्रतापी, **वित्ताइं** - दानादि गुणों से प्रसिद्ध, **विच्छिण्ण-विउल-भवण-सयणासण-जाण-वाहणाइं** - विस्तीर्ण और बहुत से भवन, शयन, आसन यान, वाहन हैं, **बहुधणबहुजायरूवरययाइं** - बहुत धनाढ्य-चांदी सोने वाले, **पुमत्ताए** - महापुरुष रूप से, **बोहिं बुज्झिहिइ** - बोध प्राप्त करेगा, **सुहुय हुयासणे इव तेयसा जलंते** - अच्छी तरह जाज्वल्यमान अग्नि की तरह तेज से देदीप्यमान, **आलएणं विहारेणं** - अप्रतिबद्ध विहार, **अणुत्तरेणं सव्वसंजमतवसुचरियफल णिव्वाणमग्गेणं**- उत्कृष्ट संयम तप सुचारित्र और इनके फल रूप मोक्ष के मार्ग द्वारा, **कसिणे** - सम्पूर्ण, **पडिपुण्णे** - प्रतिपूर्ण, **णिरावरणे** - निरावरण, **णिव्वाघाए** - निर्व्याघात-बाधा (व्याघात) रहित, **सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स** - देवलोक, मनुष्य लोक और असुरलोक (अधोलोक) इन तीनों लोक की, **परियागं** - पर्याय को, **तक्कं** - तर्क, **पच्छाकडं** - पश्चात्कृत, **पुरेकडं** - पूर्वकृत, **मणोमाणसियं** - मनोगत भाव, **खइयं** - नष्ट हुआ, **भुत्तं** - भोगा हुआ, **कडं** - किया हुआ, **पडिसेवियं** - सेवन किया हुआ, **आवीकम्मं** - प्रकट कार्य को, **रहोकम्मं** - अप्रकट कार्य को, **अरहस्सभागी** - देव मनुष्यों द्वारा पूजनीय, **मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं**- मन, वचन, काया संबंधी, **सव्वभावे** - सभी भावों को, **आउसेसं आभोइत्ता** - आयु कर्म का अन्त जान कर, **जस्सट्ठाए** - जिसके लिये, **णग्गभावे** - नग्नता, **मुंडभावे** - मुण्डितपन, **केसलोए** - केशलोच, **बंभचेरवासे** - ब्रह्मचर्य का पालन, **अण्हाणगं** - अस्नान यानी स्नान न करना, **अदंतवणं**- दांतन न करना, **अछत्तगं** - अछत्रक-छत्र धारण न करना, **अणुवाहणगं**- जूते न पहनना, **भूमिसिज्जाओ** - भूमि पर सोना, **फलहसिज्जाओ** - पाटे पर सोना, **परघरप्पवेसो** - गोचरी के लिए गृहस्थों के घर में जाना, **लद्धावलद्धाइं** - आहार पानी का मिलना नहीं मिलना, **माणावमाणाइं** - मान अपमान में समभाव रखना, **परेहिं हीलणाओ** - दूसरों के हीन (नीच) वचन सुनना, **णिंदणाओ** - निन्दित होना, **खिंसणाओ** - लोगों के सामने धिक्कार के वचन सुनना, **गरहणाओ** - गर्हा यानी घृणा सहना, **तज्जणाओ** - तर्जना अर्थात् अंगुली उठाकर कहे गये अपशब्द सुनना, **तालणाओ**-ताड़ना-कीड़े आदि की मार सहना, **परिभवणाओ**- परिभव-तिरस्कार, **पव्वहणाओ** - पीड़ा सहना, **उच्चावया** - छोटे बड़े, **विरूवा** - विविध प्रकार के, **गामकंटगा** - इन्द्रियों के लिए कांटे रूप, **अहियासिज्जंति**- समभाव पूर्वक सहन करना, **कीरइ** - जिसके लिए सहन किये जाते हैं, **तमट्ठं** - उस पदार्थ का यानी मोक्ष का, **ऊसासणीसासेहिं** -. श्वासोच्छ्वास, **सिज्झिहिइ** - सिद्ध होंगे, **बुज्झिहिइ** -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बुद्ध होंगे, **मुच्चिहिइ** - आठों कर्मों से मुक्त होंगे, **परिणिव्वाहिइ** - निर्वाण को प्राप्त होंगे, **सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ** - सब दुःखों का अन्त करेंगे।

भावार्थ - गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से पूछा कि हे भगवन्! सुबाहुकुमार का जीव सर्वार्थसिद्ध विमान से चव कर कहां जायगा? कहां उत्पन्न होगा?

भगवान् ने फरमाया कि हे गौतम! सुबाहुकुमार का जीव सर्वार्थसिद्ध विमान से चव कर महाविदेह क्षेत्र में उत्तमकुल में जन्म लेगा। वह कुल धन धान्यादि से परिपूर्ण, समृद्ध, प्रतापी दानादि गुणों से प्रसिद्ध, बहुत भवन, शयन, आसन, यान, वाहन आदि युक्त और बहुत से दास-दासी, गाय, भैंस आदि से युक्त होगा। पूरे नौ मास व्यतीत होने पर माता एक सुंदर बालक को जन्म देगी। पांच धायों द्वारा लालन पालन किया जाता हुआ वह बालक युवावस्था को प्राप्त होगा किन्तु वह बालक जलकमलवत् भोगों में लिप्त नहीं होगा। तथारूप के स्थविर मुनियों का उपदेश सुन कर वह धर्म के मर्म को समझ कर गृहस्थावस्था का त्याग कर दीक्षा अंगीकार करेगा। क्षमा, मार्दव, आर्जव आदि दस विध यतिधर्म का सम्यक् पालन करता हुआ विविध प्रकार के तप द्वारा घाती कर्मों का क्षय करके सर्वोत्कृष्ट निरावरण, निर्व्याघात और परिपूर्ण केवलज्ञान, केवलदर्शन को प्राप्त करेगा। इस प्रकार वे सर्वज्ञ सर्वदर्शी होकर तीनों लोकों को तथा तीनों कालों की समस्त पर्यायों को जानेंगे देखेंगे। यथा - जीवों की आगति, गति स्थिति, च्यवन, उपपात, तर्क, पश्चात् कृत, पूर्वकृत, मनोगत भाव, नष्ट हुआ, भोगा हुआ, किया हुआ, सेवन किया हुआ, प्रकट कार्य और अप्रकट कार्य सबको जानेंगे और देखेंगे। उनसे कोई बात छिपी न रहेगी। वे देव, मनुष्यों द्वारा पूजनीय होंगे। सर्वलोक के सर्व जीवों के उस-उस समय में होने वाले मन, वचन, काया संबंधी सभी भावों को जानते हुए और देखते हुए विचरेंगे।

इस प्रकार वे सुबाहुकेवली बहुत वर्षों तक केवलि पर्याय का पालन करके अपने आयु कर्म का अंत जान कर अनेक भक्त प्रत्याख्यान द्वारा अनशन करेंगे। फिर जिस प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए दीक्षा ली थी और संयम में आने वाले बाईस परीषह उपसर्गों को समभाव पूर्वक सहन किया था तथा केशलोच ब्रह्मचर्य पालन आदि दुष्कर कार्य किये थे, उस प्रयोजन को सिद्ध करेंगे, सर्व अन्तिम श्वासोच्छ्वास लेकर निर्वाण को प्राप्त होंगे और सब दुःखों का अन्त करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से उपरोक्त अर्थ सुनकर गौतम गणधर बोले कि हे भगवन्! जैसा आप फरमाते हैं ऐसा ही है, ऐसा ही है। इतना कह कर भगवान् को वन्दना नमस्कार करके संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

श्री सुधर्मा स्वामी ने अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहा कि हे आयुष्मन् जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक सूत्र के पहले अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है। हे आयुष्मन् जम्बू! मैंने जैसा श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से सुना है, वैसा ही कहा है।

॥इति प्रथम अध्ययन समाप्त॥

विवेचन - सुपात्रदान की महानता और पावनता सुबाहुकुमार के संपूर्ण जीवन से स्पष्ट सिद्ध हो जाती है। सुमुख गाथापति के भव में उसने सुपात्रदान दिया था, उसी का यह महान् फल है कि सुबाहुकुमार का जीव परम्परा से मोक्ष स्थान को प्राप्त करेगा। सांसारिक पदार्थों की आसक्ति दुःख का कारण है। इनसे विरक्त हो कर आत्मानुराग ही वास्तविक सुख का यथार्थ साधन है। मानव जितना जितना इन बाह्य पदार्थों से विमुख होगा उतना उतना मोह कम होगा और वह वास्तविक सुख की उपलब्धि में अग्रसर होगा और आध्यात्मिक शांति को प्राप्त करता चला जाएगा। स्थायी सुख की प्राप्ति के लिए सांसारिक पदार्थों का संसर्ग अर्थात् इन पर से अनुराग का त्याग करना परम आवश्यक है। यही प्रस्तुत अध्ययनगत सुबाहुकुमार की कथा का सार है।

॥ प्रथम अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भद्दणंदी णामं बीयं अज्झयणं

भद्रनन्दी नामक दूसरा अध्ययन

सुखविपाक सूत्र के दूसरे अध्ययन में भद्रनन्दी के कथानक द्वारा सुपात्र दान की महिमा बता कर सूत्रकार ने सुपात्रदान द्वारा आत्म-कल्याण करने की प्रेरणा प्रदान की है। मूल पाठ इस प्रकार है -

बिइयस्स णं उक्खेवो - एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभपुरे णयरे थूभकरंडउज्जाणे, धण्णो जक्खो, धणावहो राया, सरस्सइ देवी, सुमिणदंसणं, कहणं, जम्मणं, बालत्तणं, कलाओ य जुव्वणे पाणिग्गहणं, दाओ, पासाय भोगा य जहा सुबाहुकुमारस्स। णवरं भद्दणंदीकुमारे, सिरिदेवी पामोक्खाणं पंचसया, सामी समोसरणं, सावगधम्मं, पुव्वभवपुच्छा-महाविदेहे वासे पुंडरीकिणी णयरी, विजए कुमारे, जुगबाहु तित्थयरे पडिलाभिए, इहं उप्पण्णे सेसं जहा सुबाहुस्स जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ॥२३६॥

कठिन शब्दार्थ - थूभकरंडउज्जाणे - स्तूपकरण्ड उद्यान, **सुमिणदंसणं** - स्वप्न देखना, **कहणं** - राजा से स्वप्न का कहना, **जम्मणं** - पुत्र का जन्म होना, **बालत्तणं** - बाल्यावस्था, **जुव्वणे** - यौवन अवस्था, दाओ - दहेज, **सामी समोसरणं** - भगवान् महावीर स्वामी पधारे, **पुव्वभवपुच्छा** - पूर्व भव के विषय में पृच्छा, **पडिलाभिए** - प्रतिलाभित किया।

भावार्थ - हे आयुष्मन् जम्बू! इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में जब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस भूतल पर विचरते थे उस समय में ऋषभपुर नाम का एक नगर था। वहाँ स्तूपकरण्ड नामक उद्यान था। उसमें धन्य नामक यक्ष था। धनावह राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम सरस्वती था। उसने सिंह का स्वप्न देखा। अपना स्वप्न राजा से निवेदन किया। राजा ने कहा कि इस स्वप्न के फलानुसार तुम्हारे एक प्रतापी पुत्र होगा। सवा नौ मास व्यतीत होने पर उसकी कुक्षि से एक प्रतापी पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र का नाम भद्रनन्दीकुमार रखा गया। योग्य अवस्था होने पर उसे पुरुष की ७२ कलाएं सीखाई। यौवन अवस्था होने पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीदेवी आदि पांच सौ कन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। उनका धर्मोपदेश सुन कर उसने श्रावक धर्म अंगीकार किया।

तत्पश्चात् गौतमस्वामी ने भद्रनन्दी कुमार के पूर्व भव के विषय में पूछा। भगवान् ने फरमाया कि हे गौतम! महाविदेह क्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी में यह विजयकुमार था। एक समय इसने युगबाहु तीर्थंकर को उत्कृष्ट भाव पूर्वक आहारादि बहराया। अब यहाँ ऋषभपुर में उत्पन्न हुआ है। दीक्षा लेकर प्रथम देवलोक में जायगा। फिर सुबाहुकुमार के समान मनुष्य और देव का भव करता हुआ इस भव से पन्द्रहवें भव में महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष में जायगा यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करेगा।

विवेचन - प्रथम अध्ययन में सुबाहुकुमार का जीवन वृत्तान्त श्रवण करने के बाद जम्बूस्वामी को दूसरे अध्ययन का भाव जानने की उत्कंठा होती है। इसी को सूत्रकार ने "**बिइयस्स उक्खेवो**" शब्द से व्यक्त किया है। दूसरे अध्ययन का उत्क्षेप-प्रस्तावना इस प्रकार है -

"**जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, बिइयस्स णं भंते! अज्झयणस्स सुहविवागाणं समणेणं भगवया महावीरे णं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?**"

अर्थात् - यदि हे भगवन्! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक सूत्र के प्रथम अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) अर्थ वर्णन किया है तो हे भगवन्! यावत् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक के दूसरे अध्ययन का क्या अर्थ प्रतिपादन किया है?

जंबूस्वामी की इस जिज्ञासा के समाधान में आर्य सुधर्मा स्वामी ने भद्रनन्दी कुमार का जीवन वृत्तांत कहा है। भद्रनंदी कुमार का वर्णन भी सुबाहुकुमार के समान ही है। सुपात्रदान के प्रभाव से अंत में वे भी सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होंगे। इस प्रकार सुपात्रदान से मानव प्राणी की जीवन नौका संसार सागर से अवश्य पार हो जाती है।

॥ इति द्वितीय अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुजाए णामं तइयं अज्झयणं

सुजात नामक तीसरा अध्ययन

तच्चस्स णं उक्खेवो - वीरपुरं णयरं, मणोरमं उज्जाणं, वीरकण्हमित्ते राया, सिरीदेवी, सुजाए कुमारे, बलसिरीपामोक्खा पंचसयकण्णा, सामी समोसरणं, पुव्वभव पुच्छा-उसुयारे णयरे उसभदत्ते गाहावई, पुप्फदत्ते अणगारे पडिलाभिए, इह उप्पण्णे जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ० ॥२३७॥

कठिन शब्दार्थ - वीरकण्हमित्ते राया - वीरकृष्णमित्र नाम का राजा, इह उप्पण्णे - यहाँ उत्पन्न हुआ है।

भावार्थ - अब तीसरे अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - वीरपुर नाम का एक नगर था। नगर के बाहर मनोरम नाम का उद्यान था। वीरकृष्णमित्र राजा राज्य करता था। उसके श्रीदेवी रानी थी। उनका सुजात नाम का कुमार था। बलश्री आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। एक समय भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। गौतम स्वामी ने सुजातकुमार के पूर्वभव के विषय में पूछा। भगवान् ने फरमाया कि - इषुकार नगर में ऋषभदत्त नाम का गाथापति था। उसने पुष्पदत्त अनगार को भाव पूर्वक आहार बहरा कर प्रतिलाभित किया। अब यहाँ उत्पन्न हुआ है आगे सारा वर्णन सुबाहुकुमार के समान है यावत् वह महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा।

विवेचन - तीसरे अध्ययन का वर्णन भी प्रथम अध्ययन के समान ही है। केवल नाम और स्थान आदि का भेद है। तीसरे अध्ययन का नायक सुजातकुमार भी सुबाहुकुमार के समान पुष्पदत्त अनगार को सुपात्रदान देकर दीक्षित होते हैं और संयम का यथाविधि पालन करते हुए सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होते हैं अंत में महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होकर सर्व कर्मबंधनों का क्षय कर मोक्ष पद को प्राप्त करेंगे।

॥ इति तृतीय अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुवासवे णामं चउत्थं अज्झयणं

सुवासव नामक चौथा अध्ययन

चउत्थस्स उक्खेवो - विजयपुरं णयरं, णंदणवणं उज्जाणं, असोगो जक्खो वासवदत्ते राया, कण्हा देवी, सुवासवे कुमारे, भद्दापामोक्खा पंचसयकण्णा, जाव पुव्वभवे कोसंबी णयरी, धणपाले राया, वेसमणभद्दे अणगारे पडिलाभिए, इह जाव सिद्धे बुद्धे, मुत्ते, परिणिव्वाए, सव्वदुक्खाणमंतं कडे ॥२३८॥

भावार्थ - अब चौथे अध्ययन का अर्थ कहा जाता है। विजयपुर नाम का नगर था। नगर के बाहर नंदन वन नामक उद्यान था। उसमें अशोक यक्ष का यक्षायतन था। वासवदत्त नाम का राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम कृष्णा था और पुत्र का नाम सुवासवकुमार था। भद्रा आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया था। एक समय भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। गौतम स्वामी ने उसके पूर्व भव के विषय में पूछा। भगवान् ने फरमाया कि सुवासवकुमार का जीव पूर्व भव में कौशाम्बी नगरी का धनपाल राजा था। उसने वैश्रमण भद्रमुनि को भाव पूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया। यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गया। शीतलीभूत हुआ और सब दुःखों का अंत किया।

विवेचन - चतुर्थ अध्ययन में सुवासवकुमार का वर्णन है। इस अध्ययन में भी सुपात्रदान के उत्तम फल का वर्णन किया गया है। सुवासवकुमार ने तप संयम की आराधना कर उसी भव में मोक्ष प्राप्त कर लिया।

॥इति चतुर्थ अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिणदासे णामं पंचम अज्झयणं

जिनदास नामक पांचवां अध्ययन

पंचमस्स उक्खेवो-सोगंधिया णयरी, णीलासोए उज्जाणे, सुकालो जक्खो, अप्पडिहओ राया, सुकण्णा देवी, महचंदे कुमारे, तस्स अरहदत्ता भारिया, जिणदासो पुत्तो, तित्थयरागमणं, जिणदास पुव्वभवो मज्झमिया णयरी, मेहरहो राया, सुधम्मे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे॥२३६॥

कठिन शब्दार्थ - पंचमस्स उक्खेवो - पांचवें अध्ययन का अर्थ, **जिणदासपुव्वभवो**- जिनदास के पूर्व भव के विषय में पूछा, **सिद्धे** - सिद्ध हुए।

भावार्थ - अब पांचवें अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - सौगंधिका नामक एक नगरी थी। उसके बाहर नीलाशोक उद्यान था। उसमें सुकाल यक्ष का यक्षायतन था। अप्रतिहत राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम सुकन्या था। उनके महचन्द्र नामक कुमार था। उसकी स्त्री का नाम अरहदत्ता और पुत्र का नाम जिनदास था। एक समय वहाँ तीर्थंकर भगवान् पधारे। गणधर महाराज ने उनके पूर्व भव के विषय में पूछा। भगवान् ने फरमाया कि - यह पूर्व भव में मध्यमिका नगरी में मेघरथ नाम का राजा था। सुधर्म अनगार को भावपूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया। यावत् सिद्धि गति को प्राप्त किया।

विवेचन - सुपात्र दान के प्रभाव से जिनदास कुमार उसी भव में कर्मों को क्षय कर मोक्ष चले गये।

॥ इति पंचम अध्ययन समाप्त॥

* * * *

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धणवई णामं छट्ठं अज्झयणं

धनपति नामक छठा अध्ययन

छट्ठस्स उक्खेवो-कणगपुर णयरं, सेयासोयं उज्जाणं, वीरभद्दो जक्खो, पियचंदो राया, सुभद्दादेवी, वेसमणे कुमारे जुवराया, सिरीदेवी पामोक्खा पंचसयकण्णा, पाणिग्गहणं, तित्थयरागमणं, धणवई जुवरायपुत्ते जाव पुव्वभवो, मणिवया णयरी, मित्तो राया, संभूइविजए अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे॥२४०॥

भावार्थ - अब छठे अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - कनकपुर नाम का एक नगर था। उसके बाहर श्वेताशोक उद्यान था। जिसमें वीरभद्र नामक यक्ष का यक्षायतन था। वहाँ के राजा का नाम प्रियचन्द्र और रानी का नाम सुभद्रा था। उनके युवराज का नाम वैश्रमण कुमार था। श्रीदेवी आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। वैश्रमणकुमार के पुत्र का नाम धनपति था। एक समय तीर्थंकर भगवान् वहां पधारे। गणधर महाराज ने धनपति का पूर्वभव पूछा। तीर्थंकर भगवान् ने फरमाया कि - मणिपदा नगरी में मित्र नामक राजा था। उसने संभूति विजय अनगार को भावपूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया। यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गया।

विवेचन - सुखविपाक सूत्र के इस छठे अध्ययन में धनपति कुमार का वर्णन है। धनपति कुमार के जीव ने पूर्व भव में सुपात्रदान दिया फलस्वरूप उसी भव में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गये।

॥ इति षष्ठ अध्ययन समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महब्बले णामं सत्तमं अज्झयणं

महाबल नामक सातवां अध्ययन

सत्तमस्स उक्खेवो-महापुरं णयरं, रत्तासोगं उज्जाणं, रत्तपाओ जक्खो। बले राया, सुभद्दादेवी, महब्बले कुमारे, रत्तवईपामोक्खा पंचसयकण्णा, पाणिग्गहणं जाव पुव्वभवो, मणिपुरं णयरं, णागदत्ते गाहावई, इंदपुरे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे॥२४१॥

भावार्थ - अब सातवें अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - महापुर नामक एक नगर था। उसके बाहर रक्ताशोक उद्यान था। उसमें रक्तपाद यक्ष का यक्षायतन था। वहाँ बल राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम सुभद्रा था। उनके महाबलकुमार पुत्र था। रक्तवती आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। एक समय वहाँ तीर्थंकर भगवान् पधारे। गणधर भगवान् के पूछने पर भगवान् ने उसका पूर्वभव बतलाया कि यह पूर्वभव में मणिपुर नगर में नागदत्त गाथापति था। उसने इन्द्रपुर नामक अनगार को भावपूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गया।

विवेचन - इस सातवें अध्ययन में महाबलकुमार का वर्णन है। महाबलकुमार के जीव ने नागदत्त गाथापति के भव में इन्द्रपुर अनगार को सुपात्रदान दिया फलस्वरूप वे महाबलकुमार के भव में ही सिद्ध हो गये।

॥ इति सप्तम अध्ययन समाप्त॥

✿ ✿ ✿ ✿

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भद्दणंदी णामं अट्ठमं अज्झयण

भद्रनन्दी नामक आठवां अध्ययन

अट्ठमस्स उक्खेवो-सुघोसं णयरं, देवरमणं उज्जाणं, वीरसेणो जक्खो, अज्जुणो राया, तत्तवई देवी, भद्दणंदीकुमारे, सिरीदेवी पामोक्खा पंचसयकण्णा, पाणिग्गहणं जाव पुव्वभवो-महाघोसे णयरे धम्मघोसे गाहावई, धम्मसीहे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे॥२४२॥

भावार्थ - अब आठवें अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - सुघोष नामक एक नगर था। उसके बाहर देवरमण उद्यान था। उसमें वीरसेन नाम के यक्ष का यक्षायतन था। वहाँ अर्जुन राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम तत्त्ववती था। उनके भद्रनन्दी नाम का कुमार था। श्रीदेवी आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। एक समय वहां तीर्थंकर भगवान् पधारे। गणधर महाराज ने भद्रनन्दी कुमार का पूर्वभव पूछा। तीर्थंकर भगवान् ने फरमाया कि-पूर्वभव में यह महाघोष नगर में धर्मघोष गाथापति था। इसने धर्मसिंह अनगार को भावपूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गया।

विवेचन - भद्रनन्दीकुमार ने पूर्व भव में धर्मसिंह मुनि को भक्तिभाव पूर्वक सुपात्रदान दिया फलस्वरूप वे इस भव में सिद्ध हो गये यावत् सभी दुःखों का अंत कर दिया।

॥ इति अष्टम अध्ययन समाप्त॥

✧ ✧ ✧ ✧

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महचंदे णामं णवमं अज्झयणं

महच्चन्द्र नामक नववां अध्ययन

णवमस्स उक्खेवो-चंपा णयरी, पुण्णभद्दे उज्जाणे, पुण्णभद्दो जक्खो, दत्ते राया, रत्तवई देवी, महचंदे कुमारे जुवराया, सिरीकंतापामोक्खा पंचसया कण्णा, पाणिग्गहणं जाव पुव्वभवो-तिगिच्छी णयरी, जियसत्तू राया, धम्मवीरिए अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे॥२४३॥

भावार्थ - अब नववें अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - चम्पा नाम की एक नगरी थी। उसके बाहर पूर्णभद्र उद्यान था। उसमें पूर्णभद्र यक्ष का यक्षायतन था। वहाँ दत्त नाम का राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम रक्तवती था। उनके महच्चन्द्र नाम का कुमार युवराज था। श्रीकान्ता आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह किया गया। एक समय वहाँ तीर्थंकर भगवान् पधारे। गणधर महाराज के पूछने पर भगवान् ने उसका पूर्वभव बतलाया कि - यह पूर्व भव में तिगिच्छी नगरी में जितशत्रु नाम का राजा था। उसने धर्मवीर्य अनगार को भावपूर्वक आहारादि बहरा कर प्रतिलाभित किया यावत् सिद्ध, बुद्ध मुक्त हो गया।

विवेचन - सुखविपाक सूत्र के इस नववें अध्ययन के नायक हैं - महच्चन्द्र कुमार। महच्चन्द्रकुमार के जीव जितशत्रु राजा ने धर्मवीर्य अनगार को भावपूर्वक प्रतिलाभित किया था। सुपात्रदान के प्रभाव से महच्चन्द्रकुमार उसी भव में मोक्ष चले गए।

॥ इति नवम अध्ययन समाप्त॥

✣ ✣ ✣ ✣

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वरदत्ते णामं दसमं अज्झयणं

वरदत्त नामक दसवां अध्ययन

दसमस्स उक्खेवो-एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं साएयं णामं णयरं होत्था। उत्तरकुरुज्जाणे, पासमिओ जक्खो, मित्तणंदी राया, सिरीकंता देवी, वरदत्ते कुमारे, वीरसेणापामोक्खा पंचसयकण्णा, पाणिग्गहणं, तित्थयरागमणं, सावगधम्मं, पुव्वभवो-सयदुवारे णयरे, विमलवाहणे राया, धम्मरुइ णामं अणगारं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता पडिलाभिए समाणे संसार परित्तीकए, मणुस्साउए णिबद्धे, इह उप्पण्णे सेसं जहा सुबाहुकुमारस्स पोसहचिंता जाव पव्वज्जा, कप्पंतरिओ जाव सव्वट्ठसिद्धे। तओ महाविदेहे वासे जहा सुबाहुकुमारो जाव सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। सेवं भंते! सेवं भंते!! ॥२४४॥

॥दसमं अज्झयणं समत्तं॥

॥बीओ सुयक्खंधो समत्तो॥

कठिन शब्दार्थ - सावगधम्मं - श्रावक धर्म को, **एज्जमाणं** - गोचरी के लिए आते हुए, **संसार परित्तीकए** - संसार परित्त किया, **मणुस्साउएणिबद्धे** - मनुष्य आयु बांधा, **पोसहचिंता** - पौषध में आध्यात्मिक विचार उत्पन्न हुआ, **पव्वज्जा** - दीक्षा अंगीकार की, **कप्पंतरिओ** - अनुक्रम से देवलोकों में, **अयमट्ठे** - यह अर्थ, **पण्णत्ते** - फरमाया है।

भावार्थ - दसवें अध्ययन का अर्थ कहा जाता है - हे आयुष्मन् जंबू! उस काल उस समय में साकेत नाम का नगर था। उसके बाहर उत्तरकुरु उद्यान था। उसमें पाशमिक यक्ष का यक्षायतन था। वहां मित्रनंदी नाम का राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम श्रीकांता था। उनके वरदत्तकुमार नामक पुत्र था। वीरसेना आदि पांच सौ राजकन्याओं के साथ उसका विवाह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किया गया। एक समय वहाँ तीर्थंकर भगवान् पधारे। उनका धर्मोपदेश सुन कर वरदत्तकुमार ने श्रावक धर्म अंगीकार किया। गणधर महाराज ने वरदत्त कुमार के पूर्वभव के विषय में पूछा। तब भगवान् ने फरमाया कि - यह पूर्व भव में शतद्वार नगर में विमलवाहन राजा था। इसने धर्मरुचि अनगार को विधिपूर्वक उत्कृष्ट भाव से आहारादि बहरा कर संसार परित्त किया और मनुष्य आयु बांधा। मनुष्यायु बांध कर अब यहाँ उत्पन्न हुआ है। इससे आगे शेष सारा वर्णन सुबाहुकुमार के समान है। उसे पौषध में आध्यात्मिक विचार उत्पन्न हुआ यावत् दीक्षा अंगीकार करके क्रमशः देवलोकों में उत्पन्न होता हुआ सर्वार्थसिद्ध विमान में उत्पन्न होगा। वहाँ से चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा। दीक्षा अंगीकार करके कई वर्षों तक संयम का पालन करके सुबाहुकुमार की तरह सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होगा एवं सभी दुःखों का अंत करेगा।

हे आयुष्मन्-जम्बू! मोक्ष को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुखविपाक सूत्र के दसवें अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है। जम्बूस्वामी बोले कि हे भगवन्! जैसा आप फरमाते हैं वैसा ही है।

विवेचन - सुखविपाक सूत्र के इस दसवें अध्ययन में वरदत्त कुमार का वर्णन है। वरदत्त कुमार के जीव ने पूर्व भव में धर्मरुचि अनगार को सुपात्रदान दिया था। जिसके फलस्वरूप इस भव में उत्कृष्ट ऋद्धि की प्राप्ति हुई और संसार परित्त किया। ऐसी ऋद्धि का त्याग करके संयम अंगीकार किया और देवलोक में गये। आगे मनुष्य देव के शुभ भव करते हुए सुबाहुकुमार के समान पन्द्रहवें भव में महाविदेह क्षेत्र से मोक्ष प्राप्त करेंगे।

॥इति दशम अध्ययन समाप्त॥

॥ दूसरा श्रुतस्कन्ध समाप्त॥

विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा-दुहविवागो य सुहविवागो य। तत्थ दुहविवागे दस अज्झयणा एक्कासरगा। दससु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्झंति। एवं सुहविवागो वि। सेसं जहा आयारस्स॥२४५॥

॥इइ सुहविवागसुत्तं समत्तं॥

॥ विवाग सुयं समत्तं॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ - **दो सुयक्खंधा** - दो श्रुतस्कन्ध हैं, **एकासरगा** - एक सरीखे हैं, **दसेसु चेव दिवसेसु** - दस दिनों में ही, **उद्दिसिज्जंति** - उपदेश दिया जाता है, **सेसं जहा आयारस्स**-- शेष सब आचारांग की तरह जानना चाहिए।

भावार्थ - विपाक सूत्र में दो श्रुतस्कन्ध हैं - दुःखविपाक और सुखविपाक। दुःखविपाक में दस अध्ययन हैं। वे सब एक सरीखे हैं। इन का उपदेश दस दिनों में ही दिया जाता है। इसी तरह सुखविपाक में भी दस अध्ययन हैं और वे सब एक सरीखे हैं। इनका भी उपदेश दस ही दिनों में दिया जाता है। शेष सब आचाराङ्ग सूत्र की तरह समझना चाहिये।

विवेचन - विपाकश्रुत के दो श्रुतस्कन्ध हैं - **१. दुःखविपाक** - जिसमें दुष्ट कर्मों का दुःखरूप विपाक-परिणाम कथाओं के रूप में वर्णित है। **२. सुखविपाक** - जिसमें शुभ कर्मों का सुखरूप विपाक-परिणाम (फल) कथाओं के रूप में वर्णित है।

सुखविपाक में दस अध्ययन हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं - १. सुबाहु २. भद्रनंदी ३. सुजात ४. सुवासव ५. जिनदास ६. धनपति ७. महाबल ८. भद्रनंदी ९. महाचन्द्र १०. वरदत्त। दसों प्राणी काल करके किस गति में गये उसके लिए स्पष्टीकरण इस प्रकार है -

पहले अध्ययन में सुबाहुकुमार का वर्णन है उसमें सुबाहुकुमार के भव सहित पन्द्रहवें भव में वह मोक्ष जायेगा। उसके लिए मूलपाठ में ये शब्द दिये हैं - "**सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिणिव्वाइहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ**" इनकी संस्कृत छाया इस प्रकार हैं -

"**सेत्स्यति, भोत्स्यते, मोक्ष्यते, परिनिर्वास्यति, सर्व दुःखानाम् अंतं करिष्यति**"

जिनका क्रमशः अर्थ यह है कि - 'कृत कार्य होने से सिद्ध होगा, केवलज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण लोक अलोक को जानेगा, संपूर्ण कर्मों से मुक्त होगा, सम्पूर्ण कषाय के नष्ट होने से तथा सम्पूर्ण कर्मों के क्षय होने से शीतल बन जायेगा और शारीरिक तथा मानसिक सब दुःखों का अंत करेगा।'

ये सब क्रियाएं भविष्यकाल की है। इसलिए यह स्पष्ट है कि सुबाहुकुमार भविष्य में मोक्ष जायेगा अर्थात् देवता के सात और मनुष्य के आठ (सुबाहुकुमार के भव सहित) भव करके मोक्ष जायेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे अध्ययन में भद्रनन्दी का और तीसरे अध्ययन में सुजातकुमार का तथा दसवें अध्ययन में वरदत्तकुमार का वर्णन है। इन तीनों अध्ययनों में सुबाहुकुमार की भलावण दी गई है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ये भी सुबाहुकुमार की तरह पन्द्रहवें भव में मोक्ष जायेंगे।

बाकी बचे हुए छह अध्ययनों में अर्थात् चौथे से लेकर नवमे तक छह अध्ययनों के जीव उसी भव में मोक्ष चले गये। शास्त्रकार ने इन छह अध्ययनों **'जाव सिद्धे'** से ये शब्द दिये हैं- **'सिद्धे, बुद्धे, मुक्के, परिणिव्वाए, सव्वदुक्खाणमंतं कडे'** जिनकी संस्कृत छाया है -

"सिद्धः, बुद्धः, मुक्तः, परिणिर्वाणः, सर्वदुःखानाम् अंतं कृतः"

अर्थात् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, शीतलीभूत हुआ और सब दुःखों का अंत किया। ये क्रियाएं भूतकाल की है। इससे यह स्पष्ट हो गया कि इन छह अध्ययनों वाले जीव उसी भव में मोक्ष चले गये।

दुःखविपाक और सुखविपाक के दस-दस अध्ययन हैं। इस प्रकार कुल बीस अध्ययनों में विपाकश्रुत नामक ग्यारहवें अंग का संकलन हुआ है। प्रथम श्रुतस्कन्ध में वर्णित दस अध्ययनों का अंतिम परिणाम दुःख और द्वितीय श्रुतस्कन्ध में वर्णित दस अध्ययनों का अंतिम परिणाम सुख है। इस दुःख और सुख की वर्णित व्यक्तियों के जीव में समानता होने से इनको **'एक्कसरगा'** एक समान कहा गया है। अथवा वर्णित व्यक्तियों के आचार में अधिक समानता होने की दृष्टि से भी ये एक समान-एक जैसे कहे जा सकते हैं। अथवा दस दिनों में इन दस अध्ययनों का वर्णन होने से भी इनकी समानता स्पष्ट हो जाती है अथवा दुःखविपाक तथा सुखविपाक के अध्ययनों में वर्णित मृगापुत्र आदि तथा सुबाहुकुमार आदि सभी महापुरुष अंत में मोक्ष को प्राप्त करते हैं। इस दृष्टि से भी ये अध्ययन समान कहे गये हैं।

॥ इति सुखविपाक सूत्र समाप्त॥

॥ विपाक सूत्र समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अ० भा० सुधर्म जैन सं० रक्षक संघ, जोधपुर आगम बत्तीसी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत प्रकाशित आगम

अंग सूत्र

क्रं.	नाम आगम	मूल्य
१.	आचारांग सूत्र भाग-१-२	५५-००
२.	सूयगडांग सूत्र भाग-१,२	६०-००
३.	स्थानांग सूत्र भाग-१, २	६०-००
४.	समवायांग सूत्र	२५-००
५.	भगवती सूत्र भाग १-७	३००-००
६.	ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र भाग-१, २	८०-००
७.	उपासकदशांग सूत्र	२०-००
८.	अन्तकृतदशा सूत्र	२५-००
९.	अनुत्तरोपपातिक दशा सूत्र	१५-००
१०.	प्रश्नव्याकरण सूत्र	३५-००
११.	विपाक सूत्र	३०-००

उपांग सूत्र

१.	उववाइय सुत्त	२५-००
२.	राजप्रश्नीय सूत्र	२५-००
३.	जीवाजीवाभिगम सूत्र भाग-१,२	८०-००
४.	प्रज्ञापना सूत्र भाग-१,२,३,४	१६०-००
५.	जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति	५०-००
६-७.	चन्द्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति	२०-००
८-१२.	निरयावलिका (कल्पिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा)	२०-००

मूल सूत्र

१.	दशवैकालिक सूत्र	३०-००
२.	उत्तराध्ययन सूत्र भाग-१, २	८०-००
३.	नंदी सूत्र	२५-००
४.	अनुयोगद्वार सूत्र	५०-००

छेद सूत्र

१-३.	त्रीणिछेदसुत्ताणि सूत्र (दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प, व्यवहार)	५०-००
४.	निशीथ सूत्र	५०-००
१.	आवश्यक सूत्र	३०-००

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिग्गंथं पावयणं सच्चं
जो उवमिज्जइ सययं, तं संघ गुणायरं वंदे

श्री अ.भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ जोधपुर

अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org